मार्च १९५५

वर्ष ७ वार्षिक ६)

अङ्क १० इस अङ्क का ।।=)

सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा० गणपति सिंह वर्मा

विषय अनुक्रमणिका

भगवान आत्रेय वचन (कविता)	राजवैद्य सरयूप्रसाद भट्ट 'मधुमय'	१७१
पारद भस्म		१७२
शेर और चीता	कवि० हरिकृष्ण सहगल	१७३
यक्ष्मा भेद, लक्षण, निदान इत्यादि	श्री० डा० कमलाप्रसाद एम० बी०	१७६
मूर्च्छा चिकित्सा	कवि० महेन्द्रनाथ पाण्डेय भिषगरत्न	१७६
रोग और रागनी	वैद्याचार्य होरमस जी	१८२
खून का दबाव		१८४
मधुमेह	श्री० गौरीलाल चांनना बी० ए० वैद्य वाचस्पति	१८७
सिरका	कवि० युगलकिशोर गुप्ता	१६१

रसायन फार्मेसी देहली का प्रमुख सचित्र मासिक पत्र

'सिद्ध रसे करिष्यामि, निर्दारिद्रय मयं जगत् ।'

वर्ष ७	देहली मार्च १९५५	अङ्क १०

❀ भगवान् आत्रेय वचन ❀

[राजवैद्य—श्री सरयूप्रसाद भट्ट 'मधुमय' विशारद R. A. P.]

देश कालात्म विज्ञानं सद् वृत्तस्यानु वर्तनम ।
आगान्तनां मनुत्पत्तावेश मार्गो निदर्शितः ।।

❀ अनुवाद ❀

सदाचार का पालन करना देश-काल-आत्मा का ज्ञान ।
स्वीय लक्ष्य का ध्यान रहे औ इन्द्रिय का भी शमन महान् ।।
त्याग करे प्रज्ञापराधों का जीवन के सुख हेतु ।
होंय न रूज आगान्तुक इससे जीवन को यह पथ-निर्देश ।।
न वेगान् धारयेद् धीमान् (शारीरमलसम्भवान)

❀ अनुवाद ❀

तन-मल से अत्यन्त ये, मल मूत्रादिक जान ।
इन वेगों को रोकते नहीं, कि जो मतिमान ।। क्रमशः

पारद भस्म

पारद भस्म नं० १

पारद को अग्निस्थाई करने के लिए अनेक लोग प्रयत्नशील हैं किन्तु इस कार्यमें कौन सफल हुआ यह कहना कठिन है। इसी प्रकार पारद की भस्म बनाना भी सरल कार्य नहीं है। कई लोग इसकी भस्म बनाकर बेचते हैं किन्तु वह जिस प्रकार बनाते हैं उसको वास्तविक रूप में भस्म कहना भ्रम प्रतीत होता है, कारण उसमें पारद भस्म के पूर्णगुण नहीं पाये जाते। जिसे वास्तविक अर्थों में पारद भस्म बनाना आता है उसके लिए कुछ भी दुर्लभ नहीं है। कुष्ट, क्षय, नपुन्सकता आदि महाव्याधिओं को नाश करने की शक्ति इसमें है। श्री गोविन्द पादाचार्य के कथनानुसार पारद स्वयं मूर्च्छित होकर रोगी के रोग को दूर करता है और बंधा हुआ होकर मुक्ति देता है तथा अच्छी तरह मरा हुआ दूसरों को जीवन देता है। यहां पारद भस्म की एक महात्मा से प्राप्त विधि लिखी जाती है जो बड़े परिश्रम के बाद प्राप्त हुई थी।

आध सेर करीर के फूलों को खरल में पीसकर नुगदा सा बनालें और उसके बीच में ५ तोला शुद्ध पारद रखकर सात कपरोटी करके सुखालें। भली प्रकार सूख जाने के बाद बकरी की मेंगनियों में गजपुट की अग्नि दें। यह अग्नि तीन-चार दिन में पूर्ण रूप से शीतल होती है अतः चौथे दिन सावधानी से गोले को निकाल कर तोड़ लें और होशियारी से भस्म निकाल लें। यह भस्म श्वेत रंग की वजन में पूरी और निरुत्थ तथा निर्दोष होगी। इसकी मात्रा एक चावल से चार चावल तक बलाबल देखकर देने से समस्त महारोगों को नष्ट करती है।

पारद भस्म नं० २

शुद्ध पारद एक छटांक लेकर प्रथम उसको ब्रह्मदण्डी के एक सेर रस में खरल करें। खुश्क होजाने पर फिर एक सेर आकाश बेल के रस में उसी प्रकार खरल करें और गोला सा बनाकर सुखालें। तद्पश्चात आकाश बेल और ब्रह्मदण्डी दोनों समभाग लेकर घोटकर पारद वाले गोले पर गाढा २ लेप करदें। सूखने पर इसी प्रकार दूसरा और तीसरा लेप करके सुखालें। पश्चात उस गोले पर ७ कपडमिट्टी करके सुखाकर उपरोक्त विधि से बकरी की मेंगनियों की गजपुटाग्नि में फूंकलें। बहुत उत्तम श्वेत रंग की बावजन भस्म तैयार होगी। यह योग वैद्य काशीनाथ जी जम्मु निवासी की कृपा से प्राप्त हुए हैं एतदर्थ धन्यवाद। इसकी एक-एक रत्ती मात्रा शहद के साथ सेवन कराने से श्वेत कुष्ट को निर्मूल कर देता है।

एक प्रश्न

अनुभवी रसायनियों से प्रार्थना

कृपया रसायन में अग्निस्थाई हरिताल और अग्निस्थाई हिंगुल की स्वानुभूत विधि लिखने की कृपा करें। स्वयंसुविज्ञ 'रसायन' संपादक भी अपनी स्वानुभूति सिद्ध विधि प्रकाशित करने का कष्ट करें:—

प्रश्न कर्ता—

राजवैद्य सरयूप्रसाद भट्ट 'मधुमय' साहित्य विशारद
R. A. P. पो० भुआ बिछिया, जि० मंडला
(म० प्रा०)

शेर और चीता

[लेखक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, बागीची अलाउद्दीन, देहली]

संसार में शेर (Lion) कई प्रकारके पाये जाते हैं। भारतीय शेर बहुत सुन्दर होता है। पीतवर्ण, काली धारियां होती हैं। इसे बंगाल टाइगर भी कहते हैं। अफ्रीका में शेर बबर पाया जाता है। मटियाला वर्ण बड़ी अमाल (ग्रीवा के बाल) और बोर्नियो में कौवे के समान कृष्ण वर्ण का शेर भी होता है।

चीता का वर्ण भी सुन्दर होता है। इसकी गुच्छेदार पूंछ बहुत आकर्षक होती है। श्वेत काले धब्बों से इसकी सहज पहचान हो जाती है। सर्कस के शेर को छोड़कर शेर किसी का मारा हुआ शिकार नहीं खाता। अपने शिकार के स्थान पर अवश्य लौटकर आता है और यह वृक्ष पर नहीं चढ़ सकता अगरचे छलांग बहुत लम्बी लगा सकता है। यह चीता बिल्ली के समान वृक्ष पर चढ़ जाता है और शेर की ही जाति का होता है। शेरनी और चीते के मेल से बघेरा उत्पन्न होता है।

चरक के काल में और बुद्ध काल में भी भारत जंगलों का देश था। हर गांव के बाहर एक बड़ा जंगल होता था। लोग या तो खेती बाड़ी करते या फिर शिकार खेलते। उन दिनों जंगली जानवरों के सुलभता से प्राप्त होने के कारण चिकित्सा में शेर का महत्वपूर्ण स्थान था। आज शेर की विशुद्ध वसा भी अप्राप्य है, दुकानदार असली कहकर शेर वसा के स्थान पर रीछ की चर्बी दे देते हैं।

सिंह, बाघ, भेड़िया, चरख, रीछ, चीता, लोमड़ी, गीदड़ आदि गुफाओं में रहने वालों को शास्त्र में गुहाशय की संज्ञा दी है।

सिंह, बाघ, चीते के मांसके गुणों के विषय में शास्त्र कहता है कि इनके मांस मधुर, पाक में भारी, स्निग्ध, बलकारक, उष्ण वीर्य अनेक रोग और गुह्य रोग के लिए विशेष हितकारक है।

सिंह, चीता का मांस अफ्रीका में बहुधा खाया जाता है। वहां के निवासियों की धारणा है कि सिंह, चीता का मांस खाने से उनमें शूरता और बल का संचार होता है। कभी यह विचार युरोप में भी १६-वीं सदी में अपनाया गया था। लोगों ने रसायन और बाजीकरण के लिए इसे अफ्रीका से मंगाना शुरू किया और शेरका मांस बेचनेवाली कई कम्पनियां स्थापित हो गईं। शास्त्र में वातिक और पित्तज ग्रहणी में क्रकार (मांसभक्षी) प्राणियों का मांस, दीपन द्रव्यों से सिद्ध कर प्रयोगार्थ कहा है। युनानी चिकित्सकों का कहना है कि शेर का मांस देरमें हज़म है, शूरता उत्पन्न करता है। इसके खाने से पक्षाघात जाता रहता है। नमोनिया में लाभ करता है।

शेर की खाल

शेर का शिकार करने के बाद शिकारी पहला काम यह करता है कि वह उसकी खाल निकाल लेता है। खालों को सफा और तैयार करने की भी विशेष विधि है। यह मसाले से सफा और तैयार की गई खालें बहुत कीमती होती हैं। कहीं पर तो कालीन की तरह इन्हें बिछाने का काम लिया जाता है और कहीं दिवारों पर सुन्दरता के लिए लगाया जाता है। अफ्रीका में शेर और चीते की खालों को चादर व कपड़ों के तौर

पर भी प्रयोग किया जाता है। इसके बालों की धूनीसे दौरे से आने वाला ज्वर नहीं आता।

शेर की खाल को भी पवित्र माना जाता है। इस पर बैठने से आत्म विश्वास और धैर्य में वृद्धि होती है। मृगी का दौरा नहीं होता। जहरीले जानवर सर्प आदि निकट नहीं आते। शेर की त्वचा का एक टुकडा कपडों में रख देनेसे कीडा नहीं लगता। जिसके पास शेर की खाल हो उसके दन्त पीडा नहीं होती। शेर की खाल पर बैठने से अर्श व छोटे जोडों के दर्द दूर होते हैं। शेर की पूंछ के बालों में विष होता है और रसेन्द्रसार संग्रह के अनुसार उसकी चिकित्सा पारद भस्म है। शेरनी की नाक का टुकडा शुष्क करके कपडे में सीकर, तावीज बनाकर गर्भवती शरीर पर धारण करे अथवा प्रसव के पश्चात पहने तो प्रसूत रोग न हो। शेर के चमडे की भस्म थोडी मात्रा में रोगी को पिलावे तो पागल कुत्ते का विष उतर जाता है।

शेर की जिह्वा को सुखाकर उसका थोडा भाग मिश्री के साथ मिलाकर पीनेसे श्वास रोगी को आराम होता है।

प्राचीन काल में लोग शेरों के बच्चों को पाल भी लेते थे। कवि सम्राट कालीदास कृत ग्रंथ शकुन्तला में हम पढ़ते हैं कि शकुन्तला का पुत्र भरत शेर के बच्चों से खेला करता था। जब लोग घरों में शेरों को रखते थे तब कभी शेर की मूंछ व पूंछ का बाल आमाशय में जाने पर मृत्यु का कारण बनता था। तब चिकित्सक बकरी के यकृत के कच्चे टुकड़े खिलाते और तीन घन्टे के बाद ६ माशा कुटकी किञ्चित उष्ण जलसे देकर, वमन करवा देते, यह बाल यकृतके टुकड़े में लिपटे निकल जाते। अथवा कच्चा झींगा लम्बे डोरे में बांध कर रोगी को निगलवा देते, दो तीन घन्टे बाद धागे को धीरे २ खैंचकर झींगे को निकाल लेते, बाल झींगे से लिपट कर निकल आते, इसके बाद चौलाई की जड़ चावलों के पानी के साथ पिलाने से व्यक्ति अच्छा हो जाता।

शेर के वृष्ण (Testicles) के कबाब हृदय व बल देने वाले तथा पुरुषत्व शक्ति को बढ़ाने वाले। (प्राचीन काल में लोग हार्टफेल और दिमाग़ की नाल फटने से न मरते थे।) शेर के वृष्णों में सुहागा औ मस्तगी मिलाकर शुष्क करें और फिर पीस कर आ में मिला रोगी को पिलावें तो पेट की पीड़ा, पक्षाघात अर्श, पेचिश, गर्भाशय की पीड़ा, पीठ का दर्द अथव यकृत के कष्ट दूर होते हैं। परन्तु निराहार औ किञ्चित जल से पिलायें। (मालूम होता हैं जिंदवदस्त की तरह, शेर के वृष्णों को सुखाकर रखने का रिवाज प्राचीन काल में था)

शेरनी का दूध

प्राचीन काल में शेरों के मध्य में रहने वा शेर दिल आर्यों को शेरनी का दूध प्राप्य था। शेर का दूध रंग को निखारता, क्रोध उत्पन्न करता त वायु और मस्तिष्क के रोगों में हितकर है। साबर सींग में सोने की कील गाढ़ और शेरनी के दूध घिसकर लगाने से फूला कट जाता है।

शेर का रक्त

शेर का रक्त कण्ठमाला व बिगड़े व्रणों प लागाना उन्हें अच्छा करता है, शिकारी शेर क शिकार करके उसके रक्त को कपड़े में ले लेते हैं, शेर रक्तवाले कपड़ेके छोटे २ टुकड़े काटकर निमोनि वात तथा ग्रह पीडित बच्चों को दूध में पिलाते हैं।

शेर की चर्बी

हिंगुतुल्यातु वैयाघ्री वसा नस्यं स सैन्धवः

अर्थात्—हींगा और सिंह वसा समान भा लेकर, नस्य देने से विषम ज्वर नष्ट होता है।

पुराणसर्पिः सिंहस्य वसातद्वत्ससैन्धवा (चरक)

अर्थात् दश वर्ष का प्राचीन घृत, सिंह वसा, सेंधा नमक मिला अञ्जन करने से विषम ज्वर नष्ट होता है। सिंह वसा को तिलाओं में डाला जाता है। दर्दों पर मालिश की जाती है, कण्ठमाला पर लगाते हैं, यह लगाने पर शोथ को दूर करती है।

शेर का पित्ता

शेर के पित्ते का पानी पीने से स्त्री की कामेच्छा जागृत हो जाती है। आंख में लगाने से दृष्टि बढ़ती है। पोदीना और इस्वगोल के लुआव के साथ एक रोज देने से पाण्डु रोग में लाभ होता है। पित्ते का पानी मधु में मिलाकर कण्ठमाला और भगन्दर पर लगाने से लाभ करता है।

यूनानी चिकित्सकों का कथन है कि सन्निपातके रोगीके शिर पर पित्ते का लेप करनेसे लाभ करता है। इसके पित्ते को कपड़े में लगा कर उसका पिचु योनि में धारण करने से गर्भपात हो जाता है। (मुगलों के वक्त में शेर का शिकार बहुत किया जाता था उस काल में यूनानी चिकित्सकों को इसके परीक्षण का बहुत मौका मिला) शेर का पित्ता रोगन बनफशा में मिलाकर कोढ़ के व्रणों पर मलना हितकर है।

शेर के नख

शास्त्र कहता है शेर के नख में विष होता है, बच्चों को पहराने से वह डरते नहीं और सोते हुये दन्त भी नहीं किटकटाते। प्राचीन काल में जब जंगल और शेर अधिक थे तब यात्रा करते हुवे कई बार लोगों का सामना शेरों से भी हो जाता था और वह इसके नखों से जख्मी भी होते थे, तब उनके शरीर पर विष के कारण सूजन होने पर वैद्य जटामांसी, केशर, तेजपात, दालचीनी, हल्दी, तगर, लालचन्दन, मैनसल, शेर के नाखून और तुलसी को पानी में पीसकर पिलाते थे। (यही नुसखा टौक्सिनज को दूर करने वाला है) और कोई वैद्य इस विषनिवारणार्थ मधु को जल में मिलाकर भी पिलाते थे।

शेर की विष्ठा

शेर की विष्ठा को शुष्क करके श्वेत कुष्ठ पर लगाया जाता है और शेरके विष्ठे को मद्यमें मिलाकर शराबी को पिलाने से उसे मद्य से नफरत हो जाती है।

अफ्रीका में अब भी ऐसी जातियां हैं जिन में रिवाज है कि जब तक पुरुष शेर का शिकार न करे उसका विवाह नहीं हो सकता। मुगलों के समय में अपराधियों को शेर के सामने किया जाता था और शेर उन्हें मार दिया करते थे और जो शेर से जीत जाये या शेर जिस पर आक्रमण न करे उसे छोड़ दिया जाता था। शेर से कुशती लड़ना सबसे बड़ी बहादुरी थी।

यक्ष्मा भेद, लक्षण, निदान इत्यादि

(लेखक—श्री डा० कमलाप्रसाद जी, एम० बी०)

मेरुदण्ड का यक्ष्मा

(Tuberculous Disease of the Spine Syn.—Pott's Disease)

इतिहास

इस रोग को सर्व प्रथम परसिवल पौट (Percival Pott) ने १७७६ में पूर्णतः पहिचाना था अतः उन्हीं के नाम पर इसे (Pott's Disease) "पौट्ट साहब का रोग" कहते हैं।

कारण

इसके कारण प्रायः वही हैं जो अन्यत्र यक्ष्मा के कारण होते हैं। रोग बहुधा १० वर्ष से कम आयु के बच्चों में ही देखा जा सकता है किन्तु किसी आयु के व्यक्ति में इसका पाया जाना असम्भव नहीं है। स्त्री एवं पुरुष दोनों ही को एक सा होता है। कशेरु (Spinal Column) मेरुदंड वा रीढ़ का कोई अंश क्षतग्रस्त हो सकता है किन्तु अधः वक्ष की कशेरुकाओं (Vertebrae) पर बहुधा आक्रमण होता है।

अंगविकृति

रोग पर्यस्थि प्रदाह वा अस्थि मज्जा प्रदाह (Periostitis or Osteomyelitis) के रूप में आरम्भ होता है। प्रथम—पर्यस्थि प्रदाह—रूप में यह वय के रोगियों में देखा जाता है। अस्तु, इस प्रकार के रोगियों की संख्या कम होती है। कशेरुका के सम्मुख तल (anterior surface of the Vertebra) पर सर्व प्रथम आक्रमण होता है और रोग एक अस्थि से दूसरी अस्थि तक अस्थि बन्धन (ligaments) के सहारे बढ़ता जाता है। दो कशेरुकाओं के बीच के अन्तर-काशेरुक-चक्र (Interveretebral disc) भी आक्रान्त होते तथा घिसते जाते हैं।

दूसरे—अस्थि मज्जा प्रदाह रूप में रोग बहुधा बच्चों में देखा जाता है और इस प्रकार के रोगी बहुत मिलते हैं। यक्ष्मा-कीटाणु क्षीण अस्थि तंतुओं (Cancellous tissues) में प्रवेश कर जाते हैं और अस्थिका सर्वनाश करने लगते हैं। कशेरुकाओं के पृष्ठतल की अपेक्षा सन्मुख तल अधिक क्षत-ग्रस्त होता है इसके साथ ही क्षत अंश पर शरीर का (ऊपर का) भार पड़ता है जिससे क्षत कशेरुकायें एक दूसरी से सट जाती हैं। फल यह होता है कि शरीर आगे की ओर धनुषाकार होकर झुक पड़ता है और पृष्ठ देश में एक कूब सा निकल पड़ता है। रोग एक कशेरुका से दूसरी तक अन्तर-काशेरुक-चक्रों के सहारे अथवा सन्मुख अस्थि बन्धनों के सहारे बढ़ता जाता है। यह चक्र कशेरुकाओं की अपेक्षा अधिक घिस जाते हैं। जब बहुत सी कशेरुकायें नष्ट हो जाती हैं तब शरीर एक दम धन्वाकार हो जाता है। कभी कभी यह भी देखा गया है कि रोग कई केन्द्रों (कशेरुकाओं) में एक साथ आरम्भ हो जाता है और कभी केवल दो ही कशेरुकाओं पर आक्रमण होकर रह जाता है, एवं इनकी पर्यस्थि नष्ट नहीं होने पाती। कभी कभी क्षतस्थानोंमें मृतास्थियां (Sequestra) पाई जाती हैं।

स्वतः रोग मुक्त होने का केवल एक ही उपाय है—यह तभी सम्भव है जब क्षत कशेरुकायें एक दूसरी से सट कर अचल हो जाती हैं, तो यह घटना घट जाती है पर बहुधा इसके विपरीत पीव की उत्पत्ति हो जाती है, व्रण हो जाता है और रोग और भी भयंकर रूप धारण करता है।

मेरुदण्ड के पश्चाद्भग में आक्रमण होने से वात नाड़ियों (veins) पर दबाव पड़ता है जिससे पीड़ा इत्यादि वात लक्षण उत्पन्न होते हैं। ऐसे रोगी भी मिलते हैं जिनके केवल पार्श्वतल (कशेरुकाओं के पार्श्वतल) में आक्रमण होकर रह जाता है, और जिनका शरीर केवल एक पार्श्व में झुक जाता है। किन्तु ऐसे रोगी बहुत कम मिलते हैं।

लक्षण और चिह्न

(क) पीड़ा। यह सदैव बनी रहती है, यद्यपि आरम्भ में इसका पता नहीं चलता। पीड़ायें दो प्रकार की होती हैं—स्थानीय और उत्क्षिप्त (Local and Referred) स्थानीय पीड़ा अधिक कष्टप्रद नहीं होती, अथच दबाव डालने वा ठोकने पर अनुभूत होती है। मेरुदण्ड के संचालन से अथवा शिर या गर्दन पर ठोकने से भी यह जान पड़ती है। उत्क्षिप्त पीड़ा का कारण है, उन नाड़ी-मूलों (Nerve roots) का प्रदाह जो क्षत कशेरुकाओं के निकट ही सुषुम्ना से निर्गत होती हैं। अतएव इस प्रकार की पीड़ा उन्हीं स्थानों में अनुभूत होती है जिनमें इन नाड़ियों का वितरण होता है। उदाहरण स्वरूप यदि कटि देश की कशेरुकायें (lumbar Vertebrae) क्षत-ग्रस्त हो गई हों तो पीड़ा पावों में जान पड़ेगी।

(ख) पृष्ट वंश (मेरु दण्ड) की स्थिरता। आरम्भ में इसका कारण है मांस पेशियों का खिंचाव जो इस बात की चेष्टा करती हैं कि क्षतअंश को किसी प्रकार हिलना डुलना न पड़े। यदि मेरुदण्ड के निम्न भाग में आक्रमण हुआ हो तो पीठ एक दम कड़ी हो जाती है और सीधी तनी रहती है तथा रोगी ऐसी हरकतों से सदैव बचने की कोशिश करता है जिनमें उसे पीठ को किसी ओर झुकाना वा खींचना पड़े। जैसे उसे कोई वस्तु पृथ्वी तल से उठानी हो तो वह झुकना नहीं चाहेगा प्रत्युत अपने घुटनों एवं नितम्बों को मोड़ेगा और तब बहुत चेष्टा कर मल त्याग करने की स्थिति में बैठ कर उस वस्तु को उठा सकेगा। पुनः उठते समय भी अपने नितम्बों पर दोनों हाथों का भार देकर उठने की चेष्टा करेगा।

अन्त अवस्थाओं में यह स्थिरता दो कशेरुकाओं के आपस में संयुक्त हो जाने के कारण होती है। जब रोग छूट जाता है तब इस स्थिरता के बदले अन्य अंगों की अधिक चलायमानता देखी जाती है।

(ग) अंगवक्रता (deformity)। यह प्रायः प्रत्येक रोगी में वर्त्तमान रहती है। इसका परिमाण बहुत सी बातों विशेषकर क्षत कशेरुकाओं की संख्या पर निर्भर रहता है। जिस रोगी के केवल दो ही कशेरुकायें आक्रान्त होती हैं उस के मेरुदण्ड में एक कोणकी सी वक्रता उत्पन्न होती है किन्तु जब कई कशेरुकायें आक्रान्त होती हैं तब मेरुदण्ड प्रायः धन्वाकार हो जाता है। स्वस्थ व्यक्तियों की रीढ़ कटि-देश में आगे की ओर कुछ निकली रहती है—उन्नतोदर (Convex) रहती है। इस भाग में यक्ष्मा का आक्रमण होने पर रीढ़ की यह साधारण आकृति (Convexity) लुप्त हो जाती है कशेरुकायें एक दूसरी के ऊपर स्तंभाकार होकर बैठ जाती हैं।

(घ) व्रण। यक्ष्माक्रमण के फल स्वरूप व्रण बहुधा प्रकट होते हैं और इसके पूर्व कि ये पहिचाने जायं वा इनकी चिकित्सा हो सके ये आकार में बहुत बड़े हो जाते हैं। एक तो वैसे ही यक्ष्मा कीटाणुओं को शरीर से निकाल बाहर करना असम्भव है, पुनः

यदि इन गर्त्तों में पीव तैयार करने वाले कीटाणु प्रवेश कर जायं तो अवस्था बहुत ही भयङ्कर हो उठती है और आसन्न मृत्यु की आशंका की जाती है। वयस्कों की अपेक्षा बच्चों की यह अवस्था बहुधा देखी जाती है। पीव क्षत स्थान पर ही वनता है किन्तु मुलायम तंतुओं के भीतर बहुत दूर दूर तक चला जाता है तथा क्षत स्थान से दूर हटकर त्वचा को छेद कर निकलता है।

(ङ) वात लक्षण। ये ऐसे रोगी में देखे जाते हैं जिसकी अवस्था बहुत बुरी हो गई हो एवं जिसकी चिकित्सा का कोई प्रबन्ध नहीं किया गया हो। इस अवस्था में धीरे धीरे यक्ष्मा कीटाणु कशेरुकाओं के पश्चाद्भग पर भी आक्रमण करते हैं और वहां पर छोटी छोटी यक्ष्मा गांठें उत्पन्न करते हैं जिन से उन स्थानों से निकलनेवाली नाड़ियों पर प्रभाव पड़ता है। पुनरपि इन नाड़ी मूलों में यक्ष्मा जनित-प्रदाह भी होने लगता है। अस्तु, दो प्रकार के वात लक्षण उपस्थित होते हैं। जिन २ स्थानों में क्षत नाड़ियों का विस्तार होता है उन स्थानों में (नाड़ी प्रदाह के कारण) पीड़ा उत्पन्न होती है एवं नाड़ी मूलों पर अधिक दबाव पड़ने के कारण कुछ अंगों में यक्ष्मा में पक्षाघात (Paralysis) भी दृष्टिगोचर होता है। यदि सुषुम्ना पर अधिक दबाव पड़ता हो तो पूर्ण पक्षाघात की सम्भावना रहती है।

रोग की गति और भविष्य

यदि रोगी की चिकित्सा को छोड़ दिया जाय, तो रोग क्रम अधिक वेग से बढ़ता ही जायगा, अस्ति-क्षत और भी प्रत्यक्ष होता जायगा तथा व्रण होने की सम्भावना होगी। यदि आरम्भ से ही चिकित्सा की जाय तो इस बात की आशा की जा सकती है कि अस्थियां अचलायमान (ankylorsed) रह जायंगी और रोग हट जायगा। व्रण होने पर भी यदि रोगी को पूर्णतः निश्चेष्ट रहने का प्रबन्ध कर दिया जाय तो यह सूख जा सकता है। किन्तु जब व्रण फूट कर बाहर निकल पड़ता है तथा क्षत में पीव उत्पन्न करने वाले अन्य कीटाणु प्रवेश कर पाते हैं तब जीर्ण विषाक्त ज्वर (Chronic-septicoemia) के लक्षण उपस्थित हो जाते हैं और रोगी कुछ कालोपरान्त शक्ति हीन होकर काल कवलित होता है। यदि व्रण की पूर्ण चिकित्सा की जाय तथा रोगी के पूर्ण विश्राम (Complete rest) का प्रबन्ध कर दिया जाय तो रोगी मुक्त भी हो सकता है। पक्षाघात हो जाने से ही रोगी को हताश कर देना उचित नहीं है। अच्छी चिकित्सा से यह भी दूर किया जा सकता है। कभी कभी नूतन बहुसंख्यक यक्ष्मा का होना असम्भव नहीं है जैसा कि अन्यत्र यक्ष्मा में हो सकता है।

इन बातों के अतिरिक्त इस बात का ध्यान रखना उचित है कि यदि अन्य उपद्रव न हो तथा उचित चिकित्सा का प्रबन्ध हो सकता हो तभी रोगी का भविष्य अच्छा माना जा सकता है।

निदान

इसमें बहुधा भूल कम होती है। उपर्युक्त लक्षणों के वर्तमान रहते हुये रोग को पहिचानना कठिन नहीं है किन्तु तो भी रोग के आरम्भ में कभी कभी भूल हो सकती है। जिन रोगियों को पीड़ा अधिक होती है उनके निदान में कभी कभी धोखा हो जाता है। चिकित्सक का ध्यान वास्तविक रोगकी ओर न जाकर उस स्थान की ओर आकृष्ट हो जाता है जहां पीड़ा होती है। इस प्रकार की भूल से यह वात-रोग वा वृक्क रोग निर्धारित किया जा सकता है। कभी कभी वयस्क रोगियों में गुल्म (Tumour) उपदंश (Syphilis) इत्यादि से इसे पृथक् करना कठिन हो जाता है। यदि रोगी के पूर्व वृत्तान्त, रोगारम्भ एवं क्षत स्थान के रौञ्जन किरण छाया चित्र (Radiograph) पर ध्यान दिया जाय तो यह कठिनाई दूर होसकती है। कभी २ कुछ दिन तक चिकित्सा करनेके उपरांत उसके फलाफल पर निदान निर्भर करता है।

क्रमशः

मूर्च्छा चिकित्सा

(लेखक—कविराज महेन्द्रनाथ पाण्डेय, आयुर्वेद विशारद, भिषगरत्न, आयुर्वेद वाचस्पति M. Sc. (A))

मूर्च्छा रोग की समन्वयात्मक चिकित्सा लिखने के पहले यह आवश्यक है कि रोग का कारण और लक्षणों से भी पाठकों को परिचित करा दिया जाय। यह याद रखना चाहिये कि मूर्च्छा रोग स्वतंत्र भी होता है और अन्य रोगों में उपद्रव के रूप में भी होता है।

मूर्च्छा का लक्षण यह है—

सुख दुख व्यपोहाच्च नरःपतति काष्ठवत्।
माहो मूर्च्छेति तामाहुः—

सुख दुख से युक्त होकर मनुष्य लकड़ी के समान संज्ञा शून्य होकर गिर पड़ता है। इसी को मोह और मूर्च्छा कहते हैं। मोह और मूर्च्छा ये पर्याय-वाची शब्द हैं। दूसरे आचार्य ऊपर के श्लोक का यह भाव बताते हैं कि सुख, सत्व और दुख रज इनको तम आवृत कर लेता है और मनुष्य संज्ञा शून्य होकर गिर पड़ता है। इसका अभिप्राय यह हुआ कि तमोगुण जब सतोगुण और रजोगुण को ढंक लेता है तब संज्ञा शून्य हो जाता है। यह आध्यात्मिक भाषा है इसे लौकिक भाषा में समझने की चेष्टा करनी पड़ेगी।

इसके कारण के सम्बन्ध में शास्त्र में इस प्रकार आदेश है:—

क्षीणस्य बहु दोषस्य विरुद्धाहार सेविनः।
वेगाघातादभिघाताद्धीन सत्व स्य वा पुनः॥

अर्थात्, क्षीण पुरुषों को बहुत दोष वालों को, संयोग विरुद्ध आहार सेवन करने वालों को, मल आदि वेगों के धारण करने वालों को सत्व बल से हीन लोगों को और चोट लगे व्यक्तियों को मूर्च्छा रोग होता है। दूसरे शब्दों में ये कह सकते हैं कि ऊपर के छः प्राणियों में से अभिघात वाले को छोड़कर शेष पांच जिनको मूर्च्छा रोग होता है तमः प्रधान होते हैं। धातुओं के क्षीण होने से तम बढ़ता है, दोषों के बढ़ने से तम बढ़ता है, विरुद्धाहार से तम बढ़ता है, वेगाघात से तम बढ़ता है, हीन सत्व वाले में तम अधिक रहता ही है।

आगे शास्त्र में इस प्रकार निर्देश है:—

वातदिभिः शोणितेन मद्येन च विषज च।
षट्स्वप्येतासु पित्तंतु प्रभुत्वेनाव तिष्ठति॥

वातादि दोषों से उत्पन्न मूर्च्छा में (ये वातज पित्तज कफज तीन हैं चरक के मत से चौथा सन्निपातज भी है) और शोणित से उत्पन्न, मद्य से उत्पन्न और विष से उत्पन्न इन ६ प्रकार के मूर्च्छा रोग में पित्त की ही प्रधानता रहती है। इन वाक्यों से स्पष्ट हो जाता है कि तम और पित्त प्रायः एक ही पदार्थ या एक से कार्य करने वाले पदार्थ हैं और यह तम या पित्त ही मूर्च्छा का कारण होता है। चिकित्सा के समय तम या पित्त को सदैव ध्यान में रखना पड़ेगा।

सम्प्राप्ति के सम्बन्ध में आचार्यों का मत इस प्रकार है—

करणा यतने षूग्रा वाह्येष्वाभ्यन्तरेषु च।
निविशन्ते यदा दोषा स्तदा मूर्च्छन्ति मानवा॥
संज्ञावहासु नाड़ी षु पिहिता स्वनितादिभिः।
तमोऽभ्यु पैति सहसा सुख दुःख व्यपोहकृत॥

करण (मन) के वाह्यस्थान कर्मेन्द्रियों और अभ्यन्तर स्थान धीन्द्रियों (बुद्धि की इन्द्रियों) में जब

अत्यन्त उग्रदोष प्रवेश कर जाते हैं तब मनुष्य मूर्च्छित हो जाता है, संज्ञा वहन करने वाली सिरा धमनी और स्रोत जब वातादि दोषों से आवृत हो जाते हैं, तब सहसा तम की वृद्धि हो जाती है, यह तम मन के अज्ञान का हेतु होता है, और तब मनुष्य सुख-दुख का ज्ञान भूल जाता है।

आधुनिक मत से चेतना स्थान मस्तिष्क है प्राचीन मत से हृदय, हृदय से मस्तिष्क को जाने वाली धमनियां और मस्तिष्क में सब चेतना स्थान है। और इन सबों का मूल हृदय है क्योंकि यही सर्वत्र और मस्तिष्क में भी रक्त भेज कर उसका पोषण करता है इसलिये आयुर्वेद के मत से हृदय सर्व श्रेष्ठ चेतना स्थान है। एलोपैथी का मत है कि जब मस्तिष्क में रक्त नहीं पहुंचता तब मूर्च्छा उत्पन्न होती है। आयुर्वेद इसी को यों कहता है, कि जब जब वातादि दोषों से हृदय और धमनियां आवृत हो जाती हैं तब मस्तिष्क में रक्त नहीं पहुंचता और तरल के जमाव से तम की वृद्धि हो जाती है और मनुष्य मूर्च्छित हो जाता है। अब यह आयुर्वेदीय सिद्धान्त एलोपैथी के कुछ विद्वान भी मानने लग गये हैं—

मूर्च्छा एक स्वतन्त्र रोग तो है ही, अनेक रोगों में भी होता है जैसे तेज ज्वर में मूर्च्छा होती है, मधुमेह में मूर्च्छा होती है, हिस्टीरिया (योषापस्मार) में एक अन्य प्रकार की मूर्च्छा होती है। पानी में डूबने पर मूर्च्छा हो जाती है और गिरने और लाठी आदि के प्रहार के फल स्वरूप भी मूर्च्छा होती है। इनके अतिरिक्त मद्य और विष से मूर्च्छा होती है जिसका उल्लेख शास्त्र में भी है। आयुर्वेद का सन्यास और एलोपैथी का एपोप्लेक्सी भी एक प्रकार की सांघातिक मूर्च्छा है।

वातादि दोष हृदय में प्रवेश करके रक्तवहा नाड़ियों (धमनियों) को आवृत कर लेते हैं तब मस्तिष्क में रक्त पहुँचना या तो कम हो जाता या बन्द हो जाता है और मनुष्य को मूर्च्छा आ जाती है। आयुर्वेद स्पष्ट कर देता है कि दोषों के कारण हृदय और धमनियां अवरुद्ध हो जाती हैं और मूर्च्छा होती है। एलोपैथी के विशेषज्ञ यह तो मानते हैं कि मस्तिष्क में रक्त कम पहुंचने से मूर्च्छा होती है परन्तु अभी तक वे यह निर्णय नहीं कर सके हैं कि रक्त भ्रमण में कोन सा व्यवधान आ जाता है।

चूंकि मूर्च्छा में रक्त परिभ्रमण में रुकावट होती है और इसका एक कारण यह भी होता है कि हृदय का कार्य शिथिल हो जाता है अतः नाड़ी की गति भी सूक्ष्म और धीमी होजाती है। निद्रामें नाड़ी सूक्ष्म नहीं होती। इस भेद से निद्रा और मूर्च्छा का भेद हो जाता है।

कुछ मूर्च्छा ऐसी भी हो सकती हैं कि नाड़ी की गति बन्द सी हो जाय। परन्तु यह लक्षण मूर्च्छा का असाध्य लक्षण नहीं है चिकित्सक को तत्परतापूर्वक चिकित्सा में संलग्न हो जाना चाहिये मूर्च्छा के सब भेदों के लक्षण लिखने से विस्तार बढ़ जायगा।

मूर्च्छा में होठ नीले हो जाते हैं, शरीर पीला पड़ जाता है, अंगलियां भी नीली हो सकती हैं; आयुर्वेद के मत से यह पित्त का लक्षण है परन्तु वस्तुतः उन स्थानों में रक्त न पहुंचने से यह लक्षण उपस्थित होते हैं। आयुर्वेद का मत यह है कि रक्त भ्रमण रुक से रक्त का जलीय अंश या कफ न पहुँचने से जमने लगता है और यही पित्त का लक्षण है। नीलिमा और पीलापन में प्रगट होता है।

चिकित्सा

चूंकि पित्त बढ़ने से यह रोग होता है अ शीतल चिकित्सा इसमें होनी चाहिये, बेहोश को खुली हवा में रखिये। पंखे झलिए। मुंह पर शी

ल के छींटे दीजिए, भीड-भाड हटा दीजिए। नाक बा देने से सांस रुकने पर रोगी मुंह खोल देता है और होश में आजाता है, सिर पर ठण्डी पट्टी रखने भी लाभ होता है। गुलाब का इत्र सुंघाने से भी लाभ होता है।

जब इन सामान्य उपायों से काम न चले तब तेरा तेज प्रयोग करना पडता है। नौसादर और चूना मिलाकर सुंघाइये, श्वासकुठार रस या कल्पतरु रस द्वारा नाक द्वारा प्रधमन कीजिये। अथवा काली मिरच और तुलसी के पत्ते एक में पीसकर आंख में आंजने से मूर्च्छा दूर होती है। चिडियांका पर जलाकर सुंघाने से बडी जल्दी मूर्च्छा दूर होती है।

एलोपैथी के चिकित्सक एमोनिया कार्ब सुंघाते हैं। स्मेलिंग साल्ट भी सुंघाया जाता है। इन सुंघाने वाली चीजों का वही असर होता है जो आयुर्वेदीय औषधियों का होता है। पंखे और शीतल जल की व्यवस्था एलोपैथ लोग भी करते हैं।

यदि बेहोशी इस प्रकार की हो कि सांस भी रुक गई हो जैसे विष और जल में डूबने पर होती है तो कृत्रिम सांस चलाने की व्यवस्था करनी पड़ेगी। कृत्रिम श्वास चलाने की तीन विधियां प्रचलित हैं। इन विधियों को लिखने से विस्तार बहुत बढ़ जायगा अतः इसे किसी जानकार से सीख लेना अच्छा होगा। वैद्य लोग प्रायः इन विधियों के सीखने से उदासीन होते हैं।

जल में डूबे व्यक्ति के पेट से जल निकालने की व्यवस्था करनी पडती है। विष से मूर्च्छित व्यक्ति की चिकित्सा करते समय विष निकालने और उसकी चिकित्सा की भी व्यवस्था करनी पड़ेगी। यदि मद्य पीने से रोग हुआ हो तो मदात्यय की चिकित्सा करनी पड़ेगी। इसमें मद्य पिला देनेसे भी लाभ होजाती है। हिस्टेरिया की मूर्च्छा में ये उपाय करने ही पडेंगे, परन्तु स्थाई लाभ के लिए हिस्टीरिया की चिकित्सा करना आवश्यक होगा।

रोगी के होश में आजाने पर दोषों को निकाल देना अच्छा होता है। रोगीके होशमें आजाने पर एक चम्मच साल्ट वोलेटाइल आधा ग्लास जल में मिलाकर देते हैं और ऐसा विश्वास किया जाता है कि यह उत्तेजक होता है।

आयुर्वेदीय मत से इस अवस्था में मकरध्वज दिया जाता है। इसका भी कार्य शक्ति बढ़ाना है। बल्कि मकरध्वज, बंग भस्म के मिश्रित कर देने से कुछ दिनों में मूर्च्छा का दौरा भी रुक जाता है।

अंगुलियों में नख के पास सुई से छेद करने से रक्त निकल जाने से मूर्च्छा दूर होजाती है। वस्तुतः ये सब उपाय उस समय किये जाते हैं जब रोगी मूर्च्छित रहता है और उसे प्रबुद्ध करना (होश में लाना) होता है। रक्त देखकर या रक्त सूंघकर जो मूर्च्छा होती है वह शीतल उपचार से दूर होजाती है।

मूर्च्छा रोग कुछ लोगों को बार २ होने लगता है और बहुत परेशानी का कारण होजाता है। ऐसे रोगी की चिकित्सा बहुत विचारपूर्वक करनी पडेगी और निदान (कारण) की तरफ ध्यान देना पड़ेगा। क्षीण पुरुष की क्षीणता दूर करनी पड़ेगी, रक्त बढ़ाने का प्रबन्ध करना पड़ेगा। बहुत दोष वाले को यह रोग होता है अतः दोषों को घटाना पड़ेगा पेट साफ करने की व्यवस्था करनी पड़ेगी विरुद्ध भोजन बन्द करके सन्तुलित भोजन की व्यवस्था करनी पड़ेगी और रोगी को यह समझना पड़ेगा कि वेगों को भूल कर भी न रोके।

दोषों को क्षीण करने के लिए उपवास, एनिमा मालिश स्नान और शीतल वायु में भ्रमण करने पर जोर देना पड़ेगा और भोजन सात्विक देना पड़ेगा जिसमें जल और दूध ही शामिल हो सकेंगे। इसके

(शेष पृष्ट १८६ पर पढ़ें)

* रोग और रागिनी *

(लेखक—वैद्याचार्य होरमस जी बम्बई)

रोग को निर्मूल कर आरोग्य प्रदान करने में संगीत का प्रमुखस्थान है। जब महामना श्री मालवीय जी को एक बार अनिद्रा रोग के कारण सारीरात जागते २ व्यतीत करनी पड़ती थीं; सब औषधोपचार निष्फल सिद्ध हो चुके थे एसे समय में प्रसिद्ध गायन श्री ओंकारनाथ ने उनके सामने एक एसे राग का आलाप किया जिससे वह एतिहासिक पुरुष थोड़ी ही देर में निद्राधीन हो गया और इसी राग से आरोग्य लाभ किया। मुगल कालीन कुछ पुस्तकों से यह सिद्ध होता है कि मधुर संगीत से अनेक रोग दूर हो सकते हैं। महर्षिचरक और उनके बाद के प्राचीन पंडितों ने रोग निवारणार्थ विविध राग रागनियां बताकर जनता के कल्याण का मार्ग प्रशस्त किया है। श्री पं० गोपीवल्लभ अपने एक लेख में लिखते हैं कि सुदूर देशों में ऐसी संस्थायें हैं जो अपनी प्रबल प्रार्थनाओं तथा विचार प्रवाहों से वायु मण्डल में सूक्ष्म कम्पन उत्पन्न करके रोगियों को रोग मुक्त करती हैं। न्युयोर्क की कुमारी डोरा जुडेज के घोर निद्रा रोग को सांरगी के सुमधुर स्वरों से दूर करके स्वास्थ्य प्रदान किया गया था। इसी प्रकार श्री कबीर साहिब ने संगीत द्वारा ही आत्मज्ञान का प्रचार किया था, मीरा ने अपने अन्तःस्थल में सोये हुए भगवान को जगाया था। अर्वाचीन युग के आयुर्वेद मारतण्ड श्री झंडू भट्ट ने किसी कुशल गायक को बुलाकर जसदन के महाराजा की पुत्री को चिन्ताजनक रोग से मुक्त किया था। एक स्वनामधन्य दीवान साहिब के जीर्ण घोर शिरःशूल को सितार पर प्रातःकाल आसावरी बजाकर सदैव के लिये दूर दिया गया था। उन्होंने दरबार में रात्रिको सारंग से आरंभ करके क्रमशः कान्हडा, विहाग और ख[illegible] राग गाकर ठाकुर साहिब के पित्त विकार [illegible] मलेरिया ज्वर को दूर किया था। ग्रीस के फिला[illegible] पैथागोरस की ओर से भी राग मालकोष, सो[illegible] कालिगडा और परज संगीत का विवरण मिलता यह उपरोक्त राग रागनियां जीर्ण तथा हठीले कफ वायु रोगों को शमन करती हैं और रक्षा करती हैं

विहाग और केदारा

यह दोनों रागनियां अनिद्रा मिटाकर [illegible] मधुर निद्राका आस्वादन कराते हैं।

कल्याण

यह कायाकल्प के समान बल, शक्ति, चे[illegible] और वाजीकरण शक्ति को बढाने वाला आनन्द [illegible] उल्लासप्रद राग है।

पीलू, कान्हड़ा और पूर्वी

निर्बलता मिटाकर शक्ति का संचार कर[illegible] और उदर पीड़ा को शान्त करते हैं, इनमें का[illegible] शिरोमणि है।

सारंग

प्रस्वेद लाकर ज्वर उतारने और विशेषकर [illegible] ज्वर को दूर करने में रामबाण हैं।

धनाश्री

यह राग ओज और शक्ति का विकास [illegible]

और कफ रोगों का शमन करने में सफल सिद्ध हुई है।

भैरव

कास रोग मिटाने में अकसीर है। साहस वर्धक तथा शूरता उत्पन्न करने के लिए सर्वोत्तम है।

भैरवी

वात, पित्त और कफ त्रिदोष नाशक है और पौष्टिक मात्रा के गुण इसमें हैं। इसका समय प्रातः-काल है।

विभास

स्मृतिभ्रंश, हिस्टीरिया और मानसिक रोगों में इसराग का उत्तम प्रभाव पाया जाता है, ज्वर, कफ तथा टी० बी० में अपूर्व लाभ प्रदर्शन करने वाली ध्वनि है।

असावरी

उत्साह वर्धक, शिथिलता नाशक और मगज में घननाद आदि का शमन करके शान्ति-स्थिरता प्रदान करती है। यह दिन के दूसरे पहर में गाई जाती है।

दीपक राग

इस राग को सुनने वाले के हृदय और शरीर में लाल सुर्ख भट्टी के समान उष्मा पैदा हो जाती है। हविस को उत्तेजित करता है।

मल्हार

वर्षा ऋतु के समान शीतलता प्रदान करने वाले इस राग से कैन्सर तथा गरमी के रोग मिटते हैं।

टी० बी० और दमा में-मुलतानी, बिलावल, तिलंग।
ब्लड प्रेशर (रक्त चाप) में-टोडी, पूर्वी।
प्रदर में—देश, सारंग
हिस्टीरिया में-कान्हड़ा, दरबारी, खमाच।
उन्माद (पागलपन) में—विहाग, बागेश्वरी।
मलेरिया में—मारवा, हिंडोल।
दिमाग के रोगों पर—भैरवी, टोडी, सोहनी।
उस्कराहट—कोमल गांधार।
सर्व रोगों में—भजन, कीर्तन की धुन।
उदासीनता, स्प्रिंगवॉल्टज, दुर्बलता, बेचैनी में—. कलेरावो सांगीत।
हिस्टीरिया में—हारप।
वात रोग में—मोझार्ट का संगीत।
भय और हृदय की दुर्बलता में—मारसेल्स राग।
बेवफाई और दगाबाजी में—रॉयल अनेथम।
अनिद्रा में—ह्यु बर्ट की रागनियां।
गूंगापन और तोतलापन पर—सेन्टीमेन्टल जरनी।
भूत प्रेत के त्रास में—हारप का संगीत।
अहंकार में—पाइप का संगीत।
सायटिका में—टमपेत की धुन।
कैन्सर में—वायलीन के शीतल स्वर।
स्नायुमण्डल दौर्बल्य—भैरव।

सूर्य की किरणों में इन्द्रधनुष के ७ रंग हैं। संगीत की ध्वनि के साथ इनका सम्बन्ध है। सा-रे गा-मा-पा-धा-नी रागों का प्रभाव लाल, नारंगी, पीला, हरा, ब्ल्यू, इन्डीगो और वायलेट आदि। रंगो के प्रभाव विषयक लेख आगे प्रकाशित करायेंगे।

गवैयों का प्रबन्ध

आज के युग में तानसेन को ढूंढना तो कठिन है किन्तु फिर भी बड़े २ धनवान और रइस बड़े २ कलाकारों और शास्त्रीय संगीत विशारदों का प्रबन्ध करके लाभ ले सकते हैं। जन साधारण के लिये विभिन्न राग रागनियों के रेकार्ड मिल जाते हैं उनसे ही यत्किञ्चित लाभ उठाया जा सकता है। इसके लिए

(शेष पृष्ठ १८६ पर पढ़ें)

खून का दबाव

हमारे भाई और बहिनें प्राय: इस गलतफहमी के शिकार पाये जाते हैं कि खून का दबाव रोगों में से एक रोग है। उनका यह भ्रम शायद इसलिए है कि वे डाक्टर लोगों से यह सुनते हैं कि फलां आदमी 'ब्लड-प्रेशर' के चंगुल में है या अमुक बहिन खून के दबाव से ग्रस्त है। बहुत से लोग इस बात को नहीं जानते कि खून का दबाव हर व्यक्ति में होता है और होना ही चाहिये। यदि यह दबाव न हो, तो खून का संचार किस प्रकार शरीर में सम्भव हो सकता है? इस दबाव के कारण ही तो खून शरीर के विविध अंग प्रत्यंगों में पहुंचता है और हमें जीवन और शक्ति देता है।

अगर हम खून के दबाव को एक रोग मानें तो यह रोग ऐसे ही हैं, जैसे खून का शरीर में दौरा करना। खून के दौरे का कोई सोच समझ वाला मनुष्य रोग नहीं मानेगा, बल्कि उसे एक स्वाभाविक, प्राकतिक और अत्यावश्यक क्रिया ख्याल करेगा। इसी प्रकार खून में दबाव की शक्ति का होना भी एक स्वाभाविक गुण है और यह प्रत्येक मनुष्य में होना ही चाहिए। किन्तु जब यह दबाव अपनी साम्य (normal) अवस्था से बढ़ जाता है अथवा कम हो जाता है, तो फिर यह रोग का एक चिन्ह बन जाता है।

दबाव क्यों हो जाता है?

प्राय: यह सब जानते हैं कि हमारा दिल खून को धकेलने वाला (Pumping) महत्वपूर्ण यन्त्र है। जब यह फैलता है तो खून इसमें आता है और जब यह सिकुडता है तो इससे रक्त बाहिर धकेला जाता है। यह क्रिया नियमित रूप से दिन रात के चौबीस घण्टों में लगातार होती रहती है। एक मिनिट में ७२ बार हृदय का सिकुडना और फूलना होता है और इसी से नब्ज की गति की नाप होती है।

खून का दबाव चार बातों पर निर्भर है—प्रथम हृदय की शक्ति पर, दूसरे रक्त-प्रणालियों की ग्रहण योग्यता (Capacity) पर, तीसरे रक्तप्रणालियों की अवस्था पर अर्थात इस बात पर कि वे कोमल और लचीलीं हैं या कठिन और भग्न हैं और चौथे इस बात पर खून का दबाव निर्भर है कि छोटी धमनियों की शाखाओं के सिरों पर किस कदर रुकावट या प्रतिरोध होता है।

एक सामान्य मनुष्यमें खून का दबाव १२० से १४० मिलिमीटर तक माना गया है। यदि यह १४० से ऊपर होजाय तो इसे साधारण दबाव से अधिक मानना चाहिये और यदि १२० से नीचे चला जाय तो इसे अल्प रक्तचाप (low blood-pressure) समझना चाहिये। ये दोनों अवस्थायें असाधारण हैं और रोग की सूचना देती हैं।

रक्तचाप या खून का दबाव शरीर के भिन्न भिन्न भागों में एक ही जैसा नहीं होता। हृदय से उस अंग की दूरी के अनुसार उसमें भिन्नता आजाती है इसलिए चिकित्सा शास्त्रियों ने इसकी जांच के लिए भुजा की धमनी, जो ऊपरी हिस्से में सामने की ओर रहती हैं, का परीक्षण करना ही ठीक माना है। यह हिस्सा एक तो अधिक सुविधाजनक है और दूसरे हृदय के निकट होने के कारण यहां दबाव और जगहों से अधिक रहता है।

रक्तचाप कैसे नापा जाता है ?

आजकल खूनके दवाव को नापना बहुत आसान होगया है। पहले समयों की दिक्कतें अब नहीं हैं। बाजार में एक यन्त्र मिलता है जिसे 'सफिग्मो मेनो मीटर' (Sphygmomanometer) कहते हैं और इसके द्वारा रक्तचाप ठीक २ तौर पर और बड़ी आसानी से मालूम किया जाता है।

सफिग्मो-मेनो मीटर यन्त्र के अन्तर्गत कई एक वस्तुयें होती हैं। एक तो इसमें ऐसा थैला होता है जिसे हवा द्वारा फुलाया जा सकता है और जिसे बाजू के ऊपर भली भांति लपेटा भी जा सकता है। इसमें दूसरी चीज रबड़ की नली और उसके सिरे पर लगा हुआ एक रबड़ का अन्दर से खोखला भोंपा होता है, जिस पर दवाव डालने से थैली में हवा भर जाती है। तीसरी वस्तु जो इस यन्त्र का मुख्य भाग है वह नापने का यन्त्र है, जिसमें पारा भरा होता है। यह यन्त्र इस थैले से रबड़ नली द्वारा जुड़ा रहता है।

नाप-यन्त्र का प्रयोग

खून का दबाव नापते समय भुजा के ऊपरी भाग के इर्द गिर्द लपेट दिया जाता है। यह करने के बाद चिकित्सक अपने बायें हाथ से रबड़ का भोंपा को दबाता है और दायें हाथ से नब्ज को देखता है। वह तब तक भोंपा को दबाये रहता है जब तक कि कलाई पर की नब्ज की धड़कन बन्द नहीं होजाती। तब फिर वल्व के द्वारा थैले से धीरे २ हवा निकाली जाती है, यहां तक कि नब्ज की अति सूक्ष्म धड़कन अनुभव होने लगती है। उस समय पारे के निशान को नाप यन्त्र में देखा जाता है। यह निशान धमनी के सिकुड़ने के समय के दबाव का सूचक होता है। यदि हवा धीरे धीरे और निकाली जाय, यहां तक कि पूरी नब्ज की धडकन मालूम होने लगे तो उस समय पारा एकदम पूर्व स्थान से हिल जाता है और इस बात का परिचय देता है कि धमनी के फैलने का दबाव कितना है।

दबाव घटता-बढता क्यों है ?

खून के दबाव के घटने बढ़ने के कई कारण हैं। जिस समय मनुष्य गहरी सोच में होता है या अधिक चिन्तित होता है या बहुत क्रोध के आवेश में होता है अथवा उसके शारीरिक अंग प्रत्यंग पारिश्रमिक कामों में जुटे होते हैं, उस समय तो उसका रक्त संवहत दबाव से होता है। यदि इस प्रकारकी मानसिक अथवा शारीरिक क्रियायें चिरकाल तक लगातार चलती रहें तो स्वाभाविक रूप से खून का दबाव बढ़ा रहता है और इसके परिणामस्वरूप रक्तप्रणालियों पर हानिकारक प्रभाव पडता है।

ज्यूं-ज्यूं हम आयु में बड़े होजाते हैं, त्यूं-त्यूं हमारी खून की धमनियां कठिन होती जाती हैं और उनका लचीलापन घटता जाता है। इसका परिणाम यह होता है कि उनमें खून के बढ़े हुए दबाव के सहने की शक्ति दिन प्रतिदिन कम होती जाती है और इसीलिए बडी उमर में आकर प्रायः लोग रक्तचाप के अधिक दबाव के शिकार हो जाते हैं।

तीसरा एक और कारण भी है। कई बार ऐसा होता है कि चूने के लवण (Calcium Salts) धमनियों की दीवारों पर जम जाते हैं। इसके फलस्वरूप धमनियों के मार्ग छोटे होजाते हैं और हृदय को शरीर में रक्त भेजने के लिए अधिक दबाव से काम लेना पडता है। इसका स्वाभाविक परिणाम यह होता है कि व्यक्ति का रक्तचाप बढ़ जाता है।

इस अवस्था के विपरीत रक्तप्रणाली की दीवार जब अधिक ढीली होजाती है और इसका फैलाव बढ जाता है, तो उस समय रक्तचाप में कमी होजाती है। अत्यन्त कमजोरी में भी यह अवस्था पैदा होजाती है।

यह स्थिति किसी भी व्यक्ति के लिए खतरनाक होसकती है। सच बात तो यह है कि रक्तचाप बढ़ने की अपेक्षा घटना अधिक खतरनाक है।

दबाव के रोगियों को क्या करना चाहिए ?

रक्तचाप के बीमारों के लिए सबसे बडा नुस्खा अपने मन और शरीर को हर प्रकार के तनाव से दूर रखना है। इसका मतलब यह है कि उन्हें क्रोध करना, ईर्ष्या द्वेष की भावना रखना, चिन्तित रहना, अपनी शक्ति से अधिक शारीरिक परिश्रम करना इत्यादि अवस्थाओं से हमेशा बचते रहना चाहिये। इसके विपरीत उन्हें अधिक शान्त, आशावादी, विशाल हृदय, प्रसन्न वदन, सात्विक भावनायुक्त बनने का प्रयास कर रहना चाहिये।

इस रोग में दूसरा उपचार भोजन विषय सावधानी का होना है। भोजन हल्का और जल पचने वाला होना चाहिये। रोगी पेट को जितना स्व अवस्था में रख सकेगा, उतना ही वह इस रोग से ब रहेगा। इस बारे में संयम बहुत काम देता है और परहेज से अधिक सच्चा मित्र उसके लिए नहीं है। क न होने दी जाय, हल्का व्यायाम व प्रातःकालीन भ्रम तथा मलमल कर स्नान करना—यह तीसरी प्रकार की औषधियां हैं जिनका प्रयोग करने से रक्तचाप का रोग काफी लाभ उठा सकता है। (स्वास्थ्य सुधा)

(शेष पृष्ठ १८१ का)

बाद रक्त बढ़ाने के लिए दूध चावल गेहूँ की रोटी और हलकी सादी तरकारियों की व्यवस्था करनी होगी और मीठे ताजे फलों की अधिकता रखनी होगी जिससे रक्त में पित्त का अंश आवश्यकता से अधिक न रह जाय। दूसरे शब्दों में यों कहेंगे कि रक्त की अम्लता कम हो जाय और क्षारता बढ़ जाय।

औषधियों की सहायता यदि इस कार्य में आवश्यक हो तो आंवले के रस में घी पकाकर २ तोला यह घी दीजिये। इसमें मिश्री मिला सकते हैं। कल्याण घृत का सेवन करें। रात को त्रिफला का सेवन करावे। प्रातःकाल गुड़ और अदरक खिलाइए और ऊपर निर्दिष्ट पथ्य पालन कराइए।

ऊपर जो चिकित्सा लिखी गई है वह शास्त्र सम्मत और वैज्ञानिक है; जो लोग बिना दोषों का शोधन किये और सत्व गुण बढ़ाये और खान पान में बिना उचित परिवर्तन किये केवल जड़ियों के द्वारा इस रोग की चिकित्सा करते हैं मेरी राय में वह ठीक नहीं है न शास्त्र सम्मत ही है।

(शेष पृष्ठ १८३ का)

आप दुकानदार के यहां रेकार्ड बजवाकर सुन सक हैं। जो रेकार्ड आपको आनन्द और आरोग्यदाय लगें उनको पसंद करो। कबीर और मीरा के भजन नजीर की गजलें श्रोताओं को अन्तर्मुखी बनाती हैं संगीत के मन बहलाने के साधन द्वारा प्राप्त ज्ञा हृदय पट पर चिरकाल तक अंकित रहता है। भक्ति मार्ग के प्रवर्तकों ने संगीत की प्रशंसा की है। लो गाने से रोता बालक शान्त होकर सो जाता है। संगी प्रेमी हिरण वीणा की स्वर लहरियों पर मंत्र मुग्ध होक शिकारी का भोग बनता है। बीन बजाकर सपेरे सां को वश में कर लेते हैं। युग महापुरुष महात्मा गांध ने अनेक बार अस्वस्थ मन और शरीर का सुधा संगीत द्वारा किया था। किशोरावस्था में सुनी हु रामायण की चौपाइयों का गायन उनके हृदय विकसित कली की भांति आजीवन ताजा रहा। स १९०७ में ट्रांसवाल में मार पड़ने से घायल महात्म जी को ओलिव के भजनों से शान्ति और आराम प्रा हुआ था।

मधु-मेह Diabetes Mellitus.

(लेखक—वैद्य गौरीलाल चांनना, बी० ए०, वैद्य वाचस्पति)

आयुर्वेद में मधुमेह को प्रमेहका एक भेद माना है वहां मधुमेह की उत्पत्ति के किसी पृथक् कारण का वर्णन भी नहीं और सम्प्राप्ति चिकित्सा आदि का निर्देश भी सामान्य रूप से प्रमेहों के साथ ही कर दिया है। इसलिए आयुर्वेद मतानुसार मधुमेहको समझनेके लिए पहले प्रमेहकी वास्तविकता जानना आवश्यक है।

प्रमेह शब्द की व्युत्पत्ति 'प्रकर्षेण मेहति' इस प्रकार है जिसका अर्थ है मूत्र का अधिक मात्रा में आना। मूत्राधिक्य स्वयं रोग नहीं अपितु केवल एक लक्षण मात्र है जो कई अवस्थाओं में देखा जाता है इस लिये आयुर्वेद में भी प्रमेह का २० भेदों में वर्णन किया है और उनके सामान्य लक्षणों में मूत्राधिक्य का वर्णन है।

"सामान्यं लक्षणं तेषां प्रभूताविल मूत्रता"
(माधव निदान प्रमेहाधिकार)

अर्थात् मूत्र का अधिक मात्रा में आना और गदला आना यह प्रमेहों का सामान्य लक्षण है। जरा और विस्तार से समझना चाहें तो इसका अर्थ यह है कि उन समस्त रोगों को, जिनमें मूत्र की रचना, आकृति, मात्रा, वर्ण, घनता आदि स्वस्थवत न रहे, प्रमेह कहना चाहिये। अब समझने योग्य बात यह है कि मूत्र क्या है और इसके उपरोक्त रूप रचना-गन्ध आदि में अन्तर कैसे आता है। पाठक जानते हैं कि स्वेद, विष्ठा, नाक और कान का मल आदि इन मल पदार्थों के समान मूत्र भी एक प्रकार का मल पदार्थ है और इसमें भोजन द्वारा खाये हुये पदार्थों के सात्म्यीकरण की प्रक्रिया में उत्पन्न हुये अनावश्यक एवं हानिकारक द्रवीभूत पदार्थों का समूह होता है, अतः मूत्र की मात्रा-वर्ण आदि में अन्तर तभी आ सकता है जब कि मूत्र द्वारा स्वस्थ अवस्थामें निकलने वाले मल-पदार्थों के अतिरिक्त किसी अन्य असामान्य पदार्थ का उसमें मिश्रण हो अथवा उन्हीं सामान्य पदार्थों में से कोई एक व अनेक विशेष रूप से न्यूनाधिक मात्रा में उस में विद्यमान हों, अतः यह बात समान रूप से सब मूत्र रोगों (प्रमेहों) के लिए सत्य है कि उनका कारण पचन तथा सात्म्यीकरण की प्रक्रिया में कहीं गड़बड़ का हो जाना है। यह गड़बड़ी अभिष्यन्दी और अपाच्य भोजन के निरन्तर अधिक मात्रा में प्रयोग से हो, अन्य किसी जैवीकारण से हो, पाचकांगों की विकृति से हो अथवा शरीर के अन्दर होने वाली सात्म्यीकरण सम्बन्धी विभिन्न प्रक्रियाओं में किसी ज्ञात व अज्ञात हेतु से हुये व्यवधान के कारण हो इन मूत्र रोगों (प्रमेहों) के कारणों में है यही गड़बड़ी। इस लिये आयुर्वेदोक्त प्रमेह निदान—

आस्यासुखं स्वप्नसुखं दधीनि
ग्राम्यौदकानूप रसाः पयांसि।
नवान्नपानं गुड़वैकृतं च
प्रमेह हेतु कफकृच्च सर्वम्।

परन्तु लगभग सत्य ही है। उपरोक्त कारणों में से कौन सा कारण शरीर में क्या विकृति पैदा करके किस प्रकार से कौन से प्रमेह को जन्म देता है (इसे ही हम सम्प्राप्ति कहते हैं) इसका कोई स्पष्ट उल्लेख हमारे यहां नहीं मिलता। हमारे शास्त्र में प्रमेह की सम्प्राप्ति के विषय में जो कुछ लिखा है वह यह है।

मेदश्च मांसं च शरीरजं च क्लेदं कफोवस्तिगत् प्रदूष्य ।
करोति मेहान् समुदीर्णमुष्णैस्तानेव पित्तं परिदूष्य चापि
क्षीणेषे दोषेष्ववकृष्य धातून संदूष्य मेहान् कुरुते ऽनिलश्च ।
चे० चि० प्रे० अ०

अर्थात् मेद-मांस और शरीर के क्लेद भाग को कफ वस्तिगत करके कफज प्रमेहों को पैदा करता है। उन्हीं वस्तिगत मेद-मांस और क्लेद भाग को पित्त दूषित करके पित्तज प्रमेहों का कारण बनता है। और पित्त कफ के क्षीण होने पर प्रकुपित वायु मेद-लसीका आदि धातु दूष्यों को खींच कर वस्ति में ले आता है और उन्हें दूषित कर वातज प्रमेहों को पैदा करता है। यहां पर ध्यान देने योग्य बात तो यह है कि प्रमेह के "आस्यासुखं" आदि कारण तो सब कफ वर्धक कहे हैं फिर पित्त प्रकुपित कैसे हो जाता है। वात प्रमेहों में तो यह असमञ्जस और भी खटकता है। प्रमेहों के कारणों में तो सब कफवर्धक आहार विहार हैं। उन कारणों के रहते तो कफ की ही वृद्धि होगी परन्तु वात प्रमेहों में कफ पित्त क्षीण होने पर वात दूष्य धातुओं को वस्ति में खींचकर दूषित करता है। कफ वर्धक आहार विहार के रहते यह कफ पित्त क्षीण कैसे होते हैं इसका कहीं उल्लेख नहीं। आयुर्वेद पत्रिकाओं में प्रमेह पर कई लेख भी मैंने देखे हैं परन्तु ऐसी शंकाओं का स्पष्टीकरण कहीं देखने को नहीं मिला। मेरा यह विश्वास है कि पक्षपात विवाद की धारणाओं को त्याग कर यदि ऐसे स्थलों पर वैद्य समाज मनन करे तो हमें अनुसन्धान करने, आगे बढ़ने और आयुर्वेद के ज्ञान-कोष में वृद्धि करने की प्रेरणा मिल सकती है। यदि यही समझ के बैठे रहें कि अमुक-अमुक ग्रन्थों में जो कुछ लिखा है उससे आगे ज्ञान का अभाव है तो इस दशा में ज्ञान बढ़ने बढ़ाने का प्रश्न ही नहीं उठता।

अस्तु प्रकरण यह चल रहा था कि कफज कारणों के रहते हुये वातप्रमेहों की सम्प्राप्ति कैसे पैदा हो जाती है अपने शास्त्र के अध्ययन से इस अंश समाधान कहीं नहीं होता। फिर हमारे यहां प्रमेहों २० भेदोंका वर्णन किया है। दोष दूष्यके समान पर प्रमेहों के भिन्न-भिन्न भेद कैसे पैदा हो जाते हमारे यहां तो इस सम्बन्धमें यही स्पष्टीकरण दिया

दोषदूष्याविशेषेऽपि तत्संयोग विशेषतः ।
मूत्रवर्णादि भेदेन भेदो मेहेषु कल्प्यते ॥ भा० नि

अर्थात् दोष दूष्य के समान होने पर भी उ संयोग विधि में विशिष्टता अर्थात् विभिन्नता होने कारण मूत्र के वर्ण आदि (आदि से अभिप्राय रूप, गन्ध, वर्ण आदि इन्द्रिय ग्राह्य भौतिक गुणों है) में जो विभिन्नता देखने को मिलती है उ आधार पर ही प्रमेहों के भेदों का वर्णन किया है। दोष्य दूष्य संयोग में उपरोक्त विशेषता विभिन्नता कैसे आती है? जब तक यह ग्रन्थि सुलझाई जाय तब तक यह प्रकरण स्पष्ट नहीं होता हमारे शास्त्रों में इस से अधिक कुछ मिलता न इसलिये उस पर आस्था रख कर उसे सत्य और सिद्ध करने के लिये तर्क और अनुमान के हथियारों सज्जित होकर वितण्डावाद के संग्राम पर उतारू से कोई ठोस परिणाम नहीं निकलता।

बात वास्तव में यह है कि रोग विज्ञान तर्क की उपज नहीं। एक रोग को समझने के सैकड़ों हजारों रोगियों को अच्छी तरह देखने उनमें से प्रत्येक की अवस्था का ध्यान पूर्वक म करने के बाद ही चिकित्सक किसी परिणाम पर प सकता है। एक पीढ़ी के चिकित्सकों द्वारा प्राप्त निष्कर्षों को आधार बना कर अगली पीढ़ी आरम्भ करती है और इसी प्रकार उत्तरोत्तर पी नई-नई खोज और आविष्कार करके ज्ञान उत्तरोत्तर वृद्धि करती हैं। यह एक ऐतिहासिक प्रयोगिक सत्य है। अन्य विज्ञानों की तरह चिकि

विज्ञान के सम्बन्ध में भी किसी खोज को अन्तिम नहीं कहा जा सकता। उससे आगे विकास की सम्भावना सदा बनी रहती है। आज कल जब अनुसन्धान सम्बन्धी इतने Sensitive नाजुक और सूक्ष्म साधन निकल आये हैं-यह सत्य और भी प्रकट रूप में सामने आ गया है।

मूत्र रोगों के सम्बन्ध में भी यही बात है। आरम्भ में समस्त मूत्र रोगों को एक सामान्य शीर्षक प्रमेह के नीचे देकर एक ही अध्याय में रख दिया गया है। उस समय मूत्र शरीर में कहां बनता है, उसमें क्या-क्या मल पदार्थ बाहर निकलते हैं ? और प्रत्येक मल पदार्थ की उत्पत्ति किन-किन भोज्य पदार्थों के विशेष प्रयोग से होती है ? पूर्वकाल में इन सब बातों की जानकारी प्राप्त करने के भौतिक अथवा रसायनिक साधन तो थे नहीं उस समय मूत्र परीक्षा के लिये नेत्र घ्राण, त्वचा, रसनेन्द्रिय आदि भौतिक साधनों के अतिरिक्त अन्य कोई साधन उपलब्ध भी नहीं थे, इसलिये इन्हीं इन्द्रियों द्वारा प्राप्त ज्ञान अर्थात् मूत्र की मात्रा, वर्ण, घनता, स्वाद आदि के आधार पर भिन्न-भिन्न भेदों का नामकरण कर दिया गया। जैसे मूत्र जल के समान हो तो उदकमेह वसामय हो तो सांन्द्र-मेह, नीचे रेत की सी तलछट बैठ जाय तो सिकतामेह आदि २।

इन उपरोक्त मूत्र के रूप वर्ण इनकी भिन्नता को देखकर उनके अनुसार उन भेदों का नामकरण हुआ। पुनः दोषों के जिस स्वरूप की कल्पना हमारे शास्त्रों में विद्यमान है उसके अनुसार इन भेदों का सामंजस्य उन-उन दोषों से करके इनका वर्गीकरणवातज, पितज, और कफज तीन वर्गों में बांट दिया। मूत्र शरीर का क्लेद भाग है यह मान कर कफज प्रमेहों में कफ क्लेद को दूषित कर और पित्तज में पित्त क्लेद को दूषित करके क्रमशः कफज औ पित्ताज प्रमेहों को पैदा करता है ऐसी व्याख्या सम्प्राप्ति में कर दी गई। वातज प्रमेहों पर आकर यह गाड़ी रुक गई। प्रमेह के कारणों में वात प्रकोप का कोई कारण ही नहीं आता। वात प्रकुपित कैसे हो यह समस्या आन खड़ी हुई। धावन, लंघनादि वात प्रकोपक कारणों से तो प्रमेह शान्त होते हैं उनसे पैदा होने की बात कैसे कही जाय। उधर मधुमेह जैसे कुछ प्रमेहों में मांस क्षय, बल क्षय आदि कुछ वातिक लक्षण प्रधान रूप से देखने को मिलते हैं। ऐसी अवस्था में धातुक्षय इनका वातज प्रमेहों में आकर सम्प्राति की कल्पना का उपरोक्त क्रम बदलकर यह व्याख्या की गई कि वात कुपित होकर धातुओं को खींचकर मूत्र द्वारा बाहर निकालता है क्या ही अद्भुत कल्पना है। पर कल्पना कल्पना ही है। इसमें सन्देह नहीं कि जब प्रत्यक्ष करने के साधन नहीं होते तो अनुमान से ही काम लिया जाता है। उस समय तो ऐसी व्याख्यायें प्राप्त ज्ञान को क्रमबद्ध रूप देने के प्रयोजन से की गई थीं परन्तु आज जब सब प्रत्यक्ष हो चुका है तो फिर भी अनुमान पर आधारित उन व्याख्याओं से चिपटे रहना कोई बुद्धिमानी नहीं।

शताब्दियों की निरन्तर खोज परीक्षणों और रोगियों पर किये गए प्रयोगों द्वारा आज यह ज्ञात हो चुका है किन विशेष भोज्य पदार्थों के सेवन से अथवा किन २ अवस्थाओं में मूत्र द्वारा निकलने वाले कौनसे मल पदार्थ अधिक परिमाण में बनते हैं। इस जानकारी के रहते हुए भिन्न २ प्रमेहों को एक ही रोग स्वीकार करना वास्तविकता के अधिक दूर है, क्योंकि कारणानुरूप इनमें से प्रत्येक चिकित्सा पथ्यापथ्य आदि में भिन्नता और कहीं २ विपरीतता पाई जावेगी। उदाहरणार्थ दाल, मांस आदि अस्रजन प्रधान भोजन के प्रयोग से अथवा तीव्र ज्वरों में मूत्राम्ल अधिक परिमाण में बनता है जो ईंट के चूरे के वर्ण की रेत के समान मूत्र में नीचे बैठ जाता है, यही हमारा

सिकतामेह है। हरे शाक, दूध आदि चूनजम प्रधान भोजनों के सेवन से तथा शार्करीय पदार्थों के असम्यक् पचन के कारण काष्ठाम्ल की अधिक मात्रा में उत्पत्ति होने से मूत्र में उसके यौगिक अधिक परिमाण में आने लगते हैं और मूत्र थोड़ा २ कुछ कष्ट से आता है (शनैःमेह)। भोजन सात्म्यीकरण के दौरान में क्षारीयांश की उचित से अधिक उत्पत्ति के कारण मूत्र की प्रतिक्रिया भी क्षारीय होजाती है और मूत्र में उपस्थित स्फुरेत आदि अम्ल जो मत्र में घुले रहते हैं इस क्षारीय मूत्र में अनघुल बनकर उसके नीचे बादल के वर्ण के गाढ़े २ तलपर जम जाते हैं, कई बार मूत्र त्याग करते हुए रोगी के देखते २ उसका मूत्र पृथ्वी पर जम जाता है इसे ही हमारे यहां सान्द्रमेह कहा है।

ठीक इसी प्रकार मधुमेह भोजन में श्वेतसार और शार्करी पदार्थों के खाने अथवा शरीर में शर्करा के विकृत एवं ध्वस्त सात्म्यीकरण का परिणाम है। इस विश्वव्यापी रोग के सम्बन्ध में आजकल इतनी बारीकी से खोजबीन होचुकी है कि अकेले इसी रोग पर बड़े बड़े ग्रन्थ लिखे जाचुके हैं। उन सब खोजों का क्रमवद्ध दिग्दर्शन मात्र प्रस्तुत लेखमें पाठकोंके सामने रखूंगा।

मधुमेह का इतिहास

मधुमेह का वर्णन बहुत प्राचीन ग्रन्थों में पाया गया है। ईस्वी सम्वत से १५०० वर्ष पूर्व के ग्रंथों में इसका उल्लेख है। परन्तु उस समय इसका वर्णन बहु मूत्र के रूप में ही है। उस समय मूत्र में शर्करा की विद्यमानता का ज्ञान नहीं था। ईस्वी सम्वत की पहिली शताब्दी में हुए (Aulus celsus) औलस सेलसस नामक एक रोमन चिकित्सक के ग्रंथ में इसका वर्णन करते हुए कहा गया है कि इस रोग में मूत्र की मात्रा प्रतिदिन के लिए हुए जल के अनुपात से अधिक होती है। पहली सदी का यूनानी हकीम (Aretaeus) अरेश्यस ने मूत्राधिक्य के साथ घोर तृष्णा और मांस क्षय का भी वर्णन किया है। दूसरी सदी के अन्त हुए इटली के डाक्टर गैलन (Galen) ने इस रो का कारण वृक्क की दुर्बलता बताया। प्रथम शताब्दी लिखे गये आयुर्वेद ग्रन्थ चरक में पहिली बार कई रोगों का प्रमेह के नाम से विस्तृत वर्णन है। इन भे में से एक भेद मधुमेह में मूत्र मीठा होता है इस बा का भी स्पष्ट उल्लेख है। मधुमेह के इतिहास में बात अत्यन्त महत्वपूर्ण है और इसका श्रेय चरक है परन्तु इसमें भी एक आश्चर्यजनक बात यह है इसमें मधुमेह के मुख्य लक्षण अधिक प्यास औ अधिक भूख इनका वर्णन रोग के लक्षणों में नहीं मूत्र पर चींटियां लगनेकी पहचानका वर्णन भी सर्वप्रथ भारतीय चिकित्सा ग्रंथों में ही है। चीनी साहित्य तीसरी शताब्दी में लिखे एक ग्रंथ में भी एक ऐसे रो का वर्णन मिला है जिसके सम्बन्ध में लिखा है इस रोग में मूत्र इतना मीठा होता है कि उसे कु चाटने लगते हैं परन्तु प्रमेह के सामान्य कारणों अतिरिक्त विशेष रूप से मधुमेह के किसी कारण उल्लेख आयुर्वेद शास्त्र में नहीं। इसका कारण यही कि उस समय तक समस्त मूत्र रोगों को एक ही रो समझा जाता रहा। बाद में धीरे २ प्रत्येक पीढी यह ज्ञान बढता रहा। ईस्वी सम्वत १००० के लगभ हुए एक अरबी हकीम अवीसीना (Avicenna) मधुमेह का होना यकृत की विकृति के कारण हुई की दुर्बलता बताया। लगभग १६५० में एक अंग्रे थामस विलिसन ने मधुमेह और बहुमूत्र इन दो रोगों में अन्तर की पहचान मूत्र में विद्यमान शर्करा आधार पर की। इस शरीर रचना और चिकित् शास्त्र विशेषज्ञ ने प्रथम बार यह मालूम किया मधुमेही रोगी के मूत्र में शर्करा के आने से पूर्व र में भी शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है। मधुमेह इतिहास में चरक के बाद यह दूसरा अत्यन्त महत्व पूर्ण आविष्कार था। उसके बाद मधुमेह सम्बन्धी खो

(शेष पृष्ठ १६२ पर पढें)

* सिरका *

[लेखक—कविराज युगलकिशोर गुप्त बी० आई० एम० एस०]

सिरका—ऐसे फलों या तरकारियों से बनाया जाता है जिनमें शर्करा अथवा श्वेतसार वर्तमान रहता है। सामान्यतया जो फल और तरकारियां मेजपर रख कर खाने के काम में नहीं आतीं अथवा जिनसे जेली आदि का निर्माण नहीं किया जा सकता, उनका उपयोग सिरका बनाने के लिये किया जाता है। कारखानों में फलों और तरकारियों के छिलके तथा पात्रों के मधुर प्रक्षालन सिरका के निर्माण में प्रयुक्त होते हैं। भारत-वर्ष में सिरका अधिकतर गन्ने, ताड़ी, खजूर, जामुन आदि से बनाया जाता है। सिरका मसालों की तरह चटनी, आचार आदि में प्रयोग किया जाता है। यह औषधि के रूप में भी प्रयुक्त होता है।

सिरका निर्माण विधि में दो प्रकार के किण्वी-करण होते हैं।

(१) मद्यीय

(२) सिरकाम्लीय

फलों या तरकारियों को दबाकर उनका रस निकाल लेना चाहिए। जो फल शुष्क हों, उनमें समान मात्रा में जल डालकर कुछ समय के लिए रख देना चाहिए और जब वे मृदु हो जाएं तब थोड़ी देर गरम करके कपड़े से छान कर रस निकाल लेना चाहिए।

(१) मद्यीय किण्वीकरण

जब खमीर की सेलें शर्करा के घोल में (उदाहरणार्थ खजूर और अंगूर के रसादि में) वृद्धि करती हैं तो जाइमेज एन्तजाइम के द्वारा उनमें किण्वी-करण होने लगता है। शर्करा विघटित हो जाती है और मद्य तथा कार्बन द्विओषिद—ये दो प्रधान द्रव्य बन जाते हैं और फल-रसताड़ी के रूप में परिवर्तित हो जाता है। कार्बन द्विओषिद गैस बाहर निकल जाती है और कभी २ घोल की सतह पर फेन उत्पन्न कर देती है। जब ओषजन की व्यवस्था अत्यधिक मात्रा में कर दी जाती है तो पहले की अपेक्षा थोड़ा मद्य बनता है किन्तु जब ओषजन-व्यवस्था नष्ट कर दी जाती है तो मद्य अधिक स्वतन्त्रता से बनता है।

खमीरकी सेलोंमें पाचक यौगिक अत्यधिक पाये जाते हैं विशेषतया प्रोटाइड्स, वसा, शर्करा, ऐन्जाइम्स इत्यादि। और चूंकि भोजन के रूपमें उपरोक्त यौगिक अधिक मान्य हैं अतएव इनकी शुद्धि करके, १२५° से० के करीब इनको शुष्क करके बज़ारमें बेचा जाता है।

फलों के रस में खमीर डालने से मद्यीय किण्वीकरण उत्पन्न हो जाता है। चूंकि शर्करा के हल्के शर्बतों में खमीर की उत्पत्ति अति तीव्रतासे होती है अतएव रस में शर्करा की मात्रा पच्चीस प्रतिशत के लगभग होनी चाहिये। यदि शर्करा की मात्रा अधिक हो तो जल मिलाकर कम कर ली जानी चाहिये और कम हो तो शर्करा का शर्बत डाल कर अधिक कर लेनी चाहिए। खमीर की टिकियां रस में मिलाई जा सकती हैं। सामान्यतया एक टिकियां ४ मन रस के लिए पर्याप्त होती है। इसके अतिरिक्त हम अगले अङ्क में 'खमीर' शीर्षक के अन्तर्गत खमीर बनाने की विधि लिखेंगे, उसे भी रस में मिला सकते हैं। खमीर को लेकर थोड़े से रस में गुनगुना गरम करके मिला देना चाहिये। रस को प्रतिदिन लकड़ी से हिलाना चाहिए ताकि खमीर सब रस में अच्छी तरह से मिल जाये और शर्करा पर जो खमीर की क्रिया होकर कार्बन द्विओषिद गैस बनी हो, वह निकल जाये। इस गैस का

निकाल देना आवश्यक है क्योंकि यह खमीर के किण्वीकरण प्रतिक्रिया में बाधा डालती है। जब रस में खूब झाग या बुलबुले उठने लगे हों तो समझना चाहिए कि खमीर का किण्वीकरण हो रहा है। जब इस झाग की उत्पति का अवरोध हो जाये और द्रव शान्त हो जाये तथा सैकोमीटर यन्त्र ०२° ब्रिक्स या कुछ अधिक मान प्रदर्शित करे तो समझना चाहिये कि खमीर का किण्वीकरण परिपूर्ण हो गया है। इसके पूर्ण होने में दो से चार सप्ताह लगते हैं।

खमीर के किण्वीकरण के लिए सबसे अधिक उपयुक्त तापक्रम ८०° फा० से ६०° फा० है और यह क्रिया ७५° फा० के नीचे और १०५° फा० के ऊपर बन्द हो जाती है। जब यह क्रिया पूर्ण हो जाये तो द्रव को छान लेना चाहिए और अन्य स्वच्छ पात्रों में भर देना चाहिए। इस कार्य के लिए अधिकतर कांच के बड़े जार या लकड़ी के ढोल काम में आते हैं। फिल्टर पेपर से छाने हुए रस को पात्रों में आधी ऊंचाई तक भर देना चाहिये।

जब मद्यीय किण्वीकरण सर्वथा पूर्ण हो जाय तो रस का १/५ भाग अनपाश्चराइज्ड मदर वेनेगर में डाल देना चाहिए और अच्छी तरह से हिलाना चाहिये। और फिर ऊपर से उसका मुंह किसी कपड़े से ढक देते हैं ताकि मक्खी, कीड़े, धूल आदि न जा सकें किन्तु वायु आती जाती रहे। इस क्रिया के पूर्ण होने में ३ से ६ महीने लग जाते हैं। जब सिरका तैय्यार हो जाय तो उसे साइफन से बाहर निकाल लेना चाहिए और उसमें थोड़ा सा सिरका छोड़ देना चाहिए ताकि दूसरी बार किण्वीकरण हो सके। तदनन्तर सिरके को एक स्वच्छ कपड़े से छानकर बोतल में भर देना चाहिये और कार्क लगाकर पाश्चराइजेशन की प्रक्रिया को करना चाहिये।

(शेष पृष्ठ १६० का)

ने एक निश्चित रुख ले लिया और यह मालूम क[illegible] का प्रयत्न होने लगा कि रक्त में शर्करा वृद्धि कैसे अ[illegible] कहां से आती है। १८१८ में (Claude Bernar[illegible] फ्रांस निवासी शरीर क्रिया विज्ञान विशेषज्ञ उक्त व्य[illegible] ने यह मालूम कर बताया कि भोजन में खाये श्वे तस[illegible] को क्लोम (Pancreas) शर्करा में बदलता है। अ[illegible] क्लोम के सम्बन्ध में खोज होने लगी। ईस्वी १८७६ पाल लैंगरहैन नामक एक जर्मन डाक्टर ने क्लोम [illegible] परीक्षण करते हुए यह देखा कि इस ग्रन्थिके अन्दर [illegible] विशेष आकृति को कोष समूह है जो एक झिल्ली [illegible] ओट में शेष ग्रन्थि से अलग थलग हैं। यह कोष स[illegible] बाद में इसी डाक्टर के नाम पर (Island [illegible] Langerhans) के नाम से प्रसिद्ध हुए। इस क[illegible] समूह को प्रकृति ने किस प्रयोजन से शेष ग्रन्थि[illegible] पृथक् यह आकृति और रचना प्रदान की है? शरीर[illegible] इसका क्या विशिष्ट व्यापार है? अथवा मधुमेह [illegible] इसका कोई सम्बन्ध है या नहीं इस बात का [illegible] Dr. Langerhans को अपने जीवन में नहीं [illegible] सका। ई० १६०० में अमरीका की हाफकिन यूनिवर्सि[illegible] के मेडिकल स्कूल के एक प्रोफेसर Eugene Opie [illegible] मधुमेह सन्यास से मृत एक बालक की शव परी[illegible] करते हुए क्लोम ग्रन्थि का छेदन किया तो देखा [illegible] उपरोक्त Langerhan कोष समूह इस सीमा [illegible] क्षीणावस्था में पहुँचा हुआ है कि उसका स्व[illegible] पहचानना कठिन है। आगे चल कर १६१६ में एड[illegible] शेफर अपनी खोजों से इस परिणाम पर पहुंचा [illegible] लैंगरहैन कोष समूह से एक विशेष प्रकार का [illegible] निकलता है जिसका सितसार और शार्करी पदार्थों [illegible] सात्म्यीकरणसे गहरा सम्बन्ध है अन्तमें मुख्यतः बैं[illegible] और बैस्ट के प्रयत्नों से १६२१में इस अन्तःस्राव [illegible] पृथक प्राप्त करने में सफलता मिली। उन्होंने इ[illegible] इन्सूलीन का नाम दिया। Island of Langerh[illegible] के Island शब्दसे ही Insulin शब्दकी रचना [illegible] इन्सूलीन के आविष्कार ने मधुमेह सम्बन्धी खोजों [illegible] एक क्रांति ला दी। इस ज्ञानके बाद यह इन्सूलीन [illegible] मेह चिकित्साका मुख्य स्तम्भ बन गई है।

क्रमशः

काम विज्ञान सचित्र

काम विज्ञान में काम शास्त्र का प्राचीन एवं आधुनिक सिद्धान्तों पर अने विद्वान अनुभवी वैद्यों का लिखा हुआ सचित्र वर्णन है। आजतक ऐसी उत्तम पुस्तक कामशास्त्र पर नहीं छपी है। यह काम विज्ञान विवाह के समय वर एवं वधू को उपहार देने योग्य है। काम शास्त्र सम्बन्धी सब ही विषयों पर प्रायः प्रकाश डाला गया है। साथ ही काम शास्त्र सम्बन्धी २१६ प्रयोग जिसमें बाजीकरण, संकोचन, गर्भ स्थापन, अंग, स्तन दृढीकरण, वीर्य वर्धक भी हैं स्तम्भन के तो सैंकड़ों प्रयोग हैं। ६ रंगीन और ३६ एकरंगे चित्र हैं और अनेक चित्र पांच छः रंगों में छापे गये हैं। मूल्य ६) पोस्ट व्यय १)

१—प्रयोग मणिमाला (सचित्र)

२५० वैद्यों के परिचय, चित्र और पांच सौ अनुभूत प्रयोग छपे हैं। प्रयोग ऐसे हैं जो हजारों रुपये खर्च करने पर भी नहीं मिल सकते। पिता पुत्र से भी छिपाते हैं उन्हीं प्रयोगों का संग्रह किया गया है। मूल्य–८)

२—थर्मामीटर विज्ञान

थर्मामीटर के भेद, थर्मामीटर की प्रयोग विधि चार्ट बनाना आदि सभी उपयोगी विवरण दिया है। मूल्य–।)

३—परीक्षित प्रयोग (प्रथम भाग)

इसमें बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी अर्थात् हिन्दू विश्वविद्यालय के आयुर्वेदिक विभागके परीक्षित प्रयोग संग्रह किए हुए हैं और लेखक ने उनको बड़े अच्छे ढंग से ऐसा लिखा है कि साधारण वैद्य एवं स्नातक लाभ उठा सकें। मूल्य–।।।)

४—परीक्षित प्रयोग (द्वितीय भाग)

इस पुस्तक में धर्मार्थ औषधालय में काम आने वाले अनुभूत प्रयोगों का संग्रह किया गया है। प्रयोग ऐसे हैं जिनमें पैसे कम लगें और बहुत से रोगियों को लाभ पहुंचे। मूल्य–१।)

५—वैज्ञानिक प्राणायाम रहस्य (सचित्र)

प्राणायाम किस प्रकार करने चाहिये, क्यों करना चाहिये, प्राणायाम से रोग किस प्रकार नष्ट किए जा सकते हैं, स्वास्थ्य किस प्रकार बढ़ाया जासकता है, प्राणायाम से शरीर के कौन से भाग पर क्या प्रभाव पड़ता है सब चित्रों द्वारा सरल भाषा में समझाया गया है। मूल्य–२।)

६—स्वप्न दोष और वीर्य संजीवन (सचित्र)

स्वप्नदोष क्या है ? क्यों होता है ? उसका शरीर पर क्या प्रभाव पड़ता है और उसकी अद्भुत चिकित्सा का वर्णन बड़ी सरल भाषा में किया गया है। मूल्य–२)

७—आहार

भोजन क्यों करें ? कैसे करें ? कितना करें ? क्या पदार्थ खायें ? कौन पदार्थ नहीं खायें ? कितना खायें आदि सभी प्रश्नों के विस्तार के साथ उत्तर और भोजन के विटामिन, प्रोटीन आदि विशिष्ट भागों का वर्णन किया है। पुस्तक गृहस्थ और वैद्यों के संग्रह योग्य हैं। मूल्य–१।)

प्राणाचार्य—सचित्र मासिक-पत्र वार्षिक मूल्य ४।।≈) इसके विशेषांक ही ४।।≈) मूल्य से अधिक मूल्य का होता है, एक वर्ष ग्राहक बनकर देखें। एक वर्ष में हजार आठ सौ पृष्ठ, सैंकड़ों चित्र, हजारों परीक्षित प्रयोग और विद्वान वैद्यों के लेख रहते हैं।

पता—व्यवस्थापक प्राणाचार्य भवन लिमिटेड, विजयगढ, जिला अलीगढ (यू० पी०)

७८६ वर्ष का प्राचीन रस ग्रन्थ

बसवराजियम—हजारों वर्ष पहिले दक्षिण भारत में चालुक्यवंशीय राजाओं का राज्य था। उनके प्रधान मन्त्री रुद्र साम्प्रदायी महान रसतन्त्रज्ञ बसवराज ने सं० १२२५ में इस सिद्ध साम्प्रदायिक अनुपम ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें भगवान रुद्र के अनुयायी बनों में विचरने वाले रसायनाचार्य नागार्जुन, नागबोधि, नित्यनाथ, चर्पटी, कणेरी, पूज्यपाद आदि योगियों का रसज्ञान भरा पडा है, श्रीगोविन्दपादाचार्य के कथनानुसार शरीर को अजरामर करने में पारे की बराबरी करने वाली न तो कोई जडी-बूटी है और न ही कोई रसायन और भस्म है। पारे में यह बडे आश्चर्य की बात है कि वह स्वयं मूर्छित होकर रोगी के रोग को दूर करता है और बंधा हुआ होकर मुक्ति देता है तथा अच्छी तरह मरा हुआ दूसरों को जीवन देता है। आज मद्रास प्रान्तीय वैद्यों की जो प्रतिष्ठा यश और कीर्ति सर्वत्र प्रसिद्ध हो रही है वह सब इसी ग्रन्थ के योगों का प्रताप है। यह ग्रन्थ तैलंग भाषा में ताड पत्रों पर लिखा हुआ उपलब्ध हुआ था, जिससे अब तक तैलंग भाषा-भाषी वैद्य ही लाभ उठाते रहे, किन्तु यह जानकर आप अतीव प्रसन्न होंगे कि अब आयुर्वेद बृहस्पति श्री गोवर्धन जी शर्मा छांगाणी के अतुल परिश्रमके फलस्वरूप आज यह ७८६ वर्ष का प्राचीन तैलंग हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ हिन्दी भाषा में भी हमारे द्वारा प्रकाशित होगया है। इस ग्रंथ के विषय में कहा गया है कि सतयुग में चरक, त्रेता में रसार्णव तथा द्वापर में सिद्ध विद्याभू का महात्म्य है उसी प्रकार कलियुग में बसवराजियम पूज्य ग्रंथ है। इसमें जो निदान, लक्षण प्रत्येक रोग के बतलाये हैं उनको समझकर इसमें वर्णित योगों द्वारा जो चिकित्सा करेगा, भगवान रुद्र की कृपा से निःसन्देह वह सर्वत्र यश और सिद्धि प्राप्त करेगा। मूल्य २५ प्रकरण सम्पूर्ण ग्रंथ का मूल्य ८।।) डाकखर्च एक रुपया।

सिद्ध रसायन

रस रसायन की जिन कठिन क्रियाओं से वैद्य बन्धु घबराकर उनके दिव्य गुणों से वंचित रह जाते हैं, उन क्रियाओं का लम्बा अनुभव करके विद्वान लेखक ने उसका सरल तरीका इस ग्रन्थ में दर्शाया है और साथ ही महान रसायनाचार्य नागार्जुन और अन्य सिद्धों की संचिकाओं के अज्ञात योगों को उनकी गुत्थी सुलझाकर प्रकाशित किया है जिनसे पाठक न केवल काया (काया-कल्प) रंगने में ही सफल होंगे बल्कि स्थिर मति वाले माया (कीमियां) रंगने में भी सफल होंगे। इस प्रकार पाठकों को जहां आर्थिक संकट से मुक्ति मिलेगी वहां असाध्य समझकर छोड़ दिए जाने वाले रोगों के वे सिद्धहस्त चिकित्सक भी बन जावेंगे। इस पुस्तक के कुछेक योगों का दिग्दर्शन करा देने से आप को अनुमान हो जायेगा कि यह कितना अपूर्व ग्रन्थ है, यथा-शुद्ध बद्ध और सिद्ध करने वाली दिव्य औषधियां औद्भिदाम्ल व बूटियां, रस बन्धन, गन्धक को स्थाई करना, बद्ध पारद को सिद्ध बनाना, रजत रंजन (कीमियां) अभ्रक सत्व पातन, अभ्रक सत्व की द्रुति, द्रुति से पारद बन्धन, बंग स्तम्भन, पारद भस्म, रक्तयोगेन ताम्रोद्धार (कीमिया) तांबा और रजत (चांदी) वेधी, सिद्ध हरिताल हरिताल कल्प देह व लोह वेधी, सिद्ध हरिताल तैल सिद्ध कुचला कल्प, सर्वरोगहर फिटकडी रसायन (कल्प) पुरुषों के विशेष रोगों पर रामबाण सिद्ध खादक, पारद गुटिका बंगवेधी, शिंगरफ मोमिया बनाना, नौसादर तैल, सिद्ध गोरखी जलमुद्रा, सिद्ध गन्धक, एक गिरनारी महात्मा का योग–जिसको बनाना अति सरल है जो क्षय (T. B.) संग्रहणी जैसे अनेक भयंकर रोगों का इलाज है–इसमें छपा है आदि। इसमें अन्य पुस्तकों की भांति जोड-तोडकर एकत्र की हुई सामग्री नहीं है बल्कि लेखक के जीवन भर का अनुभव बन्द किया गया है इसके पाठकों के लिए लेखक का सदूपरामर्श और सहायता भी सदैव प्रस्तुत रहेगी। मूल्य ५) डा० पै० ।।।)

पता—रसायन फार्मेसी (दरियागंज नं० ३) पो० बो० ११२५ देहली।

अश्वगन्धा पाक

यह पाक तमाम शारीरिक रोगों के लिए तथा शरीर की दुर्बलता और कृशता को दूर करके शरीर को मोटा ताजा बनाने के लिए अकसीर है। जवानी को स्थिर करके मुर्झाये हुए चेहरे पर रक्त की लालिमा की लहरें दौड़ा देता है। युवकों को समय से पूर्व वृद्ध होने से बचाता है। वीर्यवर्धक होने के अतिरिक्त स्तम्भक भी है। कुटेव से उत्पन्न हुई विकृतियों को दूर करके अंग प्रत्यंग की समस्त क्रियाओं को नियमित बनाता है, नित नये रोग में फंसे रहने वाले रोगियों के लिए तो एक ही चीज है। खांसी, दमा, बवासीर तथा आमाशय और यकृत के रोगियों के लिए इससे बढ़कर और कोई स्वादिष्ट दवा नहीं। सुस, खून की कमी, पांडु रोग, प्लीहा शोथ और संग्रहणी व कफजनित रोगों के लिए गुणकारी है। पुरुषों की भांति स्त्रियों के लिए श्वेत प्रदर, ऋतुदोष एव गर्भाशय के दोषों की प्रमाणित दवा है। खाने में स्वादिष्ट है। मूल्य ५) पौंड डा० ख० १।।-)

पूंगी (सुपारी) पाक

इस अति स्वादिष्ट पाक के सेवन से स्त्रियों के समस्त प्रकार के रोग यथा प्रदर, कटिपीडा, योनि रोग, गर्भाशय च्युति, आलस्य और शिर दरद समूल नष्ट होजाते हैं। इसके सेवन करने से किसी बीमारी का भय नहीं रहता और एक मास सेवन करने से पुरानी बीमारियां दूर होकर स्त्री के स्वास्थ्य और सौन्दर्य में चार चांद लग जाते हैं। यह विशेष पद्धति से बनाया जाता है अतः अन्य सुपारी पाकों की भांति कटु और पौडर रूप में नहीं है बल्कि बर्फी की शक्ल में है जिसे कोमल से कोमल प्रकृति की स्त्री भी प्रसन्नतापूर्वक सेवन कर लाभ उठा सकती है। कीमत १ पौंड ५) पो० १।।-)

रसायन आमला तेल

बालों में लगाने के तेलों में, बालों की जड़ों को पुष्ट करके उनको घने और लम्बे तथा कोमल एवं चमकदार बनाने वाले तत्वों का होना परमावश्यक है और यह सब खूबियां आपको 'रसायन आमला तेल' की शीशी में मिलेंगी। जिसे हरे आमले तथा केश-टानिक जड़ी-बूटियों के रस में मूर्छित तेल को विशेष पद्धति से सिद्ध करके बनाया जाता है। यह दिमागी कमजोरी, थकावट, शिरदर्द को दूर करता है। दिमाग को ताजा और ठण्डा रखता है, गंज, खुजली, भूसी, सीकरी को दूर करता है। झड़ते बालों को रोकता है। कुछ दिन लगाते रहने से बाल जड़ से काले निकलने लगते हैं, क्योंकि इसमें लोह तत्व विशिष्ट परिमाण में हैं। इसकी मधुर सुगन्ध २४ घण्टे कायम रहती है। मूल्य ४ औंस की शीशी १।), ३ दर्जन ३५) खरच जुदा।

हिमोलीन

हृदय की धड़कन, हृदय की कमजोरी, पागलपन, वमन, घबराहट, जी मिचलाना, हृदय की दाह, दस्त, प्यास का अधिक लगना, हैजा, गरमी, लू लगना, दिल और दिमाग की गरमी और कमजोरी तथा उससे उत्पन्न होने वाली पुरुषत्व हीनता को मिटाने के लिए अपूर्व उपहार है। इसकी १५-२० मात्रा से ही हृदय और मस्तिष्क ताजा और बलवान होजाता है। इसकी प्रत्येक मात्रा सुगन्धि से महकती हुई रुचिकर और स्वादिष्ट है। जहर मोहरा खताई, अकीक, प्रवाल, रजत, कहरवा-शमई, चन्दन तथा अन्य हृदय रोगनाशक बूटियों का मिश्रण है। कीमत आधी छटांक ५) पो० १)

पता—रसायन फार्मेसी (३ दरियागंज) पो० बो० ११२५ देहली।

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा स्वस्तिक प्रिंटिंग प्रेस, देहली में छपकर प्रकाशित

रसायन

अप्रेल १९५५

वर्ष ७ वार्षिक ६)

अंक ११ इस अंक का ।।=)

सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा. गणपति सिंह वर्मा

विषय सूची

विषय	लेखक	पृष्ठ
वीर्य विनाश (कविता)	श्री० स्वामी पारसनाथ	१६६
परिणामप्रद सूक्ष्मौषधि चिकित्सा	संपादक	२००
वनस्पतियों पर मेरे अनुभव	वैद्यरत्न, कविराज प्रतापसिंह जी	२०१
बकरी का मांस	श्री० कविराज हरिकृष्ण सहगल	२०५
किस प्रकार मनुष्य स्वयं अपना शत्रु बन जाता है	श्री० डाक्टर अजीत चन्द बनर्जी	२०८
मृद्दारशृंग	श्री० रामेश्वर बद्रीसिंह सूर्यवंशी	२११
मधु-मेह Diabetes Mellitus	श्री० गौरीलाल जी चानना बी० ए०, वैद्य वाचस्पति	२१४
रीछ	श्री कवि० हरिकृष्ण सहगल	११८

निद्राणी

स्वास्थ्य के लिए निद्रा उतनी ही आवश्यक है जितना कि भोजन, जल और शुद्ध वायु। भोजन के पचन और सात्म्यीकरण से शरीर की प्रत्येक सेल को अपनी स्थिति बनाये रखने की सामग्री मिलती है तो पूर्ण निद्रा से आराम मिलने के कारण घिसी हुई सेलों का पुनः निर्माण होजाता है और खरच हुई शक्ति पुनः संचित होजाती है। यदि युवा पुरुष को रात्रि में ६-७ घण्टे निरन्तर गहरी नींद नहीं आती या बीच २ में टूट जाती है तो यह मस्तिष्क धमनियों की कठोरता, पाचन सम्बन्धी रोग, विबन्ध, ब्लडप्रेशर (रक्तचाप) नाडी दौर्बल्य आदि व्याधियों का लक्षण है। 'निद्राणी' इन सब अवस्थाओंमें अपना निश्चित प्रभाव दिखाती है। कुछ ही मात्राओंके सेवनसे रात्रिभर खूब गहरी नींद आने लगती है और प्रातःकाल उठने पर देह में स्फूर्ति और मन प्रफुल्लित होता है। इसमें कोई मादक या विषैला द्रव्य नहीं है। मूल्य ४) आधाकोर्स २॥) पोस्टेज १)

मसूरिना

१—यदि साल भर में इसकी केवल २ मा[त्रा] ६ मास से लेकर १५ वर्ष तक के बालक को खिला[ई] जायं तो फिर बारह मास चेचक निकलने का भय न रहता गारण्टी है।

२—घर में किसी बालक को चेचक निक[ल] चुकी हो तो घरके दूसरे बच्चों को तुरन्त इसकी २ मात्रा खिलादें। फिर उन बच्चों पर इस रोग का हमला न होगा।

३—जिस आदमी या बालक को चेचक निक[ली] हो उसे तीन दिन सेवन कराने से सब दाने निक[ल] आवेंगे, आंख में फूला नहीं पडेगा और ज्वर उतरक[र] शीघ्र स्वस्थ हो जायेगा।

भारतवर्ष में अकेली अनुभूत प्रमाणित द[वा] जिसकी एक शीशी प्रत्येक बाल-बच्चेदार गृहस्थी [के] घर में और प्रत्येक वैद्य, हकीम, डाक्टर के दवाखा[ने] में रहना बहुत जरूरी है। १६ मात्रा की शीशी [की] कीमत २) एक दर्जन २१) रु०।

हिन्दी से अंग्रेजी मैट्रिक

स्कूल में पढने वाले मैट्रिक के विद्यार्थियों के लिए परम सहायक, प्राइवेट केवल अंग्रेजी में मैट्रिक की परीक्षा देने वालों के लिए परमोपयोगी, योग्यता बढाने वालों के लिए सहपाठी और प्रारम्भ से अंग्रेजी सीखने वालों के लिए यह पुस्तक प्राथमिक गुरु है। इसमें मैट्रिक की परीक्षा में काम आने वाले चुने हुए आवश्यक शब्द, ग्रामर (व्याकरण) और अनुवाद आदि सब कुछ छाप दिया है। ३२० पृष्ठ, दसवां संस्करण, मूल्य ३॥) रुपया, डाक खरच बारह आने।

एक महान टॉनिक

यह दवा पर्वतोंपर बर्फके नीचे पाई जानेवाली एक अत्यन्त शक्तिवर्धक बूटीके योगसे बनी है। इसके सेवनसे स्त्री-पुरुषोंमें किसी भी कारणसे उत्पन्न हुई अशक्ति, दुर्बलता, शरीर का दुबलापन, वजन घट जाना, खून की कमी, गहरी नींद न आना, उत्साह और स्फूर्ति का अभाव आदि विकार मिटकर शरीर पुष्ट, शक्ति सम्पन्न और कांतिमय हो जाता है, क्योंकि इसके सेवनसे खूनमें श्वेत और लाल अणु खूब बढ़ते हैं। मू० १ मास की दवा का १०) पो० १)

नोट—निरामिष भोजी, अविवाहित और विद्यार्थी इसके लिए आवेदन न करें।

पता—रसायन फार्मेसी (३ दरियागंज) पो० बो० ११२५ देहली।

रसायन फार्मेसी देहली का प्रमुख सचित्र मासिक पत्र
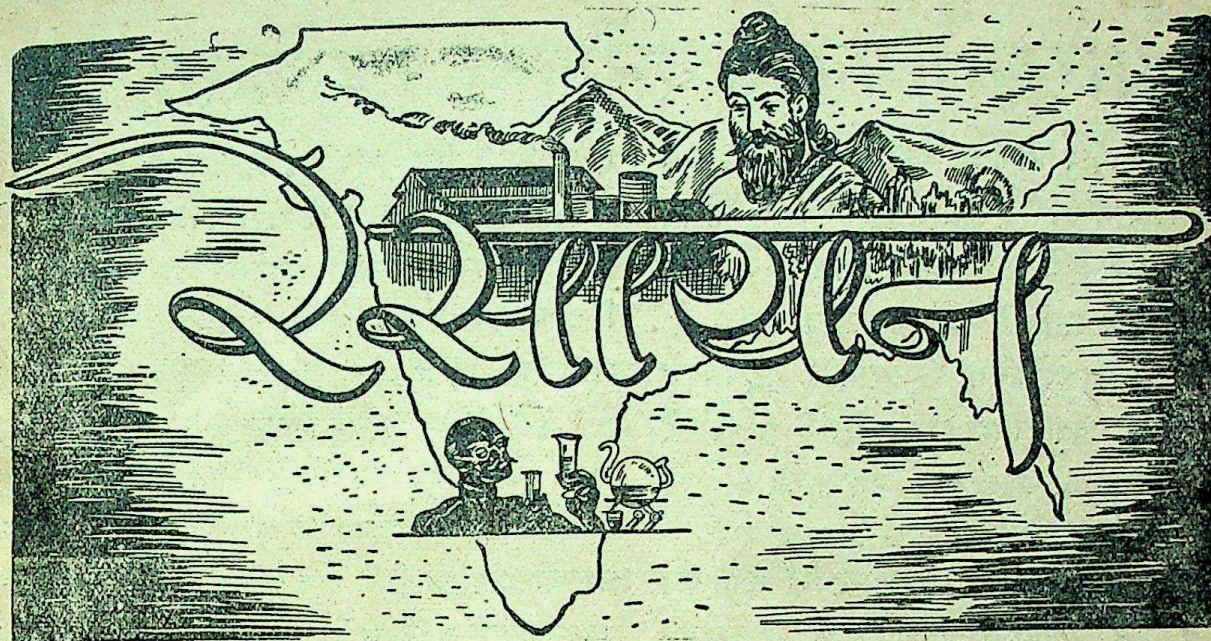
'सिद्ध रसे करिष्यामि, निर्दारिद्र्य मयं जगत् ।'

वर्ष ७	देहली अप्रेल १९५५	अङ्क ११

❀ वीर्य विनाश ❀

[लेखक—श्री स्वामी पारसनाथ]

जिससे पैदा हुए वीर अर्जुन जयकारी ।
जिससे प्रकटे 'शूर शिवा' से तेगाधारी ।।

जिससे पैदा हुए भगत प्रहलाद निराले ।
जिससे जगमग हुए चमन में बहु गुललाले ।।

जिससे प्रगटे जगत में आल्हा ऊदल नर धवल ।
उसे बहाते लोग हैं—पानी जैसा आजकल ।।

❀ ❀ ❀ ❀ ❀ ❀

परिणामप्रद सूक्ष्मौषधि चिकित्सा

आयुर्वेदीय औषधियां मुख द्वारा सेवन करने से आमाशय में जाती हैं और वहां उन पर विभिन्न क्रिया प्रतिक्रिया होने के पश्चात उनका शरीर में प्रसार होता है। इस पद्धति में अधिक समय लगता है, इसलिए यदि यह औषधियां आमाशय में पहुंचने से पहले मार्ग में रक्तवाहिनियों द्वारा शरीर में प्रसार करें तो चिकित्सा शीघ्र परिणामप्रद बन सकती है ऐसा वैद्य सुन्दरराव भास्कर बम्बई निवासी मानते हैं।

इनका सिद्धान्त 'इलेक्टरो होम्योपैथी' से मिलता हुआ है। इस सिद्धान्त के अनुसार कोई भी वनस्पति या द्रव्य चुटकी भर लेकर हजार गुणा जल में मिलाना चाहिये फिर बोतल को खूब हिलायें। दिन में कई बार हिलाना चाहिये। इस दवा की एक-एक चम्मच मात्रा ५ या दस मिनट के अन्तर से देते रहें। जब रोग के लक्षण मिटने लगें और रोगी को निद्रा आने लगे तब दवा का सेवन बन्द करदें।

वैद्य सुन्दर राव के मतानुसार औषधि निर्माण में वनस्पति पंचांग का उपयोग अनावश्यक है वस्तुतः वनस्पति का कोई एक अंग काम में लाना चाहिये। उनके विचार में पत्तों का उपयोग उत्तम है। कारण पत्र को वे वनस्पति का सविशेष सूक्ष्म स्वरूप मानते हैं।

इस पद्धति के अनुसार एक से अधिक औषधियों का किसी एक रोग लक्षण पर सेवन कराना अनुचित है। उदाहरणार्थ ज्वर के लिए आयुर्वेद में गिलोय, कडवा नीम, कुटकी, चिरायता आदि अनेक द्रव्यों की योजना की गई है किन्तु उक्त वैद्यराज का कथन है कि ज्वर के लिए औषधि योजना करना हो तो एकमात्र गिलोय का नख जितना टुकडा लेकर एक बोतल पानी में डाल रखें और उपरोक्त विधि से तैयार करके एक-एक चमच रोगी को पिलाते रहें। आराम हो जायगा। वैद्य सुन्दर राव आगे कहते हैं कि मैंने इसका अनुभव अपने और अपने स्वजनों और पडोसियों पर करके सफलता प्राप्त की है। इसी प्रकार भिन्न २ रोगों के लिए औषधि निर्माणार्थ उन्होंने एक सूची तैयार की है। इस सिद्धान्त को लक्ष्य रखकर अधिक द्रव्यों की योजना की जा सकती है।

वैद्य सुन्दर राव की इस नवीन अनुसन्धान की विशिष्टता यह है कि यह बहुत सस्ती है और सभी वनस्पतियां सहज ही में प्राप्त होने वाली हैं। किसी एक द्रव्य से लाभ प्रतीत न हो तो चिकित्सक अन्य द्रव्य की योजना स्वबुद्धि से कर सकता है।

आयुर्वेद में दोषों का विचार करके अनेक औषधियां एक-एक रोग पर लिखी मिलती हैं। उपद्रव न हो इसलिए अधिक औषधियां और फिर अनुपान रूप में अन्य औषधि भी साथ दी जाती हैं। इस पद्धति में मुख्य रोग के लिए एक ही औषधि निश्चय की जाती है और उसके मिटने के बाद दूसरे रोग की औषधि दी जाती है। चिकित्सा काल में कोई विशेष पथ्य पालन की आवश्यकता नहीं होती।

प्रायः ही मुख्य रोग को आराम होने से काफी उपद्रव स्वयं ही नष्ट हो जाते हैं। तात्कालिक उपचार के लिए इस प्रकार औषधियों का प्रयोग सरल पद्धति है। आसपास उत्पन्न होने वाली वनस्पतियों का परिचय रखने वाले वैद्य इस पद्धति से स्वतन्त्रतापूर्वक सरलता से उपचार कर सकते हैं। इसमें किसी के आश्रित रहने की कोई अडचन भी नहीं है। रोगी के सन्तोष और विश्वास के लिए पानी को विभिन्न रंगों से रंगकर छोटी बड़ी शीशीयों में भरकर दे सकते हैं किन्तु उपरोक्त मुख्य सिद्धान्त को दृष्टिगत रखना चाहिए।

भारतीय जड़ी बूटियाँ

वनस्पतियों पर मेरे अनुभव

लेखक—वैद्यरत्न, कविराज प्रतापसिंह जी D. Sc. (A.) भू०पू० डायरेक्टर आयुर्वेद विभाग राजस्थान गवर्नमेंट

बल प्राप्ति के लिए

शरीर को तरोताजा रखने के लिये दूर्वा का निम्न प्रयोग उत्तम है। मैं चिरकाल से इसका प्रयोग कर रहा हूँ।

हरी दूर्वा १ तोला
बादाम छिलके सहित १० दाने
काली मिर्च १० दाने

इन तीनों को सिलपर पीसकर रुचि के अनुसार मीठा मिलाकर शर्बत ३–४ बजे दिन के पीलें।

दूर्वा में जीवन शक्ति अनन्त हैं किसी अनुसंधान कर्ता ने लिखा है।

"निष्पिष्टापि पदाघातैः खरतापैश्च तापिता"
अजाद्यैश्चर्विता प्येषा न दूर्वा म्रियते क्वचित् ॥

दूर्वा रात दिन पादाघात से कुचली जाती है सूर्य की तीव्र किरणों से उत्पत्ति होती हैं और विविध प्रकार के जीव उसे चरते रहते हैं पर दूर्वा का नाश नहीं होता है।

दूर्वा का पूजन में भारत वर्ष में सर्वत्र ही प्रयोग होता है इस विषय में यजुर्वेद में प्रार्थना आती है।

"काण्डात्काण्डात प्ररोहन्ति परुषद परुषस्परि
एवानो दूर्वे प्रहनतु सहस्रेण शतेनचे।"

अर्थात् हे दूर्वे आप कठिन से कठिन स्थान पर फैलती हैं और अपने कान्ड से लगजाती हैं इस लिये आप हजारों की तादाद में हमारे लिये संसार में फैल जायं।

यह सर्व विदित है कि हाथी जैसा जीव भी दूर्वा के सेवन से मस्त हो जाता है, गोधन तो इसके सेवन से पुष्ट होता है घोड़ा जैसा बलिष्ट परिश्रमी जीव तो इसी पर जीवित रहकर संसार की सेवा करता है, इस प्रकार की दिव्य सुलभ प्राप्त होने वाली वनस्पति का प्रतिदिन उपयोग कर मनुष्य क्यों न बल प्राप्त करें! प्रत्येक व्यक्ति कुछ समय सेवन कर इसका लाभ प्रत्यक्ष कर सकता है।

जापान के एक वैज्ञानिक "काई" जो पानी पर हरे रंग की बनस्पति होती है, उसका अनेक प्रकार से भोजनोपयोगी सामग्री बनाकर प्रयोग कर रहे हैं, इससे दूर्वा में जीवन रक्षा की अत्यधिक शक्ति हैं।

आशा है अन्वेषक विद्वान इसकी परीक्षा कर लोकोपकार करेंगे।

पुष्टी के लिये तरुण कन्द

इसे पहाड़ी भाषा में 'तरुड' कहते हैं चरक ने सूत्र स्थान के २७ अध्याय में शाक 'तरुट' शब्द से इसका उल्लेख किया है। यह नैपाल और गढ़वाल में प्रायः मिलता है। नदियों के किनारे रेतीले भूभाग में गहरा खोदकर निकाला जाता है। तीन से ६ इञ्च के कन्द प्राप्त होते हैं। कन्द से अनेक पर्व दो एक इञ्च की दूरी पर सिकुड़न से दिखाई देते हैं। कन्द छीलने से श्वेत निकलता है इसको उबाल कर खाते हैं। अत्यन्त बलकारक समझा जाता है।

नैपाली लोग इसे उबालकर बड़े चाव से खाते हैं और अपने जीवन में स्त्री सुखदायक समझते हैं। एक नैपाली स्त्री ने तो यहां तक कहा कि इसके निरन्तर सेवन से मनुष्य युवा बना रहता है। इसके सेवन से नैपाली पुरुष बहु विवाह करते हैं यह अत्यन्त बलकारक है।

देहरादून में शिवरात्रि के उत्सव पर दूर २ से लाकर लोग इसे बेचते हैं और पहाडी जनता बडे प्रेम से खरीदती है। मैंने अभी दस सेर देहरादून से प्राप्त किया है, एक छटांक की मात्रा में उबालकर एक बार भोजन के साथ सेवन करता हूँ। मैं प्रार्थना करता हूं कि मेरे देशवासी इस कन्द की जीवनीय शक्ति की परीक्षा कर लाभ उठावें।

नाड़ियों की शिथिलता पर मधुयष्टि

आयुर्वेद ने शरीर को नवीन बनाने के लिए अनेक सिद्ध प्रयोग दिये हैं और रसायन शब्द से इस प्रकरण का उल्लेख किया है। जिन स्त्री-पुरुषों को मानसिक दुर्बलता हो या नाडियों की शिथिलता से शरीर के अवयव काम समय पर करने में असमर्थ हों तो उन्हें 'मधुयष्टि या मुलेठी का सेवन करना चाहिये। मुलेठी बाजारों में सर्वत्र सुलभ है इसका कपडछान चूर्ण कर एक बोतल में भरकर रखलें, दिन ६ माशा इस चूर्ण को छटांक भर दूध में घोल पीलें, निरन्तर सेवन करने से बल-बुद्धि का शरी संचालन कर मेधा शक्ति का अभिवर्धन करती। निम्न पद्य इस विषय में स्मरण करने योग्य "चत्वारि रसायनानि"

> मण्डूक पर्ण्याः स्वरसः प्रयोज्यः—
> क्षीरेण यष्टि मधुकस्यचूर्णम्।
> रसोगुडूच्यास्तु समूल पुष्प्याः—
> कल्कः प्रयोज्य खलु शंखपुष्प्याः
> आयुः प्रदान्यामय नाशनानि बलाग्नि वर्ण स्वर वर्द्धनानि
> मेध्यानि चैतानि रसायनानि मेध्या विशेषेण तु शंखपुष्पी

भृङ्गराज

यह क्षुप नमीने के स्थानों में प्राप्त होता 'काला भंगरा' कहने से माली लोग प्रायः ला देते इस वनस्पति का मैंने बहुत प्रयोग कराया है। जिन पुरुषों के बाल असमय में पक गये हों वे केवल मास इसका कल्प करके लाभ उठावें।

इसके प्रयोग करने के पूर्व मनुष्य वम विरेचन लेकर किसी सद्वैद्य की देख रेख में शरी को शुद्धकर १० तोला हरे भृङ्गराज पंचाङ्ग पानी साथ भांग की तरह घोटकर साफ कपड़े से निचोड़क लगभग पांच तोले रस निकालकर सूर्य के सामने खड़ होकर पीलें। चार पांच घंटे तक कुछ न खावें बाद केवल शक्कर मिलाकर दूध पीलें। एक मास तक निरं इसका सेवन कर फिर धीरे २ स्वल्प मात्रा सात्विक भोजन करें- इसके सेवन से शरीर में नवी शक्ति का संचार होगा और वलिपलित नष्ट होक चहरा दमदमाने लगेगा। रस निकालने के बा जो फुजला शेष रहे उसे पुनः पानी में पीसकर सर में थो दें, सूखने पर धोकर स्नान करलें। मनसा वाच कर्मणा ब्रह्मचर्य रख मुनि वृति का जीवन औषधि सेव

काल में व्यतीत करें। प्राचीनों ने लिखा है।

"ये मासमेकं स्वरस पिबन्ति

दिने दिने भृङ्गरजः समुत्थम् ॥

क्षीराशिन स्ते बलवर्ण युक्ताः—

समाः शतं जीवितमाप्नुवन्ति ॥

इसी भृङ्गराज का मैं चूर्ण के रूप में भी प्रयोग करता हूँ जिन्हें प्रमेह की शिकायत हो व मूत्राधिक्य होता हो उन्हें बहुत लाभ करता है।

ऋतु पर एकत्रित किया हुआ भृङ्गराज छाया में सूखा हुआ ढाई सेर लेकर पीसकर दो सेर कपड़छान चूर्ण करलें फिर इसमें एक सेर आंवले का चूर्ण और काले तिल का चूर्ण एक सेर मिलादें एवं काचके स्टोपर्ड बोतल में भरकर रखदें शुद्ध शरीर करके प्रतिदिन गुड़ या शक्कर बराबर या दुगनी मिलाकर दूध से प्रातःकाल सेवन करें १। तोला चूर्ण में गुड़ समान और शक्कर लें तो दुगनी मिलाकर थोड़ा २ मुंह में डालकर दूध के साथ खालें। एक वर्ष निरंतर इसका सेवन करने से शरीर निरोग रहता है। निम्न पद्य ध्यान में रखें।

श्लक्ष्णीकृतं भृङ्गरजस्य चूर्णं तिलार्द्धकं चामलकार्द्धकञ्च।

सशर्करं भक्षयतो गुडैर्वा न तस्य रोगा न जरा न मृत्युः ॥

पित्त प्रकृति वालों के लिये वैद्यजीवनोक्त मैं एक प्रयोग करता हूँ वह मेरे देश वासियों के लिये लिखने का लोभ संवरण नहीं कर सकता। इस चूर्ण को महाराष्ट्र के वैद्य "अमृतत्रय" के नाम से प्रयोग करते हैं बड़ा ही उत्तम योग है। केवल तीन ही द्रव्य इसमें भी हैं।

फागुन के मास में पके हुये आंवले लेकर छाया में सुखालें। वर्षान्त में पुष्प फल पाकान्त गुडुची के मोटे मोटे तने लेकर बारीक पीसकर छाया में सुखादें एवं इसी प्रकार गोखरू को भी समय पर संग्रह कर सुखाके पीसलें सबको समान मात्रा में मिलाकर कपड छान चूरण करलें बाद में शरीर को शुद्ध करके ३ से ६ माशा की मात्रा से घृत और शक्कर यथा रुचि मिलाकर प्रातःकाल एक वर्ष तक सेवन करें। इसके सेवन से भी शरीर निरोग रहता है ग्रन्थकार ने गुण बहुत लिख दिये हैं।

"अमृतामलकी त्रिकंटकानां

हविषा शर्करया निषेवणेन ॥

अजरा अमरा अपार वीर्या

अलिकेशाऽक्षिते सुताः बभूवु ॥

शरीर को सबल बनानेवाला योग

आजकल अग्नि मांद्य, अर्श भगन्दर आदि रोगों से पीडित प्राणि प्रतिदिन चिकित्सकों के यहां चक्कर लगाते रहते हैं अनेक उपचार करने पर भी न्यूनाधिक कष्ट भोगते ही रहते हैं। यदि ऐसे रोगी नीचे लिखा योग वर्ष भर निरंतर सेवन करते रहें तो आजीवन सुखी रहेंगे।

लाल चित्रक की जड का चूर्ण

छोटी हर्रों का चूर्ण

छोटी पीपल का चूर्ण

सैंधा नमक

सब समान भाग में मिलाकर ६ माशा से १ तोला प्रातःकाल तक्र के साथ सेवन करें तो उदर रोग सब प्रकार के नष्ट होकर शरीर बलिष्ट हो जाता है।

नासूर की बूटी

यह बूटी सर्वत्र बागों में प्रायः मिलती है इसे बिछुआ बूटी कहते हैं, इसकी छोटी २ हरी पत्तियां एक जटासी बनाती हैं पीछे सफेद वर्ण के रोम होते हैं। गमलों में सुन्दरता के लिये लगाकर मकानों के सामने लटकाया जाता है, इस बूटी में जीवन शक्ति बहुत है। एक डंडी तोडकर रखने से १०-५ दिन कुमलाती नहीं हैं, केवल इस बूटी का कल्क नासूर में भरकर ऊपर से केले का पत्ता बांध देने से नासूर धीरे २ भर जाता है जब तक नासूर न भरे इस बूटी

के कल्क को लगाते रहें। यदि नासूर क्षय रोग जन्य हो तो खाने के लिये "विश्वेश्वर रस (योगतरङ्गिणी) का अवस्था के अनुसार उपयुक्त मात्रा से सेवन करावें। इस बूटी का नाम सहज पहिचान के लिये जटाशंकरी रखा है । यह मरुभूमि में पाषाणों की कोटरों में भी पाई जाती है उसमें गुण अधिक हैं।

मैं इस वनस्पति का ३-४ वर्षों से उपयोग कर रहा हूँ। छः-छः इंच गहरे नाड़ीव्रण इसके उपयोग से शुद्ध होकर पूर्ण हो गये हैं। केवल इतना ही करना पड़ता है कि शुद्ध शिला पर इसके पत्र को पीसकर शलाका यन्त्र से नाड़ीव्रण के अन्दर भर दिया जाय और ऊपर से केले का पत्र देकर पट्टी बांध दी जाय। धीरे-धीरे घाव अन्दर से भरता चला आयगा। समय रोगी की शक्ति और रोग की जीर्णता पर निर्भर है। मैंने इसका प्रयोग क्षय रोगियों के नाड़ीव्रणों पर भी सफलता के साथ किया है। क्षय रोगियों को मैं विश्वेश्वर रस, स्वर्णभूपति और गांगेरू की मूलत्वक का प्रयोग भी उचित मात्रा में कराता हूँ।

गांगेरुकी (अस्थि सन्धानक)

सारे राजस्थान के ग्राम्यजन इसका पशु और मनुष्यों के अस्थिभंग पर समानरूप से प्रयोग करते हैं।

पशुओं को इसका चूर्ण १ तोले से ५ तोला तक पानी में घोलकर पिलाते हैं और अस्थिभंग पर खपच्चे (स्प्लिन्ट) बांध देते हैं। मनुष्यों को नीचे लिखे अनुसार लड्डू बनाकर खिलाते हैं।

गांगेरुकी मूलत्वक् का चूर्ण	३५ तोला
देशी चीनी	२५ तोला
बादाम कटा हुआ	५ तोला
पिस्ता कटा हुआ	५ तोला
गोघृत	३५ तोला

सब एकत्र मिलाकर १० लड्डू बना लेते हैं। एक लड्डू प्रातःकाल दूध के साथ खिलाते हैं भोजन सायंकाल कराते हैं; दस दिन एक ही प्रकार का जीवन बिताने की हिदायत करते हैं।

इसके साथ भंग अस्थि पर खपच्ची बांधकर ऊपर से नीचे लिखे द्रव्यों को मिलाकर लेप कर देते हैं जिससे अस्थि समरूप में रहे।

अस्थि सन्धानक लेप

सत रेवनचीनी का चूर्ण (उशारे रेवन)
गन्धा बिरोजा
चमडा
मेथिलेटेड स्पिरिट

सब द्रव्य रोगी के स्थान विशेष के अनुसार मात्रा से मिलाकर प्लास्टर सा बनाकर लगादें। प्लास्टर स्पिरिट में घुलनशील है जब चाहें तब स्पिरिट से साफ किया जा सकता है। इस प्रयोग से अस्थि अत्यन्त स्वल्प समय में ही सन्धान होजाती है। गांगेरुकी नागबला नहीं है। इसके वृक्ष राजपुताने के जंगलों में बहुतायत से प्राप्त होते हैं। इसके छोटे फल खाये जाते हैं उन्हें गीगचा कहते हैं। वर्षान्त में बाजारों में विकने आते हैं। शारंगधर ने लिखा है गांगेरुकी मूलरसैः-जायते गत वेदनः। इसकी जड का रस व्रण में लगाने से वेदना शमन होती है। आज भी भील लोग इसका प्रयोग करते हैं। यह वृक्ष ८-१० हाथ ऊंचा अच्छा शाखावाला छायादार होता है, इस का विशद वर्णन देखना चाहें तो आचार्य यादवजी त्रीकमजी संकलित 'द्रव्य गुण विज्ञान' में देखें।

सद्योव्रण रोपण

मांस रोहिणी

यह बहुत बडा शेमल के वृक्ष के समान ऊंचा बहुशाखी वृक्ष है। इसमें परवल जैसे रेशादार फल लगते हैं जो पशुओं को खिलाये जाते हैं। राजपुताना

(शेष पृष्ठ २०७ पर पढ़ें)

* बकरी का मांस *

(लेखक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, बागीची अलाउद्दीन, देहली)

महाराज चन्द्रगुप्त के महामंत्री कौटिल्य अर्थ-शास्त्र में लिखते हैं, खराब मांस को, जानते हुवे बेचने वाले के लिये दण्ड यह है कि उसके हाथ काट दिये जावें और १०० पना (स्वर्ण मुद्रा) जुर्माना किया जाये। वह चाहते थे कि जनता के स्वास्थ्य की रक्षा के लिये राज्य में अच्छे पशुओं का मांस, अच्छी अवस्था में ही बेचा जाये।

प्राचीन आचार्यों ने खाद्य पदार्थों के शाक वर्ग और मांस वर्ग दो विभाग माने हैं। मांस वर्ग में आकाश में उड़ने वाले पक्षी, भूमि पर घूमने वाले चरिन्दे व दरिन्दे, भूमि में रहने वाले खरगोश, लूमड़, सर्प आदि और जल में रहने वाले मत्स्य, मेंडक, सर्प कर्कट आदि हैं। आचार्य चरक कहते हैं "नहि मांस सेम किञ्चित"।

शास्त्रानुसार पशुओं में मादा पशुओं का तथा पक्षियों में नर पक्षियों का मांस सेवनीय है। जांगल जीवों का उत्तम मांस उनके नख रोमादि छोड़कर घृत व तैल पाक के लिये प्रयोग करना चाहिये। नपुंसक बकरे का मांस उत्तम माना गया है परन्तु अभाव में बन्ध्या बकरी का मांस प्रयोग में लाया जा सकता है।

बकरी के मांस के विषय में शास्त्र कहता है कि यह न अधिक शीतल न भारी है और अधिक स्निग्ध भी नहीं, सर्व दोषों से रहित है। स्रोतों में रुकावट न डालने वाला (टौक्सिन्ज पैदा न करने वाला) और अति वृंहण है।

मांस परीक्षा

अच्छे मांस का रंग लाल होता है मेद के कारण श्वेत होता है और दबाने पर उसमें गढ़ा नहीं पड़ता। अच्छा मांस एक दो दिन रखा रहने से खराब नहीं होता और आज कल जहाजों के सर्द खानों में रखा मांस ६ मास तक खाने योग्य रहता है।

मांस का संगठन

मांस में प्रोटीन, मेद और क्षार होते हैं। कार्बोहाइड्रेट नहीं होते, मांस में मायोसिन और हीमोग्लोबिन यह दो प्रोटीनें होती हैं। आधुनिक वैज्ञानिक मांस को मशीनों द्वारा सुखाकर और मैदा की तरह बारीक पीसकर भोजन के लिये प्रस्तुत करते हैं। उनके विचार में यह खालिस प्रोटीन है। परन्तु इसमें वह गुण नहीं जो ताजा मांस में होते हैं। मांस में सुगन्ध मायोसिन के कारण होती है। वृद्ध बकरे के मांस में जैलाटीन अधिक होती है।

मांस की पौष्टिकता इतनी बताई जाती है कि मांस का ८५ प्र० श० भाग सारभूत होकर आंतों में जज्ब हो जाता है। केवल १५ प्रतिशत भाग मल रूप में बाहिर निकलता है।

जेसन नामक शास्त्रज्ञ ने प्रयोग करके सिद्ध किया कि ३½ औंस कच्चा मांस २ घन्टे में, पूर्ण उबला ३ घन्टे में, आधा भुना ३ घन्टे में और पूर्ण भुना ४ घन्टे में आमाशय से आन्तों में जाता है।

मांस में पोटास, फास्फोर्स और लोह यह लवण होते हैं। जिस मांस में पकते हुवे सुगंध हो वह शीघ्र पच जाता है। मुगल बादशाहों के भोजन में जो मांस दिया जाता था उसमें बावर्ची किशमिश भी डालते थे, मसालों में काली मिरच, इलायची दाना, जीरा स्याह,

जीरा श्वेत, धनिया के बीज व पत्ते, लौंग, जायफल जावित्री, केसर, लाल मिर्चें, काशमीरी मिरच, छोटी इलायची, तेजपात, दारचीनी, अदरक, लसन, प्याज, हल्दी, नमक का प्रयोग होता था।

यूनानी चिकित्सकों ने यक्ष्मियों के लिये मांस प्रयोग के एक बढ़िया तरीके का प्रयोग किया और वह इस प्रकार है कि मांसका कीमा बनवाकर, उसका पानी निचोर लिया। यह पानी पतीलीमें घृत, प्याज, लवण, मिरचा हल्दी आदि डालकर मिला दिया और पकाया, यह पानी अण्डे की सफेदीकी तरह जम जाता है। यह भोजन शीघ्र पचनेवाला और बलवर्द्धक होता है।

आयुर्वेदिक मत्तानुसार मांस रस तीन प्रकार का होता है घन, तनुक और अच्छतर। एक पल मांस को दो प्रस्थ जल में पकाने को अच्छतर कहते हैं। ६ पल मांस को ८ सेर जल में पकाने पर तनुक, बारह पल मांस को २ सेर जल में पकाने को घन कहते हैं। चतुर्थांश शेष रखा जाता है।

भाव प्रकाशमें षडङ्ग यूष योग इस प्रकार लिखा है कि जौ छिलके रहित ४ तो०, कुलथी ४ तो०, बकरे का मांस १७ तो०, जल २½ सेर, विधि—मिट्टी के पात्र में उबालें, चौथाई रहने पर छानकर रखलें, दूसरे बर्तन में ४ तो० बकरीका घृत डालकर, इसमें छौंक दें, फिर इसमें सेंधा नमक १ तो०, हींग अल्प मात्रा में आंवला १ मा०, सोंठ ६ रत्ती, छोटी पीपल ६ रत्ती, पानी से खूब पीसकर डालदें, पकने पर छानकर रोगी को दें।

सर्प विष जब मस्तिष्क को व्याप्त ले तो चरक आचार्य कहते हैं कि शिर के केशों को मुंडवाकर, उस पर काक पदाकार व्रण, चक्कु से करके उस पर बकरे के ताजा रक्त वाला मांस रखे, इससे वह मांस विष को चूस लेगा। बार २ मांस को बदलते रहें।

अपतानक रोगियों के पथ्य में चावलों से मांस रसको देना आयुर्वेद कहता है। वात-कफ के पेट शूल में प्रातः मांस रस को पथ से देना बताया गया है।

शास्त्र कहता है कि सींग, चमड़ा, खुर रहित बकरे का मांस, दशमूल १६ सेर पानी में पका चौथाई रखें। एक सेर तिल तेल, जीवनीय गण का कल्क, दुग्ध, मोरेठी और शतावर स्वरस डाल पकालें, इससे अर्दित, गृध्रसी, कुब्जता, खञ्जता, कर्णशूल, खंज, दूर होते हैं। शीत वात रोग अर्थात धूप में भी सर्दी लगे तो घृतयुक्त गरम मांस रस दें। रक्तज अर्श में घृतयुक्त मांस देना चाहिये। काश्यप संहिता में महा... में मांस डालने का विधान है। रक्त पित्त में बकरी का दूध पीते बच्चों का मांस युनानी चिकित्सक देते हैं।

वहम व उन्माद रोग में बकरी के एक वर्ष के बच्चे का मांस भोजन में दिया जाता है। शास्त्रानुसार बकरी का मांस रस घृतयुक्त, मधु और शर्करा डाल ठंडा करके देनेसे तृषा मोह दाह और मद दूर होते हैं।

बकरे का मांस हेमन्त, बसन्त, शरद तथा शिशिर ऋतुमें खाना हितकर बताया है। बकरेका मांस, मा... माष तेल, महाराज प्रसारणी तैल, कुमार कल्पद्रुम घृ... अमृतप्राश, छाग्लाद्य घृत आदि में डाला जाता है।

युनानी चिकित्सक माउलैम नाम का एक म... का तरल, बकरे का मांस, तीतर, वटेर, मृग मांस औषधियां डालकर बनाते हैं। परन्तु विज्ञानानुसार अर्क में मांस की प्रोटीनें व लवण ऊपर नहीं जासक... इसलिए माउलैम में मांस कुछ महत्व नहीं रखता इसकी अपेक्षा आयुर्वेदिक तरीकों से मांस का प्रयोग पूर्ण लाभदायक है।

चिकित्सकों ने मांसों में विशेष गुण उत्पन्न करने में भी दक्षता प्राप्त की थी। वह औषधियां अर्थात वनस्पतियां जैसे यक्ष्मा में अड्डूसा, पेट के रोगों में अर्क पत्र, रक्तदोषों में निम्ब, पित्त दोषों में खीरा खर्पूजाके बीज, धनिया आदि वह रोगानुसार वनस्पतियां को बकरों को खिलाते और पश्चात में उनका मांस उन रोगों से पीडितों को दिया जाता।

बकरों में ही एक प्रकार का पर्वतीय जंगली बकरा होता है उसे मारखोर कहते हैं। यह बकरे कशमीर और बलोचिस्तान में पाये जाते हैं। इनके विषय में कहा जाता है कि इनका भोजन सर्प है जब यह बकरा सर्प खाकर जुगाली करता है तो इसके मुख से गिरने वाली झाग जमकर पत्थर बन जाती है इसे सर्पदंश पर लगाने से यह विष को चूस लेती है।

यह बकरा बहुत महत्व रखता है। यक्ष्मा की औषधियों में इस बकरे के मांस आदि का प्रयोग बहुत प्रशस्त है। भारत में यक्ष्मियों की संख्या बहु रही है। पर्वतीय स्थानों में इन सर्प भक्षी बकरों की नसल बढाने का यत्न होना चाहिये। इनकी संख्या वृद्धि के लिए फार्म बनना चाहिये। सर्प की खाद से उत्पन्न गन्ना के चूसने से अगर फुफ्फुस व्रण भरकर यक्ष्मी अच्छा होजाता है तो सर्पभक्षी मारखोर के मांस रस, रस से निर्मित तेलों के प्रयोग से अवश्य यक्ष्मी ठीक होते हैं। इसके बालों की धूनी यक्ष्माके कीटाणुओं का नाश करती है। इसका रक्त यक्ष्मियोंके लिए अमृत है।

कहा जाता है कि इसके खुर की अंगूठी बायें हाथ में पहनने से मिर्गी का रोग दूर हो जाता है। इसका भेजा खाने से मसाने की शक्ति बढती है। मारखोर के चमड़े की टोपी बनाकर पहनने से मिर्गी को आराम होता है। आंखों में पित्ता का पानी डालने से दृष्टि बढ जाती है, मोतियाबिन्दु दूर होता है।

यक्ष्मा की रोकथाम बी० सी० जी० के टीकों से न होगी और न ही यक्ष्मियोंकी मृत्यु संख्यामें कोई कमी स्ट्रैप्टोमायसीन आदि औषधियां लासकेंगी। भगवानने इस भारतभूमि में ही इसकी प्राकृतिक चिकित्सा रखी है। प्रकृति ने भारत के मैदानों में प्रचुर मात्रा में बकरों को पैदा किया है, भारत के पर्वतों पर यक्ष्मियों के अमृत मारखोर को पैदा किया है। वैद्य समाज को यक्ष्मियों की चिकित्सा करते हुए बकरे के मांस को चिकित्सा में उसका स्थान देना चाहिये॥ ——

(शेष पृष्ठ २०४ का)

के डूंगरपुर जिले में ये वृक्ष बहुत पाये जाते हैं। जब भील जाति के आदि वासियों में मारकाट होती है तब वे लोग कटे भाग पर इस वृक्ष में छुरा भौंककर लाल रंग का रस निकाल कर अपने व्रणों में भर देते हैं। व्रण बिना किसी विकृति के प्रायः २४ घण्टे में भर जाता है और कटा मांस तो अत्यन्त शीघ्र जुड जाता है। इसीलिए प्राचीनों ने इसे मांस रोहिणी नाम दिया है। इस पर विशेष अनुसंधान किया जावे तो देश का नाम विदेशों में भी उज्ज्वल हो सकता है।

हाई ब्लडप्रेशर को शीघ्र दूर करने वाला एक पोदी रसोन कन्द

यह रसोन कन्द देहरादून में पाया जाता है अन्य प्रान्तों में भी यदाकदा कहीं २ पाया जाता है पर सर्वत्र सुलभ नहीं है। इस कन्द में गन्ध तो लहसुन जैसी होती है पर लहसुन जैसी दाहकता इसमें नहीं पाई जाती है। इसका रस दस बिन्दु से साठ बिन्दु तक क्रमशः बढाकर मीठे दूध के साथ प्रातःकाल में लेने से शीघ्र ही ब्लड प्रेशर स्वाभाविक हो जाता है। निद्रा आने लगती है, शरीर में बल का संचार होने लगता है और मल का भी शोधन होता है। सुकुमारों और लहसुन न खाने वालों के लिए मैं नीचे लिखा प्रयोग करता हूँ।

एक पोदी लहसुन को छीलकर बारीक बारीक काटकर १० तोले लें, बाद में पांच पाव गोदुग्ध में मिलाकर मन्द आंच पर खोआ बनालें जब अच्छा खोआ बन जावे तब खोये के बराबर चीनी मिलाकर २-२ तोले की मात्रा में पेडे बनालें। एक पेडा प्रातः काल दूध, चाय या काफी के साथ सेवन करें। इस पर पाश्चात्य देशों में अब अनुसन्धान होने लगा है। यहां हिन्दू विश्वविद्यालय में भी अधिक अनुसन्धान करने की व्यवस्था की जारही है। ——

किस प्रकार मनुष्य स्वयं अपना शत्रु बन जाता है ?

(लेखक—डाक्टर अजीतचन्द बनर्जी)

आम तौर से यह कहा जाता है कि यह वैज्ञानिक युग है गलत तथा पुराने विचारों के ऊपर विश्वास नहीं किया जा सकता। किन्तु होता ठीक इसके उलटा है। बीसवीं शताब्दी का मनुष्य भी बहुत विश्वासी है और विज्ञापन एजेन्सियों तथा सरकारों द्वारा अच्छे ढंग से किये गये प्रचारों के ऊपर ६० प्रतिशत मनुष्यों का पूरा विश्वास हो जाता है। चाहे विज्ञापन बिलकुल मिथ्या ही क्यों न प्रचार कर रहा हो। केवल धार्मिक बातों पर से लोगों का विश्वास उठ गया है। वस्तुतः वर्त्तमान युग भी मध्य युग की ही तरह अन्य विश्वासों से भरा हुवा है और हुआ केवल इतना ही है कि आज कल दूसरे तरह का अन्धविश्वास लोगों में हो गया है और वह है राजनैतिक, सैद्धान्तिक तथा वैज्ञानिक। आजकल भी हम लोग इन मामलों में इतने अन्ध-विश्वासी हैं जितने कि हमारे पूर्वज अपने जमाने में धार्मिक मामलों में अन्धविश्वासी हुआ करते थे।

वर्त्तमान युग में वैज्ञानिक मामलों में मनुष्य उतना ही अन्ध विश्वासी है जितना मध्ययुग में धार्मिक मामलों में हुआ करता था। मध्ययुग में धर्म की दुहाई देकर जो कुछ भी कह दिया जाता था जनता आंख बन्द कर बिना कुछ सोचे विचारे उसे मानलेती थी। ठीक वही हालत आज भी है किसी प्रसिद्ध वैज्ञानिक का नाम लेकर चाहे जो कुछ भी कह दिया जाय लोग उसे मान लेते हैं। साधारण जनता वैज्ञानिक सिद्धान्तों को बिलकुल नहीं समझती और किसी अच्छे वैज्ञानिक का नाम लेकर जो कुछ भी कह दिया जाय उसको सत्य मान लेती है। ऐसी बात नहीं कि केवल अशिक्षित जनता ही वैज्ञानिकों का विश्वास करती है बड़े बड़े विद्वान और शिक्षित मनुष्य भी वैज्ञानिकों की बा[त] पर अन्ध विश्वास करते हैं। दूसरे शब्दों में बीस[वीं] सदी में वैज्ञानिकों ने धार्मिक गुरुओं महन्तों औ[र] सामंतों का स्थान ग्रहण कर लिया है।

मस्तिष्क क्या है ?

वस्तुतः हमें यह सोचना चाहिए कि वैज्ञानि[क] जिनका हम इतना अन्ध विश्वास कर रहे हैं उनके ज्ञा[न] की भी एक सीमा है। किन्तु आजकल वैज्ञानि[कों की] सफलता में नये नये आविष्कार इत्यादि हम लोगों [को] इतने चमत्कारिक मालूम पड़ते हैं कि हमको वै[ज्ञा]निकों के ज्ञान के संबंध में तक वितर्क करने [की] आवश्यकता ही नहीं महसूस होती है। हम लोग [इस] बात को भूल ही जाते हैं कि वैज्ञानिक वास्तविकता [के] केवल एक पहलू पर प्रकाश डालते हैं, अन्य प[हलू] अन्धकार में ही रह जाता है। उदाहरणार्थ मनु[ष्य] शरीर के निर्माण के संबंध में ही वैज्ञानिकों का ज्ञा[न] एक पक्षीय है। आप किसी रसायन शास्त्र के जान[ने] वाले वैज्ञानिक से पूछिये कि मनुष्य का शरीर कि[स] प्रकार बना है तो फौरन उत्तर मिलेगा १, जल [२,] कार्बन, ३, फासफोरस ४, लोहा ५, चूना ६, गन्धक इन पांच या छ पदार्थों को उचित मात्रा में मिला[कर] तथा आयडिन, मैग्नेशियम एवं कोवाल्ट के मिश्रण [को] मिलाने से मनुष्यका शरीर बनता है। परन्तु वैज्ञानि[क] उक्त पदार्थों की उचित मात्रा जानकर भी वैज्ञानि[क] मनुष्य के शरीर का निर्माण करने में सफल नहीं हु[ए] है। यहीं पर वैज्ञानिकों के ज्ञान की सीमा होजाती है।

मस्तिष्क प्रत्येक मनुष्य के पास होता है चा[हे]

वह पागल या मूर्ख ही क्यों न हो। किन्तु यदि मस्तिष्क के निर्माण के संबंध में वैज्ञानिकों से पूछा जाय तो शायद ही वे कुछ बता सकेंगे। सुप्रसिद्ध वैज्ञानिक डेकार्ट के विचार के अनुसार मनुष्य का शरीर दो पृथक् पृथक् और विभाज्य वस्तुओं से मिलकर बना है। १, शरीर २, मस्तिष्क। यदि डेकार्ट के विचारों का समर्थक कोई वैज्ञानिक होगा तो वह फ़ौरन यही उत्तर देगा कि उपर्युक्त मिश्रणों से ही मस्तिष्क भी बन सकता है। किन्तु मस्तिष्क का निर्माण उतना सरल नहीं है। उक्त पदार्थों का मिश्रण तैयार करना सरल है किन्तु मस्तिष्क निर्माण बहुत कठिन। दो हजार वर्षों से वैज्ञानिक यह बताने की कोशिश करते हैं कि मस्तिष्क और शरीर दोनों बिलकुल पृथक् होते हुए भी किस प्रकार से दोनों में बिलकुल निकट संबंध बना हुआ है। शरीर एक ठोस पदार्थ है और उसमें विस्तार है किन्तु मस्तिष्क इन दोनों गुणों से रहित है फिर भी उनका मिलान कहां पर होता है इस कठिन प्रश्न का संतोषप्रद उत्तर अभी तक किसी ने नहीं दिया है। मनुष्य शरीर के संबंध में जितनी भी बातें कही जा सकती हैं वे बिलकुल अपूर्ण होती हैं। यदि किसी दूसरे ग्रह के निवासी को जिसने कभी मनुष्य नहीं देखा हो मनुष्य शरीर के निर्माण के सम्बन्ध में यह सभी रिपोर्टें पढ़ने को दी जाय तो वह इस बात को समझ ही नहीं सकेगा कि आखिरकार मनुष्य है क्या चीज या मनुष्य कैसा होता है। कहने का तात्पर्य यह है कि मनुष्य के शरीर या मस्तिष्क के सम्बन्ध में वैज्ञानिकों का ज्ञान बिलकुल अपर्याप्त है और मनुष्य अपने विषय में बिलकुल ही कम जानकारी रखता है। अपने शरीर रूपी मशीन के एक पुर्जे की भी जानकारी मनुष्य को अच्छी प्रकार नहीं होती है। अपने शरीर के सम्बन्ध में इस अनभिज्ञता का परिणाम बहुत ही बुरा होता है। हम लोग अपनी कार की देख रेख करने और मरम्मत करने के सम्बन्ध में तो बहुत जानकारी रखते हैं और यह कोशिश करते हैं कि वह अधिक से अधिक दिन चले किन्तु खुद अपने शरीर के सम्बन्ध में हम कोई जानकारी नहीं रखते या यदि डाक्टरों को कुछ जानकारी होती भी है तो बिलकुल अपर्याप्त।

शरीर के किसी भी कल पुर्जेमें गम्भीर गड़बड़ होजाने पर काल कवलित होने के अलावा और कोई उपाय ही नहीं रहता। इस प्रकार से स्वयं अपने शरीर और दिमाग के प्रति हमारा व्यवहार इतना निर्दयता पूर्ण होता है कि अन्य किसी चीजके सम्बन्ध में शायद ही होता हो।

स्वयं अपना शत्रु

उदाहरणार्थ मनुष्य भय, क्रोध, ईर्ष्या आदि शत्रुओं से अपने शरीर की रक्षा नहीं कर सकता है। चिन्ता उसके शरीर को घुला घुलाकर मार डालती है। इन शत्रुओं को कहीं बाहर ढूंढने की आवश्यकता नहीं होती है ये मनुष्य के शरीर के अन्दर ही होते हैं, इन शत्रुओं से मनुष्य स्वयं पराजित हो जाता है और अन्त में अकाल में ही काल कवलित होजाता है। जब कोई आकस्मिक खतरा मनुष्य के सामने उपस्थित होजाता है तो उसके सम्पूर्ण शरीर में बिजली की तरह भय व्याप्त होजाता है। डर के मारे उसके चेहरे पर सिकुडन पड़ जाती है। उसके शरीरसे पसीना निकलने लगता है। मुंह सूख जाता है और आंखों के सामने अंधेरा छा जाता है। दिल में जोर जोर की धडकन होने लगती है और उसका सांस फूलने लगता है। उसके सम्पूर्ण शरीरमें खतरे की घण्टी बज जाती है। इन बाह्य परिवर्तनों के अलावा शरीर के अन्दरूनी हिस्सों में भी अनेकों परिवर्तन होते हैं। मनुष्य की आन्तरिक भावनाओं का ज्ञान रखने वाले वैज्ञानिकों के लिए आन्तरिक परिवर्तन बहुत ही महत्वपूर्ण होते

हैं। भय के कारण लीवर में एकत्रित मिठास रक्त में मिश्रित होकर शरीर में प्रवाहित होजाती है और मांस-पेशियों को अतिरिक्त बल प्रदान करती है। धमनियों की गति तेज होजाती है, मनुष्य का खून जलने लगता है। लीवर में एकत्रित मिठास किसी संकटकाल में या बीमारी के समय मनुष्य की रक्षा के लिए होता है किंतु भय के समय धैर्य खोदेने और घबरा जाने के कारण मनुष्य अपनी जीवन रक्षा की इस अमूल्य निधि को खो देता है और इस प्रकार से अधीरज होकर अपना शत्रु वह स्वयं बन जाता है। यदि खतरे के समय कुछ धैर्य से काम लिया जाय तो इस शक्ति की रक्षा हो सकती है और रोगादिकों का आक्रमण होने पर शरीर को इस अतिरिक्त शक्ति की सहायता से बचाया जा सकता है। ठीक इसी प्रकार क्रोध भय और ईर्ष्या इत्यादि से मनुष्य के शरीर में अनेकों प्रकार की क्रियायें होती हैं, जिससे धीरे-धीरे शरीर क्षीण होते होते मनुष्य काल के गाल में चला जाता है।

इस तरह से कोई भी खतरा अचानक सामने आजाने पर मनुष्य उससे अपनी रक्षा के लिए या तो भागता है या उसका मुकाबला करने के लिए तैयार जाता है। लीवर, फेफड़ा, मांसपेशियां और दिल अपना २ काम खतरे को सामने देखते ही तेजी करने लगते हैं। इस समय रक्षार्थ जिन कार्यवाहियों आवश्यकता नहीं होती जैसे पाचनक्रिया इत्यादि समय के लिए रुक जाती है। मनुष्य के शरीर में सभी कार्यवाइयां विचार की अपेक्षा अधिक तेजी होती हैं क्योंकि यदि सभी कार्यवाइयां मस्तिष्क आदेशानुसार होतीं तो बहुत विलम्ब होजाता। सड़क वगैरह पार करते समय यदि कोई कार अचान सामने आजाती है तो उसे देखते ही मनुष्य फौ भागकर अपनी रक्षा का उपाय करता है। उस सम मस्तिष्क से आदेश मिलने के पहले ही मनुष्य अप रक्षा का उपाय कर लेता है।

इसी प्रकार के क्रोध, ईर्ष्या और चिन्ता इत्या भी मनुष्य की जीवन शक्ति को क्षीण कर देते हैं। शत्रु मनुष्य को फौरन नहीं मार डालते बल्कि धी शरीर में उनका प्रभाव होता रहता है। शरीर होते २ अल्पायुमें ही मनुष्य काल कवलित होजाता

वैज्ञानिक तथा समन्वयात्मक टीका

* मृद्दारशृंग *

Litharge, Massicot or Calomal mineral ?

(लेखक—श्री रामेश्वर बद्रीसिंह सूर्यवंशी, कोविद, आयुर्वेदरत्न, महावीरपुर, अलीगंज, कुर्सीमार्ग, लखनऊ)

भाषा भेद से नाम भेद—

१. संस्कृत—मृद्दारशृङ्ग
२. हिन्दी—मुरदासंग
३. मराठी—मुडदारशिंग—शेंग
४. English—Litharge (Greek Lithos= Stone+Argyros=Silver), Massicot, Calomel, Horn quicksilver.

अथ मृद्दारशृङ्गकम् ।
परिचयः

सदलं पीतवर्णं च भवेद्गुर्जरमण्डले ।
अर्बुदस्य गिरेः पार्श्वे जातं मृद्दारशृङ्गकम् ॥१५५॥

रसरत्नसमुच्चये तृतीयोऽध्यायः ।

गुजरात (Gujarat) प्रान्त में आबू पहाड़ (Mount Abu) के समीप पत्र रचनायुक्त (Lamellar) पीले रंग का जो खनिज मिलता है, उसको मुरदासंग (Litharge or Calomel mineral ?)

(१)

"Litharge—पीले रंग का लोहे का खनिज, मुर्दासिंगी, मृदारशृङ्ग। यह कभी कभी स्वयंभू भी मिलती है। जावा (Java) द्वीप और भारतवर्ष के गुजरात प्रान्त में भी यह पायी जाती है।

मुर्दासिंगी सख्त गर्मी देने से सिकता में सहज मिल जाती है। यह मिट्टी के बर्तनों पर रौगन देने में काम आती है। केशों के रंगने में भी इसका उपयोग होता है। यह सांधा देने के काम भी आती है। औषध के रूप में भी यह व्यवहृत होती है।"

Sukhsampattirai Bhandari's "The Twentieth Century English-Hindi Dictionary", Series No. 4, Vol. IV, page 43 (published by Messrs Dictionary publishing House, Brahmpuri, Ajmer).

(२)

"**Plumbous Oxide (Murda Sang)**, Pbo–Plumbous oxide or **Litharge** is obtained as a yellow-red, crystalline mass by the cuppellation process (p. 510)."

Niranjan Singh & Jagindar Singh's "Systematic Inorganic Chemistry", 1931 Edition, punlished by Messrs Atma Ram & Sons, Anarkali, Lahore, page 679.

(३)

"**16. Lead monoxide, Pbo**–It is produced as a yellow powder when lead is oxidised in air at a low temperature about 300° C. and is known as **massicot**. On further heating, it fuses at 877° C. and the fused mass forms yellow crystals of Pbo called **Litharge**."

G. D. Tuli, B. B. Bahl & Amba Prasad's "Intermediate Inorganic Chemistry (Published by Mess S. Chand & Co., Delhi & Jullundur), New Eighth Edition, 1950, page 515.

(४)

"**Lead Monoxide**, Pbo is formed on heating lead in air. The grey dross produced is a mixture of lead monoxide and metallic lead and if heated in an iron vessel it turns yellow, forming the monoxide as a yellow powder (which darkens on heating) called massicot; if fushed a reddish-yellow scaly crystalline mass of **Litharge** is obtained."

J. R. Partington's "A Text-Book of Inorganic Chemistry, 1950 Edition (publisned by Messrs Macmillan & Co. Ltd., St. Martin's Street, London)", page 836.

(५)

"**Massicot**–Lead monoxide, Pbo. Massive, scaly or earthy. Colour yellow, reddish. Microscopic study of various specimens of massicot shows that the centers of the crystal plates correspond to massicot, and the borders to the artificial lead oxide Litharge. The massicot is orthorhombic, nearly colourless, optically.

B=2.61. Strong birefringence. The litharge is tetragonal, yellow-orange, optically–. W=2.65. Strong birefringence. Optic axis is normal to plate. A rate mineral of secondary origin occuring associated with galena, etc."

Edward Salisbury Dana's "A Text Book of Mineralogy with an extended treatise on Crystallographic and physical Mineralogy" published by Messrs John Wiley & Sons, Inc., New York, Fourth Edition, page 480.

जैसा कि ऊपर के अवतरणों (quotations) से ज्ञात होता है श्री सुखसम्पत्तिराय भण्डारी आदि शब्दकोषकार तथा निरञ्जनसिंह व जगीन्द्रसिंह इत्यादि रसायनशास्त्री भी मृद्दारशृङ्ग को 'Litharge'❀ मानते हैं। जहां तक खनिज विज्ञान का सम्बन्ध है 'Litharge' नामक कोई भी खनिज नहीं मिलता है। पूर्वोक्त पञ्चम उद्धरण में एडवर्ड सैलिसबरी डाना ने 'Massicot' नामक एक क्वचित प्राप्य खनिज का अवश्य उल्लेख किया है और उसके लक्षण 'Litharge' से मिलते हैं। रसायनशास्त्रियों का सम्बन्ध किसी भी द्रव्य के रासायनिक गुणों के परीक्षण मात्र से रहता है और उस द्रव्य की प्राकृतिकता अथवा कृत्रिमता से उनका कोई मतलब नहीं हैं। अतएव उपर्युक्त रसायनशास्त्रियों की राय मृद्दारशृङ्ग को 'Litharge' नामक खनिज निश्चित करने में कोई महत्व नहीं रखती है। लेखक ने मृद्दारशृङ्ग के बाजार में मिलने वाले नमुने के विरेखा (streak), विशिष्ट-गुरुत्वादि प्राकृतिक गुणों की परीक्षा कुशल खनिज वैज्ञानिकों द्वारा करवाई है। मृद्दारशृङ्ग के प्राकृतिक गुणों (physical properties) का विचार करने से उनकी राय में मृद्दारशृङ्ग 'Calomel' नामक खनिज है। रासायनशास्त्रियों की राय ध्यान में रखते हुए समन्वयात्मक दृष्टि से विचार करने से पाठकों को ज्ञात होगा कि खनिजों में प्राकृतिक अशुद्धियां स्वाभाविक हैं और इसी नियमानुसार मृद्दारशृङ्ग (Calomel) के बाजार में मिलने वाले नमुने में अशुद्धि के तौर पर एडवर्ड सैलिसबरी डाना से बतलाया हुआ 'Massicot' नामक खनिज मिलता है और इस खनिज का रासायनिक संगठन (chemical

❀ Litharge (Greek–Lithargyros= foam of silver) रजतफेन, mineral—डा० रघुवीर का आङ्गल—भारतीयो महाकोषः, १९५१, पृष्ठ ५५१

composition) भी 'Litharge' के समान है। ऐसा ग्रहण करने में कोई आपत्ति नहीं है; क्योंकि इस प्रकार से रसरत्नसमुच्चयकार ने लिखे हुए 'सीससत्वं' और 'रसबन्धनमुत्कृष्टं' इत्यादि गुणों का भी समावेश होता है। अतः पाठकों के विशेषज्ञानार्थ 'Calomel' नामक खनिज का वैज्ञानिक वर्णन किया जाता है।

१ नामः—मृद्दारशृङ्गकम्, पानीरेय

२ रासायनिक संगठनः—पारद नीरेय, पनी,

३ स्फटिक सम्मितिः—चतुष्कोणीय, स्फटिक कभी २ चिपिट; स्तूपाकार भी; प्रायः अत्यधिक मिश्रित।

४ भाजन रेखाः—किञ्चित स्पष्ट।

५ प्रभञ्जनः—शङ्खाभीय, छिदुर।

६ द्युति-आभाः—पविकी (हिरकद्युतिसकाशम्), रंग श्वेत, धूसरापीत अथवा भस्मवत् धूसर, आधूसरापीत, बभ्रु, कपिश। पारभासी से अनुपारभासी

७ विरेखा अर्थात् चूर्णरङ्गः—पाण्डुरापीत श्वेत।

८ काठिन्य परिमाणः—❀ १—२

९ विशिष्ट गुरुत्वः—+ ६'४८२

१० प्राप्तिस्थानः—इद्रिया, इटली, अल्माडेन, स्पेन तथा अन्यत्र हिंगुल (Cinnabar) के साथ मृद्दारशृङ्ग मिलता है।

❀ काठिन्य परिमाण निकालने की विधि ज्ञानार्थ सचित्र आयुर्वेद, वर्ष ५, अङ्क २, अगस्त १९५२, पृष्ठ १३६-१४१ पर लेखक का "खनिज द्रव्यों की कठिनता" शीर्षक लेख पढ़िए।

+ विशिष्ट गुरुत्व निकालने की विधि ज्ञानार्थ, धन्वन्तरि, भाग २७, अङ्क ५, मई १९५३, पृष्ठ ५४२-५४५ पर लेखक का "विशिष्टगुरुत्वज्ञान की रसशास्त्रियों को आवश्यकता और उसके निकालने की विधि" शीर्षक लेख पढ़िए।

"Calomel (Hg_2Cl_2)

This is mercurous chloride and is found at Idria and at Almaden as one of the minor mercury minerals. It occurs in crystal so often highly complex, of the tetragonal system.

Lustre:-adamantine (हीरकद्युतिसंकाशम्).

Fracture:—conchoidal (शंखाभीय, प्रमाणाद्धीरकात्क्वचित).

Colour:—white or yellowish grey.

Streak:—pale-yellowish-white.

Hardness:—1 to 2.

Specific gravity:—6. 5."

Loc. cit. page 4.

कविराज प्रतापसिंह-आयुर्वेदीय खनिज विज्ञान, रसगन्धात्मक, पृष्ठ १४

"Mercurous chloride is called Calomel and is used in medicine as purgative."

J. R. partington's "A Text-Book of Inorganic Chemistry, 6th. edition, 1650, published by Messrs Macmillan & Co. Ltd., St. Martin's Street, London, page 789.

विशेष वक्तव्य

Calomel एक खनिज का भी और एक रासायनिक द्रव्य का भी नाम है। रसरत्नसमुच्चयकार का वर्णन "Calomel" नामक खनिज से सम्बन्ध रखता है।

अथ गुणाः

सीससत्त्वं गुरु श्लेष्मशमनं पुङ्गदापहम्।
रसबन्धनमुत्कृष्टं केशरञ्जनमुत्तमम् ॥१५६॥

रसरत्नसमुच्चये तृतीयोऽध्यायः।

इसमें से सीसे (lead) के समान सत्व निकलता है। यह कफ के विकारों को शान्त करता है, मनुष्यों के उपदंश (soft chancre) रोग को नष्ट करता है, यह पारे (mercury) के बन्धन द्रव्यों में श्रेष्ठ है, बालों पर इसका लेप लगाने से उन्हें काला कर देता है।

मधु-मेह Diabetes Mellitus

(लेखक—श्री गौरीलाल जी चानना बी० ए०, वैद्य वाचस्पति)

[गतांक से आगे]

शारीरिक अंगों को काटपीट कर उनकी प्रत्यक्ष परीक्षा का काम तो वैज्ञानिकों और शरीर शास्त्र विशारदों द्वारा एक ओर होता रहा। दूसरी ओर चिकित्सक वर्ग भी चुप नहीं बैठा रहा। उन्होंने उक्त वैज्ञानिकों द्वारा प्राप्त परिणामों की पुष्टि क्रियात्मक रूप में करने के लिये जन्तुओं पर तजुर्बे करने आरम्भ किये। ओस्कर मिनकौस्की [Oskar Minkowski] नामक जर्मन डाक्टर ने एक कुत्ते का क्लोम काट कर निकाल दिया। उसने देखा कि कुछ सप्ताह के अन्दर ही उस कुत्ते की मधुमेह जन्य सन्यास से मृत्यु हो गई। कृत्रिम मधुमेह उत्पन्न करने का यह पहला ही प्रयास १८९९ में हुआ। इससे यह स्पष्ट हो गया कि मधुमेह का क्लोम के साथ गहरा सम्बन्ध है। परन्तु इसके साथ एक और महत्त्व-पूर्ण बात भी देखने में आई और वह यह कि कृत्रिम मधुमेह पैदा करने के लिए क्लोम का जितना भाग नष्ट करना पड़ता है मधुमेही के क्लोम में उसकी उपेक्षा बहुत कम विकृति देखी जाती है। स्वस्थ मनुष्य में यदि क्लोम का ४/५ भाग नष्ट करदें और केवल १/५ भाग बचा रहे तो भी मधुमेह नहीं होता। ४/५ से भी अधिक भाग (अर्थात् लगभग सारा क्लोम) निकाल दें तभी कृत्रिम मधुमेह पैदा किया जा सकता है। इस तथ्य से वैज्ञानिकों को यह संकेत मिला कि मधुमेह की उत्पत्ति में केवल क्लोम विकृति ही कारण नहीं अपितु कुछ और भी जानने योग्य बात अवश्य है। अब इस दृष्टि से तजुर्बे आरम्भ हुये।

अर्जानटाईन निवासी डा० हाऊसे ने क्लोम छेदन द्वारा कुत्तों में कृत्रिम मधुमेह उत्पन्न किया उन कुत्तों की पीयूष ग्रन्थि उसने निकाल दी तो मधुमेह ठीक होगया। पुनः उन्हीं कुत्तों को अ पीयूष सत्व (anterior Pituitary extrast सूचीवेध देने से मधुमेह दोबारा प्रकट होगया। इ मधुमेह के साथ pituitary का सम्बन्ध भी नि रूप से मालूम हो गया। बाद में डा० यंग ने क्लोम छेदन किये कुत्तों में निरन्तर अग्रिम पीयूष सत्व के सूचीवेध देकर कृत्रिम मधुमेह पैदा किया पीयूष रस से मधुमेह के सम्बन्ध की पुष्टि की। हाल ही की खोजों में alloxan नामक एक दव अन्तःशिरा सूचिवेध देने से कुत्ते, बिल्ली और खर में कृत्रिम मधुमेह पैदा करने में सफलता मिली यह दवा अपने विशिष्ट प्रभाव से क्लोम ग्रंथि के लैंगरहैन कोष समूह को ही नष्ट करती है। उसका भाग जिसका रस प्रणाली द्वारा आन्त्र में जाकर भो पाचन प्रक्रिया में सहायक होता है उस पर इस का कोई हानिकारक प्रभाव नहीं पडता। अब तो और thyroid चुल्लिकाग्रन्थि की विकृति का सम्ब भी मधुमेह से स्थापित हो चुका है और इन सब वि तियों के मूल कारण की खोज अभी जारी है।

उपरोक्त एतिहासिक दिग्दर्शन से पाठक स गये होंगे कि मधुमेह सम्बन्धी वर्तमान ज्ञान शताब्दि से निरन्तर की गई खोजों का परिणाम है। इन खो में भूमण्डल के विभिन्न देशों के वैज्ञानिकों का अ भाग है। भारतीय चिकित्सा शास्त्र भी इन खोजों

एक महत्वपूर्ण कड़ी रखता है, परन्तु यह कडी मात्र ही है इसे पूरी जंजीर समझ लेना वास्तविकता के विपरीत है। यह तो एक उदाहरण है। अन्य सब रोगोंके संबंध में भी यही बात है। समय के साथ ज्ञान बढ़ रहा है यह एक प्रत्यक्ष सचाई है। वैद्य समाज यदि इस मौतिक सचाई को स्वीकार करले तो उसके लिए ज्ञान वृद्धि के सब रुके हुये रास्ते खुल जायें और उसका ज्ञानकोष दिन दूना रात चौगुना होता चला जाय।

मधुमेह निदान

मधुमेह का मौलिक और वास्तविक कारण क्या है? इस बात का निश्चित ज्ञान अब तक भी नहीं हुआ परन्तु फिर भी दो बातें विशेष रूप से ऐसी हैं जो मधुमेह के लगभग समस्त रोगियों में देखने को मिलती हैं।

मोटापा

अमेरिका के एक डाक्टर जास्लिन (Joclin) १००६ मधुमेह रोगियोंके परीक्षण से इस परिणाम पर पहुँचे कि इनमें से ७७%रोगी मोटापा लिए हुए हैं, १५%साधारण शारीरिक गठन रखते हैं और केवल ८%दुर्बल पतले आदमी हैं। रोगियों के इति वृत्त से यह भी पाया गया कि यह मोटापा मधुमेह होने के पूर्व से उनमें उपस्थित है। इस बातसे डाक्टर जस्लिन इस निष्कर्ष पर पहुँचे कि मोटे आदमियोंमें मधुमेह होनेकी प्रवृत्ति अधिक पाई जाती है। आयुर्वेद शास्त्र में लिखे 'आस्यासुखं' आदि प्रमेह के सामान्य कारण भी शरीर में मोटापा पैदा करते हैं। परन्तु हमारे यहां मोटापे का स्पष्ट उल्लेख कहीं नहीं। न ही इस बात का कहीं उल्लेख है कि मोटापे से मधुमेह कैसे और क्यों होता है और इन दोनों का परस्पर क्या सम्बन्ध है।

सहज प्रवृत्ति

ऐसा देखा गया है कि मधुमेह उन्हीं को होता है जिनके कुल में पहले यह हो चुका हो। यहां ऐसा भी सम्भव है कि मधुमेही के पुत्र को मधुमेह न हो परन्तु आगे जाकर किसी पीढी में प्रकट हो। जब दोनों मधुमेही स्त्री पुरुष विवाह करें तो उनकी सन्तान को मधुमेह होने की सम्भावना है। ऐसे दम्पत्तिके सन्तानों में प्रायः ४४%अवश्य मधुमेह से पीडित होती हैं। शेष सन्तानें मधुमेह की प्रवृत्ति अपने अन्दर लिए होती हैं और किसी भी पीढी में इन मधुमेहियों के विवाह से उत्पन्न बालकों में अनुकूल परिस्थिति मिलने पर यह रोग प्रकट हो सकता है। एक मधुमेही और एक स्वस्थ के विवाह से उत्पन्न सन्तान में यद्यपि यह मधुमेह कम होता है परन्तु वह सन्तानें भी रोग प्रवृत्ति अपने अन्दर लिए रहती हैं जो किसी भी समय प्रकट हो सकता है।

मधुमेह के कारणों में कुलज प्रवृत्ति और मोटापा पैदा करने वाले कारणों के अतिरिक्त और किसी उल्लेखनीय बातों का ज्ञान नहीं हुआ।

मधुमेह रोग संसार के लगभग समस्त देशों और सभी जातियों में पाया जाता है यहूदी जाति में विशेष रूप से इस रोग के होने की प्रवृत्ति अधिक होती है। भारतीयोंमें काफी बहुलतासे पाया जाता है। चीनमें कम होता है यदि होता भी है तो अन्य देशोंमें होनेवाले रोगकी अपेक्षा कम तीव्रतासे होता है। यद्यपि प्रायः ४०–६० वर्ष की अवस्था में अधिक होता है। परंतु बालक, युवा और स्त्रियां भी इससे बची हुई नहीं।

रजःप्रवर्तते यस्ममासि मासि विशोधयेत्।
सर्वान्शरीर दोषांश्च न प्रमेहन्त्यतः स्त्रियः।

अर्थात प्रतिमास रजः प्रवृत्ति द्वारा शरीर दोषों की शुद्धि होते रहनेके कारण स्त्रियोंमें प्रमेह नहीं होते। भावप्रकाश के इस वचन की असत्यता स्त्रियों में होता देखकर सिद्ध है। अपितु अन्य प्रमेहों के बारे में भी यही बात कही जा सकती है।

गतांक में पाठक मधुमेह का शास्त्रीय विवेचन और तत्सम्बन्धी आधुनिक खोजों का विवरण एतिहासिक क्रम से पढ़ चुके हैं।

मधुमेह का स्वरूप इसके नाम से ही स्पष्ट है। "मधु" और "मेह" अर्थात् मूत्र में "मधु" (शर्करा) का आना। इसका अंग्रेजी नाम भी ठीक इसी अर्थ का द्योतक है। Diabetes का अर्थ है 'छन कर आना' और Mellitus का अर्थ है मधु। अर्थात् मूत्र में मधु (शर्करा) का छन कर आना। इस प्रकार मधुमेह और Diabetes Mellitus यह दोनों नाम समानार्थक ही नहीं एक दूसरे का शब्दानुवाद है।

मूत्र में शर्करा कैसे आती है? यह बात समझने से पहले यह जानना आवश्यक है कि शरीर में द्राक्ष शर्करा की रचना कैसे होती है। और स्वस्थावस्था में शरीर इसका कैसे उपयोग करता है? यह सब प्रक्रिया जरा पेचीदा है और ध्यान देकर समझने योग्य है। इसे समझ लेने पर मधुमेह का आदि से अन्त तक स्पष्ट चित्र पाठकों के सामने आ जायेगा।

शर्करा की उपादेयता

शर्करा शरीर का शक्ति स्रोत है। चलने-फिरने, शरीरिक तथा मानसिक काम करने आदि की समस्त ऐच्छिक तथा अनैच्छिक (पाचन क्रियायें, हृदय का चलना, सांस का चलना आदि) क्रियाओं को सम्पन्न करने के लिए जो शक्ति खर्च होती है वह शरीर शर्करा से ही ग्रहण करता है।

यह शर्करा कहां से आती है?

जो भोजन हम खाते हैं उसमें मिठास या शर्करा का कुछ अंश तो इसी रूप में विद्यमान होता है। भोजन का प्रधान अंश कज्जलोदेत (Carbohydrate) है। भोजन चबाते समय यह सितसारीय भाग भी लाला के प्रभाव से शर्करामें बदलना आरम्भ होजाता है। भोजन के अन्त्र में पहुँचने पर अन्त्र [रस] और क्लोम रस दोनों के सम्मिलित प्रभाव से [यह] प्रक्रिया पूर्ण हो जाती है और भोजन में विद्यमा[न] समस्त सितसारीय तथा शार्करीय अंश पूर्णरूपेण [द्रा]शर्करा में परिणत होजाता है।

भोजन की प्रोटीन के पचन प्रक्रिया में उत्प[न्न] पाईरुविक अम्ल और दुग्धाम्ल का कुछ भाग भी शरी[र] के अन्दर शर्करा में परिणत होता है। शरीर [में] उपस्थित कुल शर्करा की लगभग ३०% प्रोटीन [से] ६७% कज्जलोदेत से और ३%मधुरोजन (ग्लाईकोजन) से उत्पत्ति होती है। मधुरोजन से शर्करा निर्माण [की] प्रक्रिया पाठक आगे पढ़ेंगे।

सम्भवतः पाठक जानते होंगे कि शर्करायें [कई] प्रकार की होती है यथा—द्राक्षौज, फलोज, यवो[ज], दुग्धोज और इक्षोज आदि-आदि। इनमें से इक्षो[ज] (Cane Sugar) इक्षु अर्थात् गन्ने से बनी शर्करा [को] कहते हैं जिसका प्रयोग नित्य प्रति हम अपने भोज[न] में करते हैं। दुग्धोज (Lactose) और यवो[ज] (Maltose) क्रमशः दूध और यव (तथा निशास्[ते] वाले अन्नों) में विद्यमान शर्करा को कहते हैं। पर[न्तु] मनुष्य शरीर इन सब शर्कराओं का उपयोग इसी [रूप] में नहीं कर सकता। शरीर तो केवल द्राक्षौज (Glucose) और फलौज (Fructose) इन्हीं दो प्रकार की शर्कराओं को अपने अन्दर ले सकता है। अतः इन सब में [से] किसी भी शर्करा के शरीर में शोषित होने से पूर्व [यह] आवश्यक है कि वह द्राक्षौज अथवा फलौज में परिण[त] हो जाय। आगे जाकर यकृत इस फलौज को [भी] द्राक्षौज में बदल देता है और अन्त में केवल द्राक्षौ[ज] (Glucose) के रूप में यह शर्करा समस्त शरीर [में] भ्रमण करती है।

भोजन में विद्यमान समस्त सितसारीय और शार्करीय अंश अन्त्र में पहुँचने तक लाला, अन्त्र और

क्लोम के रसों में विद्यमान *विकरों के प्रभाव से द्राक्षौज अथवा फलोज के रूप में परिणत हो जाते हैं।

शरीर के प्रत्येक कोष में हैक्सोकाईनेज (Hexokinase) नाम का एक और विकर भी विद्यमान होता है। यह विकर बहुत महत्वपूर्ण है। क्योंकि यह अपने विशिष्ट प्रभाव से द्राक्षौज को स्फुरेत यौगिक में बदलता है। द्राक्षौज स्फुरेत ही शरीर में आगे मधुरोजन और ऊष्मजन से मिलकर शक्ति की उत्पत्ति करते हैं। शर्करा के सात्म्यीकरण में यह दोनों क्रियायें महत्वपूर्ण हैं और मधुमेह से इनका गहरा संबंध है। अन्त्र में यह विकर अपने विशिष्ट प्रभाव से द्राक्षौज और फलोज का स्फुरिकाम्ल (Phosphoric acid) से रासायनिक संयोग करा कर उन्हें क्रमशः द्राक्षौ स्फुरेत (Glucose phosphate) और फलोज स्फुरेत (Fructose Phosphate) में बदल देता है। यह दोनों यौगिक अन्त्र से शोषित होकर रक्त में मिल जाते हैं और रक्त द्वारा यकृत में पहुँचते हैं। यकृत में विद्यमान एक अन्त्र विकर स्फुरतेज (Phosphatase) इन दोनों यौगिकों को द्राक्षौज (Glucose) में बदल देता है और इस प्रकार यहां आकर फलोज भी अपना स्वरूप छोड़कर द्राक्षौज में परिणत हो जाता है।

अभी २ की खोजों से ऐसे संकेत मिले हैं जिनसे मालूम होता है कि फल शर्करा पर हैक्सोकाईनेज का सीधा प्रभाव होकर फलौज स्फुरेत में वह बदलता है और फलौज स्फुरेत यकृत में न जाकर सीधा रक्त में मिलता है और शरीर के कोषों में इससे शक्ति संजनन का कार्य द्राक्षौज से पृथक ही होता रहता है। यदि इन खोजों की भविष्य में पुष्टि हो गई तो मधुमेह के विकृति विज्ञान में यह नया तथ्य और जुड़ कर महत्वपूर्ण परिवर्तन होगा जिससे मधुमेह के उपचार और आहार नियन्त्रण (Dietary Planning) में एक नया अध्याय और जुड़ जायगा।

*विकर (Enzyme)—शरीर की ग्रन्थि कोषाओं द्वारा उत्पन्न उस परिवर्तनकारी पदार्थ को कहते हैं जो शरीर के अन्दर होने वाले विभिन्न रासायनिक परिवर्तनों के सम्पादन में उत्प्रेरक का काम करते हैं।

यह द्राक्षौज शरीर के अन्दर निम्नलिखित तीन रूपों में प्रयुक्त होता है।

(१) शक्ति के रूप में

द्राक्षौज की एक विशेष प्रतिशतकता (०·८ से ०·१२% तक) रक्त में घुलकर शरीर के प्रयेत्क कोष में पहुँचता रहता है, जहां कोष इसके द्वारा शक्ति ग्रहण करते हैं। कोषों में विद्यमान हैक्सोकाईनेज इसे द्राक्षौज स्फुरेत में बदलता है। यह स्फुरेत पुनः पाईरुवेट और दुग्धेत आदि अधिक साधारण यौगिकों में बदलते हैं। इन पाईरुवेट (Pyruvate) और दुग्धेत (Lactate) का प्रधान भाग तो रक्त में विद्यमान ऊष्मजन के संयोग से इसका ऊष्मीकरण होता है और यह कार्बन द्वि-ऊष्मिद (Carbon-Dioxide) और जल में बदल जाता है। इसी प्रक्रिया से उस शक्ति का संजनन होता है जो विभिन्न कार्यों के सम्पादन में शरीर को आवश्यक रूप से मिलती है। कुछ द्राक्षौज के ६७% भाग का प्रयोग शरीर में शक्ति के रूप में होता है।

(२) वसाम्लों के रूप में

उपरोक्त पाईरुवेट और दुग्धेत यौगिकों का कुछ भाग पाईरुविकाम्ल (Pyruvic acid) दुग्धाम्ल (Lactic acid) आदि वसाम्लों में परिणत हो जाता है। शरीर की सारी द्राक्षौज का लगभग ३०% भाग इस रूप में परिणत होता है।

क्रमशः

रीछ

[लेखक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, बागीची अलाउद्दीन, देहली]

रीछ हिमालय की पहाडियों और भारत के जंगलों में पाया जाता है। रियासत रामपुर बुशैर में रीछ बहुत होते हैं। रीछ चुस्त और द्वेष रखने वाला प्राणी है, यह जिद्दी और वहमी भी होता है। हर हिलती वस्तु को अपना शत्रु समझता है। साहसी इतना है कि गोली के घाव को मट्टी, घास से भरकर व बर्च्छी से आंतें बाहिर निकल आयें तो एक हाथ से आंतों को पेट में थामकर शत्रु पर आक्रमण कर देता है। यह अपने शिकार को पकडकर उसके आंख, कान जबडे नोच डालता है और उसके तडपने का तमाशा देखता है। मगर इसमें एक विशेषता भी है कि यह मुरदे पर आक्रमण नहीं करता इसलिए लोग अपनी रक्षा के लिए इसका सामना होजाने पर दम साध लेते हैं।

साधारण रीछ का वर्ण काला होता हैं, छाती पर श्वेत रेखायें अंग्रेजी का बी बनाती हैं। उत्तर पश्चिमी हिमालय और कश्मीर तथा चम्बा की रियासत भूरे रीछ के लिए प्रसिद्ध हैं। शरद ऋतु के आगमन के पूर्व यह भूरा रीछ बहुत मोटा हो जाता है। भूरा रीछ जीवित प्राणियों पर हमला नहीं करता। इसकी दृष्टि बहुत मन्द होती है। इसके शरीर का अधिकांश भाग चर्बी होता है।

उत्तरीय ध्रुव के देशों में बर्फ में रहने वाला श्वेत रीछ होता है। स्कीमो जाति के लोग इसकी खाल के कपडे, मांस का भोजन और वसा को जलाने व शरीर पर मालिश के लिए प्रयोग करते हैं।

रीछ दन्त

इसके दन्त स्त्री दुग्ध में घिसकर पिलाने से बच्चे के दांत आसानी से निकल आते हैं। परन्तु यह प्रभाव किसी भी प्रकार का कैल्सियम सेवन से भी होता है।

पित्ता

एक रत्ती पीने से अपस्मार में लाभ करता है। सकंजवीन के साथ पेटदरद व जलोदर में लाभ क[रता] है। शहद के साथ आंखमें लगाने से लाभ करता [है]

आंख

रीछ की आंख ज्वरी के गले में डालने से [ज्वर] छूट जाता है।

रक्त

रीछ का रक्त पीने से उन्माद दूर होता है [त]था फुफ्फुस रोगों में लाभ करता है। कहा जाता है रीछ रक्त के सेवन से बांझपन दूर होता है।

पनीर माया

रीछ का पनीर माया ४ माशा की मात्रा खिलाने से मिर्गी जाती रहती है। पलकों के बा[ल] उखाडकर इसका पनीर माया लगाने से दोबारा बा[ल] नहीं निकलते।

चर्म

इसके चर्म पर बैठने से पक्षाघात तथा पी[ठ] की पीडा शान्त होती है।

चर्बी

रीछ की चर्बी मलनेसे बच्चों की रोग निरोध[क] शक्ति बढ़ती है। आज रोगों से बचने के लिए बच्च[ों] में चेचक का टीका, यक्ष्मा से बचने के लिये बी० सी० जी० का टीका, हैजा और मलेरिया से बचने के लि[ये] उनके टीका तथा टायफायड से रक्षा के लिये टायफायड वैक्सीनों का प्रयोग होता है परन्तु प्राचीन काल [में] इन टीकों के स्थान पर बच्चों के शरीर पर रीछ व[सा] को मला जाता था, आज भी स्कीमों जाति के लोग [अ]शरीर पर रीछ चर्बी मलते हैं बिना टीकों के स्वस्[थ] रहते हैं।

रीछ की चर्बी त्वचा रोगों के लिये दूसर[ा] चालमोगरा आयल है। इसके मलने से श्वेत दा[ग]

मिटते हैं। यह त्वचा की प्राकृतिक नरमी और चमक को उत्पन्न करती है। रीछ चर्बी को शरीर पर मलना स्वास्थ्य और दीर्घजीवन का एक उपाय है।

साधारण जनता रीछ की चर्बी को दर्दों पर मलना उपयोगी समझती है और इसमें वास्तविकता भी है। शास्त्र में कई तैलों के निर्माण में वसाओं का प्रयोग पढ़ने में आता है। रीछ वसा को प्रायः तिलाओं में सम्मिलित करके लाभ उठाया जाता है इसी प्रकार अगर आयुर्वेदिक वात व दर्द नाशक तैलों के निर्माण में भी इसे डाल दिया जाये तो अधिक लाभ की आशा की जा सकती है। चरक कहते हैं कि लवण युक्त कल्क से सिद्ध वराह रीछ की वसा या घृत तैल वातज मूत्र कृच्छ्र को दूर करते हैं। वह नपुंसकता जिसमें सफिकटर मसल के वात संस्थान का अर्द्ध पक्षाघात हो जाता है उसमें पेड़ू स्थान पर रीछ वसा से गरम सेंक लाभ करता है।

युनानी हकीम नपुंसकता की चिकित्सा में रीछ शिश्न को बहुत महत्व देते हैं। उनके विचार में रीछ के शिश्न का लेप शिश्न की प्रहर्षन शक्तियों को बढ़ाता है। जिस अङ्ग में निर्बलता हो उसी अङ्ग का प्रयोग उसमें लाभ करता है इस उसूल के अनुसार उनकी यह धारणा ठीक जान पड़ती है। रीछ की शिश्न अस्थि काफी मँहगी विकती है इसे पीसकर और हिना मोतिया, गुलाब आदि के ईत्र में मिलाकर सम्भोग के पूर्व इन्द्री पर लगवाते हैं।

रीछ का मांस पाक में मधुर, भारी, स्निग्ध, बलकारक, बालहर और उष्ण वीर्य होता है। योग-रत्नाकर में लिखा है कि इसके बालों की धूनी ग्रह दोषों को दूर करती है।

काम विज्ञान सचित्र

काम विज्ञान में कामशास्त्र का प्राचीन एवं आधुनिक सिद्धान्तों पर अनेक विद्वान अनुभवी वैद्यों का लिखा हुआ सचित्र वर्णन है। आजतक ऐसी उत्तम पुस्तक कामशास्त्र पर नहीं छपी है। यह काम विज्ञान विवाह के समय वर एवं वधू को उपहार देने योग्य है। काम शास्त्र सम्बन्धी सब ही विषयों पर प्रायः प्रकाश डाला गया है। साथ ही कामशास्त्र सम्बन्धी २१९ प्रयोग जिसमें वाजीकरण, संकोचन, गर्भ स्थापन, अंग, स्तन दृढीकरण, वीर्यवर्धक भी हैं स्तम्भन के तो सैंकडों प्रयोग हैं। ६ रंगीन और ३६ एकरंगे चित्र हैं और अनेक चित्र पांच छः रंगों में छापे गये हैं। मूल्य ६) पोस्ट व्यय १)

१—प्रयोग मणिमाला (सचित्र)

२५० वैद्यों के परिचय, चित्र और पांच सौ अनुभूत प्रयोग छपे हैं। प्रयोग ऐसे हैं जो हजारों रुपये खर्च करने पर भी नहीं मिल सकते। पिता पुत्र से भी छिपाते हैं उन्हीं प्रयोगों का संग्रह किया गया है। मूल्य ८)

२—थर्मामीटर विज्ञान

थर्मामीटर के भेद, थर्मामीटर की प्रयोग विधि, चार्ट बनाना आदि सभी उपयोगी विवरण दिया है। मूल्य ।)

३—परीक्षित प्रयोग (प्रथम भाग)

इसमें बनारस हिन्दू यूनिवर्सिटी अर्थात हिन्दू विश्वविद्यालय के आयुर्वेदिक विभाग के परीक्षित प्रयोग संग्रह किये हुए हैं और लेखक ने उनको बडे अच्छे ढंग से ऐसा लिखा है कि साधारण वैद्य एवं स्नातक लाभ उठा सकें। मूल्य ।।।)

४—परीक्षित प्रयोग (द्वितीय भाग)

इस पुस्तक में धर्मार्थ औषधालयमें काम आने वाले अनुभूत प्रयोगों का संग्रह किया गया है। प्रयोग ऐसे हैं जिनमें पैसे कम लगें और बहुत से रोगियों को लाभ पहुँचे। मूल्य १।)

५—वैज्ञानिक प्राणायाम रहस्य (सचित्र)

प्राणायाम किस प्रकार करना चाहिये, क्यों करना चाहिये, प्राणायामसे रोग किस प्रकार नष्ट किए जा सकते हैं, स्वास्थ्य किस प्रकार बढाया जा सकता है, प्राणायाम से शरीर के कौनसे भाग पर क्या प्रभाव पडता है सब चित्रों द्वारा सरल भाषा में समझाया गया है। मूल्य २।)

६—स्वप्नदोष और वीर्य संजीवन (सचित्र)

स्वप्नदोष क्या है ? क्यों होता है ? उसका शरीर पर क्या प्रभाव पडता है और उसकी अद्भुत चिकित्सा का वर्णन बडी सरल भाषा में किया गया है। मूल्य २)

७—आहार

भोजन क्यों करें ? कैसे करें ? कितना करें ? क्या पदार्थ खायें ? कौन पदार्थ नहीं खायें ? कितना खायें आदि सभी प्रश्नों के विस्तार के साथ उत्तर और भोजन के विटामिन, प्रोटीन आदि विशिष्ट भागों का वर्णन किया है। पुस्तक गृहस्थ और वैद्यों के संग्रह योग्य है। मूल्य १।)

प्राणाचार्य—सचित्र मासिक-पत्र वार्षिक मूल्य ४।।=) इसके विशेषांक ही ४।।=) मूल्य से अधिक मूल्य का होता है, एक वर्ष ग्राहक बनकर देखें। एक वर्ष में हजार आठ सौ पृष्ठ, सैंकड़ों चित्र, हजारों परीक्षित प्रयोग और विद्वान वैद्यों के लेख रहते हैं।

पता—व्यवस्थापक प्राणाचार्य भवन लिमिटेड, विजयगढ़, जिला अलीगढ़ (यू० पी०)

भस्म विज्ञान

धातु भस्मों व रस-चिकित्सा के आविष्कारक कौन थे वह कब हुए? और आयुर्वेद में रस-चिकित्सा का प्रवेश कैसे हुआ? साधु सन्तों, महात्माओं की भभूती, सिद्धों की रससिद्धियों का ज्ञान वैद्यों तक कैसे पहुँचा? इसके इतिहास का ज्ञान आयुर्वेदज्ञों को बिलकुल नहीं, वास्तव में रसचिकित्सा सिद्धों महात्माओं की देन है। इसका सही इतिहास जानना चाहते हो तो भस्म-विज्ञान का उपोद्घात पढ़िये।

इसमें ८४ सिद्धों का विवरण सहित सचित्र इतिहास दिया है। जिसको खोजने में स्वामी जी ने भारतवर्ष के बड़े २ पुस्तकालयों में जा-जाकर १४० से ऊपर हस्तलिखित ग्रन्थों में से खोजकर सारा विवरण ढूंढ निकाला है। वह ऐसा अकाट्य प्रामाणिक है कि वैद्य समाज पढ़कर स्तम्भित व चकित रह गया है। ग्रंथ की यही एक विशेषता नहीं।

सबसे बड़ी विशेषता तो इस ग्रंथ की यह है कि जितने भी सिद्धों महात्माओं द्वारा भस्में बनाने की विधियां आविष्कृत हो चुकी हैं तथा जो रस ग्रन्थ अभी तक प्रकाशित नहीं हुए उनमें जो भस्म बनाने की विधियां आई हैं वह सब अप्रकाशित होने के कारण वैद्य समाज उनके निर्माण को नहीं जानता उनको ढूंढ कर सप्रमाण इस ग्रंथ में संग्रह किया गया है। यही नहीं, इससे भी अधिक विशेषता यह है कि यूनानी, मिश्रानी चिकित्सा में जिन पत्थरों, रत्नों, धातुओंकी भस्में बनती हैं उनका ज्ञान भी वैद्यों को बहुत कम है वह समस्त विधियां भी इस ग्रंथ में सप्रमाण संकलित कर दी गई हैं। इससे भिन्न अनेक धातु भस्मों की विधियां जो अब तक महात्माओं के गुरु परम्परा में चली आ रही थीं। उनमें से अनेकों विधियों को बड़े प्रयत्न से प्राप्त कर सबको स्वामीजी ने प्रकट कर दिया है। पुस्तक कैसी है? इस पर विद्वान वैद्यों की सम्मतियों से इसका अन्दाजा लगाइयेगा। भाषा टीका सहित २ भागों का मूल्य १०) डा० ख० १।)

गुण विधान सीरीज की पुस्तकें

इन पुस्तकों से साधनहीन ग्रामीण चिकित्सक और साधारण भी हर समय घर में मिल जाने वाली चीजों और के वृक्षों द्वारा सिर से पांव तक होने वाली भयंकर व्याधियों की सफल चिकित्सा कर सकते हैं।

- दुग्ध गुण विधान
- अर्क (आक) गुण विधान
- फिटकडी गुण विधान
- एकौषधि गुण विधान १॥
- नीम गुण विधान ॥
- अरिष्टक (रीठा) गुण विधान
- बबूल गुण विधान
- पलाण्डु चिकित्सा
- घृत गुण विधान
- पीपल गुण विधान
- संतरा गुण विधान
- नमक चिकित्सा
- स्वर्णक्षीरि गुण विधान
- इन्द्रायण गुण विधान
- मधु गुण विधान १
- धतूरा गुण विधान ॥
- नीबू गुण विधान

अनुभूत योगों की पुस्तकें

- पैसे-पैसे के चुटकले
- भारतीय जडी बूटी प्रथम भाग २॥
- भारतीय जडी बूटी द्वितीय भाग ३
- फलों से इलाज ३
- यूनानी चिकित्सा विज्ञान ८॥
- अनुभूत योग प्रकाश ६॥
- अनुभूत योग चिन्तामणि द्वितीय भाग ४

बड़ा सूचीपत्र मुफ्त मंगाकर पढें।

पता—रसायन फार्मेसी (३ दरियागंज) पो० बो० ११२५ देहली।

७८६ वर्ष का प्राचीन रस ग्रन्थ

बसवराजियम—हजारों वर्ष पहले दक्षिण भारत में चालुक्यवंशीय राजाओं का राज्य था। उनके प्रधान मन्त्री रुद्र साम्प्रदायी महान रसतन्त्रज्ञ बसवराज ने सं० १२२५ में इस सिद्ध साम्प्रदायिक अनुपम ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें भगवान रुद्र के अनुयायी बनों में विचरने वाले रसायनाचार्य नागार्जुन, नागबोधि, नित्यनाथ, चर्पटी, करोरी, पूज्यपाद आदि योगियोंका रसज्ञान भरा पड़ा है, श्रीगोविन्दपादाचार्य के कथनानुसार शरीर को अजरामर करने में पारे की बराबरी करने वाली न तो कोई जड़ी-बूटी है और न ही कोई रसायन और भस्म है। पारे में यह बड़े आश्चर्य की बात है कि वह स्वयं मूर्छित होकर रोगी के रोग को दूर करता है और बंधा हुआ होकर मुक्ति देता है तथा अच्छी तरह मरा हुआ दूसरों को जीवन देता है। आज मद्रास प्रान्तीय वैद्यों की जो प्रतिष्ठा यश और कीर्ति सर्वत्र प्रसिद्ध हो रही है वह सब इसी ग्रंथ के योगों का प्रताप है। यह ग्रंथ तैलंग भाषा में ताड पत्रों पर लिखा हुआ उपलब्ध हुआ था, जिससे अब तक तैलंग भाषा-भाषी वैद्य ही लाभ उठाते रहे, किन्तु यह जानकर आप अतीव प्रसन्न होंगे कि अब आयुर्वेद बृहस्पति श्री गोवर्धन जी शर्मा छांगाणी के अतुल परिश्रमके फलस्वरूप आज यह ७८६ वर्षका प्राचीन तैलंग हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ हिन्दी भाषा में भी हमारे द्वारा प्रकाशित होगया है। इस ग्रंथ के विषय में कहा गया है कि सतयुग में चरक, त्रेता में रसार्णव तथा द्वापर में सिद्ध विद्याभू का महात्म्य है उसी प्रकार कलियुगमें बसवराजियम पूज्य ग्रंथ है। इसमें जो निदान, लक्षण, प्रत्येक रोग के बतलाये हैं उनको समझकर इसमें वर्णित योगों द्वारा जो चिकित्सा करेगा, भगवान रुद्र की कृपा से निःसन्देह वह सर्वत्र यश और सिद्धि प्राप्त करेगा। मूल्य २५ प्रकरण सम्पूर्ण ग्रंथ का मूल्य ८।।) डाकखरच एक रुपया।

सिद्ध रसायन

रस रसायन की जिन कठिन क्रियाओं से बन्धु घबराकर उनके दिव्य गुणों से वंचित रह हैं, उन क्रियाओं का लम्बा अनुभव करके विद्वान ने उसका सरल तरीका इस ग्रंथ में दर्शाया है साथ ही महान रसायनाचार्य नागार्जुन और सिद्धों की संचिकाओं के अज्ञात योगों को उनकी सुलझाकर प्रकाशित किया है जिनसे पाठक न काया (काया-कल्प) रंगने में ही सफल होंगे बल्कि मति वाले माया (कीमियां) रंगने में भी सफल हो इस प्रकार पाठकों को जहां आर्थिक संकट से मिलेगी वहां असाध्य समझकर छोड़ दिए जाने रोगों के वे सिद्धहस्त चिकित्सक भी बन जावेंगे। पुस्तक के कुछेक योगों का दिग्दर्शन करा देने से को अनुमान हो जायगा कि यह कितना अपूर्व ग्रन्थ यथा-शुद्ध बद्ध और सिद्ध करने वाली दिव्य औषधि औद्भिदाम्ल व बूटियां, रस बन्धन, गन्धक को करना, बद्ध पारद को सिद्ध बनाना, रजतरंजन (कीमि अभ्रक सत्व पातन, अभ्रक सत्व की द्रुति, द्रुति से प बन्धन, बंग स्तम्भन, पारद भस्म, रक्तयोगेन ताम्रो (कीमियां) तांबा और रजत (चांदी) वेधी, सिद्ध हरिता हरिताल कल्प देह व लोह वेधी, सिद्ध हरिताल तै सिद्ध कुचला कल्प, सर्वरोगहर फिटकडी रसायन (क पुरुषों के विशेष रोगों पर रामबाण सिद्ध खादक, पा गुटिका बंगवेधी, शिंगरफ सोमिया बनाना, नौसा तैल, सिद्ध गोरखी जलमुद्रा, सिद्ध गंधक, एक गिरना महात्मा का योग—जिसको बनाना अति सरल है क्षय (T. B.) संग्रहणी जैसे अनेक भयंकर रोगों इलाज है–इसमें छपा है आदि। इसमें अन्य पुस्तकों भांति जोड-तोडकर एकत्र की हुई सामग्री नहीं है बल्कि लेखक के जीवन भर का अनुभव बन्द किया गया है इसके पाठकों के लिए लेखक का सद्परामर्श और सहा यता भी सदैव प्रस्तुत रहेगी। मूल्य ५) डा० पै० ।।।)

पता—रसायन फार्मेसी (३दरियागंज) पो० बो० ११२५ देहली।

अश्वगन्धा पाक

यह पाक तमाम शारीरिक रोगों के लिए तथा शरीर की दुर्बलता और कृशता को दूर करके शरीर को मोटा ताजा बनाने के लिए अकसीर है। जवानी को स्थिर करके मुर्झाये हुए चेहरे पर रक्त की लालिमा की लहरें दौड़ा देता है। युवकों को समय से पूर्व वृद्ध होने से बचाता है। वीर्यवर्धक होने के अतिरिक्त स्तम्भक भी है। कुटेव से उत्पन्न हुई विकृतियों को दूर करके अंग प्रत्यंग की समस्त क्रियाओं को नियमित बनाता है, नित नये रोग में फंसे रहने वाले रोगियों के लिए तो एक ही चीज है। खांसी, दमा, बवासीर तथा आमाशय और यकृत के रोगियों के लिए इससे बढ़कर और कोई स्वादिष्ट दवा नहीं। भुस, खून की कमी, पांडु रोग, प्लीहा शोथ और संग्रहणी व कफजनित रोगों के लिए गुणकारी है। पुरुषों की भांति स्त्रियों के लिए श्वेत प्रदर ऋतुदोष एवं गर्भाशय के दोषों की प्रमाणित दवा है। खाने में स्वादिष्ट है। मूल्य ५) पौंड डा० ख० १।।।–)

हिमोलीन

हृदय की धड़कन, हृदय की कमजोरी, पागलपन, वमन, घबराहट, जी मिचलाना, हृदय की दाह, दस्त, प्यास का अधिक लगना, हैजा, गरमी, लू लगना, दिल और दिमाग की गरमी और कमजोरी तथा उससे उत्पन्न होने वाली पुरुषत्व हीनता को मिटाने के लिए अपूर्व उपहार है। इसकी १५–२० मात्रा से ही हृदय और मस्तिष्क ताजा और बलवान होजाता है। इसकी प्रत्येक मात्रा सुगन्धि से महकती हुई रुचिकर और स्वादिष्ट है। जहर मोहरा खताई, अकीक, प्रवाल, रजत, कहरवा-शमई, चन्दन तथा अन्य हृदय रोगनाशक बूटियों का मिश्रण है। कीमत आधी छटांक ५) पो० १।)

रसायन आमला तेल

बालों में लगाने के तेलों में, बालों की जड़ों को पुष्ट करके उनको घने और लम्बे तथा कोमल एवं चमकदार बनाने वाले तत्वों का होना परमावश्यक है और यह सब खूबियां आपको 'रसायन आमला तेल' की शीशी में मिलेंगी। जिसे हरे आमले तथा केश टानिक जड़ी-बूटियों के रस में मूर्छित तेल को विशेष पद्धति से सिद्ध करके बनाया जाता है। यह दिमागी कमजोरी, थकावट, शिरदर्द को दूर करता है। दिमाग को ताजा और ठण्डा रखता है, गंज, खुजली, भूसी सीकरी को दूर करता है। झड़ते बालों को रोकता है। कुछ दिन लगाते रहने से बाल जड़ से काले निकलने लगते हैं, क्योंकि इसमें लोह तत्व विशिष्ट परिमाण में हैं। इसकी मधुर सुगन्ध २४ घण्टे कायम रहती है। मूल्य ४ औंस की शीशी १।), ३ दर्जन ३५) डाक खर्च जुदा।

पूंगी (सुपारी) पाक

इस अति स्वादिष्ट पाक के सेवन से स्त्रियों के समस्त प्रकार के रोग यथा प्रदर, कटिपीडा, योनि रोग, गर्भाशय च्युति, आलस्य और शिर दरद समूल नष्ट हो जाते हैं। इसके सेवन करने से किसी बीमारी का भय नहीं रहता और एक मास सेवन करने से पुरानी बीमारियां दूर होकर स्त्री के स्वास्थ्य और सौन्दर्य में चार चांद लग जाते हैं। यह विशेष पद्धति से बनाया जाता है अतः अन्य सुपारी पाकों की भांति कटु और पौडर रूप में नहीं है बल्कि बर्फी की शक्ल में है जिसे कोमल से कोमल प्रकृति की स्त्री भी प्रसन्नतापूर्वक सेवन कर लाभ उठा सकती है। कीमत १ पौंड ५) डाक खर्च १।।।)

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा स्वस्तिक प्रिंटिंग प्रेस, देहली में छपकर प्रकाशित

जुलाई १९५५

वर्ष ८ वार्षिक ३)

अंक १ इस अंक का ।=)

सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा. गणपति सिंह वर्मा

विषय-अनुक्रमणिका

संवर्धन		३
बी० सी० जी० का विवाद	श्री० मांगीलाल माथुर	४
मधुमेह Diabetes-Mellitus	श्री० गौरीलाल चानना बी० ए०, वैद्य वाचस्पति	५
स्वर्ण वंग	श्री० कवि० अनन्तमणि मिश्रा	६
अनुभूत योग रत्नावली		१२
भेडिया-गीदड़ और लूमड़ी	श्री० कवि० हरिकृष्ण सहगल	१४
"सिद्ध शाल्मली रसायन"	श्री० आचार्य श्यामदास प्रपन्नाश्रमी	१६

रसायन फार्मेसी देहली का प्रमुख सचित्र मासिक पत्र

'सिद्ध रसे करिष्यामि, निर्दारिद्रय मयं जगत् ।'

वर्ष ८	देहली जुलाई १९५५	अङ्क १

दिव्यौषधियों का संवर्धन

अवपतन्तीर वदन्दिव औषधयस्परि ।
यं जीवम श्नवामहै न स रिष्यातिपुरुषः ॥
[ऋग्वेद मं० १० सू० ९७]

यदि जीव हमारे आधीन होता तो मरता नहीं, ऐसा द्युलोक से पड़ने वाली औषधि ने कहा। ऐसा ऋग्वेद में वर्णन है। वनौषधियों की इस आश्वासन पूर्ण भाषा को हमें जानना चाहिये। व्यवहार में, प्रत्यक्ष उपयोग में हमें यह प्रयत्न करना चाहिये।

बी० सी० जी० का विवाद—

(लेखक—श्री मांगीलाल माथुर)

कोयम्बटूर में मद्रास राज्य सरकार की परिवहन कम्पनी के एक कर्मचारी श्री कृष्णराज चेट्टियर की पुत्री कुमारी बसन्त के बी० सी० जी० और चेचक के टीके लगाने के बाद अन्धी हो जाने के मामले को लेकर बी० सी० जी० के टीके की उपयोगिता पर तीव्र विवाद उठ खड़ा हुआ है। जब यह बच्ची ६ महीने की थी तो उसके चेचक का टीका लगाया गया, जो असफल रहा। अतः ३ दिसम्बर १६५४ को उसके पुनः चेचक का टीका लगाया गया। बच्ची तब काफी बड़ी थी और स्कूल जाने लगी थी। चेचक का दूसरा टीका लगाये जाने से पूर्व १८ नवम्बर १६५४ को उसके बी० सी० जी० का टीका भी लगाया गया।

टीका लगाने के अगले ही दिन बच्ची को तेज बुखार हो गया तथा दोनों बाहें सूज गई। डाक्टरों ने 'टी० बी० मेनिन नाइटिस' (दिमागी नाड़ियों की सूजन) बताया। अन्त में बुखार तो ठीक हो गया, लेकिन आंखों की दृष्टि जाती रही।

इसी घटना विशेष के सिलसिले में श्री चक्रवर्ती राजगोपालाचार्य द्वारा दिये गये वक्तव्य का कुछ अंश इस प्रकार है—मुझे ऐसा प्रतीत होता है कि यह निश्चय नहीं किया जा सकता कि बच्चे की अवस्था में जो गम्भीर बिगाड़ हुआ वह बी० सी० जी० के टीके का परिणाम न था। बी० सी० जी० टीके और अन्धता के बीच चेचक का टीका लगाया जरूर गया और इससे सन्देह पैदा होता है; किन्तु यह स्पष्ट है कि बी० सी० जी० के पक्ष में यह कोई दलील नहीं है। सीदा-सादा प्रश्न है कि क्षय का निरोधक टीका लगवाया जाये या नहीं, जिसमें थोड़ा खतरा मान लिया गया है और वह खतरा नहीं है, यह अभी सिद्ध नहीं हुआ है। राजाजी के शब्दों में स्वस्थ बच्चों को सी० जी० के टीके लगवाना खतरे से खाली नहीं। दूसरी ओर इन सब के विपरीत मद्रास सरकार एक विज्ञप्ति में बी० सी० जी० टीके के सामू[illegible] प्रयोग का समर्थन किया गया है और कहा गया कि इस सम्बन्ध के साहित्य को सावधानी से पढ़ा [illegible] है और टेक्नीकल विशेषज्ञों की राय भी ली गई [illegible] उन सबसे इस टीके की उपयोगिता के बारे में [illegible] सन्देह नहीं रहा है।

आम धारणाओं के अनुसार अब तक विज्ञा[illegible] के विभिन्न प्रयोगों ने ही अन्धविश्वासों पर विजय प्र[illegible] की है। लेकिन इसके विपरीत विचार वालों [illegible] अनुसार जापान और इटली जैसे देशों में जहां अनि[illegible] वार्य रूप से टीका लगवाने के कानून हैं, चेचक [illegible] भयंकर महामारी क्यों फैली? दूसरी ओर आस्ट्रेलि[illegible] और न्यूजीलेण्ड जहां टीके लगाने की प्रायः को[illegible] व्यवस्था नहीं, उस रोग से मुक्त क्यों है? ऐसे व्यक्ति[illegible] की ऐसी ही धारणायें इतनी प्रबल हो उठी हैं कि [illegible] अन्ध विश्वास को विज्ञान पर भी हावी हो जान[illegible] बताने लगे हैं।

जो कुछ भी हो, ऐसी स्थिति सर्व साधारण में निस्सन्देह आशंका और भय उत्पन्न करती है। बी० सी० जी० के बचाव के लिए चेचक के टीके पर या चेचक के टीके के बचाव के लिए बी० सी० जी० पर दोष आसानी से मढ़ा जा सकता है, किन्तु चिकित्सा विशेषज्ञों को यह निश्चित रूप से पता लगा लेना चाहिए कि इस देश में बी० सी० जी० या अन्य टीके हानिकर तो नहीं हैं और इसके बाद ही इनके प्रयोग की स्वीकृति देनी चाहिए।

मधु-मेह Diabetes Mellitus

(लेखक—श्री गौरीलाल चानना बी० ए०, वैद्य वाचस्पति)

(मई के अंक से आगे)

मधुमेह की पहचान—गत लेख में मूत्राधिक्य क्षुधाधिक्य और तृष्णाधिक्य आदि मधुमेह के बाह्य लक्षणों का और सम्प्राप्ति का विस्तार से वर्णन हो चुका है। परन्तु क्या उन बाह्य लक्षणों को देखकर हम निश्चित रूप से इस परिणाम पर पहुंच सकते हैं कि अमुक रोगी को मधुमेह है ? जिन पाठकों ने सम्प्राप्ति के प्रकरण को ध्यान पूर्वक पढा है वह स्वयं समझगए होंगे कि इस प्रश्न का उत्तर नकारात्मक है। मधुमेह में वास्तविक विकृति रक्त में होती है, वहां शर्करा का परिमाण बढ़ता है। जब मात्रा से अधिक रक्त में शर्करा होती है तभी रक्त से छनकर वह मूत्र में आने लगती है। अतः मधुमेह की निश्चयात्मक पहचान [१] रक्त में शर्करा अनुपात की वृद्धि और [२] मूत्र में शर्करा की अधिक विद्यमानता है। अतः उक्त दोनों का स्वस्थ और रुग्णावस्था सम्बन्धी संक्षिप्त विवरण पाठकों के ज्ञानार्थ नीचे दिया जाता है।

रक्त में शर्करा की मात्रा—स्वस्थ मनुष्य के रक्त में द्राक्षौज एक निश्चित अनुपात में विद्यमान रहती है। रक्त में यह द्राक्षौज भोजन के सितसारीय तथा शार्करीय अंश से उत्पन्न होती है। भोजन करने के बाद द्राक्षौज बनने की प्रक्रिया जब चलती है उस समय रक्त में इसकी मात्रा बढ़ती है। अतः भोजन करने के कुछ समय रक्त में द्राक्षौज की मात्रा कुछ न कुछ बढ़ जाती है। इसी प्रकार उपवास, व्रतादि कारणों से कुछ काल के लिए भोजन न किया जाय तो रक्त में द्राक्षौज की मात्रा कम हो जाती है। परन्तु स्वस्थ शरीर में यकृत तथा मधुलीन (इन्सूलीन) द्वारा शर्करा संतुलन की यह प्रक्रिया सदा से नियन्त्रित रहती है प्रत्येक अवस्था में यह मात्रा प्रति १०० c.c. रक्त में ८० से १२० सहस्रांश माशे (मिली ग्राम) के बीच में स्थिर रहती है। १२० मिलीग्राम से अधिक शर्करा सम्भावित मधुमेह की परिचायक है और ८० मिलीग्राम से कम उससे विपरीत न्यून द्राक्षोरिया [Hypoglycaemia] नामक रोग की उत्पत्ति होती है जो इन्सूलीन की मात्रा दे देने से पैदा होती है।

परन्तु अधिकतम रक्तस्थ शर्करा की मात्रा में यदि १०-२० मिलीग्राम का अन्तर हो तो निश्चित रूप से मधुमेह का निदान नहीं किया जा सकता। ५० मिलीग्राम या इससे अधिक का अन्तर निश्चयात्मक रूप से मधुमेह का द्योतक होता है, इसलिए भोजनोपरान्त रक्त में शर्करा की मात्रा १८० मिलीग्राम से अधिक और उपवासावस्था में १३० मिलीग्राम से अधिक हो तो मधुमेह का निदान करना उचित है। इन दोनोंमें भी उपवासावस्था में १३० मिलीग्राम मात्रा भ्रमात्मक है क्योंकि भोजपरान्त लिए रक्त में यही मात्रा स्वस्थावस्था में भी विद्यमान रहती है अतः निश्चयात्मक निदान के लिए भर पेट सितसार प्रधान भोजन के बाद ही रक्त लेकर उसकी परीक्षा करनी चाहिये और उसमें यदि शर्करा का अनुपात प्रति १०० माशे [c.c.] रक्त में १८० मिली ग्राम से अधिक हो और मूत्र में भी शर्करा आ रही हो तो मधुमेह समझना चाहिए।

रक्त शर्करा परीक्षा विधि—शर्करा की मात्रा नापने के लिए रक्त प्रायः धमनी से ही लिया जाता है अंगुली के सिर अथवा कान की लोर में भी सूई मार कर रक्त की कुछ बूंदें निकाल ली जाती हैं। अंगुली की अपेक्षा कान की लोर इस कार्य के लिए अधिक सुरक्षित स्थान है क्योंकि बाह्य वस्तु का स्पर्श न होने से कान की लोर के सूई छेद में पूयजनक कीटाणुओं के संक्रमण की संभावना नहीं रहती। सिरा के लिए रक्त में धमनी के रक्त की अपेक्षा शर्करा की मात्रा कुछ कम होती है। साधारणतया यह अन्तर ३० मिली-ग्राम प्रति १०० c.c. का होता है। अर्थात् धमनी के रक्त में जिस समय १८० मिलीग्राम शर्करा हो तो उसी समय सिरा के रक्त में यह मात्रा १५० मिली ग्राम के लगभग होगी। रक्त परीक्षा के समय इस तथ्य को भी ध्यान में रखना चाहिए।

द्राक्षौज सहन परीक्षा (Glucose Tolerance Test):—यदि रक्त में शर्करा की मात्रा १३०-१७० मिली ग्राम के बीच में हो तो ऐसी अवस्था में संदिग्ध मधुमेह की पुष्टि के लिए इस परीक्षा की सहायता ली जाती है। परीक्षा विधि निम्न प्रकार से है।

रात बारह बजे के बाद रोगी को कोई वस्तु खाने के लिए नहीं दी जाती। प्रातःकाल रक्त और मूत्र के नमूने [Sample] ले लिए जाते हैं। उसके बाद क्षुधायुक्त व्यक्ति को १०० ग्राम [लगभग ८ तोला] द्राक्षौज ८०० सी० सी० [लगभग ३ पाव] जल में घोलकर एक दम पिलादी जाती है। इस शर्बत को रुचिकर बनाने के लिए उसमें थोड़ा निम्बू का रस भी निचोड़ा जा सकता है। यह शर्बत लेने के क्रमशः आधा घण्टा दो घण्टा और तीन घण्टा बाद प्रत्येक बार मूत्र और रक्त के नमूने [Sample] लिए जाते हैं और उनकी परीक्षा की जाती है। स्वस्थावस्था में मूत्र के किसी भी नमूने (Sample) में शर्करा नहीं रहनी चाहिए

स्वस्थावस्था में रक्त में शर्करा की मा[त्रा] घण्टे के अन्दर अधिकतम १६०-१७० मिली [ग्राम] प्रति १०० c.c. तक पहुँच जाती है परन्तु दो घ[ण्टे] बाद के नमूने में पुनः यह पूर्वावस्था में आ जा[ती]

मधुमेह के रोगी में एक घण्टे में श[र्करा] मात्रा २०० मिली ग्राम से अधिक तक चली जा[ती] और दो घण्टे के बाद तक भी स्वस्थावस्था के [स्तर] तक नहीं पहुँचती। इस अवस्था में मूत्र में भी [शर्करा] विद्यमान रहती है।

वृक्क जन्य इक्षुमेह में रक्त में शर्करा की [मात्रा] १८० मिली ग्राम से अधिक हो ही नहीं सकती। [क्यों]कि इससे फालतू तो साथ २ ही छन कर मूत्र में निक[लती] रहती है। यह पूर्व प्रकरण में स्पष्ट किया जा चुका [है।] मधुमेह और वृक्क जन्य इक्षुमेह में यह अन्तर स[दा] रखने योग्य है।

द्राक्षौज सहिष्णुता परीक्षा (Gluc[ose] Tolerance Test) करते समय कुछ बातों का वि[शेष] ध्यान रखना चाहिये।

१—मधुलीन लेने वाले अथवा नियन्त्रित आ[हार] पर रहने वाले रोगी में यह परीक्षा ठीक परिमाण [नहीं] दे सकती। अतः यदि रोगी मधुलीन सूचीवेध ले [रहा] हो तो यह परीक्षा करने से पूर्व कई दिन तक निरन्[तर] रोगी की मधुलीन बन्द कर देनी चाहिए और उस का[ल] में उसे स्वस्थ मनुष्यवत् साधारण आहार पर रखन[ा] चाहिए।

२—रोगी को ज्वर चाहे किसी कारण से [न] हो जाय उस समय उसकी यह परीक्षा न करनी चाहिए इस परीक्षा के समय रोगी का तापमान स्वस्थवत् होन[ा] आवश्यक है।

मूत्र परीक्षा

साधारण अवस्था में स्वस्थ मनुष्य के मूत्र [में]

शर्करा विद्यमान नहीं होती। शर्करा प्रधान भोजन के अध्ययन तथा मधुमेह आदि कुछ अवस्थाओं में यह मूत्र में आने लगती है। हमारे शास्त्रों में इसी बात का वर्णन इन शब्दों में किया है कि मधुमेह में मूत्र मीठा हो जाता है। मूत्र की मिठास की परीक्षा के लिए लिखा है कि उस पर चींटियां आ जाती हैं। परन्तु चींटियां २-२॥% शर्करा की विद्यमानता में आती हैं। उस समय रोग इतना बढ़ चुका होता है कि चिकित्सा करने में कठिनाई हो सकती है। आज कल ऐसी रासायनिक विधियां ज्ञात हो चुकी हैं जिन से ½% से भी कम शर्करा की परीक्षा की जा सकती है। और शर्करा का ठीक परिमाण भी नापा जा सकता है। अतः रोगी की सुरक्षा और रोग की तीव्रता के ज्ञानार्थ मूत्र परीक्षा की आधुनिक विधियां बहुत महत्व रखती हैं और फिर यह सरल भी इतनी है कि साधारण वैद्य और रोगी भी आवश्यकता के समय इन्हें कर सकता है। अतः संक्षिप्त रूप से इनका विवरण नीचे दिया जाता है।

मूत्र किस समय लें?

पाठक पहले पढ़ चुके हैं कि मधुमेह के रोगी शर्करा तथा सितसार प्रधान भोजनोपरान्त मूत्र में शर्करा की मात्रा बढ़ जाती है और इसके विपरीत भोजन से शर्करा की मात्रा कम हो जाती है। अतः स्पष्ट है भोजनोपरान्त और निराहार के समय लिए मूत्र के दो नमूनों में शर्करा की मात्रा में अन्तर होगा। इसके अतिरिक्त यदि रोगी को किसी दिन ऐसा भोजन करने का अवसर हो जाय जिसमें सितसार कम परिमाण में हो और वह प्रतिदिन के अभ्यास के कारण जलपान इतनी ही मात्रा में करें जितनी साधारणतया करता है तो भी शर्करा की मात्रा कम और मूत्र में उतनी ही होने के कारण शर्करा का घोल उस दिन पतला रहेगा अर्थात् मूत्र में शर्करा की प्रतिशतकता कम रहेगी। ऐसी स्थिति में भ्रमरहित परिमाण पर पहुँचने के लिए आवश्यक है कि परीक्षार्थ किसी एक समय का मूत्र न लेकर २४ घण्टों का मूत्र एक स्वच्छ धोये हुए शीशे के बर्तन में एकत्रित करें। मूत्र को शीतकपात्र में अथवा अन्य शीतल स्थानमें रखे रहें तो वह २४ घण्टेमें खराब न होगा। तदुपरान्त उसे अच्छी प्रकार हिलाकर उसको नाप लें। उसमें से थोड़ा नमूना लेकर उसकी परीक्षा करें। शर्करा की जितनी प्रतिशतकता निकले उस हिसाब से २४ घण्टे के सारे मूत्र में विद्यमान कुल मात्रा १००० c. c. हो और शर्करा की मात्रा उसमें ३% हो तो कुल $\frac{१०००+३}{१००}$ ३० ग्राम शर्करा २४ घण्टे में मूत्र द्वारा निकल जाती है ऐसा समझें। इस प्रकार २४ घण्टे में निकलने वाली शर्करा की कुल मात्रा के आधार पर रोग की तीव्रता का निर्णय करें। ऐसा करने से किसी भ्रम की आशंका नहीं रहती।

परीक्षा विधि

मूत्र में शर्करा परीक्षा की कई रासायनिक विधियां ज्ञात हो चुकी हैं। उनमें से मुख्य फेलिंग (Fehling & Benedict) और बैनीडिक्ट की विधियां हैं। आविष्कारक डाक्टरों के नाम पर उपरोक्त दोनों विधियों का नाम प्रचलित है। इनमें भी बैनीडिक्ट परीक्षा अधिक (Sensitrice) और सरल होने के कारण उसका वर्णन नीचे दिया जाता है।

बैनीडिक्ट परीक्षा (BENEDICT'S TEST)

५ माशे एक चम्मच (५ c.c.) *बैनीडिक्ट

---

* यह घोल बाजार में इसी नाम से तैयार बिकता है। यह नीलाथोथा—सोडा साइट्रेट, सोडा कार्बोनेट (कपड़े धोने का सोडा) इन तीनों का एक विशेष अनुपात में परिस्नुत जल में बना घोल होता है। इसमें विद्यमान नीलाथोथा ही शर्करा परीक्षा के लिए आधारभूत पदार्थ है।

घोल एक परीक्षा नली में लें। उसमें एक ड्रापरके द्वारा ८ बूंद रोगी का मूत्र टपकायें। इस परीक्षा नली के पेंदे को खोलते हुए पानी में धरें। ३–५ मिनट तक इसे खौलते हुए पानी में रहने दें। फिर परीक्षा नली को निकालकर उसे अच्छी तरह हिलायें और उस घोल का रंग ध्यानपूर्वक देखें। रंग के अनुसार मूत्र में शर्करा की निम्नांकित प्रतिशतकता समझें।

वर्ण	शर्करा की मात्रा
नीला	कुछ नहीं अथवा स्वस्थवत
हरा	·५%
हरा-पीला	१·०%
पीला	२·०%
नारंगी	२·५%
लाल	४%

इस परीक्षा में घोल और मूत्र की मात्रा को ठीक ध्यान में रखें अन्यथा परिणाम भ्रमात्मक सिद्ध होगा। यह परीक्षा विधि बिलकुल साधारण है और चिकित्सक का कर्तव्य है कि रोगी के लाभ तथा हित की दृष्टि से उसे यह विधि सिखादे ताकि समय २ वह स्वयं अपनी मूत्र परीक्षा करते हुए तत्काल घात (Emergency) से सावधान रहे।

आजकल कई ऐसी टिकियां भी बनी बाजार में बिकती हैं जिनके द्वारा मूत्र की शर्करा परीक्षा बिना पानी उबाले अथवा अन्य किसी ऐसी कठिनाई के सरलतापूर्वक की जा सकती है। परन्तु यह टिकियां जल्दी खराब हो जाती हैं। टिकिया द्वारा परीक्षा करते हुए इस विषय में सतर्क रहना चाहिये। टिकिया के विरुद्ध बैनीडिक्ट घोल चाहे कितना काल पडा रहे खराब नहीं होता।

साध्यासाध्यता:—आयुर्वेद ग्रन्थों में कहा है—

सर्व एव प्रमेहास्तु कालेनाप्रति कारिणः।
मधुमेहत्वयायान्ति तदा साध्या भवन्तिहि॥

इसके अतिरिक्त मधुमेह को आयुर्वेद शास्त्र में वात प्रमेहों के अन्तर्गत माना है और उसके लिए कहा है। 'न साध्याः पवनाच्चतुष्ठां' अर्थात वात प्रधान ४ प्रमेह असाध्य हैं। जहां तक मधुमेह का सम्बन्ध है आधुनिक खोजों और अनुभवों से इस सिद्धान्त का खण्डन हो चुका है। उचित भोजन व्यवस्था और इन्सुलीन ने मधुमेह की असाध्यता को समाप्त कर दिया है। इन दोनों साधनों की व्यवस्था में भूल न हो तो आज मधुमेही का जीवन कभी संकट में नहीं पड सकता। यहां तक कि अमरीका की बीमा कम्पनियों ने कुछ वर्षों से योग्य चिकित्सकों के आधीन मधुमेह के रोगियों का जीवन बीमा बिना किसी अधिक प्रीमियम के स्वीकार करना आरम्भ कर दिया है। साधारणतया मोटे आदमियों में होने वाले और ४० वर्ष से अधिक के रोगियों में मधुमेह अपेक्षाकृत सुखसाध्य होता है। पतले व्यक्तियों में तथा युवावस्था में यह कष्ट साध्य होता है। राजयक्ष्मा आदि कोई तीव्र उपद्रव हो जाय तो मधुमेह रोगी का जीवन अवश्य संकट में पड़ जाता है। अतः जहा तक संभव हो मधुमेही को उपद्रवों से बचाकर रखना चाहिए।

मधुमेह चिकित्सा

मधुमेह रोगी के शरीर में शर्करा की उत्पत्ति बढ़ जाती है और उसका पचन अथवा सात्म्यीकरण कम होजाता है। बहुमूत्र तृषाधिक्य आदि मधुमेह के समस्त लक्षणों की उत्पत्ति का मौलिक कारण भी यही शर्करा की अधिकता है यह सब वर्णन भी यथा स्थान आ चुका है। मधुमेही की औषधि पथ्य आदि की व्यवस्था करते समय भी मौलिक रूप से इसी तथ्य की ओर ध्यान देना होता है।

क्रमशः

लीवर पौडर ३

लीवर पौडर नं० १ एक पाव, कपर्दिका भस्म १ तोला, शंख भस्म १ तोला, कपूर बटी ६ माशा सब मिश्रितकर शीशी में रखे।

गुण—बाल शोष, अतिसार, मरोड़, पेचिश, गुदभ्रंश (कांच रोग) आदि रोग ठीक होते हैं।

अनुपान—लायमवाटर (चूने का पानी) के साथ सुबह शाम मात्रा ऊपर की तरह।

लीवर पौडर ४

लीवर पौडर नं० १ एक पाव, शुद्ध गन्धक १ तो०, रसमाणिक्य ३ माशा मिश्रित कर शीशी में रखें।

अनुपान—शीतल जल, विवन्ध होने पर अर्क गुलाब ३०० नं० दिया जा सकता है।

गुण—बच्चों की खारिश, फोड़ा-फुन्सी, पामा के लिये नं० ४ सेवन करावें।

वाह्यप्रयोग अर्कतेल, मरिचादि तैल भी व्यवहार में ला सकते हैं। जितनी जल्दी इस प्रयोग के सेवन से बच्चा मोटा ताजा बनता है उसके समान और कोई भी औषधि गुणकारी साबित नहीं हुई।

नोट—रोगी को औषधि देते समय वैद्य आदेश करदे कि यह दवा सुरक्षित स्थान पर रखी जाय नहीं तो कुत्ता, बिल्ली, कौआ लेजाते हैं। पुनः रोगी को वैद्य के पास आना पड़ता है व्यर्थ रोगी का व्यय न हो। जो वैद्य इस दवा को तैयार करना चाहें विधि से करें हमारी दवा मंगवाकर उसके साथ मिलावें कि ठीक तैयार हो चुकी है या नहीं, केवल डाकखर्च भेजने पर हम औषधि फ्री भेज देंगे और वैद्य फार्मेसियों के लाभार्थ यह प्रयोग प्रकाशित करने के साथ हमारी उन्नति है हमारे यहां सैंकड़ों मन देहली से कच्चा लीवर आता है वैद्य रोगियों पर व्यवहार में लाकर फलाफल प्रकाशित करावें।

वैद्य हरिवंश शर्मा दीक्षित आयुर्वेदाचार्य।
अध्यक्ष-बालविजय फार्मेसी जीरा-फिरोजाबाद

सफेद ताम्र भस्म बनाना

श्वेत ताम्र भस्म की अधिक महिमा हैं और लोग इसे बनाने और प्राप्त करने के लिये लालायित रहते हैं। ऐसे लोगों का अनुराग पूरा करने के लिये अपना गोपनीय योग रसायन में प्रकाशित करा रहा हूँ। विधि अत्यन्त सरल है।

मिट्टी के मोटे दलहार दो ऐसे सिकोरे बनवायें जो तीव्रतर अग्नि में न टूटें। उसमें पिसा हुआ सांभर नमक बिछाकर नमक पर उत्तम शुद्ध ताम्र का टुकड़ा रखदें ऊपर से और पिसा हुआ सांभर नमक डालकर ताम्र के टुकड़े को मध्य में दबाकर ढकदें फिर ऊपर दूसरा सिकोरा ढककर सन्धि में ७ से १० तक मजबूत कपड मिट्टी करदें। सूखने पर इस सम्पुट को २४ घण्टे तक लोहा गलाने की तीव्र भट्टी में रखें। फिर निकाल कर शीतल होने पर खोलें। अन्दर से ताम्र की श्वेत भस्म प्राप्त होगी।

वैद्य जानकीबल्लभ शर्मा आयुर्वेदाचार्य

भेड़िया-गीदड़ और लूमड़ी

(लेखक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, बागीची अलाउद्दीन देहली)

भेडिया, गीदड और लूमडी एक ही जाति के प्राणी हैं। कुत्ते में और इनमें यह भेद है कि इनकी थूथनियां पतली होती हैं। अमेरिकन युवतियां इसकी खाल की इतनी लालायित हैं कि वहां भेडियों को पालने के बाकायदा फार्म हैं।

प्राचीन काल में जंगली जातियां मांस के लिए भेडियों का शिकार करती थीं। अब भी हिमालय के हिमाच्छादित पर्वतों पर कुछ लोग इसी हेतु से इन भेडियों का शिकार करते हैं। आयुर्वेद में भेडिया, गीदड और लूमड मांस को मधुर, पाक में भारी, स्निग्ध, बलकारक, वातहर, उष्णवीर्य और गुह्य रोगों में हितकर कहा है।

काफरस्तान, रियासत चित्राल, सरहद प्रान्त में एक ऐसा पर्वतीय स्थान है, जहां के लोग अधिकतर शिकारी हैं। यहां पर ऐलोपैथिक, होम्योपैथिक चिकित्सा का अभाव है। इस बीसवीं सदीमें भी प्राणिज चिकित्सा का प्रचार है। संसारमें केवल यही एक स्थान है जहां पुरुष और स्त्रियां भेडिये के बालों से बुने हुए कपड़े पहनते हैं। वह इन कपड़ों को काला रंग लेते हैं।

अनुभव ने लोगों को बताया है कि भेडिये का भेजा जैतून के तेल में मिलाकर शरीर पर मलने से अज्ञात व्याधियां दूर होती हैं। भेडिया का भेंजा एक अमूल्य औषध है। एक किरात की मात्रा में ताजा दुग्ध के साथ लेने से मिर्गी दूर होती है। भेडिये के भेंजे का मनुष्य भेंजे के साथ सम्बन्ध है। अगर यकृत रस, यकृत की औषध है तो हिमाच्छादित पर्वतों की हिम में घूमने वाले भेडिये का भेंजा, मनुष्य भेंजे के रोगों का इलाज है।

पहाडी स्थानों में अधिकतर उदर पीडा का रोग होता है। मैदानों में यह रोग कम है, हां अधिक सभ्य देशों में अब अपैंडेसाइटिस, आमाशय, कैंसर आदि रोग बढ गये हैं। हिमालय के पर्वतोंमें रहने वाले इस उदर पीडा से बचने के लिए भेडिये की खाल पर बैठते सोते और इसके बालों के कपड़े पहनते हैं। सभ्य देश भी इससे लाभ उठा सकते हैं। यहां तक कि पर्वतों के निवासी इसकी आंख को तावीज में रखकर मिर्गी के रोगी के गले में लटका देते हैं और इससे भी यह रोग चला जाता है। वह अमेरिकन युवतियां जो भेडिये की खाल को रखती हैं वह सौंदर्य के साथ स्वास्थ्य को भी पाती हैं।

कहा जाता है कि भेडिये के मूत्र की गन्ध में विशेष गुण है कि अगर स्त्री भेडिये के मूत्र पर मूत्र करे तो उसकी गर्भोत्पादक शक्तियां नष्ट हो जाती हैं। वह बांझ होजाती है। स्त्रियों के उत्पादक शक्ति क्षीण करने के साथ भेडिये का विशेष सम्बन्ध है, भेडिये के दायें वृष्ण को जैतून के तेल में लाल करके स्त्री योनि में धारण करे तो बन्ध्या हो। भेडिये का अण्ड शुष्क करके पहाड़ी लोग निमोनिया, दर्द, ज्वर, पार्श्व पीडा में प्रयोग करते हैं।

युनानी चिकित्सकों ने यकृत रोगों की श्रेष्ठ माजून अनानासिया में भेडिये के यकृत को डालना लिखा है। काफिरस्तान के लोग भेडिया के यकृत को यकृत रोगों में प्रयोग करते हैं। वह इसे ज्वर, जलोदर, और बारी के ज्वरमें भी सफलता से देते हैं। वालचर रोग पर वह इसकी चर्बी लगाते हैं।

भेडिया का पित्ता आंख में डालने से रतौंधी

और खाने से ब्लडप्रेशर को ठीक करता है। शहद में मिलाकर शिश्न पर लेप करने से तिलाये मुलजिज का असर करता है। यह खाने पर कामोत्तेजना भी लाता है। मलने से झटके लगना, मिर्गी, पक्षाघात को लाभ करता है। पहाड़ों में लोग नजला होने पर नाक में डालते हैं। पित्ते को योनि में धारण करने से गर्भवती नहीं होती। नाक में डालने से बच्चों को मिर्गी रोग नहीं होता। भेडिया नर का पित्ता खाने से लड़का और मादा का पित्ता खाने से लड़की होती है।

हिमालय की पहाडियों में रहने वालों के निकट भगवान ने उनकी विशेष अवस्था को ध्यान में रखकर भेडियों को पैदा किया कि वह उसके शरीर अंगों से अपनी सर्व चिकित्सा सम्बन्धी आवश्यकताओं को पूरा कर सकें।

गीदड़

गीदड़ नीचे के देशों में ५००० फुट की ऊंचाई तक और ऊंचे स्थानों में १०,००० फुट की ऊंचाई तक पाया जाता है। शास्त्र कहता है कि स्त्री शृंगाल हीन वीर्य होती है।

उन्माद और अपस्मार रोगों में मांस भोजन के बाद इसका मांस खाने से लाभ होता है। गीदड़के रक्त और चंदनको मिलाकर तेजनोदक बना लिया जावे तो इससे विष कन्याके गुह्य अंगको धो देने से उसका विष प्रभाव दूर होजाता है। सैप्टिक व्रणों और कैंसर आदि व त्वचा रोगों पर भी गीदड से निर्मित योगों से लाभ उठाया जा सकता है।

गीदड़ के शिकारी जब इसका शिकार करते हैं तो दो चीजें वह सुरक्षित रख लेते हैं एक इसकी त्वचा और दूसरे इसकी वसा। त्वचा को ठीक करके वह इसके दस्ताने और पोस्तीने बनवा लेते हैं और वसा दर्दों पर मालिश के लिए रख लेते हैं। गीदड़ की वसा की मालिश को दर्द दूर करने में विशेष स्थान है, जब वातनाशक तेलों से लाभ न हो रहा हो तो अवश्य इसका प्रयोग कीजिये।

लूमड़ी

लूमड़ी का शिकार अधिकतर उसकी मुलायम खाल के लिए किया जाता है। लूमड़ी मांस रस को लाल शाली के भात के साथ खाना अर्श में पथ्य कहा गया है। भावप्रकाश के एक वातनाशक तेल में लूमड़ी मांस डाला गया है। चर्म भस्म अर्श पर लगाने के लिए अच्छा पौडर है। भैषज्य रत्नावली में लूमड़ी मांस से साधित घृत को उन्माद रोग में हितकर बताया गया है।

युनानी मतानुसार इसका मांस वात कफ प्रकृति वालों के लिए बहुत बढ़िया है। इससे सम्भोग शक्ति बढ़ती और जलोदर दूर होता है। आज कुष्ठ चिकित्सा के लिए संसार में प्रयत्न हो रहा है। करोड़ों पौंड अमरीका इसकी चिकित्सा जानने के लिए रिसर्च पर व्यय कर रहा है और युनानी चिकित्सकों का कथन है कि लूमड़ी मांस के भोजन से कुष्ट को आराम होता है। लूमड़ी का रक्त भी बन्दर रक्त की तरह गंज पर लगाने से बालों को उगाता है। लूमड़ी का पित्ता मद्य में मिलाकर पिलाने से तिल्ली का दर्द दूर होता है। शहद के साथ पित्ता खाने से दमा खांसी दूर होते हैं। नाक में टपकाने से मिर्गी का दौरा नहीं होता। शहद में मिलाकर पीने से अपानवायु निकल जाती है। लूमड़ी के पित्ते और वृष्णों में भेड़िये के पित्ते और वृष्णों के सर्व गुण हैं। लूमड़ी के दांतों को तावीज की तरह पहरने से मिर्गी नहीं होती।

लूमड़ का कान भी विशेष गुण रखता है। कण्ठमाला पर बांधने से लाभ करता है। लूमड़ की वसा दूसरा प्राकृतिक महानारायण तेल है, प्रत्येक प्रकार की पीड़ा दूर करती है।

"सिद्ध शाल्मली रसायन"

(शास्त्रीय योग का चमत्कार)

(लेखक—आचार्य श्री श्यामदास प्रपन्नाश्रमी 'पीयूष पाणि')

निर्माण विधिः—

भूमि-कुष्मांड, शतावर, शीतल चीनी, नीम का गिलोय, क्रौंच का बीज, बीज ताड़क, श्वेतचन्दन, आम केशी, जामुन के बीज, तालमखाना, तालमूली, कोकिलाक्ष कृष्ण तुलसी मूल १-१ तोला लें। अलग-अलग पीस कूट खूब बारीक चूर्ण बनालें। इसके साथ तेरह सिमूल मूल (सेमर की जड़–यह छोटे २, साल दो साल वाले पौधों से लेना चाहिये) छाया में सुखाकर खूब कूट पीस कपड़छान करलें, बंगभस्म १३ रत्ती, कृष्णाभ्रक भस्म ५ माशे, लोह भस्म १३ रत्ती, स्वर्ण भस्म ६॥ रत्ती, चीनी २६ तोले, गाय का घृत २॥ तोला। बर्तन में घी डालकर मन्दी आंच पर चढ़ा दें काष्ठौषधियों को उसके साथ अच्छी तरह जकड़ लेने पर चीनी की सीरा बना उसमें मिलावें। गुटिका-निर्माण विधि पाक होने पर भस्में डाल एक साथ घोटलें। मात्रा पूर्ण आयुवालों के लिए डेढ माशे से तीन माशे तक प्रत्यह प्रातःकाल में छटांक भर गर्म दूधके साथ सेवन करना चाहिए। इसका सेवन कमसे कम ४५ दिन तक लगातार किया जाय तो निम्नलिखित रोगोपसर्ग निश्चित रूप से विनष्ट हो जाते हैं।

मूत्र संस्थान–दुग्धवत् मूत्र का आना, मूत्र का परिमाण अधिक होना खासकर रात्रिकालीन अधिक होना, मूत्र का तलछट, रक्त आदि तथा प्रातःकालीन मूत्र त्याग में बिन्दुपात होना, लालावत मूत्र, साबूदाना की रांधी हुई जैसा मूत्र का आना आदि मूत्रयन्त्र सम्बन्धी पीड़ाओं का यावतीय विकार नष्ट होते हैं।

पुरुषों की जननेन्द्रिय

मल-मूत्र त्यागकालीन तरह २ के स्राव, धातु स्राव, अतिशय स्वप्नदोष, मैथुनोपरान्त निर्बलता, अण्ड कोष की विवृद्धि, उस पर शोथ लिंग मुण्ड और उसकी खाई पर कण्डूयन, उद्भेद आदि निकलना आदि पर अव्यर्थ फलप्रद हैं।

स्त्री-जननेन्द्रिय

प्रचुर परिमाण में घन क्लेद के समान आर्त्तव स्राव, श्वेत प्रदर, योनि-कण्डु, कन्द रोग, धातु पीड़ा, डिम्बकोष व जरायु का उपसर्ग, जरायु-जनित क्लेद कफ रक्तादि स्राव पर अव्यर्थ है।

उदर-विकार

क्षुधाहीनता, अम्लाजीर्ण, विदग्धाजीर्ण, शूल, कण्ठदाह, पाकाशयगत वायु की ऊर्ध्वगति, उदरांध्मान, अंत्र-सूजन, बिवमिषा, विवन्धता, अर्श का विकार आदि पर अत्यन्त गुणदायक है।

मोटे तौर पर मूत्र त्याग कालीन यन्त्रणा और यावतीय स्राव, वीर्यक्षय, बहुमूत्र, सोमरोग, शिरोभ्रम, शिरघूर्णन, अनिद्रा, औपसर्गिकमेह (गनोरिया), जननेंद्रिय की शिथिलता, उसकी खर्बता-बक्रता नष्टार्तव, रजोविकार, वन्ध्यादोष आदि पर इसका प्रभाव अकथनीय है। तीन सप्ताह के सेवनसे वीर्यविकार पर काबू पाना आसान है। ध्वजभंग आदि रोगों पर यह चमत्कार दिखाकर कामांगों को सफल व कार्यक्षम बना देता है। हतोत्साह रोगियों को इस अमृततुल्य सुलभ स्वल्प मूल्य से उपलब्ध होने वाला शास्त्रीय योग का सेवन करना अवश्य कर्तव्य है। जो रोगी मूल्यवान रस रसायनादि के सेवन से लाभान्वित नहीं हुए उनको मैं इस मृदु वीर्य योग की शरण लेने की सलाह देता हूँ। २७ वर्ष के अनुभव से मुझे यह एक अनमोल ज्ञान प्रदान करने वाला सिद्ध कर दर्शाया।

रत्नों के साथ तुलने वाली अनुपम पुस्तकें

४० से अधिक आयुर्वेदीय पुस्तकों के रचयिता प्रसिद्ध लेखक व चिकित्सक राजवैद्य डा० गणपतिसिंह वर्मा द्वारा रचित व प्रकाशित—यह वही पुस्तकें हैं जिनकी वैद्य, हकीम, डाक्टर और जनसाधारण मुक्तकंठ से प्रशंसा कर रहे हैं। जिनके विषय में देश के गणमान्य लोगों की सम्मति है कि इन पुस्तकों का प्रत्येक घर में होना आत्यावश्यक है। क्योंकि इनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक स्थान में सहसा हो जाने वाले रोगों का सरलतापूर्वक इलाज कर सकता है। प्रत्येक पुस्तक के कई २ संस्करण हो चुके हैं जो कि इनकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है।

अनुभूत योग चिन्तामणि

इसके लेखक ने ५ वर्ष तक लम्बी २ यात्रायें करके संन्यासियों की कठिनतम सेवा और भ्रमण के अथक परिश्रम के अतिरिक्त ५४२५ रुपये खर्च करके जो ५३३ जादु असर अनुभूत नुस्खे प्राप्त किये थे वह निष्कपट भाव से इस पुस्तक में प्रकाशित कर दिये हैं। भारतवर्ष के सैंकडों वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों ने इन सब नुस्खों की पचासों बार परीक्षा करके शत प्रतिशत अनुभूत होने के प्रमाणपत्र दिये हैं। जिससे सिद्ध होगया है कि इसमें एक भी ऐसा योग नहीं—जो अनुभूत सिद्ध न हो, सबके सब संन्यासियों के हृदय के गुप्त योग हैं। भारत के गणमान्य हकीमों व वैद्यों का निर्णय है कि जिसके पास यह पुस्तक नहीं, निःसन्देह उसकी चिकित्सा और औषधालय अधूरा है। मूल्य प्रथम भाग पांचवीं आवृति ४।) द्वितीय भाग ४) डाकखर्च जुदा।

१५ वर्ष के कठिन परिश्रम का फल

अनुभूत योग प्रकाश

आज से १५ वर्ष पूर्व जिस पुस्तक को प्रकाशित करने का आयोजन प्रकाशित किया गया था वह पुस्तक अब छपकर तैयार होगई है। इस पुस्तक के योगों के विषय में केवल इतना बतला देना ही काफी होगा कि गत १५ वर्ष के सतत उद्योग से बड़े २ साधु, महात्मा, फकीरों, भीलों से लेकर राजा, रईसों तथा ख्यातिवान प्रसिद्ध विद्वान वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों के उन अनुभूत चमत्कारी योगों को इस पुस्तक के पृष्ठों पर अंकित कर दिया है—जिनको आज तक जमाने की हवा भी न लगी थी। फिर इसके लेखक डा० जी० एस० वर्मा का नाम ही बड़ी जमानत है कि पुस्तक कैसी है। इसमें सबसे बड़ी वह रिसर्च आपको मिलेगी जिसे आज तक आपने सुना भी न होगा अर्थात समुद्रीय द्रव्यों यथा मुक्ता शुक्ति, प्रवाल, शंख, कपर्दिका आदि का तेल बनाना। इन तेलों की तुलना में इन द्रव्यों की भस्में बहुत तुच्छ लाभ पहुँचाती हैं। इन तेलों से अनेक कष्टसाध्य कहे जाने वाले रोग शीघ्र मिट जाते हैं। दूसरी विशेषता यह है कि इन तेलों से उड़ने वाले सभी द्रव्य यथा पारद, हिंगुल (शिंगरफ) आदि स्थाई होजाते हैं। इस पुस्तक में कोई ऐसा रोग नहीं छोड़ा जिस पर अनुभूत सिद्ध योग न छपा हो। मूल्य ६।) डाकखर्च ॥।≈)

इन्जेक्शन बनाना व लगाना सीखो

इन्जेक्शन चिकित्सा तत्काल प्रभाव दिखाने वाली होने से आज लोकप्रिय हो रही है, किन्तु वैद्यों, हकीमों को इसकी जानकारी न होने से उन्हें बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। इन्हीं भावों से प्रेरित होकर यह पुस्तक तैयार की गई है, जिसमें समस्त रोगों की चिकित्सा आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक और एलोपैथिक इन्जेक्शनों द्वारा ही करना बतलाया गया है। रोगशीर्षक के नीचे क्रमशः प्रत्येक रोग के तीनों प्रकार के इन्जेक्शन ऐसे ढंग से लिखे गये हैं कि जिससे चिकित्सक एक क्षण में निश्चय कर सकता है कि कौनसा इन्जेक्शन किस स्थान पर, कितनी मात्रा में, कितने अन्तर से, किस प्रकार लगाना चाहिये और साथ २ इन्जेक्शन बनाने की विधि भी लिखदी गई है। आयुर्वेदिक इन्जेक्शन जिन द्रव्यों से बनाये जाते

हैं वह तमाम आपके घर में, खेतों और जंगलों में सर्वत्र मिल सकते हैं। एक-एक रोग पर कई २ इन्जेक्शन बनाने के योग लिखे गये हैं। इसके अतिरिक्त सीरम, वैक्सिन, पेनिसीलीन, विटामिन्स के इन्जेक्शनों का वर्णन और उनको लगाने की सरल व निरापद सचित्र विधि भी खूब समझा कर लिखदी गई है। इस पुस्तकको पढनेके बाद इन्जेक्शनोंके विषयमें जाननेको कुछ भी शेष न रहेगा और सब प्रकार के इन्जेक्शन तरल (लिक्विड) टेबलेट व पौडरादि रूप में बना व लगा सकेंगे। मूल्य ५) डाकखरच ।॥-)

सिद्ध रसायन

रस-रसायन की जिन कठिन क्रियाओं से वैद्य बन्धु घबराकर उनके दिव्य गुणों से वंचित रह जाते हैं, उन क्रियाओं का लम्बा अनुभव करके विद्वान लेखक ने उनका सरल तरीका इस ग्रन्थ में दर्शाया है और साथ ही महान रसायनाचार्य नागार्जुन और अन्य सिद्धों की संचिकाओं के अज्ञात योगों को उनकी गुत्थी सुलझाकर प्रकाशित किया है जिनसे पाठक न केवल काय (काया-कल्प) रंगने में ही सफल होंगे बल्कि स्थिर मति वाले माया (कीमिया) रंगने में भी सफल होंगे। इस प्रकार पाठकों को जहां आर्थिक संकट से मुक्ति मिलेगी वहां असाध्य समझकर छोड़ दिये जाने वाले रोगों के वे सिद्धहस्त चिकित्सक भी बन जावेंगे। इस पुस्तक के कुछेक योगों का दिग्दर्शन करा देने से आपको अनुमान हो जायगा कि यह कितना अपूर्व ग्रन्थ है। यथा–शुद्ध बद्ध और सिद्ध करने वाली दिव्य औषधियां, औद्भिदाम्ल व बूटियां, रस बन्धन, गन्धक को स्थाई करना, बद्ध पारद को सिद्ध बनाना, रजत रंजन (कीमिया) अभ्रक सत्व की द्रुति, द्रुति से पारद बन्धन, बंग स्तम्भन, पारद भस्म रक्तयोगेन ताम्रोद्धार (कीमिया) तांबा और रजत (चांदी) वेधी सिद्ध हरताल, हरिताल कल्प देह व लौह वेधी, सिद्ध हरिताल; तैल, सिद्ध कुचला कल्प, सर्वरोग हर फिटकड़ी रसायन (कल्प) पुरुषों के गोप्य रोगों पर रामबाण सिद्ध खादक, पारद गुटिका बंगवेधी, शिंगरफ मोमिया बनाना, नौसादर तैल, सिद्ध गोरखी जलमुद्रा, सिद्ध गन्धक–एक गिरनारी महात्मा का योग जिसको बनाना अति सरल है और क्षय (T. B.) संग्रहणी

जैसे अनेक भयंकर रोगों का सफल इलाज है। इसमें अन्य पुस्तकों की भांति जोड़-तोड़ कर एक[illegible] हुई सामग्री नहीं है बल्कि लेखक के जीवन [illegible] अनुभव बन्द किया है। इसके पाठकों के लिए [illegible] का सद्परामर्श और सहायता भी सदैव प्रस्तुत [illegible] मूल्य ५) पो० ।॥)

संन्यासियों की चमत्कारी गुप्त बूटि[illegible]

इस पुस्तक में सैंकड़ों ऐसी ही जड़ी-बूटि[illegible] गुप्त रहस्य प्रकट किये गये हैं, जिनकी बदौलत संन्या[illegible] की धाक जमी हुई है। इनमें से अधिकांश बूटियां हैं, जो आपको जंगल, खेत, बागीचों और पंसा[illegible] की दूकानों पर मिल जावेंगी जिनसे आवश्यकता [illegible] पर सिर से पांव तक के समस्त रोगों का इलाज जगह प्रत्येक आदमी आसानी से कर धन और कमा सकता है। इस पुस्तक के पढ़ लेने के बाद [illegible] के पास रोगियों का तांता बंधा रहेगा। विषय [illegible] मुफ्त। ४५० पृष्ठ २ भाग मूल्य ५।) डा० ख० ।॥)

गुप्त योग रत्नावली

इस पुस्तक में डा० नेगी के व निज के बह[illegible] गुप्त योग प्रकाशित किये गये हैं जिनको भारत वर्ष[illegible] कोने २ से तथा अरब, मिश्र और अफ्रीका आदि प्रदे[illegible] के विभिन्न स्थानों में जाकर लेखक ने प्राप्त किये [illegible] मूल्य २।) डा० ख० ।।=)

पेटेण्ट औषधियां व भारतवर्ष

संसार में सबसे अधिक लाभदायक व्याप[illegible] पेटेण्ट औषधियों का है। अमृतधारा और सुधा[illegible] के मालिकों ने १–१ पेटेण्ट दवा के नुस्खे से ला[illegible] रुपया कमाया है। विलायती फर्में एक-एक पेटेण्ट द[illegible] से बेहद रुपया कमा रही हैं। यदि उनकी तरह आ[illegible] भी भारतवर्ष, इंग्लैंड, अमरीका की प्रसिद्ध और सर्व[illegible] प्रिय प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों की बिकने वाली पेटेण्ट औषधियों के नुसखे बिना किसी कष्ट के घर बैठे सीख[illegible] कर साधारण पूंजी से सैंकड़ों रुपये मासिक की स्थाई आमदनी पैदा करना चाहते हैं तो आज ही 'पेटेण्ट औषधियां और भारतवर्ष' नामक पुस्तक की एक प्रति मंगाकर पढ़ें। १९७ योगवाली मूल्य ।॥=)

यौवन के गुप्त रहस्य

लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन वापिस लाने के अनुपम उपाय- पुरुषत्व और जवानी के वह गुप्त रहस्य, जिनको जानने से अशक्ति के ऐसे रोगी जिन्हें किसी दवा से लाभ नहीं हुआ या सैंकड़ों रुपये की दवा खाकर भी निराश बैठे हैं-निःसन्देह सशक्त बन सकते हैं। मनुष्य देह का वह केन्द्र जहां से स्वास्थ्य और यौवन का रस झरकर समस्त शरीर का पोषण करता है, उस केन्द्र को शक्तिप्रदान करने के अनूठे उपाय, जिससे लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन पुनः लौट आता है। पुरुषों के अकथनीय भयंकर रोग बिना दवा सेवन किए ही किस प्रकार नष्ट हो जाते हैं। उर्द्ध्वरेता होने का वह प्रयोग जिससे पुरुष की शक्ति में कमी नहीं आती। रसग्रन्थियों से आश्चर्यजनक दवाइयां बनाने के प्रयोग। हजारों रुपया खर्च करके डा० वोरनाफ की बताई हुई बन्दर की रसग्रंथि लगवाने व आपरेशन का कष्ट सहन किये बिना ही सुगमता से प्रत्येक स्त्री-पुरुष वही शक्ति कैसे प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त पुरुषों के रोगों के संबंध में निदान व ऐसे २ गुप्त प्रयोग इस पुस्तक में दर्ज किये गए हैं, जिनको उपयोग करने वाला पुरुषत्व पर गर्व कर सकता है। मूल्य ३) डाक खरच ।।=)

पैसे-पैसे के चुटकले

यह कोई साधारण योग नहीं है, बल्कि वह गुप्त रहस्य हैं, जिनकी तैयारी पर एक पैसा लागत आती है और मिन्टों में तैयार हो जाते हैं हैं। नुसखों के द्रव्य भी ऐसे हैं जो छोटे से छोटे गांव में भी मिल सकते हैं। फिर विशेषता यह है कि शिर से लेकर पांवों तक होने वाले समस्त रोगों के अचूक अद्भुत चुटकले इसमें लिखे गये हैं। मोतियाबिन्दु, चेचक का फोला, चित्रकूट की प्रसिद्ध दमे की औषधि, निमोनिया, प्लीहा का तीन दिन में इलाज, बवासीर, गठिया, कुष्ट, ज्वर तथा स्त्री-पुरुषों के रोगों के वह रहस्यमय योग भी प्रकट कर दिये हैं जिनके जोरदार विज्ञापन प्रचारित हो रहे हैं। इस पुस्तक को पास रखने पर साधारण व्यक्ति भी नामी वैद्य बन सकता है और वैद्य तथा हकीम प्रसिद्धि प्राप्त कर सकते हैं। मूल्य ३) डाकखरच ।।।)

फलों द्वारा अनुभूत चिकित्सा

यह अनुभव द्वारा सिद्ध हो चुका है कि फल केवल पथ्य या स्वल्पाहार के लिए ही नहीं हैं बल्कि इनमें रोगनाशिनी शक्ति सब प्रकार की औषधियों से कहीं बढ़कर है। 'फलों से इलाज' पुस्तक में तीस चोटी के चिकित्सकों की अनुभूत चिकित्सा पद्धति प्रकाशित की गई है—जिनसे नजला, जुकाम, दिमाग की कमजोरी, नींद न आना, दृष्टिमांद्य, पायोरिया, दमा, मन्दाग्नि, अजीर्ण, कब्ज, संग्रहणी, जिगर की खराबी, मधुमेह, गठिया, ज्वर, क्षय, मोटापा, दुबलापन, हृदय की कमजोरी, प्रमेह, अशक्ति, स्नायुदौर्बल्य आदि साधारण और जीर्ण तथा कठिन रोगों का इलाज आप सर्वत्र मिलने वाले सुमधुर और स्वादिष्ट फलों द्वारा घर में ही कर लिया करेंगे। इसी प्रकार स्त्रियों के आजकल के प्रचलित सभी रोगों एवं बालकोंके विभिन्न २० रोगों की चिकित्सा फलोंसे करना, तथा फलों द्वारा कल्प तक करना भी बताया गया है। इस अनुभूत चिकित्सा पद्धति में औषधोपचार से अधिक समय भी नहीं लगता और न खर्च ही अधिक पडता है। चिकित्सकों व सद्गृहस्थों के लिए समान उपयोगी है। मू० सजिल्द ३।) पो० ।।।=)

हिन्दी से अंग्रेजी मैट्रिक

विश्व के ज्ञान, विज्ञान और व्यापार तथा कला-कौशल को सीखने के लिये आज की विश्व भाषा अंग्रेजी का सीखना सबके लिये जरूरी है। इसको सीखना कोई कठिन भी नहीं है। जिस प्रकार अंग्रेज मातायें अपने बालकों को अपने घरों में ही अंग्रेजी सिखा देती हैं ठीक उसी प्राकृतिक नियमानुसार यह ३२० पृष्ठों की पुस्तक तैयार की गई, जिसे दो घंटा प्रति दिन पढ़ने से केवल हिन्दी पढ़े-लिखे व्यक्ति को भी चार मास में भली प्रकार याद हो जाती है। इसमें ए० बी० सी० डी० से लेकर आवश्यक ग्रामर (व्याकरण) अनुवाद आदि इङ्गलिश की मैट्रिक तक का सब ज्ञान हिन्दी से अंग्रेजी और अंग्रेजी से हिन्दी में ऐसे सरल और सुबोध ढंग से ४८ पाठों में छपा है कि जिससे केवल अंग्रेजी में मैट्रिक की परीक्षा देनेवाले लड़के, लड़कियां निसन्देह पास हो जाते हैं। दसवां संस्करण अभी छपा है। मूल्य ३।) डा० ख० ।।।)

७८६ वर्ष का प्राचीन रस ग्रन्थ

बसवराजियम—हजारों वर्ष पहिले दक्षिण भारत में चालुक्यवंशीय राजाओं का राज्य था। उनके प्रधान मन्त्री रुद्र साम्प्रदायी महान रसतन्त्रज्ञ बसवराज ने सं० १२२५ में इस सिद्ध साम्प्रदायिक अनुपम ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें भगवान रुद्र के अनुयायी बनों में विचरने वाले रसायनाचार्य नागार्जुन, नागबोधि, नित्यनाथ, चर्पटी, कणेरी, पूज्यपाद आदि योगियों का रसज्ञान भरा पड़ा है, श्री गोविन्दपादाचार्य के कथनानुसार शरीर को अजरामर करने में पारे की बराबरी करने वाली न तो कोई जडी-बूटी है और न ही कोई रसायन और भस्म है। पारे में यह बड़े आश्चर्य की बात है कि वह स्वयं मूर्छित होकर रोगी के रोग को दूर करता है और बंधा हुआ होकर मुक्ति देता है तथा अच्छी तरह मरा हुआ दूसरों को जीवन देता है। आज मद्रास प्रान्तीय वैद्यों की जो प्रतिष्ठा यश और कीर्ति सर्वत्र प्रसिद्ध हो रही है वह सब इसी ग्रन्थ के योगों का प्रताप है। यह ग्रन्थ तैलंग भाषा में ताड पत्रों पर लिखा हुआ उपलब्ध हुआ था, जिससे अब तक तैलंग भाषा-भाषी वैद्य ही लाभ उठाते रहे, किन्तु यह जानकर आप अतीव प्रसन्न होंगे कि अब आयुर्वेद बृहस्पति श्री गोवर्धन जी शर्मा छांगाणी के अतुल परिश्रमके फलस्वरूप आज यह ७८६ वर्ष का प्राचीन तैलंग हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ हिन्दी भाषा में भी हमारे द्वारा प्रकाशित हो गया है। इस ग्रंथ के विषय में कहा गया है कि सतयुग में चरक, त्रेता में रसार्णव तथा द्वापर में सिद्ध विद्याभू का महात्म्य है उसी प्रकार कलियुग में बसवराजियम पूज्य ग्रंथ है। इसमें जो निदान, लक्षण प्रत्येक रोग के बतलाये हैं, उनको समझकर इसमें वर्णित योगों द्वारा जो चिकित्सा करेगा, भगवान रुद्र की कृपा से निःसन्देह वह सर्वत्र यश और सिद्धि प्राप्त करेगा। २५ प्रकरणों वाले सम्पूर्ण ग्रन्थ का मूल्य ८॥) डाकखरच १=)

सुगन्धि व्यापार

बाजार में धड़ाधड़ बिकने वाले उत्तमोत्तम सभी सुगन्धित तेलों और भूतनाथ, हिमकल्याण कामिनिया आयल आदि लाखों रुपयों के बिकने वाले पेटेण्ट तथा शास्त्रीय तेलों के बनाने के असली नुसखे और तेल रंगने के देशी व तेलों को सुगन्धित बनाने वाली सुगन्धियां, सेंट बनाना भी इसमें बताया गया है मूल्य १) डाकखरच ।।-)

गुण विधान सीरीज की पुस्तकें

इन पुस्तकों से साधनहीन ग्रामीण चिकित्सक और [illegible] साधारण भी हर समय घर में मिल जाने वाली चीजों और [illegible] के वृक्षों द्वारा सिर से पांव तक होने वाली भयंकर व्याधियों [illegible] सफल चिकित्सा कर सकते हैं।

दुग्ध गुण विधान	१)
अर्क (आक) गुण विधान	१॥
फिटकड़ी गुण विधान	१॥
एकौषधि गुण विधान	१॥ॾ
नीम गुण विधान	।॥ॾ
अरिष्ठक (रीठा) गुण विधान	॥
बबूल गुण विधान	॥
पलाण्डु चिकित्सा	॥
घृत गुण विधान	॥
पीपल गुण विधान	॥
संतरा गुण विधान	।=)
नमक चिकित्सा	)
स्वर्णक्षीरी गुण विधान	॥)
इन्द्रायण गुण विधान	॥)
मधु गुण विधान	१॥)
धतूरा गुण विधान	॥)
नीबू गुण विधान	॥)

पता—रसायन फार्मेसी (३ दरियागंज), पो० बो० ११२५ देहली।

हमारा अन्वेषण कार्य

इस संस्था के प्रवर्तक कवि० डा० गणपतिसिंह वर्मा ने गत २७ वर्षोंमें जिन प्रभावजन्य अज्ञात अनुभूत योगों, द्रव्यों और जड़ी-बूटियों का संग्रह किया है वह चिकित्सकों और जनसाधारणसे अप्रकट नहीं है। तद्विषयक उनके द्वारा लिखी गई दरजनों पुस्तकें और सैंकड़ों लेख इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं। इस चौथाई शताब्दी की निरन्तर खोज और योगों तथा द्रव्यों के अन्वेषण तथा परीक्षण ने रोगग्रस्त मानव को रोगमुक्त करने का नया मार्ग खोल दिया है। जो-जो योग अब तक के परीक्षण में सहस्रों रोगियों पर सफल सिद्ध होचुके हैं उनको ही पेटेण्ट औषधियों का रूप दिया गया है। इनमें अनेक जानी पहचानी और अज्ञात औषधियां हैं जिनके अनुभूत गुणों का विवेचन न शास्त्र में मिलता है और न ही प्राचीन निघण्टुओं और आधुनिक मेटेरियामेडिकाओं में। यह अनुभव का ही फल है। पर ऐसे सौभाग्य की ऐसी देन दुर्लभ होती है जिनके बारे में पहले कुछ नहीं कहा जा सका। नई उपयोगी औषधियों में से अधिकांश का लम्बे तथा गहरे अनुसन्धान के बाद ही पता चला करता है और इस पर बड़ा व्यय हुआ करता है। आधुनिक युग में जिन कुछेक रसायनों को महत्वहीन समझा जाता था—अनेक वर्षों के अनुसन्धान के बाद उनकी उपादेयता का पता चला है। अनुभूत योगों में जो कुछ अद्भुत अचिंत्य शक्ति का परिचय मिलता है उसका पता हेतु से नहीं लगता। उसे प्रभावजन्य समझना चाहिये। प्रस्तुत लघु सूचीपत्र में कतिपय ऐसी ही अनुसन्धानित आयुर्वेदिक पेटेण्ट औषधियों का सार दिया गया है जो वास्तविक अर्थोंमें अनुभूत, प्रमाणित और विश्वासजन्य हैं, जिनके निर्माण में स्वच्छता, द्रव्यों की विशुद्धता, कठिनता से प्राप्त होनेवाली वनस्पतियों की प्राप्ति, योग द्रव्यों की सर्वाङ्ग पूर्णता व निर्माण पद्धति पर पूरा नियन्त्रण रखा जाता है। सभी चिकित्सक व रोगी सन्तोषपूर्वक इन औषधियों पर निर्भर रह सकते हैं। यह औषधियां चिकित्सक को यश दिलाने और रोगी को रोगमुक्त करने में अपूर्व हैं। आपसे प्रार्थना है कि आयुर्वेद का गौरव बढाने के लिए आप इस संस्था की औषधियों को निज प्रयोग में लाकर तथा अधिकाधिक प्रचार करके हमें सहयोग प्रदान करें।

गुणावगुण निर्णय

हमारे यहां से हिन्दी व अंग्रेजी भाषामें 'रसायन' नामक दो मासिकपत्र प्रकाशित होते हैं। इन पत्रों में गुणावगुण निर्णय नामक एक विशेष स्थाई स्तम्भ है। प्रत्येक व्यक्ति हमारी प्रत्येक औषधि का गुणावगुण इस स्तम्भ में छपा सकता है। इसलिए आपसे निवेदन है कि हमारी इन औषधियों के सेवन करने या कराने के बाद जो परिणाम निकले वह प्रकाशनार्थ हमारे पास अवश्य भेजें या लिखकर हमारे एजन्ट को देदें। आशा है आप इस दिशामें सक्रिय भाग लेकर हमारा व अन्य चिकित्सकों तथा रोगियों का पथ प्रदर्शन करते रहेंगे। जिस अंक में आपका निर्णय छपेगा वह आपको मुफ्त भेजा जायगा।

'रसायन' मासिक-पत्र मुफ्त

प्रत्येक ऐसे एजन्ट को जो कम से कम ५०) की औषधियां एक साथ मंगायेगा और प्रत्येक ऐसे ग्राहक को जो कम से कम १५) की औषधियां एक साथ खरीदेगा उनको सालभर मय विशेषांक के 'रसायन' मासिकपत्र मुफ्त भेजा जायगा।

आपका नम्र—
व्यवस्थापक
जी० एस० आयुर्वेदिक रीसर्च प्रॉडक्टस
३, दरियागंज, देहली ७

खालिसा

यह कुछेक गंजनाशक जड़ी-बूटियों द्वारा निर्मित दवा है। सिर की चांद में या दाढी, मूंछ में जहां के बाल उड़कर गंज पड़ गई हो वहां इसको मलने से नये बाल ऊग आते हैं और गंज मिटजाती है। मू० ५) पो० १।)

नाग सुरमा

यह सुरमा रसायनिक प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है। यह सभी नेत्र रोगों में लाभकारी है। दृष्टि-मन्दता, दूर या निकट कम दिखाई देना, तिमिर, धुन्ध, जाला, आंखों से पानी बहना आदि रोगों को नष्ट करके दृष्टि को तेज बना देता है। लगाते ही नेत्रों में ठंडक प्रतीत होती है। ६ माशा की शीशी १।।।) तीन माशा १)

हनीक

इस दवा का प्रयोग आपको मोतियाबिन्दु के आपरेशन के कष्ट से बचा सकता है। प्रारम्भिक मोतिया इससे मिट ही जाता है किन्तु बढा हुआ मोतिया आगे बढने नहीं पाता तथा निरन्तर कई मास लगाते रहने से आराम भी हो जाता है। मूल्य ५)

दन्तद्युति मंजन

यह मंजन मसूढे फूलना, दन्त पीडा, पानी लगना, मैल जमना, खून जाना, मुख में दुर्गन्ध आना आदि अनेकों रोगों को दूर करके दांतों को स्वच्छ चमकदार बनाता है। लगाने के बाद मुख से सुगन्धि आने लगती है। मूल्य ।।)

चवसोमला

दमा के लिए यह परीक्षित दवा है। इसका प्रभाव श्वास प्रणाली और स्वरयंत्र पर होता है। इसके सेवन से नाडी मण्डल की उत्तेजना शान्त होकर श्वासनलिकाओं का प्रसार होता है जिससे रोगी सुख का सांस लेता है और उसका कष्ट दूर हो जाता है। पूरा कोर्स समाप्त हो जाने के बाद श्वासनलिकायें पूर्ण स्वच्छ और फेफड़े पुष्ट हो जाते हैं। फिर कभी दमा का दौरा पड़ने का भय नहीं रहता। मूल्य ५)

पायोगन

यह पायोरिया की सफल दवा है। इस दवा को दांतों पर मलकर ५ मिनट लगा रहने दो और फिर कुल्ला कर डालो। इस प्रकार कुछ दिन लगाने से मसूढों का गला हुआ मांस भरने लगेगा, पीप और रक्त का बहना बन्द होकर हिलते हुए दांत मजबूत हो जाते हैं। मूल्य २।।)

कफ कर्श

यह नई और पुरानी हर प्रकार की खांसी में लाभदायक है। इसके सेवन के कुछ ही देर बाद धसक में आराम होने लगता है और कुछ दिन सेवन करने से पूरा आराम होजाता है। मूल्य १)

दिलावरी

इस दवा का प्रभाव हृदय और फेफड़ों पर होता है जिससे हृदय की धड़कन, कमजोरी, शूल, शिथिलता, दाह, घबराहट, तृषा, आदि दूर होकर हृदय तथा मस्तिष्क ताजा और पुष्ट हो जाता है। मूल्य ५)

लीवर शर

यह दवा यकृत सम्बन्धी सभी रोगों के लिये हितकर है। लीवरसार युक्त इस दवा के सेवन से शरीरिक मानसिक कमजोरी, यकृत दुर्बलता, श्याम और पीत पाण्डुरोग, हाथ पांव की सूजन, सांस फूलना आदि विकार मिटते हैं। मूल्य २।।)

मलना

यह नव आविष्कृत कैपशूल हैं। ६ कैपशूल के सेवन से मलेरिया बुखार निश्चित रूपसे दूर हो जाता है। टाइफायड और क्षय को छोड़कर बाकी सब प्रकार के ज्वरों को दूर करने की क्षमता इसमें है। कीनीन या आर्सेनिक आदि किसी विष का मिश्रण इसमें नहीं है इसलिए ऐसी औषधियोंसे उत्पन्न होनेवाले दुष्प्रभाव भी इसमें नहीं हैं। सर्वथा निर्दोष, मलेरिया और सभी प्रकार के ज्वरों की निर्दोष दवा ६ कैपशूल ।।) तथा ३६ कैपशूल का पैकिंग २।।)

कोलरास

हैजा की प्रत्येक दशा में इसके सेवन से लाभ हो जाता है। अब तक के परीक्षण में अद्भुत लाभकारी सिद्ध हुई है। प्रति वर्ष हजारों रोगी इसके सेवन से स्वास्थ्य लाभ करते हैं। मूल्य १।) मात्र

ग्रहणी शाल

नई संग्रहणी में इसको ७ दिन सेवन करने से ही पूरा आराम हो जाता है। ३ मात्रायें सेवन करते ही इसका विशिष्ठ गुण दृष्टीगोचर होने लगता है। पुरानी संग्रहणी में २ से ३ सप्ताह सेवन करना आवश्यक है। एक सप्ताह की दवा का मूल्य ३)

स्वर्णजल

संग्रहणी रोग की यह सर्वश्रेष्ठ अव्यर्थ अमीरी दवा है। यह स्वर्ण योग है जिसमें स्वर्ण को प्रमाण रूप में लाकर जल में घुलनशील बनाया जाता है। १० दिन की ३० मात्रा का मूल्य १५)

नियन्त्रक

यह लगाने या रखने की दवा नहीं है, बल्कि खाने की निर्दोष दवा है। इसको सेवन करने के बाद फिर गर्भ नहीं रहता। परीक्षण में श्रेष्ठ और सफल सिद्ध हुई है। मासिक धर्म प्रतिमास नियमित होता रहेगा, शरीर पुष्ट बनेगा। स्वास्थ्य पर किसी प्रकार का कुप्रभाव नहीं। मूल्य ५) डाकखरच १।)

ल्युकोआयर

इस दवा के सेवन से नया श्वेत और रक्तप्रदर ६ दिन में ही मिट जाता है, साथ ही हडफूटन, कमर का दरद; उदासी आदि व्याधियां दूर होकर रुग्णा स्त्री स्वस्थ और पुष्ट बन जाती है। ६ दिन की दवा का मूल्य २) यदि रोग पुराना हो तो ४ शीशी सेवन करना चाहिये। एक शीशी से चार शीशी तक का डा० ख० १।)

डायबोडीन

इक्षुमेह, मधुमेह (डायबीटीज) प्रसिद्ध और भयंकर रोग है और इस रोग की यह दवा विश्वास जनक चिकित्सा है। डाक्टरी में इन्सुलीन के इंजेक्शन काम चलाउ इलाज है इससे रोग नहीं मिटता। जब रोग बहुत बढ गया हो तो इससे सहायता ली जाती है किन्तु रोग को निर्मूल करनेके लिए "डायबोडीन" का सेवन परमावश्यक है। यह दवा १० दिन में अपना असर दिखा देती है और २० दिन के सेवन से सुगर-नार्मल के बराबर हो जाती है। दो मास सेवन से रोग समूल नष्ट हो जाता है। यह नवीन खोज की गई वनस्पतियों के परीक्षण का सफल परिणाम है। मूल्य पूरा कोर्स २४) परीक्षार्थ आधा कोर्स १२) डाकखरच जुदा।

वृक्कोल

गुर्दे की चाहे जैसी घोर पीड़ा हो, इस दवा के सेवन से १५ मिनट में ही चैन पड़ जाता है और दूसरी तथा तीसरी मात्रा से पूर्ण आराम हो जाता है। मूल्य १॥) मात्र

पूंगी (सुपारी) पाक

इस अति स्वादिष्ट पाक के सेवन से स्त्रियों के समस्त प्रकार के रोग यथा प्रदर, कटिपीड़ा, योनि रोग, गर्भाशय च्युति, आलस्य और शिरदरद समूल नष्ट हो जाते हैं। इसके सेवन करने से किसी बीमारी का भय नहीं रहता और एक मास सेवन करने से पुरानी बीमारियां दूर होकर स्त्री के स्वास्थ्य और सौंदर्य में चार चांद लग जाते हैं। यह विशेष पद्धति से बनाया जाता है अतः अन्य सुपारी पाकों की भांति कटु और पौडर रूप में नहीं है बल्कि बर्फी की शक्ल में है जिसे कोमल से कोमल प्रकृति की स्त्री भी प्रसन्नतापूर्वक सेवन कर लाभ उठा सकती हैं। कीमत एक पौंड ५) डाक पैकिंग खर्च १।॥–)

जी० एस० आयुर्वेदिक रीसर्च प्रॉडक्टस ३ दरियागंज, देहली ७

बुधान

अधिक मानसिक परिश्रम, चिन्तन, अध्यापन या किसी अकथनीय कारण से जिनका दिमाग कमजोर होगया है, स्मरणशक्ति घट गई है, हृदय दुर्बल होगया है, सिर में हल्का २ दरद और थकावट रहती है उनके लिए 'बुधान' बहुत लाभदायक है। इसके सेवन से उपरोक्त दोष मिट जाते हैं। दिमाग पुष्ट होकर स्मरण-शक्ति तीव्र होजाती है। इससे उन्माद तक के रोगियों को लाभ हुआ है। बुद्धिजीवी लोगों के लिए वरदान स्वरूप है। मूल्य ४) डाकखरच १।)

केशिनी

यह तैल दिमागी कमजोरी, थकावट और सिर दरद को दूर करता है। दिमाग को ताजा और ठंडा रखता है, खुजली, भूसी को दूर करके झड़ते बालों को रोकता है। कुछ दिन निरन्तर लगाते रहने से गंजापन और बालों का सफेद होना रुक जाता है। कुछ विशेष केश टानिक जड़ी-बूटियों के रसों को विशेष पद्धति से पचाया जाता है, जलाया नहीं जाता जिससे बूटियों के सब तत्व तेल में अक्षुण रहते हैं और अपना पूरा प्रभाव करते हैं। मूल्य ४ औंस १।।) एक पौंड ५।)

टंकरोल

दो दिन में इसकी ६ मात्राओं के सेवन से जुकाम (प्रतिश्याय) ठीक होजाता है। दो खुराक खाने से ही शिर का भारीपन, छींकें आना, नाक से पानी बहना आदि दूर होजाता है। इसका प्रभाव श्लेष्मकला पर होता है। २४ मात्रा की शीशी का मूल्य १) छः मात्रा का नमूना ।=)

नेत्राण

आंखों का दुखना, नेत्र पीड़ा, लाली, जलन, खुजली, सूजन, कीचड़ आना तथा अन्य नेत्र रोगों में परम लाभकारी है। दो बून्द नेत्रों में डालते ही ठंडक पड़ जाती है और २-४ दिन डालनेसे आराम होजाता है। वैसे ही कभी २ डालते रहने से नेत्र साफ रहते हैं और कोई रोग नहीं होने पाता। मूल्य ।।)

हमारी प्रसिद्ध भस्में

नाम भस्म	५ तो०	१ तो०
अकीक भस्म नं० १	१३।।)	३)
वज्राभ्रक भस्म ६० पुटी	१४)	३)
अभ्रक भस्म (२१ पुटी)	६।।)	१।)
कान्तलोह भस्म (र० रा० सु०)	४)	१)
कांस्य भस्म आ० प्र०	४)	१)
कपर्दिका भस्म आ० प्र०	१)	।)
कुक्कुटांडत्वक् भस्म वै० मृ०	५।।)	१।)
जहर मोहरा भस्म	१३।।)	३)
ताम्र भस्म (र० रा० सु०)	८)	२)
त्रिवंग भस्म आ० प्र० १२ पुटी	७)	१।)
नाग भस्म पीत वृ० यो०	३।।)	१)
नीलम भस्म र० क० उन्मादे		२५)
प्रवाल भस्म अग्निपुट आ० प्र०	६)	१।=)
प्रवाल भस्म चन्द्रपुटी फा० वि०	६)	१।=)
पुखराज भस्म हृदय, मस्तिष्क रोगे		२०)
फौलाद भस्म अपूर्व शक्तिवर्धने		१८)
बंगभस्म श्वेत र० रा० सु०	६।)	१।।)
मण्डूर भस्म र० रा० सु०	२)	।≡)
मृगशृंग भस्म शा० ध०	१।।)	।=)
माणिक्य भस्म, हृद्रोगे		६)
यशद भस्म यो० र०	३)	।।)
रजत (चांदी) भस्म		६)
रोप्यमाक्षिक भस्म र० का०	३)	।।)
लोहहिंगुल योगेन नं० १, आ० प्र०	८।।)	२)
शंखनाभी भस्म र० का०	१।।)	।=)
संगयशव भस्म यू० वि०	५)	१।)
सीप मोती भस्म र० सु० अग्निपुटी	२।।)	।।=)
स्वर्ण भस्म, रसायने १८) रु० माशा		
स्वर्णमाक्षिक भस्म र० सु०	४)	।।।=)
हरताल गोदन्ती आ० प्र०	१।)	।-)
हिंगुल भस्म लाल, क्लीव रोगे		५)

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा रसायन प्रिंटिंग प्रेस, देहली में छपकर प्रकाशित

रसायन

अगस्त १९५५

वर्ष ८ वार्षिक ३)

अंक २ इस अंक का (=)

सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा. गणपति सिंह वर्मा

विषय-अनुक्रमणिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
लाइलाज (कविता)	श्री० स्वामी पारसनाथ जी	२७
आवश्यक सूचनायें		२८
क्या आप अपना शारीरिक वजन बढाना चाहते हैं	श्री० हरिकृष्णदास डी० गांधी	२६
मधुमेह Diabetes-Mellitus	श्री० गौरीलाल चानना बी० ए० वैद्यवाचस्पति	३४
सेही और खरगोश	श्री० कविराज हरिकृष्ण सहगल	३५
सैन्टोनीन	श्री० अनुकूलचन्द्र दे और रामेश वेदी	३८
देहलावण्य	श्री० हरस्वरूप शर्मा अहमदाबाद	४०

ल्युकोआयर

इस दवा के सेवनसे नया श्वेत और रक्तप्रदर ६ दिन में ही मिट जाता है, साथ ही हडफूटन, कमर का दरद, उदासी आदि व्याधियां दूर होकर रुग्णा स्त्री स्वस्थ और पुष्ट बन जाती है ६ दिन की दवा का मूल्य २) यदि रोग पुराना हो तो ४ शीशी सेवन करना चाहिये। एक शीशीसे चार शीशी तक का डा० ख० १)

नियन्त्रक

यह लगाने या रखने की दवा नहीं है, बल्कि खाने की निर्दोष दवा है। इसके सेवन करने के बाद फिर गर्भ नहीं रहता। परीक्षण में श्रेष्ठ और सफल सिद्ध हुई है। मासिक धर्म प्रति मास नियमित होता रहेगा, शरीर पुष्ट बनेगा। स्वास्थ्य पर किसी प्रकार का कुप्रभाव नहीं। मूल्य ५) डाकखरच १)

मसूरिना

१—यदि साल भर में इसकी केवल २ मात्रा ६ मास से लेकर १५ वर्ष तक के बालक को खिला दी जायं तो फिर बारह मास चेचक निकलने का भय नहीं रहता।

२—घर में किसी बालक को चेचक निकल चुकी हो तो घरके दूसरे बच्चों को तुरन्त इसकी २ मात्रायें खिलादें। फिर उन बच्चोंपर इस रोगका हमला न होगा।

३—जिस आदमी या बालक को चेचक निकली हो उसे तीन दिन तक सेवन कराने से सब दाने निकल आवेंगे, आंख में फूला नहीं पड़ेगा और ज्वर उतर कर शीघ्र स्वस्थ हो जायेगा।

भारतवर्ष में अकेली अनुभूत प्रमाणित दवा जिसकी एक शीशी प्रत्येक बाल-बच्चेदार गृहस्थी के घर में और प्रत्येक वैद्य, हकीम, डाक्टर के दवाखाने में रहना बहुत जरूरी है। १६ मात्रा की शीशी की कीमत २) एक दर्जन २१) रु०।

अग्निस्थाई पारे की गोली

अग्निस्थाई पारे के दिव्य गुणों को प्रायः सभी जानते हैं किन्तु यह दुर्लभ वस्तु है, वर्षों के सतत प्रयास से अब हम इसको बनानेमें सफल होचुके हैं। इस[illegible] को चाहे जितनी तेज आगपर रखो, न उड़ेगा और वजन कम होगा। इसकी गोली को मुखमें रखकर [illegible] जितना परिश्रम करो थकावट बिलकुल न होगी। २-[illegible]भ्यास करने वालों को स्माधिस्थ अवस्था प्राप्त होती[illegible] ३-भजन पूजन में मन एकाग्र होता है। ४—[illegible] गोली को उबालकर पीने से अत्यन्त बल और प[illegible] प्राप्त होता है। अन्य गोपनीय गुण सेवन वि[illegible] पढ़ें। अनेक चिकित्सकों और महात्माओं द्वारा प[illegible] मूल्य २१) डाकखरच १)

पीताम्बर एक महान टॉनिक

यह दवा पर्वतों पर बर्फ में पाई जाने[illegible] एक अत्यन्त शक्तिवर्धक बूटी के योग से बनी[illegible] इसके सेवन से स्त्री-पुरुषों में किसी भी कारण से [illegible] हुई अशक्ति, दुर्बलता, शरीर का दुबलापन, वजन[illegible] जाना, खून की कमी, गहरी नींद न आना, [illegible] और स्फूर्ति का अभाव आदि विकार मिटकर शरीर[illegible] शक्ति सम्पन्न और कान्तिमय हो जाता है, क्योंकि [illegible] सेवन से खून में श्वेत और लाल अणु खूब बढ़ते[illegible] मूल्य एक मास की दवा का १०) पो० १)

नोट—निरामिष भोजी, अविवाहित और वि[illegible] इसके लिए आवेदन न करें।

पूंगी (सुपारी) पाक

इस अति स्वादिष्ट पाक के सेवन से स्त्रि[illegible] समस्त प्रकार के रोग यथा प्रदर, कटिपीड़ा, योनि[illegible] गर्भाशय च्युति, आलस्य और शिरदरद समूल [illegible] जाते हैं। इसके सेवन करने से किसी बीमारी[illegible] नहीं रहता और एक मास सेवन करने से [illegible] बीमारियां दूर होकर स्त्री के स्वास्थ्य और सौं[illegible] चार चांद लग जाते हैं। यह विशेष पद्धति से [illegible] जाता है अतः अन्य सुपारी पाकों की भांति कडु[illegible] पौडर रूप में नहीं है बल्कि बर्फी की शक्ल में है[illegible] कोमलसे कोमल प्रकृति की स्त्री भी प्रसन्नतापूर्वक कर लाभ उठा सकती है। कीमत एक पौंड ५[illegible] पैकिंग खर्च १।।।-)

जी० एस० आयुर्वेदिक रीसर्च प्रॉडक्टस ३ दरियागंज, देहली ७

रसायन फार्मेसी देहली का प्रमुख सचित्र मासिक पत्र
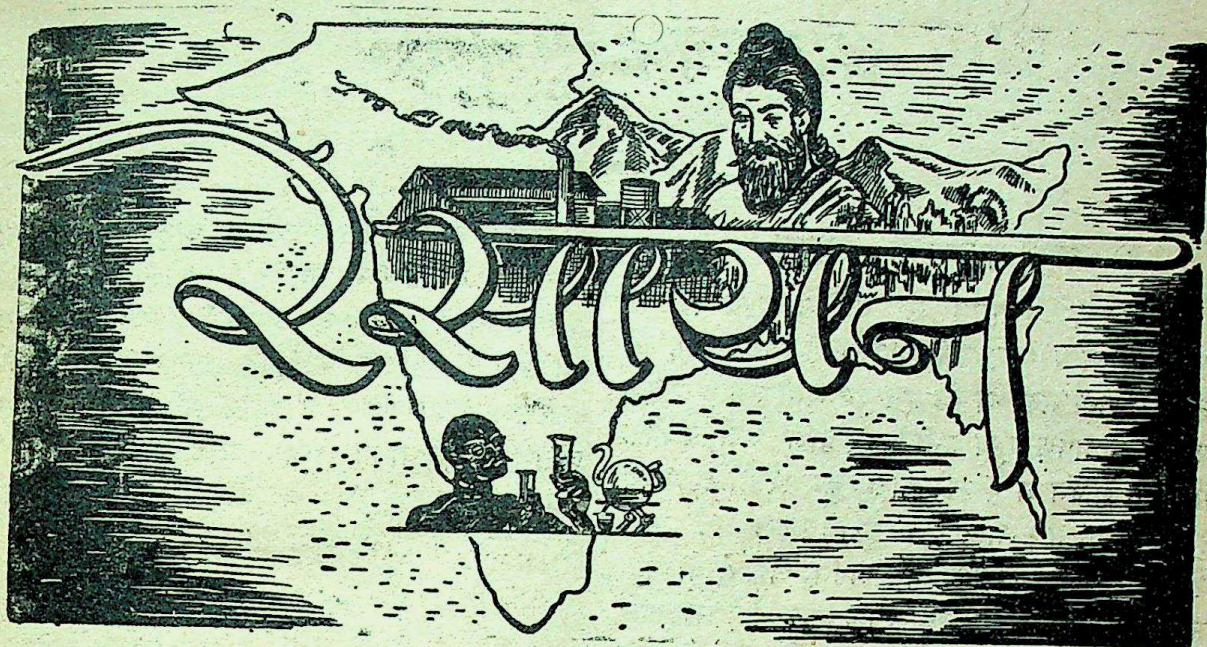
'सिद्ध रसे करिष्यामि, निर्दारिद्र्य मयं जगत् ।'

वर्ष ८	देहली अगस्त १९५५	अङ्क २

❀ लाइलाज ❀

[रचयिता—श्री स्वामी पारसनाथ सरस्वती]

प्रकृति हमारी मात, और वह 'गूंगी' पूरी।
सुन लेती है बात, किन्तु 'उत्तर' मजबूरी ॥
ईश्वर अपना पिता, और वह पूरा 'बहरा' ।
सुनता कुछ भी नहीं, समाधी 'सोता' गहरा ॥
रोगी 'माता-पिता' हैं दुखी इसी से सृष्टि भर।
लाइलाज इस मर्ज की करो चिकित्सा वैद्यवर ॥

आवश्यक सूचनायें

स्थाई ग्राहकों से निवेदन

इस वर्ष 'रसायन' का वार्षिक मूल्य ६) की बजाय आधा ३) करने की घोषणा के साथ २ यह भी निवेदन किया गया था कि इस वर्ष सभी स्थाई ग्राहक अपना २ वार्षिक मूल्य मनीआर्डर द्वारा भेजें क्योंकि वी० पी० भेजने से ३) की छोटी रकम पर भी डाकव्यय ।।) अतिरिक्त लग जाता है। इसलिए इस वर्ष हमने किसी भी स्थाई ग्राहक के नाम अपनी ओर से वी०पी० नहीं भेजा। किन्तु आश्चर्य है कि बहुत थोड़े ग्राहकोंने मनीआर्डरसे वार्षिक मूल्य भेजा। इससे प्रतीत होता है कि या तो उन्होंने इस घोषणाको पढा ही नहीं या ध्यान नहीं दिया, वह शायद वी०पी० की प्रतीक्षा कर रहे होंगे। इसलिए पुनः निवेदन है कि वे सब स्थाईग्राहक जिन्होंने अब तक वार्षिक मूल्य नहीं भेजा है अब मनीआर्डर द्वारा भेजदें या वी०पी० ही मंगाना हो तो पत्र लिखकर मंगालें, आशा है फिर लिखनेकी आवश्यकता नहीं होगी।

निवेदक
प्रबन्धक

नव अनुसन्धानित औषधियां

जैसाकि गत मई मासके अंकमें पृष्ठ २४६-४७ पर 'मेरा भावी प्रोग्राम' छपा था उसके अनुसार नव अनुसन्धानित औषधियों का निर्माण कार्य प्रारम्भ हो चुका है। जितनी औषधियां तैयार हुई हैं उनकी सूची इसी अंक के अन्त में और कुछेक की प्रारम्भ में छपी है। अब मैं अग्निस्थाई पारद की भस्म और स्वर्ण घटित मकरध्वज बनाने के परीक्षण कर रहा हूं। इस मकरध्वज के निर्माण में स्वर्ण भस्म बनकर तली में नहीं रहेगा बल्कि प्रमाणु रूप होकर पारद के साथ ही उड़ेगा। इसके गुण भी विशेषही होंगे। सफलता मिलने पर आगामी अंकों में इसकी सूचना प्रकाशित की जायगी। पाठकों और सभी ग्राहकों तथा चिकित्सकों से नम्र निवेदन है कि वे इन नव अनुसन्धानित औ-धियों को व्यवहार में लाकर व परीक्षण करके मे परिश्रम को सफल बनायें। हम प्रत्येक नगरमें एजंसि भी कायम कररहे हैं। एजंसीके लिए अभीसे आवे पत्र भेज देना उचित है ताकि हमें प्रचार साहि छपाने में सुविधा हो। नवीन औषधियों के लिए प पत्र व्यवहार जी० एस० आयुर्वेदिक रीसर्च प्रॉडक्ट ३, दरियागंज देहली ७ के पते पर ही करें।

फ्लेशटोन

किसी रोगके कारण अथवा भय, शोक, चि अधिक परिश्रम और अत्यन्त साहस का कार्य क से मांस के सेलों की जीवनीय शक्ति क्षीण होकर श सूखने लगता है। ऐसी अवस्था में यह विशेष स्पतियों द्वारा निर्मित औषधि अत्यन्त सफल सिद्ध है। कृश शरीर को मोटा-ताजा मांसल बनाने व व बढाने तथा मस्तिष्क, हृदय और फेफड़ों की निर्ब दूर करने की यह अनुपम औषधि है। किसी भी क से सूखे हुए शरीर की पुष्ट बनाती है। आने रोगों को रोकती है। अन्य औषधि सेवन करते भी शक्ति के लिए इसको अवश्य खाना चाहिये। हुए बच्चे, गर्भिणी स्त्री, तरुण वृद्ध सबके शरीर मोटा-ताजा, मांसल और पुष्ट एवं सुन्दर बनात चेहरे पर लालिमा आजाती है। प्रत्येक प्रकृति को प्रत्येक ऋतु में अनुकूल है। परहेज कोई खाने में स्वादिष्ट। तपेदिक (क्षय) में जब मांस होकर शरीर सूखता जारहा हो और अन्य उपद्रव बढ़ हों उस समय इसका सेवन नवजीवन प्रदान करता दिमागी काम करने वालों के लिए परमोपयोगी मूल्य १ पौंड ६) आधा पौंड ५) डाकखर्च पैकिंग अ

जी० एस० आयुर्वेदिक रीसर्च प्रॉड
३, दरियागंज, देहली ७

क्या आप—

अपना शारीरिक वजन बढ़ाना चाहते हैं ?

[लेखक—श्री० हरिकृष्णदास डी० गांधी, एम० ए०, एन० डी० आयुर्वेद भिषग्वर]

वजन का भूत सहस्रों मानवों को अकारण घबराहट में डाल देता है। वजन के सम्बन्ध में अनेकशः भ्रांत धारणायें बीमा-कम्पनियों के संचालकों डाक्टरों तथा अपनी औषधियों का विज्ञापन (प्रचार) करने वालों ने फैला रखी है। वजन का आरोग्य के साथ विशेष घनिष्ट सम्बन्ध नहीं कौन कह सकता है कि अल्प वजन के मानव स्वस्थ नहीं माने जा सकते? अल्प वजनी मानव मोटे और अधिक वजन वाले मानव की अपेक्षा अधिक आरोग्य सम्पन्न, चपल और उत्साही होते हैं। मोटा मानव शरीर मलवद्धता रोग द्रव्य और विजातीय पदार्थों का कोष बनाकर ही जीवन धारण करता है। जिसके शरीर के सभी अंगों और यन्त्रों की प्रक्रिया सुव्यवस्थित जीवनी शक्ति सपरिमाण और रोग प्रतिकारक शक्ति बलबान हो, वही स्वस्थ मानव है। उनका वजन कितना भी क्यों न हो, किन्तु चिन्ता की बात नहीं, शरीर का वजन कितना होना चाहिए। यह आवश्यक नहीं अपितु आवश्यक यह है कि कैसा होना चाहिये। आज तक इसका अन्तिम निर्णय किया नहीं जा सका कि वजन किस परिमाण तक होना चाहिये। ऊंचाई और वज़न का माप बताने वाले नक्शे गलत और भ्रामक होते हैं। अधिकांश में पाश्चात्य जनसाधरण के लिये ये नक्शे तैयार किये जाते हैं और हम पर भी लाद दिये जाते हैं वजन का निर्णय सामुदायिक रूप से न करके व्यक्तिगत करना चाहिये। क्योंकि वजन का आधार जल वायु, खाद्य, अस्थि-विधान, स्नायुविक संगठन और चरबी पर होता है। विस्तीर्ण और छोटी हड्डी वाला मानव ठिगना होने पर भी अधिक वजनदार होता है और संकुचित तथा लम्बी हड्डी वाला लम्बा होने पर भी वजन में कम होता है। अतएव वजन का आधार व्यक्तिगत होना चाहिये।

सिक्के का दूसरा पहलू

वजन चाहे जितना हो। फिर भी, यह स्वाभाविक स्थिति है, यह मेरा कहना नहीं। जिस प्रकार अधिक वजन खतरनाक है, उसी तरह कम वजन भी एक चिन्तनीय परिस्थिति है। उचित वजन शरीर के स्थायी आरोग्य का बीमा है। स्वास्थ्य की गारण्टी है। शरीर की कार्यकुशलता का प्रमाण है। साधारणतया एक इञ्च ऊंचाई का वजन २ पौंड होना ही चाहिये। अर्थात् ५॥ फीट ऊंचे मानव का वजन १३२ पौंड के आस पास होना उचित है। ४-५ पौंड न्यूनाधिक हों, तो स्वाभाविक मानना चाहिये। स्त्रियों का वजन पुरुषों से कम होता है क्योंकि उनका अस्थि और स्नायु संगठन पुरुषों से भिन्न प्रकार का होता है।

वजन और व्यक्तित्व

रक्त मांस और चरबी आवश्यकता से अत्यल्प होने पर ही मनुष्य अस्थिपंजर जैसा प्रतीत होता है। उनके मुख पर तेज और प्रतिमा के स्थान पर व्यग्रता और शुष्कता के दर्शन होते हैं।

वजन और व्याधि

शरीर का पतलापन जीवन शक्ति की अल्पता का द्योतक है। जीवनी शक्ति मानव के आरोग्य की रक्षा करने वाली स्थायी सेना है। शरीर को परिवर्तित वातावरण, आहार-बहार की भूलें, शरीर धर्म के कुछ आवश्यक नियमों का भंग करने के फलस्वरूप उत्पन्न रोग से जीवनी शक्ति रक्षा करती है। जीवनी शक्ति के अभाव में शरीर की पाचन क्रिया और मज्जा तन्तुओं पर दुष्प्रभाव होता है। चरबी के अभाव में शरीर के कुछ अंग स्थानान्तरित हो जाते हैं। चरबी यदि उचित परिमाण में होती है तो शरीर को शोभा प्रदान करती है, उष्णता और शरीर के कुछ अवयवों को भी अपने स्थान पर स्थिर रखती है।

वजन और मानसिक स्थिति

अल्प वजन वाले मनुष्य उपद्रवी, खटपटी, धांधली मचाने वाले तथा अत्यन्त भावना प्रधान होते हैं। ये लोग शांत चित्त होकर कभी नहीं बैठते। संक्षेप में ऐसे लोगों के ज्ञानतन्तु प्रतिक्षण उत्तेजित दशा में रहते हैं। अतः इस उत्तेजना का प्रशमन करने के लिए ये लोग चाय, बीड़ी सिगरेट आदि दुर्व्यसनों के दास बन जाते हैं और परिस्थिति क्रमशः बिगड़ती जाती हैं।

आहार की भूलें

अपर्याप्त पोषण में हमारी गरीबी नहीं, बल्कि आहार सम्बन्धी हमारा अज्ञान विशेष जिम्मेदार है। अतिपोषण या अपर्याप्त पोषण से वजन नहीं बढता। हम जो आहार ग्रहण करते हैं उसका शरीर में पाचन, शोषण और पोषण होता है। अत्याहार और अति पौष्टिक आहार शरीर की पाचन व्यवस्था को क्षतिग्रस्त कर देता है। जीवनीशक्ति को विशेष श्रम करना पड़ता है। यदि पाचक यन्त्र पौष्टिक खुराक का उचित पाचन कर न सके तो फिर शोषण और पोषण का प्र[illegible] कहां रहा ऐसे मानव के मलके साथ आहार के [illegible] पौष्टिक तत्व बाहर निकल जाते हैं। इन गरिष्ठ [illegible] का निष्काशन करनेमें शरीर को अपनी बहुतसी [illegible] नष्ट कर देनी पड़ती है। ऐसी दशा में ये लोग [illegible] पतले रहें, यह स्वाभाविक है।

अल्पव्यय उचित खाद्य

हम मध्यवित्तीय जन चाहें, तो अल्पव्य[illegible] ही सन्तुलित खाद्य उपलब्ध कर सकते हैं। [illegible] आयोजन में अधिक धन की नहीं, अपितु कुछ [illegible] के साथ काम करने की जरूरत है। हम आ[illegible] खाद्य अधिक परिमाण में लेते हैं। आहार को त[illegible] बघारकर, उबालकर, मिस्मत्व बनाकर ग्रहण करते [illegible] कभी २ तो पर्याप्त अनुचित आहारके फलस्वरूप [illegible] को आवश्यक क्षार, पोषक तत्व आदि शरीर नि[illegible] आहार नहीं मिल पाता। आरोग्यकांक्षियों को [illegible] कि वे जिव्हा पर निर्भर न रहकर इस दिशा में [illegible] बुद्धि से काम लें। भ्रष्ट आहार पाचन व्यवस्था [illegible] विकृत बना देता है। पाचन व्यवस्था के विगड़[illegible] समस्त शरीर की व्यवस्थामें विक्षोप उत्पन्न होजा[illegible] एक बार वह स्थिति उत्पन्न होजाने पर मानव अ[illegible] के दलदल में फंस जाता है। हमारे ९० प्रतिश[illegible] आहारजन्य भूलों के फलस्वरूप पाचन तन्त्र की [illegible] पर ही निर्भर करते हैं।

मानसिक श्रम का अभिशाप

आजकल शारीरिक श्रम का काम घट [illegible] और मानसिक श्रम का काम बढ गया है। [illegible] कीडे, सम्पादक और बुद्धिजीवी अधिकांश [illegible] सम्पत्ति से हीन होते हैं। अति मानसिक श्रम [illegible] भिसरण को अव्यवस्थित करदेता है और ज्ञानत[illegible] में स्थायी क्षोभ उत्पन्न कर देता है। ज्ञानतन्तु[illegible]

होने वाला अनुचित और अत्याधिक दवाव आरोग्य और वजन दोनों की कमी कर देता है, फलतः अनारोग्य और दुर्बलता बढ जाती है।

अकर्मण्य जीवन का पाप

शारीरिक श्रम के अभाव में शरीर में तोडफोड़ की क्रिया नहीं चलती और जहां तोड़फोड़ नहीं, वहां नव निर्माण कहां ? विनाश और निर्माण प्रकृति का अटल नियम है। गति अर्थात श्रमक अभाव में शरीर आहार से चरबी के तत्व को ही ग्रहण करता है और आवश्यक जीवनतत्वों से वंचित रहता है। अकर्मण्य मानव का बड़ा पेट, शिथिल और निस्तेज अंग प्रत्यंग निष्क्रिय स्नायु उसके आरोग्य के दिवाले का ढंढोरा पीटते हैं।

आत्महत्या का कलंक

हम अपने आपके सबसे बड़े शत्रु हैं। अतिशय विषयवासना, स्वप्नदोष, हस्तदोष इत्यादि के द्वारा शरीरके तत्वरूपी वीर्य का विनाशकर क्या हम आरोग्य और दीर्घायु प्राप्ति के अधिकारी हैं ? युवावस्था प्रवेश से पहले ही वीर्य का अधिकाधिक विनाश होने से युवकों का शारीरिक संगठन विकृत हो जाता है। शरीर को क्षतिग्रस्त करने वाली इस प्रकार की कुटेवों के कारण हमारे युवक अल्पतम वजन और उससे उत्पन्न अनेक दुष्परिणामों के शिकार होजाते हैं।

विष का विष

शरीरमें मल संचय होनेसे निर्माण कार्य अवरुद्ध होजाता है। कब्जियत के कारण आंतों में से आहार शोषणकी क्रिया उचित रूपसे नहीं होती। शरीर के सजीव अवयव विषचक्र में फंसकर निष्क्रिय बन जाते हैं। शरीर की जीवनीशक्ति शरीर के संचित विष का निष्कासन करनेमें ही लगी रहती है। फलतः शरीर के नवनिर्माण पुनरुत्थान अथवा जीर्णोद्धार कार्य न होकर शरीर क्रमशः घिसता रहता और क्षीण होता जाता है। जहां शरीर क्षीण नहीं होता वहां रोगाणुयुक्त वजन की बृद्धि होती है। ऐसा वजन वाला मानव एकाएक व्याधि से ग्रस्त होजाता है। बुद्धिमती और दयालु प्रकृति व्याधि द्वारा इन रोगाणुओं का विनाश कर शरीर की सुरक्षा का प्रयत्न करती है। शरीर में विष संचय और रोगद्रव्यों का सम्वर्धन अनेक रूपों में होता रहता है। जीवनी शक्ति का अभाव, पाचन व्यवस्था की विकृति, आहार विषयक भूलें, परिश्रम का अभाव आदि रोग द्रव्यों के वृद्धिकर्ता हैं शरीर में विनाश की अपेक्षा निर्माणकार्य अधिक हो, तभी वजन बढता है अतः वजन बढाने के इच्छुक व्यक्तियों का कर्तव्य है कि वे सर्व प्रथम शरीर को विष संचय करने से रोकें। दूसरा काम क्षतिपूर्ति करने का है और तीसरा काम है नवीन स्नायु, रक्त और चरबी तैयार करने का।

वजन बढ़ाने के उपाय

दुर्बल शरीर किसे पसन्द है ? हम सब हार्दिक इच्छा रखते हैं कि हमारा शरीर सुदृढ, कार्यकुशल और शक्तिसम्पन्न बना रहे। मोटा मनुष्य निश्चयहीन होता है, अतः वह अपना वजन घटाना चाहता है, किन्तु तत्सम्बन्धी आचार पालन नहीं कर पाता। पतला मनुष्य वजन बढ़ाने के लिए अत्यन्त उत्साही कृतनिश्चयी और प्रयत्नशील बनता है। उसका अति उत्साह उसे उतना ही निराश भी बना देता है। प्रयोग के पहले दिन से ही वह तुला पर तौलने लगता है कि मेरा वजन कितना बढ़ गया। वजन कहीं एक ही दिन में बढ़ नहीं जाता। मोटा आदमी सहज ही पतला हो सकता है, किन्तु पतले का इससे उल्टा क्रम है। वजन के बढ़ने का अर्थ है शरीर में रक्त, मांस और चरबी का बढ़ना। यह सन्तुलित खुराक और उसके समुचित पाचन से होता है अतः सर्वप्रथम हम वजन वर्धक आहार की रूपरेखा पर दृष्टिपात करेंगे। वजन बढ़ाने

के लिए शरीर की दैनिक क्षतिपूर्ति के अतिरिक्त शरीर में अतिरिक्त मांस, रक्त और चरबी का निर्माण हो सके, ऐसे खाद्य पदार्थ ग्रहण करने चाहिये–पचाने भी चाहिये। इसका अर्थ यह हुआ कि वजन वर्धन की इच्छा रखने वाले लोग पाचन प्रणाली को सुयोजित रखें। पेट की शुद्धि पर ही आहार के पाचन, शोषण और पोषण का आधार है। पेट पर अत्याचार करने से वजन वृद्धि तो होती नहीं, उल्टे रोगवृद्धि हो जाती है। सर्व प्रथम कब्जियत की पीड़ा से मुक्त रहना अत्यावश्यक है। जब तक कब्ज की व्याधि रहेगी तब तक वजन बढ़ने की आशा दुराशामात्र है। एनीमा, हरड और आहारके परिवर्तनसे कब्जियत दूर करनी चाहिये।

(१) शरीर को उष्णता और चेतना देने के अतिरिक्त विशेष केलोरी युक्त आहार ग्रहण करना उचित होगा। सामान्य जीवन निर्वाह करने वाले एक वयस्क व्यक्ति का दैनिक आहार इतना होना चाहिये, जितने से २४०० केलोरी मिल सके। वजन बढ़ाने के इच्छुकों को ३००० से ३५०० केलोरी दे सके—उतना आहार लेना चाहिये। इससे स्पष्ट है कि दैनिक आवश्यकता की अपेक्षा एक तिहाई आहार अधिक लिया जावे और पचाया जावे। इस प्रकार का आरम्भ सहसा न करके क्रमशः किया जाना चाहिये।

(२) वजन बढ़ानेके लिए इच्छुक 'ए' और 'डी' विटामिन अधिक मात्रा में लें। अस्थि विकास के लिए 'डी' विटामिन अत्यावश्यक है। पोषणतत्व जैसा महत्व क्षारों का भी है। खनिज पदार्थ अधिकांश शाक सब्जियों में से उपलब्ध होते हैं। चूना (केलसियम) लोह (आयरन) आदि क्षारों के अभाव में शारीरिक विकास की गति आगे नहीं बढ़ती। शाक सब्जी के रेशे पेट शुद्धि के कार्य करते हैं। पवित्र, सादे और स्वच्छ आहार से सात्विक वजन की अभिवृद्धि होती है। फल प्रतिअम्ल प्रधान होते हैं, अतः वे शरीर की अम्ल प्रधान प्रवृत्ति का प्रतिरोध करते हैं। अम्ल न्यूनता शरीर की जीवनी शक्ति को बढ़ाती है। फलों शर्करा, आहारके आवश्यक तत्व तथा विशुद्ध जल से भोजन के पश्चात किसी न किसी पुष्टिकारक के ग्रहण का अभ्यास अवश्य रखना चाहिये।

(३) खाद्य में दूध को अग्रस्थान देना चाहि दूध सर्वश्रेष्ठ और सम्पूर्ण आहार है। अस्थि स्नायुओं के निर्माण और विकास तथा शरीर पुनर्रचना के लिए आवश्यक शरीर सम्वर्धक तत्व में सनिहित हैं, दही, मट्ठा, छाछ आदि दूध के न्तर हैं, अतः उनमें भी दूध का महत्व किसी न कि रूप में होता ही है। दुग्धोपचार वजन बढ़ाने शत-प्रतिशत सफल प्रयोग है। आरम्भमें दो तीन उपवास कर दो तीन दिन तक फल और शाक स के रस पर निर्भर रहना चाहिये। तदुपरान्त दू प्रयोग २० से ३० दिन तक करना चाहिये। आर दूध १।–१।। सेर पर्याप्त होगा, फिर बढ़ाते २ परिमाण में शरीर पचा सके उतना दूध लेना चाहि जो लोग दुग्धोपचार की इच्छा न रखते हों, वे निम्नांकित प्रयोग कर सकते हैं।

(क) एक गिलास ताजे दूध में १ तोला मिलाया जाय और दोनों को भलीभांति एक रस क उसे धीरे २ चूस २ कर पीना चाहिये। यह अत्यन्त दिष्ट और वजन संवर्धन की परमोत्तम पवित्र औषधि

(ख) केला और दूध का मिश्रण भी लाभदाय

(४) पतले, किन्तु स्वस्थ व्यक्तियों को और कारवोहाइड्रेट युक्त आहार अधिक परिमा लेना चाहिये। क्योंकि इन तत्वों में केलोरी मात्रा में विद्यमान रहती है। उपयुक्त व्यवस्था प्रणाली को ध्यान में रखकर करनी चाहिये। घी, मूंगफली, गुड, आलू, चावल, मक्खन मलाई पदार्थ भी पाचनशक्ति के अनुसार उचित परिमा ग्रहण किये जा सकते हैं।

(५) वजन बढ़ाने में सूखे फल भी महत्वपूर्ण कार्य करते हैं। छुहारा, आलू बुखारा, अंजीर, खजूर आदि सूखे फल या मेवे भी अपनी अनुकूलता और पाचन क्रियाके अनुसार कभी २ लिये जायें, तो लाभप्रद ही होंगे।

वजनवर्धक उपवास

खाद्य-पदार्थों के सेवन से वजन बढ़ता है, यह बात तो समझ में आ सकती है, किन्तु उपवास से वजन बढ़ता है, इस बातमें क्या विरोधाभास नहीं है? नहीं। आहार का कोई भी प्रयोग करने से पहले उपवास द्वारा पाचनप्रणाली की शुद्धि कर लेनी अनिवार्य है। उपवास शरीर में संगृहीत विजातीय द्रव्यों का निष्कासन करता है। पाचनमार्ग को साफ और स्वच्छ कर आहार की शोषणक्रिया के लिए तैयार करता है। शरीर अनारोग्य की स्थिति भी वजन सम्वर्धनके हमारे प्रमाणिक प्रयत्नों को निष्फल बना देती है। उपवास शरीर की स्वास्थ्य सम्वर्धन क्रिया है। उपवास कालमें प्रातः सायं एनिमाडूस लेना हितकर है क्योंकि इससे विष निष्कासन की क्रिया तीव्र बनती है।

एक सर्वोत्तम इलाज

वजन सम्वर्धन का सर्वाधिक अचूक इलाज व्यायाम है। व्यायाम का महत्व आहार और उपवास से भी अधिक है। व्यायाम देह को विशुद्ध बना देती है। पाचनप्रणाली सुदृढ बन जाती है। भूख खुलकर लगती और भूख में लिये गए आहार से शरीर को सुव्यवस्थित पोषण उपलब्ध होता है। प्रायः व्यायाम वीरों का शरीर सुदृढ, स्नायु मण्डल विकसित और वजन उचित होता है। युवकों का कर्तव्य है कि वह वजन बढाने का अन्य कोई प्रयोग न कर नियमित व्यायाम करने का संकल्प करें। दुर्बल शरीर युवक आरम्भ में हलका व्यायाम करें और धीरे २ कठोर श्रमशील व्यायाम की ओर अग्रसर हों। दण्ड-बैठक, सूर्य नमस्कार, वेटलिफ्टिंगजे से व्यायाम करने चाहिये। जो लोग कठोर व्यायाम करनेमें समर्थ नहीं, वे अधिक टहलने का व्यायाम करें। तैरने का व्यायाम भी लाभदायक है। आसन भी अवश्य करने चाहिये। धनुरासन, चक्रासन, शीर्षासन, सर्वाङ्गासन आदि आसन करने से पाचन शक्ति सुधरती है। मनुष्य आरोग्य सम्पन्न बन जाता है।

मन का महत्व

भावनाप्रधान, निराशावादी और मानसिक आवेगों से ग्रस्त मानव कभी भी शारीरिक और मानसिक स्वास्थ्य का अनुभव कर नहीं पाते। 'काजी दुबले पतले क्यों हैं? नगर की चिन्ता है, इसलिए' की कहावत है मानव को अपना मन उच्च विचार सम्पन्न और आशावादी बनाना चाहिये। ऐसा करनेसे जीवन का दृष्टिकोण बदल जाता है और शान्ति, आनन्द तथा सुखमय मानसिक स्थिति स्थिर रखने की मनोवृत्ति का विकास होता है।

एक आवश्यक सुझाव

जीवन में जितनी प्रवृत्ति की जरूरत है। उतनी ही निवृत्ति की भी। प्रवृत्ति से तन मन क्षीण होते हैं। यह क्षीणता विश्राम और निद्राके समय पूरी होती है। इतना ही नहीं, बल्कि नवनिर्माण का कार्य भी इसी समय होता है। जो लोग निरन्तर प्रवृत्तिशील रहते हैं और निद्रा तथा विश्राम की चिन्ता नहीं करते, वे अपने जीवन को अल्पायु बनाते हैं। बिस्तर पर पड़े रहने से आराम नहीं मिलता। शरीर के सभी अवयवों को शिथिल और मानसिक आवेगों को शान्त बनाकर विश्राम करना चाहिये। दुबले मानव कम होते हैं। कम से कम ८ घण्टे नींद लेनी चाहिये हो सके तो भोजन करनेके पश्चात अल्प वजन वालों को शारीरिक या मानसिक कामकाज में तत्काल व्यस्त न हो जाना चाहिये, अपितु कुछ देर बाद काम शुरू करना चाहिये संक्षेप में वजन वर्धनाकांक्षियों को बुद्ध पूर्वक आहार स्वच्छ वायु; समुचित व्यायाम, नींद आराम और स्वस्थ मानसिक आदतों पर पर्याप्त ध्यान देना चाहिये।

मधु-मेह DIABETES MELLITUS

[लेखक—श्री० गौरीलाल चानना बी० ए० वैद्यवाचस्पति]

(गतांक से आगे)

भोजन व्यवस्था—मधुमेह चिकित्सा का सबसे महत्वपूर्ण अंश भोजन व्यवस्था है। जितने कम से कम शार्करी पदार्थों के सेवन से रोगी का जीवन व्यापार चल सके, उसका साधारण स्वास्थ्य बना रहे और वह नित्य प्रति का कार्य करने में समर्थ रह सके, उतना ही वह शार्करी पदार्थ भोजन में ले, साधारणतया बिना परिश्रम के लेटे रहने वाले मनुष्य के लिए—जीवन व्यापार चलाने के निमित्त—लगभग १५०० कैलोरी ताप की आवश्यकता होती है। वैज्ञानिक परिभाषा में इसे मौलिक आवश्यकता (Basad rebinrenent) कहते हैं। चलना फिरना टाइप करना आदि अन्य परिश्रम करने के लिए आवश्यक ताप इसके अतिरिक्त है। मोटे रूप में रोगी की उपरोक्त मौलिक तथा परिश्रम सम्बन्धी आवश्यकता को मिला कर कुल जितने ताप की आवश्यकता उसको है उसे ध्यान में रखते हुए भोजन में शार्करी पदार्थों की व्यवस्था की जाती है।

प्राय: मधुमेह के रोगी मोटे होते हैं अत: उनकी उपरोक्त कुल आवश्यकता से कम कैलोरी का भोजन उन्हें दिया जाता है जिससे उनका वजन धीरे-धीरे कम होकर औसत अवस्था में आ जाय। परीक्षणों से यह देखा गया है कि मधुमेही का स्वास्थ्य और उसकी कार्य क्षमता इस प्रकार उचित से कम भोजन पर लम्बे समय तक ठीक बनी रहती है।

स्वस्थ मनुष्यों का औसत वजन उसके कद और आयु पर निर्भर होता है। वह कितने कद तथा किस आयु में कितना होता है उसकी तालिकाएं बनी हुई हैं उन्हें यहां देकर लेख का कलेवर लम्बा करना चाहता। उनको तत्सम्बन्धी पुस्तकों में दे चाहिए, साधारणत: ५॥-५॥। फुट कद के युवा का वजन लगभग १॥ मन होता है और उसकी मौ तथा परिश्रम सम्बन्धी ताप की कुछ आवश्यकता वजन के प्रति सेर पर ३०-४० कैलोरी के हिसा कुछ २४००-२५०० कैलोरी होती है। ऐसे युवा को यदि मधुमेह हो जाय तो उसकी खुराक कम उसके वजन के प्रति सेर पर २५-३० कैलोरी के हि से दी जाती है। इस प्रकार मधुमेहावस्था में लिए लगभग १८००-२००० कैलोरी ताप देने भोजन प्रर्याप्त होता है।

बालक और गर्भिणी रोगियों में उनकी और वृद्धि काल सम्बन्धी आवश्यकताओं को ध्या रख कर कुछ अधिक भोजन की व्यवस्था की जा

इस पर भी समय २ रोगी की रक्त परीक्षा रहना चाहिये और जब कभी स्नेहाम्ल अथवा estirol (जो स्वस्थावस्था में प्रति १०० c.c. १५०–२५० मिलीग्राम होना चाहिये) पंक्तवरा मात्रा बढ़ जाय तो भोजन में तुरन्त स्नेह की मात्रा कर देनी चाहिए क्योंकि रक्त में अर्धपचित स्नेह की अधिकता से मधुमेह सन्यास होने का भय है। जितनी अधिक से अधिक स्नेह की मात्रा में देने से रक्त में स्नेह का अनुपात उचित से न बढ़े उतना स्नेह भोजन में सम्मिलित करना चा शेष आवश्यकता पकजलोदेतके रूप में दिया जासक

रक्त में स्नेह की मात्रा की परीक्षा सदा सब स्थानों पर सुलभ नहीं। महंगाई और सुविधा की दृष्टि से भी इसे प्रति दिन करना सम्भव नहीं होता। अतः भोजन के स्नेह और कज्जलोदेत के अनुपात के औचित्यानौचित्य की जांच के लिए मूत्र परीक्षा से भी सहायता मिल सकती है। मूत्र में कीतोनांश की विद्यमानता होने पर भोजन में स्नेह की मात्रा कम करके कज्जलोदेत की मात्रा कुछ बढ़ा देनी चाहिए।

रोगी को आरम्भ में १५० ग्राम कज्जलोदेत (६०० कैलोरी) ७० ग्राम अस्रजन (२८० कैलोरी) और ६० ग्राम स्नेह (५४० कैलोरी) के भोजन से आरम्भ करें जिससे उसे कुछ १४०० कैलोरी ताप मिलेगा। जब वह प्रति दिन का कार्य करने लगे तो उसे लगभग १००० कैलोरी की और आवश्यकता होगी। उसके लिए कज्जलोदेत की मात्रा को धीरे-धीरे बढ़ाकर ३४० ग्राम (१३६० कैलोरी) तक ले जायें और स्नेह को ८५ ग्राम (७६५ कैलोरी) तक ले जायें अस्रजन की मात्रा ७० ग्राम ही (२८० कैलोरी) पर्याप्त है। इस प्रकार यह भोजन कुल २४०५ कैलोरी ताप देगा। बालकों और गर्भिणी रोगियों में अस्रजन की मात्रा भी बढ़ानी पड़ती है क्योंकि वृद्धिकाल में अस्रजन की आवश्यकता बढ़ जाती है। अस्रजन, स्नेह और कज्जलोदेत के अनुपात निश्चय के अतिरिक्त मधुमेही के साधारण स्वास्थ्य को बनाए रखनेके लिए तथा सम्यक् पोषण के लिए चूनजम, पांशुजम, लौह आदि के खनिज लवण तथा विभिन्न खाद्योजांश पर्याप्त मात्रा में उसके भोजन में सम्मिलत करने चाहिए। एतदर्थ ताजे फलों, हरी सब्जियों तथा दूध आदि का प्रयोग उचित मात्रा में प्रतिदिन करना चाहिये।

अस्रजन (Protein), कज्जलोदेत (Carbohyrate) और स्नेह भोजन के तीन प्रधान अंग हैं। मधुमेही के भोजन में इन तीनों का परस्पर अनुपात भी विशेष महत्व रखता है।

अस्रजन मानव शरीर में नवीन सेलों के निर्माण और घिसी हुई क्षीण सेलों की क्षतिपूर्ति का कार्य करता है। अस्रजन के इस कार्य की आवश्यकता मधुमेही एवं स्वस्थ मनुष्य में समान रूप से बनी रहती है। स्वस्थावस्था में एक युवा मनुष्य को उसके भार के प्रति सेर के लिये एक-डेढ़ ग्राम अस्रजन की आवश्यकता प्रति दिन होती है। मधुमेही के भोजन में भी इतनी ही अस्रजन का होना आवश्यक है। छोटे बालकों में यह आवश्यकता दुगनी-तिगुनी होती है क्योंकि वृद्धिकाल में अस्रजन की आवश्यकता बढ़ जाती है।

कज्जलोदेत और स्नेह मुख्यतः शरीर की शक्ति अथवा ताप पहुँचाने का कार्य करते हैं इनमें से कज्जलोदेत शरीर के अन्दर सीधे ही शर्करा में परिणत हो जाता है इसका वर्णन यथास्थान आ चुका है इसी लिए कुछ काल पूर्व वैज्ञानिकों का यह विचार था कि मधुमेही को कज्जलोदेत देना बन्द करदें तो सम्भवतः शरीर में शर्करा निर्माण ही बन्द हो जाय। उस समय अस्रजन के बाद जितने ताप की आवश्यकता होती थी उसका मुख्य भाग स्नेह के रूप में शरीर में पहुँचाया जाता और कज्जलोदेत बहुत कम मात्रा में दिया जाता, बाद के अनुसन्धानों से ज्ञात हुआ कि इस प्रकार की भोजन व्यवस्था से जीवन नैया ठीक प्रकार से नहीं चल सकती। यह ज्ञात हुआ कि स्नेह के सम्यक् पचन और सात्म्यीकरण के लिए भोजन में एक विशेष अनुपात में कज्जलोदेत का होना भी आवश्यक है। स्नेह और कज्जलोदेत का यह अनुपात कम से कम १—२ अवश्य होना चाहिये।

मधुमेह एक दीर्घकाल तक रहने वाला रोग है। अतः रोगी के लिए भोजन निश्चित करते समय इस बात का ध्यान रखना आवश्यक है कि भोजन ऐसा हो जो रोग के साथ २ रोगी की रुचि के भी अनुकूल

हो ताकि वह लम्बे समय तक उसका सेवन कर सके। हम भारतीयों के भोजन में सितसार का अंश अधिक मात्रा में होता है। अतः हमारे लिए स्नेह और कज्जलोदेत का पूर्वोक्त १-२ अनुपात रुचि के अनुसार ठीक नहीं बैठता। अतः भारतीय रोगियों के लिए प्रायः १-३ अथवा १-४ के अनुपात में स्नेह और कज्जलोदेत दिये जाते हैं। इस अनुपात का भोजन रुचिकर होने के साथ-साथ अधिक मंहगा भी नहीं होता इसलिए यह हर दृष्टि से हमारे देशवासी रोगियों के अनुकूल सिद्ध होगा।

मधुमेह में रक्त में शर्करा की मात्रा पहले ही बढ़ी होती है अतः भोजन में शर्करा अथवा मधु का प्रयोग यथा सम्भव कम ही करना चाहिए। मिठास के लिए सैकरीन का प्रयोग किया जा सकता है। सैकरीन कोलतार से बनने वाला एक रासायनिक पदार्थ है। जो चीनी से ३०० गुना अधिक मीठा होता है। प्रति ५ ग्रेन तक की मात्रा में इसे प्रयोग करने से स्वास्थ्य को कोई विशेष हानि नहीं होती। परन्तु साधारणतया केवल डेढ़ ग्रेन से ही हमारी मिठास सम्बन्धी दैनिक आवश्यकता पूरी हो जाती है। इस मात्रा में इसे लगातार प्रयोग करते रहने से भी किसी प्रकार की हानि की आशंका नहीं। बहुत गरम पदार्थ में इसे नहीं मिलाना चाहिये अन्यथा स्वाद कड़वा हो जायगा।

भोजन की कुल मात्रा को सुबह, दोपहर, शाम और रात के खाने में ४ भाग में विभक्त करदें। रात के खाने में शार्करी पदार्थोंकी मात्रा कम और अस्त्रजन और स्नेह की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक रखें। भोजन के किन-किन पदार्थों को कितनी-कितनी मात्रा में किस-किस समय लेना चाहिए इसकी भी तालिकायें बनी हुई आती है। भोजन व्यवस्था तथा विभाजन में उनसे पूरी सहायता ली जा सकती है।

(२) मधुलीन (Insulin):—मधुमेह की आरम्भिक अवस्थ में अथवा रोग के मृदु आक्रमण प्रायः उपरोक्त भोजन व्यवस्था से ही मूत्र में श[illegible] आना बन्द हो जाता है। परन्तु यदि ऐसा न हो फिर मधुलीन की आवश्यकता पड़ती है। रोगी पोषण और स्वास्थ्य किन्तु संरक्षण के लिए [illegible] न्यूनतम भोजन की मात्रा पर रख कर उसके मूत्र परीक्षा की जाती है यदि शर्करा २% से कम हो मधुलीन १० यूनिट प्रातः सायं देते हैं। इससे अ[illegible] हो तो १५-२० यूनिट तक देते हैं। प्रति दिन यूनिट मात्रा उस समय तक बढ़ाते चले जाते हैं तक कि मूत्र शर्करा बन्द न हो जाय। मधुलीन [illegible] हुए प्रति दिन मूत्र परीक्षा करना अत्यन्त आव[illegible] है। साधारणतया एक दिन में ५० यूनिट से अ[illegible] मधुलीन नहीं देनी चाहिए।

मधुलीन कई प्रकार की बाजार में आती [illegible] जिनमें मुख्य तीन प्रकार की हैं:—

(१) साधारण (Crystalline) यह [illegible] अपना प्रभाव दिखाती है और ४ ६ घण्टे में [illegible] प्रभाव समाप्त हो जाता है।

(२) (Protamine Zinc Insulin) [illegible] प्रभाव देर में होता है और अधिक लम्बे समय [illegible] भग ३० घण्टे) तक चालू रहता है।

(३) (Modified) यह उपरोक्त दोनों [illegible] की प्रकार है इसका प्रभाव १८-२० घण्टे रहता [illegible]

मधुमेही के लिए मधुलीन की प्रति दिन [illegible] आवश्यक मात्रा का निश्चय होने के बाद उस[illegible] तिहाई प्रोटेमाइन जिंक की मात्रा प्रातःकाल दे[illegible] करें और शेष एक तिहाई दिन के प्रधान भोज[illegible] पूर्व दे दें। रात को मधुलीन नहीं देनी चाहिए। [illegible] दिन रोगी व्यायाम अथवा अधिक परिश्रम करे [illegible] दिन मधुलीन की मात्रा कम कर देनी चाहिए।

क्रमशः

सेही और खरगोश

[लेखक—कविराज हरिकृष्ण सहगल, बागीची अलाउदीन, देहली]

सेही को कण्टमूष और शल्लकी भी कहते हैं। अंग्रेजी नाम Hedgehoy है। चरक और सुश्रुत ने इसे बिल में रहने के कारण विलेशाम कहा है पहाड़ी स्थानों पर यह अधिक होती है। रंग श्याम, कद शशक समान शरीर पर दो रंगे काले श्वेत कांटे होते हैं। जिनकी लम्बाई ६ इंच होती है। जब क्रोध में भर कर यह जीव शरीर को झंझोरता है, तो इसके कांटे तीर की तरह दूर जा गिरते हैं। यह प्राणी भी सर्प का शिकारी है।

इसकी सर्प से युद्ध कि विधि बहुत निराली है। जब सर्प इसके निट आता है तो यह गोला बन जाती है, इस प्रकार यह अपने शरीर के खुले अंगो को कांटों में छिपा लेती है सर्प को सेही से जन्म जात घृणा है। फुंकारता हुवा बार बार इसे काटने के लिये अपने फन को इसके कांटों पर मारता है। वह जख्मी हो जाता है और उसका विष समाप्त हो जाता है। इधर सेही बार २ अपने कांटमय शरीर को सर्प शरीर पर लुढका कर सर्प की जीवन लीला समाप्त कर देती है।

चरक मत्तानुसार सेही और खरगोश के मांस गुण इस प्रकार हैं। मलमूत्र को गाढ़ा करने वाले, उष्ण, स्वादु, बात नाशक, कफ दोष को बढ़ाने वाले, पित्त शामक, कास, श्वास, कृशता निवारक है, त्रिदोष शामक है।

सेही मांस राजयक्ष्मा, निमोनिया में हितकर है वीर्य वर्द्धक रक्त बढ़ाने वाला श्वास नाशक और विष नाशक है। सेही मांस को लाल... के साथ खाना अर्श के लिए हितकर है (चरक) इसी प्रकार यह प्लीहा वृद्धि को भी दूर करता है।

वात तथा कफ जन्य उन्माद में सेह से उत्पन्न मूत्र, पित्त, पुरीष, लोम, नाखून तथा चमडे से भी सेक अञ्जन प्रधमन नस्य तथा धूम्रपान करना चाहिए (चरक)

सेह मांस, पिप्पली और घृत के साथ सिद्ध (यहां मांस रस नहीं बताया, क्योंकि सेह मांस प्रोटीनों से आचार्य काम लेना चाहते थे) करके वात युक्त श्वास रोगी को देना चाहिए।

सेह मांसरस विषघ्न औषधि मिलाकर सुसंस्कृत मांस रस आंतों के विष की औषध है (चरक)

पित्ता

सेही के पित्ते का पानी, पानी के साथ पीना, कुष्ठ दूर करता है। एक सेही लेकर उसका पेट सफा करें उसमें २ तोला संखिया भर कर पेट को सीदें, बर्तन में रख कर कपड़ मिट्टी कर ५—६ सेर उपलों की अग्नि दें, २ रत्ती की मात्रा में माखन में खिलाने से कण्ठमाला व दमा को लाभ करता है। काम शक्ति बढ़ाता है। सितोपलादि चूर्ण के साथ यक्ष्मा में लाभ करता है।

रक्त

सेह रक्त, पिप्पली चूर्ण और घृत के साथ सिद्ध कर प्रयोग करने से श्वास में लाभ करता है (चरक)

पं० चाणक्य ने लिखा है कि बिलाव, ऊंट, भेड़िया, सुअर, सेही, बागुली, नप्ता (एक प्रकार का पक्षी), कौआ और उल्लू अथवा रात्रि में विचरण करने वाले

अन्य प्राणियों में से एक, दो व बहुतों की दाहिनी आंखों को अलग और बांई आंखों को अलग लेकर दो जगहों पर चूर्ण करें।

बाद में बांई आंख के चूर्ण से दाई आंख को और दांई आंख के चूर्ण से बांई आंख को आंजें, इससे अन्धकार में भी पुरुष, प्रत्येक वस्तु को देख सकता है।

विष्टा

सेह विष्टा को त्रिफला, विडङ्ग के क्वाथ से भावित कर देना चाहिए। इस से कृमियों का हरण होता है।

कांटे

सेही कांटों की भस्म घृत, मधु, शक्कर के साथ देने से श्वास कास दूर होते हैं। कांटों की भस्म शरीर के किसी भाग पर व्रणों पर छिड़कने से उसे भर देती है और च्यवनप्राश के साथ खाने से फुफ्फुस व्रणों को भरती है। कांटों की धूनी देने से अर्श में लाभ होता है।

खरगोश (शशक)

शास्त्रानुसार सेही और शशक एक ही जाति के जीव हैं, और इनमें समान गुण हैं। शशक दो प्रकार के होते हैं पालतु और जंगली। जहां खरगोश हो वहां चूहे नहीं रहते।

शशक मांस

पेट को साफ करता है। मूत्र अधिक लाता है, मोटापा व चर्बी को कम करता है। इससे नींद चली जाती है परन्तु इसका यह दोष, इसके मांस में तर मसाले डालने से दूर हो जाता है। बिस्तर पर मूत्र त्याग, पक्षाघात, अर्दित तथा मांस पेशियों का ढीलापन दूर होते हैं। शशक मांस को यख्नी में बैठने से पैर के पौरवों के जोड़ों का दर्द व शरीर के बड़े जोड़ों का दर्द दूर होते हैं इसके मांस की भस्म खाने से गुर्दा मसाना की पथरी निकल जाती है। और इसका मांस निरन्तर खाने से पथरी पैदा भी हो जाती है।

स्त्री अगर शशक योनि खाकर पुरुषसे समागम करे तो गर्भवती हो। एक अंग्रेजी औषधि ओफोरिन (Ophorin) है यह ओवरीज का सत्व है, यह कामोत्तेजक औषध है। शशक की योनि भक्षण दूसरा ओफोरिन सेवन है।

शशक मांस अर्शरोग में हितकर है। शशक मांस से घृत साधित कर खाने से शुक्र बढ़ता है।

शशक मांस पिप्पली और घृत से सिद्ध कर वातयुक्त श्वास रोगी को देना चाहिये। (चरक)

खरगोश शीतवीर्य है। यह हरी पत्तियां खाता है, मांस इसका भोजन नहीं और इसी कारण से चरक में रक्त अतिसार में लवण रहित इसके मांस रस को घृत और मिश्री के साथ देना लिखा है।

पैत्तिक मदात्य में खरगोश के मांस को तथा मधुर अम्लशाली साठी चावलों को दे। (चरक)

उर्ध्व जत्रुज रोगों की चिकित्सा में बुद्धिमान वैद्य को महामयूर घृत में मोर के स्थान पर शशक का प्रयोग कर, घृत का पाक कर प्रयोग करना चाहिये। चरक

शशक वृषण

घिसकर विषयुक्त स्थान पर लगाने से विष को दूर करते हैं, तथा इन्हें पीसकर नमक लगाकर पक्षाघात के रोगी को नस्य दें तो पक्षाघात दूर हो।

क्षयकारक अतिसार में शशक मांस या रुधिर लाजवन्ति चूर्ण, दही, घृत के साथ खिलाना लाभ करता है।

भेंजा

इसका भेंजा भूनकर खाने से राशा तथा कम्प वात के रोग दूर होते हैं। शशक का भेजा २ र...

गाय के दूध के साथ खाते रहने से बाल श्वेत नहीं होते। इसका भेजा थोडी रुई में लगाकर स्त्री योनि में लगावे और थोडा सा खाले और बाद में पुरुष संग करे तो गर्भवती हो। बच्चों के मसूडों पर मलने से दांत शीघ्र निकलते हैं। शशक का भेजा, रीछ की चर्बी और मधु का पानी तथा पलाण्डु स्वरस मिलाकर बाल चर पर लगाया जावे तो बाल उग आते हैं।

शशक पित्ता

शशक का पित्ता घृत और स्त्री दुग्ध में मिला कर आंख में लगाने से फोला कट जाता है। कुकरे दूर होते हैं, दृष्टि बढ़ती है। श्वास फूलने पर ताजा पित्ते को रोगन जैतूनमें मिलाकर पीनेसे श्वास नहीं फूलता। परन्तु पित्ता को पीने से नींद बहुत आती है। यहां तक कि पीने वाला मूर्छित होजाता है। सिरका पीने से होश होता है। पित्ता और चम्बेली का तेल मिलाकर इन्द्री पर लगाकर मैथुन करने से स्त्री का वशीकरण होता है। आंख में ४० दिन लगाने से चश्मा का लगाना छूट जाता है।

रक्त

निमोनिया में चन्द बूंद पिलाने से लाभ होता है। रेशमी कपड़े में रक्त लगाकर जलालें, इस भस्ममें गोरोचन मिलाकर देने से निमोनिया तथा श्वास में लाभ होता है।

शशक रक्त पीने से स्त्रियां बन्ध्या हो जाती हैं। श्वेत व रक्त कुष्ठ पर लगाने से दाग दूर होते हैं। रक्त को भूनकर खाने से आंतों के व्रण व अतिसार दूर होते हैं। समभाग ब्रांडी मिलाकर यक्ष्मि को पिलाने से फुफ्फुसों के व्रणों को भरता है। खुश्क करके इसे च्यवनप्राश में मिलाकर देना चाहिये।

शशक के सद्योजात बच्चे को काटकर उसका रक्त कपड़े में सुरक्षित करें, इसे पिलाने से बच्चों का मृगी रोग जाता है।

बच्चा पैदा होने पर नाभी नाडी काटने के साथ बच्चे के नाभी भाग पर पांच बूंद शशक रक्त प्रवेश करें और बांध दें, इससे चेचक नहीं निकलती। परछाई पर लगाने से वह दूर होती है।

शशक वसा

इसकी वसा बालों पर लगाने से उनका गिरना रुक जाता है। अर्श अंकुरों पर लगाने से पीड़ा मिटती है। दांतों के दर्द में लगाने से पीड़ा मिटती है।

अस्थियां

अस्थियों की भस्म कण्ठमालाके व्रणों पर लगाने से लाभ होता है। शशक दन्त चांदी के ताबीजमें पास रखने से हाजमा तेज रहता है।

चर्म

शशक के चर्म को लेकर उसके ऊपर आक की रुई लपेट कर बत्ती बनालें। इन बत्तियों को जलाकर काजल तैयार करें। इसे लगाने से सर्व प्रकार के नेत्र रोग दूर होते हैं।

बाल

अंगूरा ऊन संसार की सब ऊनों में महंगी है। यह उन भेड़ों की नहीं शशकों की होती है। इन शशकों को फ्रांसीसी किसान पालते हैं और वर्ष के अन्त में बाल उतार लेते हैं। इसकी धूनीसे मूत्रकृच्छ्रता दूर होती है। जलाकर व्रण पर लगाने से रक्त बन्द होता है।

शशक पनीर माया

शशक पनीर माया को कैंसर पर लगाने से लाभ होता है। नर का पनीर माया खिलाने से लड़का और मादा का पनीर माया खिलानेसे लड़की होती है। सिरका में पनीर माया को पीनेसे विष उतर जाता है। बच्चों को पनीर माया खिलाने से मृगी का रोग दूर होता है। परन्तु खाली पेट न खिलायें। मासिकधर्म के दिनों में पनीर माया को योनि में रखने से गर्भ नहीं रहता (Birth Control)। शर्बत के साथ पनीर माया लेने से आंतों के व्रण, पेचिश, पीड़ा को दूर करता है। ताजा पनीर माया कण्ठमाला पर लगाने से लाभ करता है। दूसरे व्रण भी अच्छे होजाते हैं। पनीर माया को पीने से गर्भाशय व योनि के स्राव रुकते हैं। ३ माशा की मात्रा में पनीर माया को चने के पानीके साथ पीना पेशाब की रुकावट (जिसका कारण मूत्राशयमें रक्त का जमना हो) दूर होजाता है।

व्यापारिक महत्व की कृमिनाशक दवा

सैन्टोनीन

[लेखक—श्री अनुकूलचन्द्र दे और रामेश वेदी, गुरुकुल कांगडी, हरिद्वार]

सैन्टोनीन एक प्रसिद्ध कृमिघ्न औषध है। यह आर्टिमीजिया जातीय एक छोटे क्षुप के कई भेदों में उसकी अप्रस्फुटित मंजरी से प्राप्त होता है। यह क्षुप रूसी तुर्किस्तान में प्रचुर पाया जाता है। इसका औद्भिदीय नाम है-आर्टिमीजिया सीना। भारत में इसी जाति का एक और क्षुप भी पाया जाता है जिस में से यह औषध प्राप्त होती है, उसका लैटिन नाम आर्टिमीजिया ब्रे वीफोलिया है। यह क्षुप गढ़वाल से से लेकर काश्मीर तक ४०० से १२००० फीट की ऊंचाई तक आभ्यन्तरिक हिमालय में मिलता है।

यद्यपि इस क्षुप का प्रसार पर्याप्त है, परन्तु इसके प्रत्येक भेदोपभेद में सैन्टोनीन तत्व नहीं प्राप्त होता। काश्मीर, जम्मू का किश्तवाड़ प्रदेश जो चन्द्र-भागा नदी के किनारे पर है वहां के प्रत्येक भेद में यह क्रियाशील अंश मिलता है। चम्बा-पांगी के किसी किसी स्थान में केवल एक हरितवर्ण के क्षुप में यह तत्व उपलब्ध है, पर रोमयुक्त श्वेतवर्ण पौदे में नहीं मिलता। लाहौल में भी वैसा ही है, केवल हरितवर्ण वाले पौदे में है। बुशहर के प्रदेश में आर्टिमीजिया के किसी भी भेद में अभी तक सैन्टोनीन नहीं पाई गई है। गढवाल इलाके में जोशीमठ के मलौरी नामक स्थान के कुछ क्षुपों में सैन्टोनीन पाई गई है।

इसी कारण सैन्टोनीन का निष्कासन केवल जम्मू के किश्तवाड़ प्रदेश में और काश्मीर के गुरेज इलाके में हो रहा है। अन्य स्थानों में नहीं। इसकी खेती हिमालय में असम्भव है। यह केवल उसी स्थान में पनप सकता है जो आभ्यन्तरिक हिमालय के व[र्षा] विहीन प्रदेश हैं।

वर्णन

आर्टिमीजिया ब्रेवीफोलिया—एक छोटा [क्षुप] क्षुप है, जो १८ इंच से ३६ इंच ऊंचा होता है। [य]ह क्षुप श्वेतरोमों से आवृत है या धूसर रोम युक्त है। पल्लव श्वेत या हरे होते हैं। इसमें अति तीव्र कपू[र] जैसी सुरभि है। क्षुप के ऊपरी भाग हिमपात के कार[ण] शुष्क होजाते हैं, परन्तु बसन्त ऋतु में पुरानी जड़ों [से] नये पल्लवों के सहित छोटे २ कोंपल निकल आते हैं।

शरद ऋतु में पुष्पदल निकलते हैं तथा शिशि[र] के प्रारम्भ में बीज पकने लगते हैं। पत्ते इसके नाग[-] दौन या दावना क्षुप के समान कटे हुए रहते हैं। पु[ष्प] हरित, पीत तथा दोनों के मिश्रण के पाये जाते हैं।

विभिन्न नाम

अफसन्तीन (अरब), मुरीन (काश्मीर), से[...] (जम्मू, चम्बा, लाहौल), बिऊर, (चीनी, बुशहर) पर्चा (गढवाल)।

उपयोगी भाग

अप्रस्फुटित मंजरी तथा अपक्व पल्लव। गुच्छे[...] पल्लवों में भेषजीय अंश नहीं रहता है। इसको सं[ग्रह] करने का ठीक समय जून के मध्य भाग से अगस्त [के] अन्त तक या नवपल्लवित अंकुर के उगने से लेकर पु[ष्प] प्रस्फुटित होने के पहले तक है।

रासायनिक संघटन

भारतीय क्षुप में क्रियाशील पदार्थ सैन्टोनी[न] १ से २ प्रतिशत पाया जाता है।

उत्पत तेल ०.५ से १ प्रतिशत। इसकी गन्ध कर्पूर तथा काजुपुट तेल जैसी है। सैन्टोनीन रंग विहीन, अभ्रक जैसा कणमय एवं स्वाद में तिक्त पदार्थ है। सूर्य प्रकाश से पीले रंग का हो जाता है, इसी कारण इसको काले रंग की शीशी में रखा जाता है। मात्रा—वयस्कों के लिए १ से ३ ग्रेन, एक साल तक के बालक के लिए १/४ से १/२ ग्रेन, ५ साल वाले बालक के लिए एक से डेढ ग्रेन।

उपयोग

सैन्टोनीन का प्रयोग गोल कृमियों को मारने के लिए किया जाता है। तंतुकृमियों पर इसका प्रभाव कम होता है। अन्य कृमियों यथा चपटे कृमि एवं अंकुश-मुख-कृमि पर इसका प्रभाव नहीं के बराबर है। इसका प्रयोग सोने से पहले रात्रिमें ही करना चाहिए। दूसरे दिन प्रातः कोई जुलाब दे देना चाहिये।

अधिक मात्रा में इसका प्रयोग करने से वमन, अतिसार, कम्प, शिरःशूल, अरुचि एवं स्वेदाधिक्य आदि उपद्रव पैदा हो जाते हैं। अतः इसका प्रयोग अति सावधानी से करना चाहिये।

निष्कासन पद्धति

अप्रस्फुटित मंजरी दल को शुष्क करने के बाद चूर्ण कर लेते हैं। इस चूर्ण का उत्पत तेल भाप द्वारा निकाल लेते हैं। तेल निकालने के पश्चात चूर्ण की लुगदी को चूने के पानी में डालकर उबाला जाता है। उबालने पर लुगदी का पानी छानकर निकाल लिया जाता है और उस पानी में थोड़ा कास्टिक सोडा डाल दिया जाता है।

फिर कार्बन डईआक्साईड गैस उस पानी में छोड़ देना चाहिये। इससे चूना सब जम जायेगा। उस चूने को छानकर निकाल लेते हैं। छाने हुए पानी को गरम कर तेजाब डाल देते हैं। फिर ठण्डा कर लेते हैं। ठण्डा करने पर सैन्टोनीन नीचे तह में जमा हुआ रहता है। इसको सुरा से घोल लेते हैं और कोयले से रंगहीन करके स्फटिक बना लेते हैं। इस प्रकार शुद्ध सैन्टोनीन प्राप्त होजाता है।

व्यवसायिक महत्व

सैन्टोनीन की पैदावार में रूस मुख्य है। रूसी तुर्किस्तान में यह निकलता है। पाकिस्तान में भी यह बनता है। भारत में केवल काश्मीर में ही सैन्टोनीन का उत्पादन होता है। भारत की वार्षिक मांग है दो हजार पौंड, पर केवल एक हजार पौंड ही इस समय बन पा रहा है। इस कमी को पाकिस्तान या रूस से पूरा किया जा रहा है।

सैन्टोनीन का दाम इस समय ४००) प्रति पौंड है। इसको यदि विधि पूर्वक भारत में उगाने तथा निष्कासन करने का प्रयत्न किया जाय तो अच्छा व्यवसाय खड़ा हो सकता है, जो पर्याप्त लाभदायी रहेगा।

सहायक पुस्तकें

वेल्थ ऑफ इण्डिया, प्रथम भाग। दि इंडियन फार्मास्युटिकल कोडेक्स, १६५३। दि ब्रिटिश फार्मास्युटिकल कोडेक्स, १६५४। डिसिनल प्लान्टस ऑफ इण्डिया एण्ड पाकिस्तान, जे० एफ० दस्तूर। इण्डीजिनस ड्रग्स ऑफ इण्डिया, रामनाथ चोपड़ा। भारतीय भेषजतत्व, कार्त्तिक बसु (बंगला)।

[गुरुकुल पत्रिका से साभार]

देहलावण्य

[लेखक—श्री हरस्वरूप शर्मा, अहमदाबाद]

अन्य प्राणियों से नितान्त भिन्न सम्भवतः मानव मात्र को देह को सुडोल और सुन्दर बनाये रखने की विशेष इच्छा होती है। अन्य प्राणी इस इच्छा से मुक्त होते हैं, परन्तु अपनी क्रियाओं द्वारा शरीर को सुगठित और स्वस्थ रखते हैं।

केवल इच्छा से कोई कार्य नहीं होता। देहको बलवान बनाने के लिए कार्यसंलग्नता की अनिवार्य आवश्यकता है। शरी की वृद्धि पोषण से होती है, परन्तु यह वृद्धि ऐच्छिक भी हो सकती है और अनैच्छिक भी; स्थूल देह भी देखने में सुन्दर होती हैं परन्तु स्वास्थ्य की दृष्टि से उसका कोई मूल्य नहीं है। कार्य न करते पोषक द्रव्यों का सेवन करते रहने से शरीर के सभी अवयव शिथिल और मेदसी हो जाते हैं। वे कार्यक्षम नहीं रहते और धीरे २ सम्पूर्ण शरीर एक दिखानेकी वस्तु रह जाता है।

प्रकृति सदा मानवों को पुष्ट रहने की प्रेरणा देती है। बचपन में प्रत्येक शिशु अपने आपको दिन-भर खेलकूद करके स्वस्थ बनाये रखता है, प्रत्येक मनुष्य शरीर को स्वस्थ बनाये रखने के लिए बचपन की प्रकृति से ही काम ले तो वह सदा स्वस्थ रह सकता है।

शरीर का पोषण आहार से होता है परन्तु आहार का पाचन शरीर की क्रियाओं पर आश्रित है। जो खाकर पडे रहते हैं वे अजीर्ण, आमवात, मेदवृद्धि, हृदयरोग, मधुमेह आदि रोगों से पीडित होते हैं। अतः शरीर को आहार ग्रहण करने के योग्य बनाने के लिए उसको सक्रिय रखना आवश्यक है।

घूमने फिरने से लेकर अनेक प्रकार के शारीरिक व्यायाम शरीर को सक्रिय और चंचल बनाये रखने के साधारण साधन हैं।

मानव शरीर अङ्गों के बने हुए होते हैं [illegible] इन्हें जैसा भी बनाया जाय ये वैसे ही बनजाते [illegible] तदपि किसको किस प्रकार का व्यायाम हितकर है [illegible] प्रत्येक मनुष्य अपने आप निश्चित करले और [illegible] शरीर को व्यायाम द्वारा नित्य नवीन बनाये रखे [illegible] व्यायाम करने वाले को अति स्त्री प्रसंग, मद्य से [illegible] धूम्रपान, क्रोध, शोक, श्रम, दुष्ट विचार आदि त्याग करना चाहिए।

पण्डित नहेरू की रूस यात्रा काल में कुछ प्रतिनिधियों ने रूसके उपप्रधान मंत्रि श्री मिकोयान [illegible] प्रश्न पूछा "आप अपने देहलावण्य को इतना [illegible] किस प्रकार बनाये रखते हैं?" तब उन्होंने उत्तर [illegible] "परिश्रम से"।

—

निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ

कार्यालय

ऋषिकेश से देहली परिवर्तित

वैद्यसमाज एवं आयुर्वेद-जगत की [illegible] जानकारी के लिये सूचित किया जाता है कि [illegible] अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन, त्रिवेन्द्र[illegible] प्रस्तावानुसार नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ का [illegible] ऋषिकेश से देहली को परिवर्तित हो गया है। [illegible] पीठ कार्यालय का पता भविष्य में निम्नलिखित हो[illegible]

नि० भा० आयुर्वेद विद्यापीठ,
महालक्ष्मी मार्केट,
चांदनी चौक, देहली-६।

श्रीदत्त [illegible]
विद्यापीठ [illegible]

रत्नों के साथ तुलने वाली अनुपम पुस्तकें

४० से अधिक आयुर्वेदीय पुस्तकों के रचयिता प्रसिद्ध लेखक व चिकित्सक राजवैद्य डा० गणपतिसिंह वर्मा द्वारा रचित व प्रकाशित—यह वही पुस्तकें हैं जिनकी वैद्य, हकीम, डाक्टर और जनसाधारण मुक्तकंठ से प्रशंसा कर रहे हैं। जिनके विषय में देश के गणमान्य लोगों की सम्मति है कि इन पुस्तकों का प्रत्येक घर में होना आत्यावश्यक है। क्योंकि इनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक स्थान में सहसा हो जाने वाले रोगों का सरलतापूर्वक इलाज कर सकता है। प्रत्येक पुस्तक के कई २ संस्करण हो चुके हैं जो कि इनकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है।

अनुभूत योग चिन्तामणि

इसके लेखक ने ५ वर्ष तक लम्बी २ यात्रायें करके संन्यासियों की कठिनतम सेवा और भ्रमण के अथक परिश्रम के अतिरिक्त ५४३५ रुपये खर्च करके जो ५३३ जादू असर अनुभूत नुस्खे प्राप्त किये थे वह निष्कपट भाव से इस पुस्तक में प्रकाशित कर दिये हैं। भारतवर्ष के सैंकड़ों वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों ने इन सब नुस्खों की पचासों बार परीक्षा करके शत प्रतिशत अनुभूत होने के प्रमाणपत्र दिये हैं जिससे सिद्ध हो गया है कि इसमें एक भी ऐसा योग नहीं-जो अनुभूत सिद्ध न हो, सबके सब संन्यासियों के हृदय के गुप्त योग हैं। भारत के गणमंन्य हकीमों व वैद्यों का निर्णय है कि जिसके पास यह पुस्तक नहीं, निःसन्देह उसकी चिकित्सा और औषधालय अधूरा है। मूल्य प्रथम भाग पांचवीं आवृत्ति ४।) द्वितीय भाग ४) डाकखर्च जुदा।

१५ वर्ष के कठिन परिश्रम का फल

अनुभूत योग प्रकाश

आज से १५ वर्ष पूर्व जिस पुस्तक को प्रकाशित करने का आयोजन प्रकाशित किया गया था वह पुस्तक अब छपकर तैयार हो गई है। इस पुस्तक के योगों के विषय में केवल इतना बतला देना ही काफी होगा कि गत १५ वर्ष के सतत उद्योग से बड़े २ साधु, महात्मा, फकीरों, भीलों से लेकर राजा, रईसों तथा ख्यातिवान प्रसिद्ध विद्वान वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों के उन अनुभूत चमत्कारी योगों को इस पुस्तक के पृष्ठों पर अंकित कर दिया है—जिनको आज तक ज़माने की हवा भी न लगी थी। फिर इसके लेखक डा० जी० एस० वर्मा का नाम ही बड़ी ज़मानत है कि पुस्तक कैसी है। इसमें सबसे बड़ी वह रीसर्च आपको मिलेगी जिसे आज तक आपने सुना भी न होगा अर्थात् समुद्रीय द्रव्यों यथा मुक्ता शुक्ति, प्रवाल, शंख, कपर्दिका आदि का तेल बनाना। इन तेलों की तुलना में इन द्रव्यों की भस्में बहुत तुच्छ लाभ पहुँचाती हैं। इन तेलों से अनेक कष्टसाध्य कहे जाने वाले रोग शीघ्र मिट जाते हैं। दूसरी विशेषता यह है कि इन तेलों से उड़ने वाले सभी द्रव्य यथा पारद, हिंगुल (शिंगरफ) आदि स्थाई हो जाते हैं। इस पुस्तक में कोई ऐसा रोग नहीं छोड़ा जिस पर अनुभूत सिद्ध योग न छपा हो। मूल्य ६।) डाकखर्च ।।।=)

इन्जेक्शन बनाना व लगाना सीखो

इन्जेक्शन चिकित्सा तत्काल प्रभाव दिखाने वाली होने से आज लोकप्रिय हो रही है, किन्तु वैद्यों, हकीमों को इसकी जानकारी न होने से उन्हें बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड़ रहा है। इन्हीं भावों से प्रेरित होकर यह पुस्तक तैयार की गई है, जिसमें समस्त रोगों की चिकित्सा आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक और एलोपैथिक इन्जेक्शनों द्वारा ही करना बतलाया गया है। रोगशीर्षक के नीचे क्रमशः प्रत्येक रोग के तीनों प्रकार के इन्जेक्शन ऐसे ढंग से लिखे गये हैं कि जिससे चिकित्सक एक क्षण में निश्चय कर सकता है कि कौनसा इन्जेक्शन किस स्थान पर, कितनी मात्रा में, कितने अन्तर से, किस प्रकार लगाना चाहिये और साथ २ इन्जेक्शन बनाने की विधि भी लिखदी गई है। आयुर्वेदिक इन्जेक्शन जिन द्रव्यों से बनाये जाते

हैं वह तमाम आपके घर में, खेतों और जंगलों में सर्वत्र मिल सकते हैं। एक-एक रोग पर कई २ इन्जेक्शन बनाने के योग लिखे गये हैं। इसके अतिरिक्त सीरम, वैक्सिन, पेनिसीलीन, विटामिन्स के इन्जेक्शनों का वर्णन और उनको लगाने की सरल व निरापद सचित्र विधि भी खूब समझा कर लिखदी गई है। इस पुस्तकको पढनेके बाद इन्जेक्शनोंके विषयमें जानने को कुछ भी शेष न रहेगा और सब प्रकार के इन्जेक्शन तरल (लिकिड) टेबलेट व पौडरादि रूप में बना व लगा सकेंगे। मूल्य ५) डाकखरच ॥।-)

सिद्ध रसायन

रस-रसायन की जिन कठिन क्रयाओं से वैद्य बन्धु घबराकर उनके दिव्य गुणों से वंचित रह जाते हैं, उन क्रियाओं का लम्बा अनुभव करके विद्वान लेखक ने उनका सरल तरीका इस ग्रंथ में दर्शाया है और साथ ही महान रसायनाचार्य नागार्जुन और अन्य सिद्धों की संचिकाओं के अज्ञात योगों को उनकी गुत्थी सुलझाकर प्रकाशित किया है जिनसे पाठक न केवल काया (काया-कल्प) रंगने में ही सफल होंगे बल्कि स्थिर मति वाले माया (कीमियां) रंगने में भी सफल होंगे। इस प्रकार पाठकों को जहां आर्थिक संकट से मुक्ति मिलेगी वहां असाध्य समझकर छोड़ दिये जाने वाले रोगों के वे सिद्धहस्त चिकित्सक भी बन जावेंगे। इस पुस्तक के कुछेक योगों का दिग्दर्शन करा देने से आपको अनुमान हो जावेगा कि यह कितना अपूर्व ग्रन्थ है। यथा-शुद्ध बद्ध और सिद्ध करने वाली दिव्य औषधियां, औद्भिदाम्ल व बूटियां, रस बन्धन, गन्धक को स्थाई करना, बद्ध पारद को सिद्ध बनाना, रजत रंजन (कीमियां) अभ्रक सत्व की द्रुति, द्रुति से पारद बन्धन, बंग स्तम्भन, पारद भस्म रक्तयोगेन ताम्रोद्धार (कीमियां) तांबा और रजत (चांदी) वेधी सिद्ध हरताल, हरिताल कल्प देह व लौह वेधी, सिद्ध हरिताल; तैल, सिद्ध कुचला कल्प सर्व रोग हर फिटकड़ी रसायन (कल्प) पुरुषों के गोप्य रोगों पर रामबाण सिद्ध खादक, पारद गुटिका बंगवेधी, शिंगरफ मोमिया बनाना, नौसादर तैल, सिद्ध गोरखी जलमुद्रा; सिद्ध गन्धक एक गिरनारी महात्मा का योग जिसको बनाना अति सरल है और क्षय (T. B.) संग्रहणी जैसे अनेक भयंकर रोगों का सफल इलाज हैं

आदि। इसमें अन्य पुस्तकों की भांति जोड़-तोड़ कर एकत्र की हुई सामग्री नहीं है बल्कि लेखक के जीवन भर का अनुभव बन्द किया है। इसके पाठकों के लिये लेखक का सद्परामर्श और सहायता भी सदैव प्रस्तुत रहेगी। मूल्य ५) पो० ।॥)

संन्यासियों की चमत्कारी गुप्त बूटियां

इस पुस्तक में सैकड़ों ऐसी ही जड़ी-बूटियों के गुप्त रहस्य प्रकट किये गये हैं, जिनकी बदौलत संन्यासियों की धाक जमी हुई है। इनमें से अधिकांश बूटियां ऐसी हैं, जो आपको जंगल, खेत, बागीचों और पंसारियों की दुकानों पर मिल जावेंगी जिनसे आवश्कता पड़ने पर सिर से पांव तक के समस्त रोगों का इलाज हर जगह प्रत्येक आदमी आसानी से कर धन और यश कमा सकता है। इस पुस्तक के पढ़ लेने के बाद आप के पास रोगियों का तांता बंधा रहेगा। विषय सूची मुफ्त। ४५० पृष्ठ २ भाग मूल्य ५॥) डा० ख० ॥।≈)

गुप्त योग रत्नावली

इस पुस्तक में डा० नेगी के व निज के वह गुप्त योग प्रकाशित किये गये हैं जिनको भारत वर्ष के कोने २ से तथा अरब, मिश्र और अफ्रीका आदि प्रदेशों के विभिन्न स्थानों में जाकर लेखक ने प्राप्त किये थे। मूल्य २॥) डा० ख० ॥≈)

पेटेण्ट औषधियां व भारतवर्ष

संसार में सबसे अधिक लाभदायक व्यापार पेटेण्ट औषधियों का है। अमृतधारा और सुधासिन्धु के मालिकों ने १—१ पेटेण्ट दवा के नुस्खे से लाखों रुपया कमाया है। विलायती फर्में एक-एक पेटेण्ट दवा से बेहद रुपया कमा रही हैं। यदि उनकी तरह आप भी भारतवर्ष, इंगलैंड, अमरीका की प्रसिद्ध और लोक-प्रिय प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों की बिकने वाली पेटेण्ट औषधियों के नुसखे बिना किसी कष्ट के घर बैठे प्राप्त कर साधारण पूंजी से सैंकड़ों रुपये मासिक की आमदनी पैदा करना चाते हैं तो आज ही 'पेटेण्ट औषधियां और भारतवर्ष' नामक पुस्तक की एक प्रति मंगाकर पढें। १६७ योगवाली मूल्य ॥।≡)

यौवन के गुप्त रहस्य

लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन वापिस [आ]ने के अनुपम उपाय-पुरुषत्व और जवानी के वह [गु]प्त रहस्य, जिनको जानने से अशक्ति के ऐसे रोगी [जि]न्हें किसी दवा से लाभ नहीं हुआ या सैंकडों रुपये [क]ी दवा खाकर भी निराश बैठे हैं-निःसन्देह सशक्त बन [स]कते हैं। मनुष्य देह का वह केन्द्र जहां से स्वास्थ्य [औ]र यौवन का रस झरकर समस्त शरीर का पोषण [क]रता है, उस केन्द्र को शक्तिप्रदान करने के अनूठे [उप]ाय, जिससे लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन [पुन]: लौट आता है। पुरुषों के अकथनीय भयंकर रोग [बि]ना दवा सेवन किये ही किस प्रकार नष्ट हो जाते [हैं]। उर्ध्व रेता होने का वह प्रयोग जिससे पुरुष की [श]क्ति में कमी नहीं आती। रसग्रंथियोंसे आश्चर्यजनक [दव]ाइयां बनाने के प्रयोग। हजारों रुपये खर्च करके [ड]ा० बोरनाफ की बताई हुई बन्दर की रसग्रन्थि लगवाने [के] आपरेशन का कष्ट सहन किये बिना ही सुगमता से [प्रत्य]ेक स्त्री-पुरुष वही शक्ति कैसे प्राप्त कर सकते हैं। [इन]के अतिरिक्त पुरुषों के रोगों के सम्बन्ध में निदान व [अने]क गुप्त प्रयोग इस पुस्तक में दर्ज किये गये हैं, [जि]नको उपयोग करने वाला पुरुषत्व पर गर्व कर [सक]ता है। मूल्य २) डाकखरच ।।=)

हिन्दी से अंग्रेजी मैट्रिक

विश्व के ज्ञान, विज्ञान और व्यापार तथा कला-[कौ]शल को सीखने के लिए आज की विश्व-भाषा [अं]ग्रेजी का सीखना सबके लिए जरूरी है। इसको [सी]खना कोई कठिन भी नहीं है। जिस प्रकार अंग्रेज [मा]तायें अपने बालकों को अपने घरों में ही अंग्रेजी [सि]खा देती हैं ठीक उसी प्राकृतिक नियमानुसार यह [५]०० पृष्ठों की पुस्तक तैयार की गई, जिसे दो घंटा प्रति [दि]न पढ़ने से केवल हिन्दी पढ़े-लिखे व्यक्ति को भी चार [मा]स में भली प्रकार याद होजाती है। इसमें ए० बी० [सी०] डी० से लेकर आवश्यक ग्रामर (व्याकरण) अनुवाद [आ]दि इङ्गलिश की मैट्रिक तक का सब ज्ञान हिन्दी से [अंग्रे]जी और अंग्रेजीसे हिन्दीमें ऐसे सरल और सुबोध [ढंग] से ४८ पाठों में छपा है कि जिससे केवल अंग्रेजी में मैट्रिक की परीक्षा देनेवाले लड़के-लड़कियां निसन्देह पास हो जाते हैं। दसवां संस्करण अभी छपा है। मूल्य ३।।) डाकखरच ।।।)

७८६ वर्ष का प्राचीन रस ग्रन्थ

बसवराजियम—हजारों वर्ष पहिले दक्षिण भारत में चालुक्यवंशीय राजाओं का राज्य था। उनके प्रधान मन्त्री रुद्र साम्प्रदायी महान रसतन्त्रज्ञ बसवराज ने सं० १२२५ में इस सिद्ध साम्प्रदायिक अनुपम ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें भगवान रुद्र के अनुयायी बनों में विचरने वाले रसायनाचार्य नागार्जुन, नागबोधि, नित्यनाथ, चर्पटी, कणेरी, पूज्यपाद आदि योगियों का रसज्ञान भरा पड़ा है, श्री गोविन्दपादाचार्य के कथनानुसार शरीर को अजरामर करने में पारे की बराबरी करने वाली न तो कोई जड़ी बूटी है और न ही कोई रसायन और भस्म है। पारे में यह बड़े आश्चर्य की बात है कि वह स्वयं मूर्छित होकर रोगी के रोग को दूर करता है और बंधा हुआ होकर मुक्ति देता है तथा अच्छी तरह मरा हुआ दूसरों को जीवन देता है। आज मद्रास प्रान्तीय वैद्यों की जो प्रतिष्ठा, यश और कीर्ति सर्वत्र प्रसिद्ध हो रही है वह सभी इसी ग्रन्थ के योगों का प्रताप है। यह ग्रन्थ तैलंग भाषा में ताड़ पत्रों पर लिखा हुआ उपलब्ध हुआ था, जिससे अब तक तैलंग भाषा-भाषी वैद्य ही लाभ उठाते रहे, किन्तु यह जानकर आप अतीव प्रसन्न होंगे कि अब आयुर्वेद वृहस्पति श्री गोवर्धन जी शर्मा छांगाणी के अतुल परिश्रमके फलस्वरूप आज यह ७८६ वर्षका प्राचीन तैलंग हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ हिन्दी भाषा में भी हमारे द्वारा प्रकाशित होगया है। इस ग्रंथ के विषय में कहा गया हैं कि सतयुग में चरक, त्रेता में रसार्णव तथा द्वापर में सिद्ध विद्याभू का महात्म्य है उसी प्रकार कलियुग में बसवराजियम पूज्य ग्रंथ है। इसमें जो निदान, लक्षण प्रत्येक रोग के बतलाये हैं। उनको समझ कर इसमें वर्णित योगों द्वारा जो चिकित्सा करेगा, भगवान रुद्र की कृपा से निःसन्देह वह सर्वत्र यश और सिद्धि प्राप्त करेगा। २५ प्रकरणों वाले सम्पूर्ण ग्रन्थ का मूल्य ८।।) डाकखरच १=)

पता—रसायन फार्मेसी ३, दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली।

हमारा अन्वेषण कार्य

संसार में मानव रोगों की निरापद चिकित्सा के लिए नैसर्गिक जडी बूटियों का प्रमुख स्थान है क्योंकि हमारा शरीर प्राकृतिक है। वेद में भी वनौषधियों की प्रशंसा की है:—

औषधायः समवदन्त सोमेन सहराज्ञा।
यस्मै कृष्णाते ब्राह्मणस्तं राजनं पारयामसि ॥

यजु० १२ । ९६

भावार्थ—औषधियां अपने राजा सोम (चन्द्र) के साथ बोलीं कि हे राजन ब्राह्मण जिस रोगी के लिए हमारा उपयोग करता है उस रोगी को वह रोगरूपी सागर से पार करता है।

इस संस्था के प्रवर्तक कवि० डा० गणपतिसिंह वर्मा ने गत २७ वर्षों में जिन प्रभावजन्य अज्ञात अनुभूत योगों, द्रव्यों और जडी-बूटियों का ज्ञान संग्रह किया है वह चिकित्सकों और जनसाधारण से अप्रकट नहीं है। तद्‌विषयक उनके द्वारा लिखी गई दरजनों पुस्तकें और सैंकडों लेख इस बातके स्पष्ट प्रमाण हैं। इस चौथाई शताब्दी की निरन्तर खोज और योगों तथा द्रव्यों के अन्वेषण तथा परीक्षण ने रोगग्रस्त मानव को रोगमुक्त करने का नया मार्ग खोल दिया है। जो-जो योग अब तक के परीक्षण में सहस्रों रोगियों पर सफल सिद्ध हो चुके हैं उनको ही पेटेण्ट औषधियों का रूप दिया गया है। इनमें अनेक जानी पहचानी और अज्ञात औषधियां हैं जिनके अनुभूत गुणों का विवेचन न शास्त्र में मिलता है और न ही प्राचीन निघण्टुओं और आधुनिक मेंटरिया मेडिकाओं में। यह अनुभव का ही फल है। पर एसे सौभाग्य की एसी देन दुर्लभ होती है जिनके बारे में पहले कुछ नहीं कहा जा सका। नई उपयोगी औषधियों में से अधिकांश का लम्बे तथा गहरे अनुसन्धान के बाद ही पता चला करता है और इस पर बडा व्यय हुआ करता है। आधुनिक युग में जिन कुछेक रसायनों को महत्वहीन समझा जाता था—अनेक वर्षों के अनुसन्धान के बाद उनकी उपादेयता का अब पता चला है। अनुभूत योगों में जो कुछ अद्‌भुत अचिन्त्य शक्ति का परिचय मिलता है उसका पता पृथक्करण व हेतु से नहीं लगता। उसे प्रभावजन्य समझना चाहिये। प्रस्तुत लघु सूचीपत्र में कतिपय ऐसी ही अनुसन्धानित आयुर्वेदिक पेटेन्ट औषधियों का सार दिया गया है जो वास्तविक अर्थों में अनुभूत, प्रमाणित और विश्वासजन्य हैं, जिनके निर्माण में स्वच्छता: द्रव्यों की विशुद्धता, [...] से प्राप्त होने वाली वनस्पतियों की प्राप्ति, योग द्रव्यों [...] पूर्णता व निर्माण पद्धति पर पूरा नियन्त्रण रखा जाता है [...] चिकित्सक व रोगी सन्तोषपूर्वक इन औषधियों पर [...] सकते हैं। यह औषधियां चिकित्सक को यश दिलाने [...] को रोगमुक्त करने में अपूर्व है। आपसे प्रार्थना है कि [...] का गोरव बढाने के लिए आप इस संस्था की औषधियों [...] प्रयोग में लाकर तथा अधिकाधिक प्रचार करके हमें [...] प्रदान करें।

खालिसा

यह कुछेक गंजनाशक जड़ी-बूटियों द्वारा [...] दवा है। सिर की चांद में या दाढी, मूंछ में [...] बाल उड़कर गंज पड़ गई हो वहां इसको मलने [...] बाल ऊग आते हैं और गंज मिटजाती है। मू० ५) [...]

केशिनी

यह तैल दिमागी कमजोरी, थकावट [...] दरद को दूर करता है। दिमाग को ताजा और [...] रखता है, खुजली, भूसी को दूर करके झड़ते [...] रोकता है। कुछ दिन निरन्तर लगाते रहने से [...] और बालों का सफेद होना रुक जाता है। कु[...] केश टानिक जड़ी-बूटियों के रसों को विशेष [...] पचाया जाता है, जलाया नहीं जाता जिससे [...] सब तत्व तेल में अक्षुण्ण रहते हैं और अ[...] प्रभाव करते हैं। मूल्य ४ औंस १॥) एक पौं[...]

बुधान

अधिक मानसिक परिश्रम, चिन्तन, [...] या किसी अकथनीय कारण से जिनका दिमाग [...] हो गया है, स्मरणशक्ति घट गई है, हृदय दु[...] है, सिर में हल्का २ दरद और थकावट रहती [...] लिए 'बुधान' बहुत लाभदायक है। इसके [...] उपरोक्त दोष मिट जाते हैं। दिमाग पुष्ट हो[...]

शक्ति तीव्र हो जाती है। इससे उन्माद तक के रोगियों को लाभ हुआ है। बुद्धिजीवी लोगों के लिए वरदान स्वरूप है। मूल्य ४) डाकखरच १।)

टंकरोल

दो दिन में इसकी ६ मात्राओं के सेवन से जुकाम (प्रतिश्याय) ठीक हो जाता है। दो खुराक खाने से ही शिर का भारीपन, छींकें आना, नाक से पानी बहना आदि दूर होजाता है। इसका प्रभाव श्लेष्मकला पर होता है। २४ मात्रा की शीशी का मूल्य १) छः मात्रा का नमूना ।≈)

निद्राणी

स्वास्थ्य के लिए निद्रा उतनी ही आवश्यक है जितना कि भोजन, जल और शुद्ध वायु। भोजन के पचन और सात्म्यीकरण से शरीर की प्रत्येक सेल को अपनी स्थिति बनाये रखने की सामग्री मिलती है तो पूर्ण निद्रा से आराम मिलने के कारण घिसी हुई सेलों का पुनः निर्माण हो जाता है और खरच हुई शक्ति पुनः संचित हो जाती है। यदि युवा पुरुष को रात्रि में ६-७ घण्टे निरन्तर गहरी नींद नहीं आती या बीच २ में टूट जाती है तो यह मस्तिष्क धमनियों की कठोरता, पाचन सम्बन्धी रोग, विबन्ध, ब्लडप्रेसर (रक्तचाप) नाडी दौर्बल्य आदि व्याधियों का लक्षण है। 'निद्राणी' इन सब अवस्थाओं में अपना निश्चित प्रभाव दिखाती है। कुछही मात्राओं के सेवन से रात्रिभर खूब गहरी नींद आने लगती है और प्रातःकाल उठने पर देह में स्फूर्ति और मन प्रफुल्लित होता है। इसमें कोई मादक या विषैला द्रव्य नहीं है। मूल्य ४) आधाकोर्स २॥) डाकखरच १।)

नेत्राण

आंखों का दुखना, नेत्र पीड़ा, लाली, जलन, खुजली, सूजन, कीचड़ आना तथा अन्य नेत्र रोगों में परम लाभकारी है। दो बून्द नेत्रों में डालते ही ठंडक पड़ जाती है और २-४ दिन डालनेसे आराम होजाता है। वैसे ही कभी २ डालते रहने से नेत्र साफ रहते हैं और कोई रोग नहीं होने पाता। मूल्य ॥)

नाग सुरमा

यह सुरमा रसायनिक प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है। यह सभी नेत्र रोगों में लाभकारी है। दृष्टि-मन्दता, दूर या निकट कम दिखाई देना, तिमिर, धुन्ध, जाला, आंखों से पानी बहना आदि रोगों को नष्ट करके दृष्टि को तेज बना देता है। लगाते ही नेत्रों में ठंडक प्रतीत होती है। ६ माशा की शीशी १॥।) तीन माशा १)

हनीक

इस दवा का प्रयोग आपको मोतियाबिन्दु के आपरेशन के कष्ट से बचा सकता है। प्रारम्भिक मोतिया इससे मिट जाता है किन्तु बढा हुआ मोतिया आगे बढने नहीं पाता तथा निरन्तर कई मास लगाते रहने से आराम भी हो जाता है। मूल्य ५)

पायोगन

यह पायोरिया की सफल दवा है। इस दवा को दांतों पर मलकर ५ मिनट लगा रहने दो और फिर कुल्ला कर डालो। इस प्रकार प्रातःकाल, दोपहर और रात्रि को सोने से पहिले लगानेसे मसूढों का गला हुआ मांस भरने लगेगा, पीप और रक्त का बहना बन्द होकर हिलते हुए दांत मजबूत हो जाते हैं। मूल्य २॥)

दन्तद्युति मंजन

यह मंजन मसूढे फूलना, दन्त पीड़ा, पानी लगना, मैल जमना, खून जाना, मुख में दुर्गन्ध आना आदि अनेकों रोगों को दूर करके दांतों को स्वच्छ चमकदार बनाता है। लगाने के बाद मुख से सुगन्धि आने लगती है। मूल्य ॥)

चवसोमला

दमा के लिए यह परीक्षित दवा है। इसका प्रभाव श्वास प्रणाली और स्वरयंत्र पर होता है। इसके सेवन से नाडी मण्डल की उत्तेजना शान्त होकर श्वासनलिकाओं का प्रसार होता है जिससे रोगी सुख का सांस लेता है और उसका कष्ट दूर हो जाता है। पूरा कोर्स समाप्त हो जाने के बाद श्वासनलिकायें पूर्ण स्वच्छ और फेफड़े पुष्ट हो जाते हैं। फिर कभी दमा का दौरा पड़ने का भय नहीं रहता। मूल्य ५)

कफ कर्श

यह नई और पुरानी हर प्रकार की खांसी में लाभदायक है। इसके सेवन के कुछ ही देर बाद धसक में आराम होने लगता है और कुछ ही दिन सेवन करने से पूरा आराम हो जाता है। मूल्य १)

दिलावरी

इस दवा का प्रभाव हृदय और फेफड़ों पर होता है जिससे हृदय की धड़कन, कमजोरी, शूल, शिथिलता, दाह, घबराहट, तृषा, आदि दूर होकर हृदय तथा मस्तिष्क ताजा और पुष्ट हो जाता है। मूल्य ५)

हृदय रोग की दवा 'हीरा भस्म' विशेष

हृदय रोगों का सर्वोपरि इलाज यह हीरा भस्म है। इसके सेवन से भयंकर हृदय रोग को भी अवश्य आराम हो जाता है। यह हृदय उत्तेजक और शूलहारि होने से हृदय शूल (जिसमें भयंकर दाह होकर मूर्च्छा आ जाती है) तथा मिथ्या हृदयच्छूल जो हृदय यन्त्र के बाहिर चलता है दोनों पर अपना तत्काल प्रभाव दिखाती है। यदि धमनियों में रक्त संग्रह होता हो या अवरोध होता हो तो उसे भी दूर करती है एवं वात-नाड़ियों को बल देकर रोग को निर्मूलकर देती है। यह भस्म एक बूटी के काथके साथ सेवन की जाती है। अनुपान की बूटी सहित २० मात्रा का मू० ५०) पो० १)

आमाशयम

दिनभर कुर्सी या गद्दी पर बैठकर काम करने वालों का आमाशय (मेदा) प्रायः दुर्बल हो जाता है, कारण झुककर बैठने से आमाशय पर दबाव पड़ता है जिससे उसके क्रिया संचालन में वाधा पड़ती है और धीरे २ वह निष्क्रिय सा होता चला जाता है। फिर भोजन पचन उचित रूप से नहीं होता और भांति २ की उदर सम्बन्धी व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं। यदि आमाशय कठोर हो जाये तो खाने की औषधियां बहुत कम लाभ पहुँचाती हैं। 'आमाशयम' आमाशय पर मालिश करने की दवा है जो लगाते ही त्वचा में प्रविष्ट हो जाती है। यह खाने की दवाइयों की अपेक्षा शीघ्र लाभप्रद है। इसके प्रयोग से आमाशय सबल होकर अपना कार्य सुचारु रुप से करने लगता है। मूल्य एक औंस का ४) डाकखरच सवा रुपया।

अमोनिरी

यह हमारी नव अनुसन्धानित विशेष वनस्पतियों द्वारा निर्मित और दो वनस्पतियों द्वारा भावि[illegible] योग है जिसे दीर्घ परीक्षण के बाद अब प्रकाश में ला रहे हैं। यह औषधि आजकल के बहुप्रचलित पेट रोगों और उनके उपसर्गों यथा—आंत की सूजन व शूल, [illegible] वायुविकार, मल की सड़न से उत्पन्न होने वाले वि[illegible] दोष, गैस चढ़ना, अम्ल पित्त, आंव, जीर्ण कब्ज, भू[illegible] न लगना, खून की कमी, नींद न आना, बुढ़ापा ला[illegible] याली अम्लता, जोड़ों का दर्द व खांसी, जुकाम आ[illegible] के लिए अद्भुत गुणकारी सिद्ध हुई है। आमाश[illegible] और आंतें बलवान होकर भूख खूब लगती है। स्व[illegible] रक्त बनने से शरीर पुष्ट हो जाता है। मूल्य एक को[illegible] ४) डाकखरच १।)

लीवर शर

यह दवा यकृत सम्बन्धी सभी रोगों के लि[illegible] हितकर है। लीवरसार युक्त इस दवा के सेवन [illegible] शारीरिक मानसिक कमजोरी, यकृत दुर्बलता, [illegible] और पीत पाण्डुरोग, हाथ पांव की सूजन, सांस फूल[illegible] आदि विकार मिटते हैं। मूल्य २।)

कोलरास

हैजा की प्रत्येक दशा में इसके सेवन से [illegible] हो जाता है। अब तक के परीक्षण में अद्भुत [illegible] कारी सिद्ध हुई है। प्रति वर्ष हजारों रोगी इसके [illegible] से स्वास्थ्य लाभ करते हैं। मूल्य १।) मात्र

ग्रहणी शाल

नई संग्रहणी में इसको ७ दिन सेवन करने [illegible] ही पूरा आराम हो जाता है। ३ मात्रायें सेवन [illegible] ही इसका विशिष्ठ गुण दृष्टीगोचर होने लगता [illegible] पुरानी संग्रहणी में २ से ३ सप्ताह सेवन [illegible] आवश्यक है। एक सप्ताह की दवा का मूल्य ३)

वैज्ञानिक आयुर्वेदीय नवीन सफल आविष्कार

रसायन एग्यु मिक्श्चर

[डा० जी० एस० वर्मा द्वारा आविष्कृत जगत प्रसिद्ध दवा]
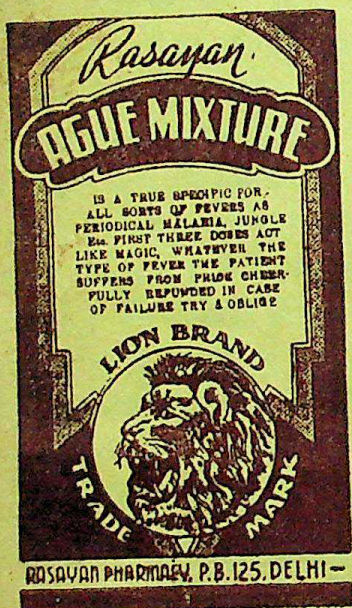
इस समय तक आयुर्वेदिक का दम भरने वाली बड़ी २ फर्मों के विभिन्न नामों से जितने मिक्श्चर प्रचलित हैं–प्राय: सब में क्वीनीन का मिश्रण होता है । किन्तु 'रसायन एग्युमिक्श्चर' में क्वीनीन का किंचितमात्र भी समावेश नहीं है । तथापि इसने कीनीन के प्रभाव को भुला दिया है । यह क्वीनीन से उत्पन्न होने वाले दोषों से रहित हैं । मलेरिया ज्वर की खास दवा है । आप क्वीनीन के मुकाबले में इससे शीघ्र रोगी को ज्वर मुक्त कर सकते हैं। जिन्होंने परीक्षा करली है–वे डाक्टर मलेरिया ज्वर से पीड़ित रोगी को यही मिक्श्चर पिलाते हैं । यह मलेरिया ज्वर को दो दिन में मिटा देता है । तिल्ली और यकृत के लिए भी अकसीर है । डाक्टरों, वैद्यों, हकीमों द्वारा परीक्षित, भारतवर्ष में प्रमाणित, अन्य सबसे सस्ती और सबसे अधिक गुणकारी दवा है । प्रत्येक वैद्य को क्वीनीन का मोह छोड़कर 'रसायन एग्युमिक्श्चर' की एजेन्सी लेना चाहिए ऐसा करने से निसन्देह वैद्य को यश मिलेगा और आयुर्वेद का गौरव बढेगा । ४ औंस की शीशी का मूल्य १।) है । जिस नगर या कस्बे तथा गांव में एजेण्ट नहीं हैं–वहां एजेण्टों की आवश्यकता है । एजेन्सी नियम मंगाकर देखें । थोक भाव ४ औंस पैकिंग १ गुरस का १२०) छ: दरजन ६५) तीन दरजन ३४) रु० । पैकिंग खरच माफ । थोक भावों पर कमीशन नहीं मिलेगा । अभी से आर्डर बुक कराने वाले माल समय पर पा सकेंगे बाद में आर्डर मिलने के बाद १० से १२ दिन के अन्दर अन्दर माल रवाना होगा ।

पता—रसायन फार्मेसी (३ दरियागंज) पो० बो० ११२५ देहली

एजेण्ट—किशोरीलाल भगत, तीन पहाड़ (संथाल परगना)

(२) डा० आर० बी० अग्रवाल, पूअर डिस्पेंसरी, गुलाब वाड़ी, अजमेर

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा ... प्रिंटिंग प्रेस देहली में छपकर प्रकाशित

रसायन

सितम्बर १९५५

वर्ष ८ वार्षिक ३)

वाचनालय अंक ३ इस अंक का ।=)

सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा० गणपति सिंह वर्मा

विषय अनुक्रमणिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
शिक्षा		४६
हकलापन की चिकित्सा	श्री० विश्वनाथ उपाध्याय वैद्य आयुर्वेदाचार्य	५०
मधुमेह (Diabetes-Mellitus)	श्री० गौरीलाल चानना बी० ए०	५१
आंत्रवृद्धि हार्निया पर मेरा अनुभव	श्री० लक्ष्मीनारायण वैद्य विशारद	५४
रक्तचाप की व्याधि और उसका इलाज		५६
आयु का प्रमाण	श्री० पं० शिवराम जी द्विवेदी वैद्य	५७
कायाकल्प की शास्त्रीयता	श्री० वैद्य 'पंचानन' गंगाधर शास्त्री गुणे	६२
श्वास और दमा	श्री० सीताराम गोस्वामी	६४
अनुभूत योग रत्नावली		६७

रसायन फार्मेसी देहली का प्रमुख सचित्र मासिक पत्र

'सिद्ध रसे करिष्यामि, निर्दारिद्रय मयं जगत् ।'

वर्ष ८	देहली सितम्बर १९५५	अङ्क ३

❀ शिक्षा ❀

"अपापशक्रस्ततनुष्टिमूहति तनूशुभ्रं मघवा यः कवासखः"

(ऋ० ५।३४।३)

जो ईश्वर भक्ति करता है, उत्तम मार्ग पर चलता है, उसको ईश्वर बढ़ाता है, शक्ति प्रदान करता है, किन्तु जो ततनुष्टि है, दिन-रात विषयों में ही फंसता जाता है, तनूशुभ्र=शरीर की ही सजावट बनावटमें लगा रहता है और 'कवासख' अर्थात् जो कुत्सित संगति में रहता है जिसके मित्र तथा साथी कुत्सित आचरणी हैं उसको सर्वशक्तिमान् ऐश्वर्यशाली परमात्मा (अप अप ऊहति) नीचे ही गिराता रहता है, मिटा देता है, विनाश कर देता है।

हकलापन की चिकित्सा

(लेखक—विश्वनाथ उपाध्याय वैद्य, आयुर्वेदाचार्य)

यह अति प्रचलित रोग है। इस रोग से पीडित व्यक्ति को बोलने में शब्दोच्चारण अस्पष्ट तथा रुक रुककर होता है। इसको हिन्दी में 'हकलापन' बोल लगना 'तोतलाना' आदि कहते हैं तथा हिकमत वाले इसे 'लकनत' और एलोपैथी वाले 'स्टूटेरिंग' कहते हैं। इस रोग से पीडित व्यक्ति सभा-समितियों में बोलने में अति संकुचित होते हैं, क्योंकि एक तो वे स्पष्ट बोल नहीं सकते, दूसरे अपने मनोगत भाव भी स्पष्ट रूपमें प्रकट करने में असमर्थ होते हैं, इस रोग के प्रतिकार के लिए प्राचीनकाल से अब तक बराबर प्रयत्न हो रहे हैं किन्तु पूरी सफलता नहीं मिल रही है। अस्तु, यहां मैं इस रोग के मुख्य कारण, लक्षण और चिकित्सा का यथामति उल्लेख करता हूँ।

रोग का मुख्य कारण

यह निम्नलिखित कारणों से उत्पन्न होता है। पक्षाघात (लकवा) का आक्रमण (जिव्हा की नसें मोटी पड जाना) जिव्हा के स्नायुओं में विकार उत्पन्न हो जाना। ऐसी स्थिति में स्नायु ढीले और सुस्त होजाते हैं तथा जीभ को बोलने या हिलने से रोक देते हैं। जिससे अटक अटक कर बोलना पडता है। आयुर्वेद में इस रोग को वात कफ जन्य रोग माना गया है। देखिए निम्नलिखित श्लोक से इस रोग का स्पष्ट बोध होता है।

आवृत्य वायुः सकफो धमनीः शब्दवाहिनीः।
नरान्करोत्यक्रियकान् मूकमिन्मिनगद्गदान्॥
—मा० नि०

वायु और कफ द्वारा शब्दवाहिनी (धमनी) सिराओं के आवृत्त होजाने पर मनुष्य शब्दों का उच्चारण नहीं कर पाता।

लक्षण

यदि उपरोक्त रोग पक्षाघात या ऐंठन तथा सन्निपात के कारणों से उत्पन्न हुआ हो तो उपरोक्त रोग भी मौजूद होंगे। यदि कफ के कारणों की वृद्धि से हो तो जीभ बोझिल होगी और मुख से बार बार थूक निकलेगा। रोगी कफ प्रकृति का होगा, तो कफ वृद्धि के दूसरे लक्षण पाये जायेंगे। चिकित्सा करने के पूर्व यह ध्यान रखना आवश्यक होता है कि मूल कारणों को सूक्ष्म रूप से छानबीन करके उन कारणों को दूर कर लिया जाय तभी सफलता मिलती है। उदाहरण के तौर पर यदि पक्षाघात उपरोक्त रोग का कारण हो तो प्रथम पक्षाघात की चिकित्सा करके तब उपरोक्त रोग की चिकित्सा करना लाभप्रद होता है।

चिकित्सा

कफवृद्धि के कारणों पर निम्नलिखित दस्तावर औषधियों का एक-एक सप्ताह प्रयोग कर पेट साफ कर लेना आवश्यक होता है।

वनफशा पुष्प दस माशा, उन्नाव पांच माशा, लिसोढा नौ नग, गावजवां पांच माशा, मुलहठी छिली हुई पांच माशा, खतमी के बीज सात माशा, खुब्बाजी के बीज दस माशा, मुनक्का एक तोला।

प्रयोग

रात को गरम जल में भिगोकर प्रातःकाल मल कर छानलें एवं खमीरा वनफशा दो तोला के साथ एक सप्ताह पीना चाहिये।

(शेष पृष्ठ ७० पर पढ़ें)

मधु-मेह Diabetes Mellitus.

(लेखक—श्री गौरीलाल चानना, बी० ए० वैद्यवाचस्पति)

गतांक से आगे

मधुलीन की मात्रा आवश्यकता से अधिक लेने पर उसकी प्रति क्रिया बड़ी भयानक होती है। अतः इसके सूचीवेध देते समय बड़ी सावधानी रखनी चाहिये। मधुलीन प्रतिक्रियाके लक्षण उत्क्लेद, अधिक भूख, सिर दर्द, पसीना आना, त्वचा की आर्द्रता, नाड़ी की स्थूलता तथा हृदय की गति का बढ़ना और कभी २ मूर्च्छा यह मुख्य लक्षण हैं। इनमें से किसी लक्षण के प्रकट होते ही मधुलीन तुरन्त बन्द करदें। रोगी के मुखमें द्राक्षौज की डलिया डालें तो रोगी ठीक हो जायगा। एपीनैफ्रीन नामक दवा का सूचीवेध १/२ से १ सी० सी० की मात्रा में भी लाभ करता है।

मधुलीन प्रतिक्रिया और मधुमेह सन्यास का परस्पर भेद करना बड़ा आवश्यक है क्योंकि इन दोनों की चिकित्सा एक-दूसरे के ठीक विपरीत है। अतः इस विषय में भूल होने पर रोगी के प्राण का संकट हो सकता है। सबसे बड़ी पहचान तो मूत्र परीक्षा है। सन्यास में कीतोनांश और शर्करा मूत्र में होगी जबकि मधुलीन प्रतिक्रिया में मूत्रमें शर्करा बिल्कुल न होगी। सन्यास में शुष्क त्वचा, गहरे श्वास और श्वास में चुकोन (एसीटोन) की गन्ध यह लक्षण मधुलीन प्रतिक्रिया से भेद करने के लिए पर्याप्त हैं। मधुलीन प्रतिक्रिया के लक्षण एकदम से प्रकट होजाते हैं जबकि सन्यास का आक्रमण धीरे २ होता है।

मधुमेह सन्यास में रोगी को आराम से गरम बिस्तर पर लिटा दें और तत्काल मधुलीन की बहुत बड़ी मात्रा दें। घोर मूर्च्छा में जबकि रक्त में शर्करा की मात्रा ५०० मिलीग्राम प्रति सौ सी० सी० तक पहुँच चुकी हो तो सौ यूनिट तक का अन्तःशिरा सूचिवेध दे दिया जाता है। पहले ३ घण्टा में ३०० यूनिट तक मधुलीन दी जा सकती है।

अधस्त्वक् सूचीवेध विधिसे क्षारीयजल १००० सी० सी० की मात्रा दिया जाता है। रक्त शर्करा जब कम होकर २०० c.c. तक आजाय तो क्षारीय घोल में थोड़ा द्राक्षौज दें ताकि इन्सूलीन की प्रति क्रिया होने का भय न रहे। उस समय रोगी के भोजन में भी कज्जलोदेत की कुछ मात्रा भी सम्मिलित करें। मूत्र में शर्करा की मात्रा २% पर आजाय और उस में कीतोनांश न हों तो रोगी को भयानक अवस्था से बाहर समझें।

३—भोजन व्यवस्था और इन्सूलीन के अतिरिक्त मधुमेह के रोगी को चिन्ता, भय, अधिक परिश्रम, रात्री जागरण आदि से बचाकर रखें। उसके छोटे से छोटे कष्ट की ओर से भी असावधानी न करें। विशेष रूप से मूत्र संस्थान—फुफ्फुसों दांतों आदि में कहीं भी साधारणसा व्रण का चिह्न मिले तो तुरन्त उसका उपचार करें। मधुमेह में उपद्रव स्वरूप हुये यह कष्ट रोगी के लिए भयानक सिद्ध हो सकते हैं। तीव्र व्यायाम रोगी के लिये हानिकारक है, साधारण टहलना आदि ऐसा परिश्रम जिससे थकावट न हो और चित्त प्रसन्न हो, वर्जनीय नहीं, अपितु लाभकारी है।

४—आयुर्वेदिक औषधियां:—आयुर्वेदीय ग्रन्थों में लोह, नाग, वंग, अभ्रक तथा स्वर्णभस्म, शिलाजीत अहिफेन आदि के कई योगों का प्रयोग मधुमेह के लिये लाभकारी लिखा है। इन योगों के लम्बे काल तक सेवन से रक्त में शर्करा की मात्रा बढ़ने नहीं पाती और रोगी का स्वास्थ्य भी बना रहता है। उदाहरणार्थ वसंत कुसुमाकर, शिलाजित्वादि वटी, जातिफलादि वटी और वृ० सोमनाथ रस आदि के नाम उल्लेखनीय हैं। इनमें से वसन्त कुसुमाकर अनुभव में विशेष रूप से लाभदायी सिद्ध हुआ है। परन्तु तीव्रावस्था में रोगी के प्राण रक्षार्थ इन्सूलीन का ही सहारा लेना पड़ता है। हां जीर्णावस्था में अल्प आयुर्वेदिक योगों का प्रभाव अवश्य उल्लेखनीय है।

प्रभावशाली वनस्पतियां

वनस्पतियों में से भूमि आमला, विजयसार लकड़ी और जामुन गुठली मज्जा का प्रयोग वैद्यों में प्राचीन काल से प्रचलित है। इनमें से पूर्वोक्त तीनों अनुभव में लाभकारी सिद्ध हो चुकी हैं। जामुन के फल और उसकी गुठली की मज्जा का चूर्ण रूप में सेवन करने से मधुमेह को लाभ होता है। विजय सार काष्ठ का टुकड़ा मधुमेही को पानी पीने वाली सुराही में डाल देते हैं और पीने के लिये उसे सदा यही जल दिया जाता है। विजय सार लकड़ी जल में डालने से उसका वर्ण हलका नीलगूं सा हो जाता है। इसका प्रयोग हिम और फाण्ट के रूप में भी होता है। भूमि आंवला को रात को जल में भिगोकर उस हिम जलमें आधा निम्बू रस मिलाकर लेते रहने से शर्करा की मात्रा घट जाती है।

गुड़मार बूटी के पत्ते मुख में चबाने से जिह्वा की मिठास ज्ञान की शक्ति पूर्णतः नष्ट हो जाती है। खांड, गुड़ आदि मीठी वस्तुयें खायें तो वह बिल्कुल फीकी मालूम देती हैं। सम्भवतः यही बात देखकर इस का प्रयोग मधुमेह में यह समझकर होने लगा कि शायद रक्त में बढ़ी हुई मिठास का भी यह उसी प्रकार निरा- करण कर देती होगी। परन्तु मधुमेह रोगियों पर किये गये प्रयोगों से इस तथ्य की पुष्टि नहीं हो सकी, इस लिये मधुमेह में इसका प्रभाव संदिग्ध है।

एक नई वनस्पति

अभी थोड़े दिन पूर्व मुरादाबाद निवासी एक रेल टिकट चेकर मेरे पास आये और उन्होंने एक वृक्ष के पत्ते दिखाते हुए कहा कि मेरे परिवार के एक मधुमेही को इन पत्तों की चाय बनाकर पीने से अद्भुत लाभ हुआ है। इन पत्तों को मसलने से साईट्रोनिला तेल की सुगन्ध आती थी। उन्हीं सज्जन ने बताया कि इस का वृक्ष यूकेलिंप्टस के समान ऊंचा होता है। पत्ते का आकार भी वही होता है, तलाश करने पर यह वृक्ष देहली में ही एक बाग में मिल गया। मैंने इसके पत्ते एक एम० बी० बी० एस० अनुभवी वृद्ध डाक्टर को एक रुग्णा को उन्हीं के द्वारा दिये। साथ में हर समय विजयसागर का जल पीने के लिये कहा। ८-१० दिन बाद उन डाक्टर साहब की ओर से सूचना मिली कि उनकी रुग्णा को केवल इन्हीं दो औषधियों के सेवन से आश्चर्यजनक लाभ हुआ है और उन्हों ने यह दोनों वस्तुयें पुनः मंगवा भेजीं जो उन्हें पहुँचा दी गईं। उपरोक्त वृक्ष यूल्किप्टस जाति का कोई विदेशी वृक्ष है। आयुर्वेदिक निघंटु में इसका कोई वर्णन नहीं। अतः इससे अधिक इसका परिचय देना सम्भव नहीं। विद्वान वैद्य इसे खोजकर अपने रोगियों पर अनुभव करें।

मधुमेह के उपद्रव

मधुमेह में रोगी की क्षमता शक्ति बहुत कम हो जाती है अतः अनेकों प्रकार के विचार उसे आ दबाते हैं। कोई साधारण सा भी रोग मधुमेही को हो जाय तो उसे ठीक करना कठिन हो जाता है।

धमनी काठिन्य, दृष्टि दौर्बल्य, मधुमेह पिडिका पादकोथ-नाडी शोथ-योनि कण्डू राजयक्ष्मा आदि इनमें विशेष रूप से उल्लेखनीय हैं, इन उपद्रवों की चिकित्सा करते समय मधुमेह की चिकित्सा भी साथ २ करनी पड़ती है।

पादकोथ होजाने पर रुग्ण के टांग का छेदन कराना पड़ता है। धमनी काठिन्य से रक्त चापाधिक्य तथा उसके परिणामस्वरूप होने वाले अन्य कष्ट होजाते हैं। राजयक्ष्मा हो जाय तो उनकी अपनी चिकित्सा करनी पड़ती है अन्य उपद्रवों में मधुमेह की चिकित्सा से पर्याप्त लाभ होता है। आवश्यकता पड़ने पर तत्त-त्संथान सम्बन्धी उपचार साथ में किये जा सकते हैं। दृष्टि दौर्बल्य, योनिकण्डु का कष्ट तो मधुमेह ठीक होते ही अच्छे हो जाते हैं। नाडी शोथ में मधुमेह चिकित्साके साथ खाद्योजांश Vitamin B. का प्रयोग करने से लाभ होता है। खाद्योजांश B. मधुमेह के कारण विकृत कज्जलोदेत पचन को ठीक करने में भी सहायता देता है।

मधुमेह सन्यास (DIABETIC COMA)

मधुमेह के उपद्रवों में सन्यास सबसे मुख्य एवं सबसे भयानक है। सन्यासावस्था में रोगी के रक्त में कज्जल द्विऊष्मिद तथा अम्लीयता बढ़ जाती है। मूत्रमें शर्करा के साथ कीतोन (Ketone Bodies) आने लगती है जिनमें Diacetic Acid मुख्य हैं मूत्र में Diacetic Acid की विद्यमानता मधुमेह सन्यास का परिचायक है।

लक्षण

सन्यास की प्रारम्भिकावस्था में रोगी की तृषा और मूत्र पहले से भी अधिक बढ़ जाते हैं। बाद में हृल्लेश तथा वमन होने लगते हैं। त्वचा में रुक्षता तथा टांगों, सिर और पेटमें दर्द होने लगता है। नाड़ी तीव्र तथा दुर्बल होजाती है। सांस कठिनाई से आने लगता है। रोगी धीरे २ तन्द्रा अनुभव करने लगता है जो अन्तिम अवस्था में पूर्ण मूर्च्छा में परिवर्तित हो जाता है। मूर्च्छावस्था में पहुँचने तक रोगी को कोई घण्टे लगते हैं अकस्मात इसका आक्रमण नहीं होता। इसकी चिकित्सा का वर्णन मधुमेह चिकित्सा के अन्दर आचुका है।

(पृष्ठ ५६ का शेष)

औषध एक भारतीय पौधे की जड़ की बुकनी है। इस जड़ी का विज्ञापन कई पूर्वीय भाषाओं में सैकड़ों वर्षों से होता रहा है। सैंकड़ों वर्षों तक यह जड़ी सांप काटने, ज्वर, बुखार आदि के अचूक दवा के रूप में मशहूर हो रही है। १६५० में बोस्टन निवासी डाक्टर रावर्ट विल्किन्स ने एक हिन्दू वैद्य का लेख पड़ा, जिन्होंने लिखा था कि सर्पगन्धा रक्तचाप की भी अच्छी औषध है। डाक्टर विल्किन्स ने अपने रोगियों पर इस औषधि का प्रयोग शुरू किया। सर्व प्रथम एक महिला को छः दिनों तक यह औषधि नियमानुसार खिलाई गई और उससे आश्चर्यजनक लाभ हुआ। वह स्त्री बिलकुल अच्छी हो गयी। इसके बाद और भी अनेकों रोगी इस औषधि से निरोग हुए। इस समय अमेरिका, ब्रिटेन इत्यादि उन्नतिशील देशों के डाक्टर भी सर्पगन्धा को रक्तचाप की एक सर्वोत्कृष्ट और अचूक औषध समझते हैं। आयुर्वेद की अन्य औषधियों की तरह इसका प्रभाव कुछ देर में होता है किन्तु इससे अस्सी प्रतिशत रोगियों के निरोग होने की आशा की जाती है।

आंत्रवृद्धि हार्निया पर मेरा अनुभव

(लेखक--श्री लक्ष्मीनारायण जी वैद्य विशारद)

स्फोटावृत पथे वापि सशल्येपिहिते मुखे।
शैथिल्या कुचनाभ्यां च स्रोतसां किट्टसर्गिणाम्॥
मलेशुष्के तथा चामे बद्धलिप्त मुखेऽथवा।
स्थानान्तर गते चान्त्रे स्थूले सूक्ष्मा वगुंठिते॥
अन्त्ररोधो मलस्तम्भो मलानां संचयोभवेत्।
पूर्व रूपं मलस्तंभ शूलाजीर्णानि च क्लम॥
अरुचिर्मल बद्धत्वं हिक्का छर्दिः स स्मृतः।
मलोत्सर्गोऽन्न कक्षाच त्रिदिनाद्वा मरणं भवेत्॥

—सार संग्रह

छोटी आंतों में कोई फोडा होकर अन्नवाही प्रणाली का रास्ता रोक दे अथवा शस्त्र लगने से आंतों के मुख में छेद होकर उसका मार्ग बन्द होजाय अथवा अकुंचनी प्रसारणी क्रिया में शिथिलता आने पर मल आगे न बढे और मल आंतों में सूख जाय अथवा शोथ होने पर वहां आम बने और वह मार्ग को अवरुद्ध करले या आंत अपने स्थान से खिसक कर नीचे ऊपर किसी ओर हट जाय या फंस जाय अथवा आंतों में गांठ पड़ जाय, यह सब स्थितियां अन्त्रावरोध की हैं, जब अन्त्रावरोध होजाता है तो मल फिर आगे नहीं बढता और वह रुक कर संचित होने लगता है। इस कष्ट का पूर्वरूप मल रुकना है, तत्पश्चात शूल, अजीर्ण, शिथिलता, थकावट, अरुचि, हिक्का, वमन, ज्वर आदि उपद्रव प्रादुर्भूत होते हैं, यदि आंतों में शोथ होजाय, मल रुक जाय, वमन आरही हो तो यह स्थिति भयंकर होती है और तीन दिन तक मल उत्सर्ग न हो तो रोगी का प्राणान्त होजाता है।

यह जितने भी आन्त्रावरोध के कारण बतलाये हैं सभी अन्त्रवृद्धि से सम्बन्ध रखते हैं किन्तु आजकल अन्त्रवृद्धि से मुराद आंतों का अपने स्थान से खिसक जाना मात्र लेते हैं।

आंतें कहां २ किस २ ओर खिसकती हैं ? प्राय छोटी आंत किसी २ के अंडकोष गुहा में उतरने ल जाती हैं, भय आदि अकस्मात कारणों से वक्षोद मध्यस्थ पेशी पर भी चढ कर वहीं फंस जाती है इसका एक रोगी मुझे स्वयं देखने को मिला उसव विवरण वैद्यों के लिए काफी ज्ञानवर्धन हो सकता है इसलिए उसे यहां देते हैं—

एक गोस्वामी परिवार से मेरी घनिष्टता बढ़ी चिकित्सक होने के कारण उन्होंने अपनी माता कहा कि अपने पेट का रोग इन वैद्य जी को बताओ माता जी का पेट मैंने देखा, आमाशय मुख औ ग्रहणी प्रदेश के स्थान पर जहां वक्षोदर मध्यस्थ पेशी वक्ष और उदर को अपने स्तर से भिन्न करती हैं, बाह से वह स्थान छाती के नीचे कौड़ी प्रदेश स्थान से जह अन्तिम पसलियां दाहिनी बांई ओर जाकर पेट क पोला स्थान बनाती हैं यूनानी वाले जिसे फममेदा कहते हैं। उसे हम आमाशय द्वार कहते हैं, उस स्थान पर रसौली जैसी गांठ दिखाई देती थी, दबाने से उसमें कुछ दर्द भी होता था, खाने के बाद भी थोड़ा २ द रहता था, देखने पर हम सही तौर पर नहीं समझ सके कि यह क्या है ? इसका इतिहास पूछने पर उसने बतलाया कि जब मैं छोटी ११-१२ वर्ष की थी अपने ग्राम में पशुओं का चारा बनाने के लिए भूसा रखने की अंधेरे कोठरी में घुस जब भूसा भर रही थी, पीछे से एक लड़की भूत-भूत चिल्लाती वहां से भागी, मैं बहुत ही डर गई, तब से यह दर्द यहां पेट के ऊपर होने लग पड़ा है, आगे यहां पर उभार नहीं था, उस

भाई की अवस्था अब ५० वर्ष के लगभग थी १५ वर्ष तक उनके परिवार से घनिष्टता बनी रहने के कारण अनेकों औषधियां दीं पर न तो बीमारी का पता लगा न किसी दवा से कोई लाभ ही होता था। इन १५ वर्षों में कई एक अच्छे २ शल्य, अशल्य चिकित्सकों को भी दिखाया पर सही निदान कोई भी नहीं कर सका, कोई रसौली कहता था, कोई रसौली भेद बतलाता था, जब वह ६५ वर्ष की थी उसे देहली में डा० जोशी को दिखाने के लिए लाये, वह उस समय के ख्याति प्राप्त शल्य चिकित्सक थे, उन्होंने रुग्णा को देखकर कहा इसको हार्निया है, इसका आपरेशन होगा, २००) मैं लूंगा। १५ दिनमें रोगी ठीक होकर घर चला जायगा। हमें सहसा विश्वास नहीं हुआ, न हम यह समझ सके कि यहां भी हार्निया हो सकता है। हमारी उपस्थिति में डाक्टर साहब ने शल्य कर्म करके अपने कथन की सचाई दिखानी स्वीकार की, शल्य स्थान में एक ओर हमें बिठा दिया गया। उदर खोलकर वक्षोदर मध्यस्थ पेशी पर की झोली में रखी आंत को देखकर उन्होंने इशारा किया मैंने देखा कि उन्होंने उस झोली से आंत को उठाकर नीचे कर दिया और उस पेशी पर चढ़ी चर्बी व फालतू मांसको काटकर निकाल दिया और टांके लगा कर सीं दिया, २० दिनमें रोगी ठीक होगया, उसके बाद वह माता दस वर्ष तक जीती रही, परन्तु फिर कभी पेट दर्द की उसने शिकायत नहीं की, जिस रोगीको पचासों डाक्टर वैद्य देख चुके थे किन्तु कोई भी उसके रोगका सही निदान न कर सका किन्तु एक अनुभवी शल्य चिकित्सकने रोगीको देखते ही ठीक निदान कर लिया।

अन्त्रवृद्धि या हार्निया कहां २ हो सकता है? इसे वही व्यक्ति ठीक तौर पर जान सकता है जिसने हजारों रोगियों के पेट फाडकर आंतों की फंसी स्थिति का अध्ययन किया हो।

खैर! हम अपने मुख्य विषय की ओर आते हैं और अपना अनुभव बतलाते हैं। जिस व्यक्तिकी नीचे की ओर वृषण गुहा में आंतों के उतरने का कष्ट रहता हो, जिसके लिए हार्निया स्प्रिंग पेटी लगाई जाती है इस अन्त्र वृद्धि के लिए जो लाभ कर औषध मुझे ज्ञात है और अनेक रोगियों पर जिसका अनुभव लेचुका हूँ उसको वैद्योंकी सेवामें उपस्थित करता हूँ आशा है इस योगसे वैद्य जन समाजका कुछ उपकार कर सकते हैं।

योग—द्रोणपुष्पी जिसे प्रचलित भाषामें गूमा, गोमा, मराठी में देवकुम्भा गुजराती में कूबो कहते हैं इस वनस्पति को कूटकर मोटा चूर्ण बनाले, अन्त्रवृद्धि वाले रोगी को प्रथम पांच तोला घृत पिलाकर तत्पश्चात डेढ तोला द्रोणपुष्पी चूर्ण को चिलम में रखकर जिस तरह कोयला रखकर के तम्बाकू पीते हैं इस तरह से इसका धूम्रपान करे। केवल दिन में एक बार, सुबह द्रोणपुष्पी के धूम्रपान से रोगी को वमन होगी और नित्य धूम्रपान करने पर ३-४ वमन होती रहेंगी, इस वमन के समय आंतों पर झिटके से खिंचाव होता रहता है, ५-६ सात दिन तक धूम्रपान करते रहने से आंतों के ऊपर की ओर आने और अपने स्थान पर बैठने की आदत जम जाती है इससे फिर वह नीचे नहीं खिसकती। इसके प्रयोग से मैं कई व्यक्तियों को पेटी बांधने के कष्ट से मुक्त कर चुका हूँ।

नोट—वमन काल में किसी २ रोगी के वमन में रक्त की फुटकियां सी भी या रक्त का लगाव भी वमन के निकले द्रव्य में दिखाई देता है जिसे देखकर रोगी को घबराना नहीं चाहिये। वमन लेने के दो सप्ताह बाद तक रोगी को हलका भोजन खाना चाहिये इससे फिर कोई कष्ट होने का भय नहीं रहता।

सम्पादकीय नोट—यदि द्रोणपुष्पी के धूम्रपान से वमन हो तो श्वासके रोगी को भी इसके द्वारा वमन कराने पर श्वास में लाभ होने की पूरी आशा है।

(आयुर्वेद विज्ञान से साभार)

रक्तचाप की व्याधि और उसका इलाज

अधिक रक्तचाप बहुत ही हानिकार रोग है। अनेक मनुष्य तो अधिक रक्तचाप की बीमारीसे पीडित होने पर भी यह नहीं समझ पाते कि उन्हें यह रोग हुआ है। फिर भी प्रत्येक पांच मोतों में से एक मौत प्रत्यक्ष या अप्रत्यक्ष रूपमें इस रोगसे होती है। आजकल इस रोगके इलाजके लिए एक अचूक औषध का अनुसंधान डाक्टरों ने किया है। भारतवर्ष से ही निकली हुई एक बहुत ही प्राचीन औषध डाक्टरों को रक्तचाप की बीमारी का सफल इलाज करने में सहायता पहुँचा रही है। डाक्टरों का विचार यह है कि यदि अनेक मनुष्य कई वर्षों तक इस रोग से पीडित रहकर भी इससे अनभिज्ञ रह सकते हैं तो इस रोग का निदान अवश्य ही हो सकता है। किन्तु अभी तक ऐलोपैथी में इसके लिए कोई अच्छी औषध नहीं निकल सकी है।

अधिक खतरनाक रक्तचाप की बीमारी अचानक शुरू होजाती है। इस रोगसे पीडित बहुत कम रोगियों को इसके लक्षण पहले से मालूम पडते हैं ताकि वे डाक्टर के पास जाकर उसका इलाज करा सकें। बीमारी एकाएक शुरू होजाती है, जिसके फलस्वरूप इलाज का भी अवसर नहीं मिलता। रक्तचाप की बीमारी से पीड़ित होजाने पर मनुष्यों का जीवन हमेशा इलाज कराते रहने पर ही निर्भर रहता है। मनुष्य का हृदय हमेशा शरीर के अन्य हिस्सों से आये हुए गन्दे रक्त को आक्सीजन की मदद से साफ कर उसे धमनियोंके जरिये शरीर के विभिन्न हिस्सोंमें संचारित करता रहता है। हृदय के अन्दर रक्तके आगमन को अन्तःरक्तचाप कहते हैं। रक्त के स्वच्छ होकर हृदय से बाहर जाने को रक्त का बहिर्गमन या दबाव कह सकते हैं। यह दबाव बहुत धीमे २ होता है और इसकी गति तेज हो जाने पर ही रक्तचाप की बीमारी होती है। रक्तचाप बढ़ जाने पर हृदय को रक्त बाहर शरीर में भेजने के लिए अधिक परिश्रम करना पडता है और यह अधिक परिश्रम हृदय की गति के अवरुद्ध होने की अवस्था को भी ला सकता है। रक्तचाप अधिक दिनों तक रहने पर धमनियां मोटी होने लगती हैं और अपने कार्य में शिथिल पड़ने लगती हैं।

रक्तचाप की बीमारी इतनी अधिक खतरनाक क्यों है? डाक्टरों का यह मत है कि इससे धमनियां मोटी होते २ बन्द होजाती हैं जिससे रक्त का संचार बन्द होजाता है। पहले तो ऐसा विश्वास किया जाता था कि अधिक वजनी मनुष्यों को ही रक्तचाप की बीमारी होती है। किन्तु यह विश्वास अब ठीक नहीं रहा। यह बीमारी धमनियों और रक्त की नलियों की क्रियाके दोषसे उत्पन्न होती है और किसी भी आदमी को हो सकती हैं। हृदय से अधिक तीव्रता के साथ रक्त बाहर होने का प्रभाव मस्तिष्क की नसों पर बुरा पड़ता है और यही मस्तिष्क की नसें विभिन्न अंगों, हृदय और रक्त की धमनियों पर नियन्त्रण रखती हैं।

अत्युपयोगी भारतीय औषध

आजकल रक्तचापके लिए रौल्फिया (सर्पगन्धा) नामक एक अचूक औषध प्रचलित हो गई है। यह

(शेष पृष्ठ ५३ पर पढ़ें)

आयु का प्रमाण

(लेखक—आयुर्वेदाचार्य स्व० पं० शिवराम जी द्विवेदी वैद्य)

आयु क्या है, वह कितनी हो सकती है, वह निश्चित है या अनिश्चित और क्या वह घट बढ़ भी सकती है ? : शतायुर्वैपुरुषः, यह वेद वाक्य क्या आयु की सीमा बताता है ?

अनन्त कालिक इतिहास तो आयु का प्रमाण निश्चित नहीं बताते। उसमें शतायु, सहस्रायु, आयुतायु और लक्षायु तक का वर्णन मिलता है। मर्यादा-पुरुषोत्तम भगवान श्रीराम का राज्यकाल "दश वर्ष सहस्राणि दश वर्ष शतानिच" अर्थात् ११ हजार वर्ष का कहा गया है। भारतीय ऋषि मुनियों ने तो आयु पर अधिकार ही जमा रखा था। उनकी हजारों वर्ष की तपस्या तो आयुकाल को क्या, काल को भी चुनौती थी। जिस स्थान पर वे तपस्या करते थे, वहां का काल क्रम जन्य ह्रास ही मिट जाता था। वहां के स्थावर जंगमों की आयु वही बनी रहती थी जो उनके तपः काल के पूर्व होती थी। तपस्या काल पूर्ण होने के बाद वहां के स्थावर जंगमों का आयु सम्बन्धी कालिक ह्रास फिर प्रारम्भ हो जाता था। इस भांति आयु का प्रमाण कोई निश्चित न था। वेदों के शत सहस्रादि शब्द अनन्तार्थ द्योतक हैं संख्या या सीमा के द्योतक नहीं।

सहस्रा शीर्षा पुरुष सहस्राक्षःसहस्रापात् का अर्थ यह नहीं कि परमात्मा के हजार शिर, आंखें या पैर हैं ऐसा नहीं। यहां सहस्र शब्द अनन्तवाचक है। वेदों, ब्राह्मण ग्रन्थों, उपनिषदों और पुराणों में भी आयु का निश्चित प्रमाण नहीं माना गया है।

आयुर्वेद और आयुप्रमाण

आयुर्वेद ने आयु का प्रमाण निश्चित नहीं माना है। आयु प्रमाण बढ़ाया घटाया जा सकता है। महर्षि अग्निवेश तो दस हजार वर्ष तक आयु को बढ़ा लेने का वर्णन करते हैं। सौ वर्ष, पांच सौ वर्ष, हजार वर्ष और हजारों वर्ष का आयु प्रमाण आचार्यों ने बढ़ा लेने का विस्तृत वर्णन किया है। आजकल के वैज्ञानिक भी आयु का निश्चित प्रमाण नहीं मानते। वे मानने लगे हैं कि आयु बढ़ाई जा सकती है। रूस के विज्ञान वेता डाक्टर लिपिशिंस काया, आयु को २०० वर्ष तक बढ़ा लेने का विचार रखते हैं। वे जीवनदायी श्वेत पदार्थ अलबूमेन की सुरक्षा से ही आयु वृद्धि मानते हैं और तत्सम्बन्धी अन्य उपायों का भी प्रयोग कर रहे हैं। प्राणी विज्ञान के प्रसिद्ध पाश्चात्य विद्वान पाल वेकरल हजार वर्ष तक आयु बढ़ाने की कल्पना करते हैं। वे पौधों और कीटों पर प्रयोग कर रहे हैं। उनके सफल होने पर सहस्रायु के स्वप्न को वे वास्तविक सत्य बना देना चाहते हैं। अमेरिकी विद्वान भी आयु बढ़ाने के प्रयत्न में लगे हैं। इन वर्तमान वैज्ञानिकों के प्रयत्न, पौधों, कीटों, पतंगों, मेढकों तथा अन्य जन्तुओं पर हो रहे हैं।

अर्वाचीन और प्राचीन विद्वान्

जहां वर्तमान वैज्ञानिक विभिन्न जीव जन्तुओं की शारीरिक क्रिया के व्याघात द्वारा जीवन तत्व के रहस्य जानने का प्रयत्न कर रहे हैं, वहां प्राचीन भारतीय विद्वानों ने अपने शरीर की क्रिया से होने वाले परिवर्तनों द्वारा ही आयु बढ़ाने के उपायों का वर्णन किया है।

आयुर्वेद का रसायन विज्ञान

आयुर्वेद के विद्वानों में महर्षि अग्निवेश से लगाकर नागार्जुन पर्यन्त विभिन्न रसायनों का प्रयोग करके मानव आयु बढ़ाने का सफल प्रयत्न किया है। महर्षि चरक ने ही रसायन के ६३ योगों का वर्णन किया है। इन योगों का वर्णन चार रसायन पादों में विभक्त है। (१) अभयामलकीय (२) प्राण कामीय (३) करप्रचितय, और (४) आयुर्वेद समुत्थानीय।

प्रथम रसायन पाद में १ कुटी प्रावेशिक और २ वातातपिक ये दो विभाग हैं। कुटी प्रावेशिक रसायन वह है, जो कि भूगर्भ में गुफा बनाकर उसमें कुटी का निर्माण करें। वातातप विहीन उसी कुटी में रहकर रसायन का सेवन करें "मातृगर्भवदा चरेत्।" वातातपिक रसायन वह है जो कि वातातप सेवन करते हुए रसायन योगोंका सेवन करे। वातातप से "वातापियल्कि ये तद्वातातपिकम्।" इस रसायन पाद में द्राक्षा रसायन च्यवनप्राशादि ६ योग हैं।

द्वितीय रसायन प्राद प्राण कामीय रसायन पाद है। प्राण का "शब्दमधिकृत्य मिति प्राण कामीयम्।" इस में आमलक, विडंग, वला, नागवलादि दसयोग, भल्लातकादि दसयोग तथा सप्तदश अन्ययोग, ऐसे ३७ योग हैं।

तृतीय करप्रचितीय रसायन पाद है। "कर प्रचितानामिति पदं स्वयं पतित ग्रहणं निषेधयति।" इसमें १ आमलकायसां ब्रह्म रसायन, २ केवलामलक रसायन ३ लौहादि रसायन ४ ऐन्द्री रसायन ५ मेध्य रसायन ६ पिप्पली रसायन ७ वर्द्धमान पिप्पली रसायन ८, ६, १०, ११ त्रिफलादि रसायन १२ शिलाजतु रसायन, ४ अन्ययोग इस भांति, १६ रसायन योग हैं।

चतुर्थ आयुर्वेदिक समुत्थानीय रसायन पाद है। आयुर्वेद समुत्थानमस्मिन्नस्ताति। इसमें १ इन्द्रोक्त रसायन २ द्रोणीप्रावेशिक रसायन, ३ अन्य इन्द्रोक्त रसायन और ४ आचार रसायन हैं। इस भांति चारों रसायन पादों में ६३ रसायन योग हैं। यह तो दिग्दर्शन मात्र है। इन रसायन प्रयोगों के दीर्घ जीवन या जीवन वृद्धि में और आजकल के वैज्ञानिकों के जीवन बढ़ाने के प्रयोगों में एक बहुत बड़ा मौलिक अंतर है। वैज्ञानिकों के प्रयोग वाह्योपचार मात्र हैं जो वार्धक्योत्पादक कीटाणुओं को विभिन्न क्षारीय घोलों, द्रवों द्वारा नष्ट करने का प्रयत्न करते हैं। इन प्रयत्नों के पहले भी पाश्चात्य वैज्ञानिकों ने आयु बढ़ाने के प्रयत्न किये थे जिनमें तरुण बानरों की मन्या ग्रंथियों को लेकर वृद्ध मनुष्यों की मन्याग्रंथियों को निकाल कर, उसके स्थान पर बानर ग्रंथियों का लगाना था। इसके पर्याप्त प्रयोग किये गये। उनमें सफलता भी मिली। वार्द्धक्यग्रस्त शरीर के विभिन्न अंगोंपांगों में ताजगी भी दिखाई पड़ने लगी। किन्तु उन मनुष्यों में एक विचित्रता साथ ही साथ और भी दिखाई पड़ी। उनकी बुद्धि बानर बुद्धि हो गई। उनका मन चंचल बानर का सा मन हो गया और शारीरिक क्रियायें भी बानरी क्रियाओं की भांति हो गयीं। यह देखकर फिर कोई युवा बनना या आयु बढ़ाने को तैयार न हुआ। अर्वाचीन वैज्ञानिकों की आयु बढ़ाने वाली इन क्रियाओं में और प्राचीन भारतीय वैज्ञानिकों की क्रियाओं में बड़ा भारी अंतर है। प्राच्य वैज्ञानिक बार्द्धक्योत्पादक शारीरिक क्रियाओं में ही रासायनिक प्रयोगों द्वारा क्रिया परिवर्तन उत्पन्न करके आयु बढ़ाते थे। उनके रसायन प्रयोग—

> दीर्घमायुः स्मृतिर्मेधा, मारोग्यं तरुणंवयः,
> देहेन्द्रियबलं कान्ति नरो विन्देद्रसायनम्।
> यज्जराव्याधि विध्वंसि वयसस्तंभकं तथा,
> चक्षुष्यं वृंहणं वृष्यं भेषजंतद्रसायनम्।

आयु बढ़ाने के साथ-साथ, स्मृति मेधा आरोग्य तरुणत्व, देह इन्द्रिय बल और कांति को वे बढ़ाते थे। जरावस्था जन्य व्याधियों तथा अन्य व्याधियों का

विध्वंस करके वयस्थापक, चक्षुष्य, बृंहण और वृष्य, प्राच्यों के रसायन प्रयोग हैं। शरीर, इंद्रिय, मन और आत्मा के संयोग को वे आयु मानते हैं। दीर्घायु आदि उपर्युक्त चतुर्दश लक्षणात्मक आयु ही आयु है। आयु वृद्धि के साथ इन सबकी भी वृद्धि हो, यही वास्तविक आयु का बढ़ाना है। नर से बानर बन जाना नहीं। रसायन योगों में यही आयुवर्द्धक विशेषता है।

रसायन और पाश्चात्य वैज्ञानिक

रसायन प्रयोगों को पाश्चात्य वैज्ञानिक जानते नहीं बहुत खोज के बाद उन्होंने रक्त को ही जीवन माना है। शुद्ध रक्तमें वृद्धावस्था रोगदोष नहीं आते। वर्षों की खोजके बाद उन्होंने सफरजन, ओलिव के फल और आंवला ये तीनो रक्तशोधक द्रव्य पाये हैं इन द्रव्यों को वे रासायनिक द्रव्य माननने लगे हैं। आयु-विज्ञानवेत्ता भारतीयों ने तीन-चार हजार वर्ष पूर्व ही ऐसे अस्सी रासायनिक द्रव्यों की खोज करली थी जिनमें आंवला, हरड, बहेंड़ा आदि मुख्य द्रव्य हैं। आंवला और हरीतकी स्वच्छ रक्तशोधक रसायन है। 'रक्तस्य विकृतिं चैव त्रिदोषंच बिनाशते' ये पंचरसा कहलाते हैं। इनमें वह रस होता ही नहीं जो रक्तको दूषित करता या रक्त में अन्य विकृत पदार्थों को ठहरने देता हो, वह रस लवण है। लवण रस रहित होनेके कारण ही यह रासायनिक द्रव्य पंच रसा कहलाते हैं। पाश्चात्य वैज्ञानिकों की रसायन सम्बन्धी द्रव्य त्रय की खोज उन्हें रसायन विज्ञान की ओर ले आरही है।

यदृच्छया आयुवृद्धि

शारीरिक क्रियाजन्य स्वाभाविक आयुवृद्धि के उदाहरण अब भी हरएक देश में मिलते हैं। हैदराबाद के परभनी जिले में बाबा आत्मानन्द १३० वर्ष की उम्र के थे सं० १९१४ के बाद उनका पता नहीं। सीतापुर जिले के नैमिषारण्य क्षेत्र के नगवा जयराम ग्राम में नेगूपासी १२६ वर्ष में मरा। जिला फतेहपुर के शामियान गांव में १०५ वर्ष का मंगलिया पासी अब भी जीवित है। सन १८५७ के गदर में वह ८ वर्ष का था। वह स्वस्थ शरीर प्रतिदिन कुछ घंटे परिश्रम करता और सादा जीवन व्यतीत करता है। इसके अलावा दीर्घजीवी सोवियट यूनियन डाक्टरी दलके नेता प्रोफेसर योगदानोव ने बताया कि स० १८१२ के नेपोलियन बोनापार्ट के हमले के समय की आंखों देखी घटना वाले व्यक्ति अब भी मौजूद हैं। १४२ वर्ष पूर्व नेपोलियन के पराभव की गाथा सुनने वाले व्यक्तियों के पौत्रों की आयु ७० वर्ष से ऊपर है। अन्य देशों में १०० वर्ष से अधिक जीवन वाले लोग मिलते हैं।

शतायु

भारतवर्ष की सामाजिक औसत आयु शतायु थी। अन्य देश वालों की औसत आयु भारतीयों की औसत आयुके बराबर न थी। भारतीयों का रहन-सहन पौष्टिक पेय, दुग्ध, भक्ष्य भोज्यादि उन्हें प्रचुर परिमाण में प्राप्त था। उनका सादा जीवन और आचार, रसायन का पालन आयु बढ़ाने में कारण था।

पराधीनता के अभिशाप से भारत दरिद्र होगया उसका पौष्टिक पेय दुग्ध और भक्ष्य भोज्यादि के अभाव से भारतीयों की औसत आयु शतायु से घटकर २५ वर्ष की औसत आयु रह गई। पौष्टिक पेय, दुग्ध, विशुद्ध आहार-विहार तथा रासायनिक प्रयोगों द्वारा औसत आयु बढ़ाई जासकती है। आयु बढ़ाने के कुछ साधारण रासायनिक प्रयोग यहां दिये जाते हैं।

आंवला और हरड़

रसायन के प्रयोगों में सबसे अधिक प्रभाव-शाली आंवला और हरड हैं। जो आयुको बढ़ावे और रोग दोषोंको दूर करे वही रसायन है। इसमें आंवला वयस्थापक और आयु को बढ़ाने वाला है। हरड रोग दोषों को दूर करती है। आंवला में खास गुण है रक्त

को शुद्ध रखना त्रिविध रोग मार्गों का परिशोधन अर्थात शाखा इत्यादि धातु वाहन रोग मार्ग, मर्म वस्ति हृदय पूर्वादि १०७ मर्म मध्य रोग मार्ग कोष्ट महास्रोत शरीर मध्य महानिम्न आमाशय पक्वाशय आभ्यन्तर मार्गों को आंवला शुद्ध करता है। हृदय को बल देता है और उसके अशुद्ध रक्त को शुद्ध करता है हृदय में पहुँचे अशुद्ध रक्तशोधन का कोई उपाय ही नहीं केवल आंवला ही ऐसा है जो हृदयके अशुद्ध रक्त को शुद्ध कर सकता है। आंमला भी पंचरसा (आंवला पांच रस वाला) है उसमें लवण रस नहीं होता। लवण रस ही रक्त को दूषित करता है बाकी पांच रस रक्तशोधक हैं। यह रस विज्ञान की बात ध्यान रखने की है कि मधुरादि पंचरस स्थूल रूपमें वैकारिक होकर रक्त को अशुद्ध करते हैं किन्तु आंमला में वे उपादान कारण रूप सूक्ष्म तत्वदृष्ट्या रहने के कारण रक्त को शुद्ध करते हैं। यह सूक्ष्म तत्व रूप रस रक्तस्य विकृतिं त्रिदोषं च विनाशयेत् लवण विहीन होने से लवण रस के अस्थि सम्बर्द्धनादि गुण आंवलेमें नहीं होंगे। रस विज्ञान की दृष्टि से यह एक भ्रम है, वस्तुतः लवण रस में अस्थि सम्वर्द्धनादि गुण नहीं होते वे सब क्षार में होते हैं क्षार आंमलोंमें प्रचुर मात्रासे रहता है वह क्षार अस्थि सम्वर्द्धनादि कार्य करता है लवण नहीं, बालकों को क्षीराद अवस्था में लवण दिया ही नहीं जाता फिर भी उनकी अस्थियां प्रमाणानुरूप बराबर बढ़ती हैं, यह कार्य क्षार की विशेषता का है लवण का नहीं, प्रत्येक भक्ष्य में क्षार रहता है वही अस्थिसम्वर्द्धनादि करता है नमक जिन्होंने त्याग कर दिया है ऐसे व्यक्तियों के अस्थि सम्वर्द्धनादि तो होते ही हैं उनके रक्त में विषनाशक शक्ति भी उत्पन्न हो जाती है।

इतना लिखने का अभिप्राय यही है कि लवण रस की स्वास्थ्य के लिए कोई उपयोगिता नहीं। लवण रस सहित आंवला रक्त शोधक स्वास्थ्यवर्द्धक और आयु को बढ़ाने वाला है। आंवला एक ऐसा रसायन है जिसका प्रयोग किसी प्रकार भी किया जा सकता है विधि निषेध की कोई बात नहीं। आयुवर्द्धक ८० प्रयोगों में आंवले के ४० प्रयोग आयु बढ़ाने वाले हैं।

आयु प्रमाण का शेषांश

इन ८० प्रयोगों में महारसायन के सिद्ध योग ६३ हैं इनमें आंवला और हरीतकी ही मुख्य हैं किन्तु उनका बनाना और प्रयोग विधि का पालन सर्व साधारण के लिए सहज नहीं शेष १३ प्रयोग बहुत ही सरल अत्यन्त लाभदायक हैं उनमें कोई विधि निषेध बात नहीं। यह महर्षि अग्निवेश के रसायन योगों की बात है किन्तु अन्याचार्यों और संहिताकारों के रसायन योग मिल मिलाकर आंवला और हरीतकी के ४०-४० प्रयोग आयुवर्द्धक फिर हो जाते हैं। उनमें से सर्व साधारण के लिए सुलभ कुछ प्रयोग यहां दिये जाते हैं इसकी विशेष बात यहां ध्यान रखने की यह है कि आंवला शीतवीर्य रक्तशोधक आयुवर्द्धक है तथा हरीतकी उष्णवीर्य आयुवर्द्धक और रोगनाशक है। अतः कम उम्र वालों, २५ वर्ष को आंवला का ही प्रयोग अच्छा आयुवर्द्धक होगा। इससे ऊपर युवा और वृद्धों के लिए जिसमें रक्त की अशुद्धि के साथ साथ आयुह्रासक रोग भी हो गये हों तो उनको हरीतकी प्रयोग विशेष लाभदायक होगा। यों दोनों मिलाकर भी लिए जा सकते हैं वे आयुवर्द्धक और रोग नाशक भी होंगे।

१—आंवलों को ठंडे स्थन में सुखाकर रखलें खाने के समय ही उसका चूर्ण बना प्रारम्भ में एक आंवले के चूर्ण से प्रयोग करें, फिर बढ़ालें १० आंवलों की मात्रा पर्याप्त प्रमाण है। महर्षि कश्यप ने बालकों के लिये न्यून या प्रारम्भिक मात्रा विडंग, (वायभरंग) के बराबर मानी है फिर उसे बढ़ा लें १ आंवले के

प्रमाण तक बालकों की पूरी मात्रा है । इस भांति आंवलों का प्रयोग प्रारम्भ करें ६ मास तक प्रयोग करने से रक्त शुद्ध होकर आयुवर्द्धक उपादान उसमें सब उत्पन्न हो जायेंगे । केवल यही प्रयोग करते रहने से उसकी आयु १२५ वर्ष तक की हो सकती है ।

२—आंवले का चूर्ण घी तेल और शहद मिलाकर लेने अथवा आंवले के स्वरस या चूर्ण में शहद और मिश्री मिलाकर सेवन करने से बुढ़ापा दूर होकर आयु बढती है ।

३—आंवला और हरड़ मिलाकर, दोनों का चूर्ण जिसमें हरीतकी १ भाग और आंवला ५ भाग से अधिक हो, लेना चाहिये यह प्रयोग रुग्ण युवा पुरुषों और वृद्धों के लिए बहुत उपयोगी है इससे अजीर्ण, (कब्ज) दूर होता है भूख बढ़ती है और जरावस्था के लक्षण दूर होकर स्मृति, मेधा, प्रभावर्ण, स्वर सौष्ठव, कान्ति देह और इन्द्रियों का बल बढ़ता है उसकी आयु १५० वर्ष तक की हो सकती है ।

४—आंवला ४ भाग, हरड़ १ भाग, भृंगराज (भांगरा) २ भाग शहद में मिलाकर लेने से ६ मास में उसके बाल काले हो जाते हैं अकालपलित दूर होकर आयु बढ़ती है ।

५—आंवला चार भाग, बहेड़ा २ भाग, हरड़ १ भाग शहद में बराबर लेते रहने से कासस्वासजन्य सभी विकार दूर होकर क्षुधा की वृद्धि, पाचन प्रणाली शक्तिशाली और रक्त की शुद्धि होकर आयु बढ़ती है।

(आयुर्वेद संदेश से साभार)

(शेष पृष्ठ ६६ का)

कफसंशमन द्रव्य है परन्तु उचित औषधि प्राप्त करने के लिए रोगी को एक वर्ष पर्यन्त अपनी टट्टी, पेशाब, भोजन, मात्रा, गुण, रूप, रस, समय इन सबके संबंध में पूर्ण सावधान रहकर एक विस्तृत चार्ट बनाना आवश्यक है । ऐसा करने से रोगीको चिकित्सा ढूंढने में चिकित्सक को शीघ्र सफलता मिलेगी और रोगी का समय, काल और धन सभी में मितव्ययता होगी।

सावधानियां

श्वास का मार्ग नाक है—श्वास लेते समय मुख बन्द रखें, श्वास सम्बन्धी व्यायाम दोनों हाथों की हथेलियों को दोनों ओर के कूल्हों पर रखो । शरीर को सीधा रखो सिर को पीछे झुकाओ, श्वास को भीतर लेना आरम्भ करो । दोनों हाथों को कुल्हों से उठाओ और बाहर की ओर को फैलाकर धीरे २ सिर के ऊपर को ले जाइये और साथ श्वास को भीतर की ओर खींचते जाओ यहां तक दोनों हथेलियां सिर के ऊपर मिल जायं और जितना भी श्वास भीतर लिया जा सके लिया जाय । तब हाथों को धीरे २ नीचे लाओ और श्वास को बाहर निकालो जब तक कि हाथ कूल्हे तक न पहुँच जाय और श्वास पूर्णतः बाहर न निकल जाय । यह एक पूरी क्रिया हुई । एक बार में कम से कम ऐसी छः क्रियायें करनी चाहिये । धीरे २ इसका अभ्यास बढ़ाया जा सकता है ।

(शेष पृष्ठ ६३ का)

(१) संशोधन से शरीर शुद्धि ।

(२) दुग्धाहारादिका नियंत्रण ।

(३) बिहार का नियंत्रण, विश्रांति, जैसे कि कुटी प्रावेशिक में स्वस्थता ।

(४) मानसिक शांति, जप, ध्यान से मनोमालिन्य हटाना ।

(५) मनोहारी शब्दों का श्रवण ।

(६) सुयोग्य औषधि का धीरे-धीरे अभ्यास सूक्ष्म या स्थूल प्रमाण से करते रहना ।

(७) वनस्पति के एक एक या अनेक योग ।

(८) रसशास्त्र प्रतिपादित योग जैसे कि वसंत कुसुमाकर, महालक्ष्मी विलास, सर्वांग सुन्दर, स्वर्ण मालती वसंत, वृहत् स्वर्ण मालती वसंत इनमें दोष, दूष्य, बल, काल, अनल, प्रकृति, वय, सत्व, सात्म्य, और आहार, शरीर अवस्था इनका सूक्ष्म-सूक्ष्म विचार करके योग प्रमाण, अनुपान का निश्चय करके योग्य कल्प, योग्य अनुपान से, योग्य अवस्था में, योग्य प्रकृति में देवें तो बिलकुल सुयोग्य रसायन प्रयोग होता है । ये ही युक्ति है ।

कायाकल्प की शास्त्रीयता

(लेखक—वैद्य 'पंचानन' गंगाधर शास्त्री गुणे)

कायाकल्प शास्त्रीय परिभाषा में "रसायन-चिकित्सा" कहा जाता है। रसायन शब्द की व्याख्या "लाभोपायो हि शस्तानां रसादीनां रसायनम्।" ऐसी शास्त्रकारों ने की है।

आधुनिक वैद्यक निस्रोतस ग्रंथि का विचार करके और उनके ही आश्रय से दीर्घ जीवन और पुनर्युवत्व प्राप्त करने का उपाय देता है। सम्यक् संशुद्धि के बिना रसायन चिकित्सा का सुयोग्य उपयोग नहीं होता है। कायाकल्प का प्रयोग करनेवाले इस बात पर ध्यान नहीं देते और कायाकल्प इतना विशुद्ध प्रयोग सुफलित नहीं होता।

रसायन-चिकित्सा में वातातपिक और कुटी प्रावेशिक ऐसे दो प्रकार के प्रयोग होते हैं। वातातपिक प्रयोग चलते-घूमते हुए मनुष्य के ऊपर भी करने में कुछ प्रत्यवाय नहीं है। लेकिन 'कुटिप्रावेशिक रसायन चिकित्सा' एक प्रकार की कुटी बना के उसमें वास्तव्य करके ही करना ठीक होता है। कुटी विस्तृत ऊंची, पूरी प्रशस्त, तीन गर्भ की और उसको गवाक्ष रखे हैं ऐसी घन भित्ति वाली कोण से ही ऋतु में सुख देने वाली, मनोरम्य अच्छी जगह पर अच्छी तरह से बनी हुई चाहिए। वहां पर अच्छेशब्दादिक श्रवण में आने चाहिये और भी सुविधायें इस कुटी में रहनी चाहिए कुटी प्रावेशिक रसायन में देह और मन बिलकुल शान्त रखना चाहिये। देह को दुख और कष्ट नहीं होना चाहिए। मन और मन के मनोरथ बिलकुल शान्त रहने चाहिए। इसके लिए धृति और स्मृति का बल करने का आदेश शास्त्रकार देते हैं और मानस दोष याने रज और तम को हटाकर (विधूय मानसान दोषान्) रसायन-विधान करना सुयोग्य है।

"संशोधनः शुद्धः" ये अग्रविधान है। मलाभिभूत शरीर के ऊपर रसायन का इतना प्रभाव नहीं पड़ता। इसलिए प्रथमतः संशोधन ही करना ठीक है। रसायन विधान से पहले हरीतकी चूर्ण से सम्यक् संशोधन करना आवश्यक है। सम्यक् शुद्धि के पश्चात् रसायन प्रयोग करना ठीक होता है। रसायन प्रयोगों में अग्नि-दीपक, धातु-परिपोषक, वातशामक और मनोबल-वर्धक औषधिवर्ग बताये हैं। आमला सब रसायन प्रयोगों में श्रेष्ठतर बताया है।

वानस्पत्य चिकित्सक जो-जो योग उपयोग में लाते हैं उसमें आमलकी, हरीतकी, पिप्पली, दशमूल, अष्टवर्ग, भल्लातक, पुनर्नवा, बला, अतिबला, नागबला, विदारीकन्द, ब्राह्मी, पृष्टिपर्णी, गोखरू, एरंड, निदिग्धिका, तृणपंचमूल, शतावरी, मंडूकपर्णी, शंखपुष्पी, मुस्ता, विडंग, चंदन, अगरू, मधुक, हरिद्रा, बचा, कर्कट, मुग्दपर्णी, माषपर्णी, शालपर्णी, शृंगी, तामलकी, द्राक्षी, जीवन्ती, पुष्करमूल, अमृता, शटी, उत्पल, ... मूल कांकोली, ब्रह्मसुवर्चला, आदित्यपर्णी, सुवर्णक्षीरी, नारी, काष्टगोधा, सर्पा, सोमा, पद्मा, अजगंधा, नील... इनके स्वरस सर्व रसायन कल्प में आमलकी का अधिकतर दिये हैं।

हम सब में से आमलकी-लोह-सुवर्णमाक्षिक कल्प, केवलामलकी कल्प, पिप्पली रसायन, वर्धमान...

पिप्पली रसायन, भल्लातक रसायन, और शिलाजतु रसायन को ही इस जटिल औषधि समस्या में से पसन्द करते हैं। आमलकी ही बड़ी अच्छी से अच्छी रसायन है। आमलकी सुभूमि में पैदा हुई लेनी चाहिये।

ग्राम्य वास से अशस्तता शरीर में पैदा होती है। (ग्राम्यो हि वासो मूलमशस्तानाम) इसके लिए रसायन लेना उपयुक्त है।

रसायनों का कार्य सर्वधातु परिपोषण के ऊपर होता है। पूर्व धातु से पर धातु पैदा होता है।

पूर्वो धातुः परं कुर्याद वृद्धः क्षीणश्च तद्विधम्।

पूर्व धातु से स्वांश लेकर धात्वग्नि की सहायता से परधातु इस अंश को आत्मसात करता है। इस क्रम से एक धातु दूसरे धातु का आहार बनता है।

धातवो हि धात्वाहाराः।

—च० सू० ३०-२

धात्वंश का पचन धात्वग्नी से होता है। रस धातु से रक्त स्वांश लेकर रक्ताग्नी से रक्त आपको पुष्ट करता है। एवं च धातु परिपोषण क्रम में पूर्व धातु के अंश—परधातु के अंश और धात्वग्नि इन तीनों का साहाय्य जरूर लगता है। भेषजपित या भेषजानयित दोषों की अवस्था में आहारों से या रसायनों से बृंहण करना आवश्यक है।

भेषजक्षपिते पथ्यं आहारे हणं क्रमात रसायनानि सिद्धानि वृष्ययोगांश्च कालवित ।। यंजात...

रसायन चिकित्सा की ये युक्ति है। द्रव्य, वनस्पति का हो या रस शास्त्र प्रतिपादित हो उससे पूर्व धातु के अंश अच्छे बनना धात्वाग्न से धातुपचन अच्छा सुधरना और परधातु में उसका अच्छा समावेश होकर परधातु पुष्ट होना ये तीनों क्रिया होनी चाहिये।

स्वर्ण, मुक्ता, दरद, मिर्च ये सब भागवृद्धि से लेकर उसमें खर्परी याने रसक भस्म या खर्पर भस्म या कसकापरी आठ भाग मिलाकर उसको मक्खन के साथ घोटने की विधि कही है। निस्नेह होने पर उसको निंबूनीर में एक मास तक घोटकर सबको एकत्र करके मात्रा बनावें। स्वर्ण, मुक्ता-रक्त प्रसादक और रक्त बढ़ाने वाले, मरिच कामाग्नि वर्धक खर्पर रस स्थित दोषघ्न और रस को प्रसादक दरद यानी सिंदूर सब धातुओं की अग्नि को बढ़ाने वाला योगवाही है, इन सब द्रव्यों पर मक्खन का संस्कार शरीर में स्नेह का वर्धन करने वाला और निंबूनीर कायाग्नि और धात्वग्नि का बल बढ़ाने वाला और पाचक है। वसंत कल्प सब धातु और धात्वग्नि बढ़ा कर धातुओं को पुष्ट करता है।

आमलकी रसायन भी ठीक ऐसा ही धातुपोषण करता है। आमले का फल, शक्कर या मधु (शहद) जैसा मधुर और प्रभावान-स्नेहवान बनता है।

आमले में जीवनतत्व सी, विटामिन 'सी' बहुत प्रमाण में रहता है। ये जीवन सत्व संतरा, मुसंबी, ग्रेप फूट, खट्टा नीबू, सेब, अंगूर, गोबी आदि में भी रहता है। लेकिन आमले में बहुत रहता है। इस जीवन सत्व के प्रमाण से अच्छा सुपक्व आभाग सर्वधातुओं का परिपोषण करता है।

काली मिर्च भी इस द्रव्य से भरी हुई है। उससे ही मर्च्यकल्प अच्छा रसायन कार्य करता है। पिप्पली अग्निमांद्य हटाकर रसायन कार्य करती है। उसका वर्तमान पिप्पली योग सुप्रसिद्ध है। भल्लातक पक्वाशय और ग्रहणी को बल देकर आम का पाचन करके रसायन कार्य करता है। बलाचतुष्टय वात वाहिनी, हृदय और इतर वात स्थान को बल देकर रसायन कार्य करता है। कायाकल्प अर्थात रसायन चिकित्सा करते समय—

(शेष पृष्ठ ६१ पर पढ़ें)

श्वास और दमा

(लेखक—सीताराम गोस्वामी)

भारत-व्यापी यह रोग देश के कौने २ और गांव २ में लगभग प्रत्येक वृद्ध नर-नारी को तथा वर्तमान समय में अनेकों हृष्ट-पुष्ट युवतियों तथा युवकों और अब तो शैशवकाल के बच्चों तक में होता दिखाई दे रहा है।

इस सम्बन्ध में कारण, लक्षण, रोकथाम, चिकित्सा, उपचार और सामान्य सावधानियों पर हम विवेचना करते हैं।

हम एक मिनट में १८ बार श्वास लेते हैं अर्थात १८ बार उच्छ्वास और १८ बार प्रश्वास करते हैं। उच्छ्वास की क्रिया वक्ष की पेशियों और महाप्राचीरा पेशी के संकोच का फल है। प्रश्वास क्रिया केवल इन पेशियों के संकोच के समाप्ति से होती है। प्रत्येक उच्छ्वास के समय वायु, ग्रसनिका द्वारा स्वर यन्त्र से वायु-प्रणाली में दो शाखाओं में विभक्त करती हुई फुफ्फुस और दूसरे वायुकोष्ठों में पहुँचती है। यहां गैसों की अदला-बदली होती है और रक्त आक्सीजन के मिलने से लाल हो जाता है।

श्वास-कर्म एक भौतिक क्रिया है। हम इसे नासिका से वायु ग्रसनिका में होकर वायु प्रणाली में भेजते हैं, वायु प्रणाली ग्रीवामें अन्न प्रणालीके सामने रहती है। इसका ऊपरी सिरा साधारणतया टेटुआ कहलाता है। यहां से यह नली मध्य रेखा में नीचे की ओर चली जाती है और आगे चलकर फुफ्फुसोंमें होते हुए ये वायु-प्रणालिकायें इतनी सूक्ष्म होजाती हैं कि वे केवल सोलिक धातु की बारीक नलिकायें ही होती हैं।

वक्ष में दाहिनी ओर फुफ्फुस स्थित है। प्रत्येक फुफ्फुस असंख्य कोष्ठों का बना होता है और वा नलिकाओं की सूक्ष्म शाखाओं से यहां वायु आती है कोष्ठों की कला को निकालकर सीधा नापा जाय १२० वर्ग गज ये निकल सकती हैं, इससे ही हमें ज्ञान कर लेना पर्याप्त है कि वायु कितना विशद का इस शरीर में करती है। उपस्थित वायु और केशिकाओं में उपस्थित रक्त के बीच में केवल बारीक कला का ए पर्त रहता है, इस कारण रक्त को वायु से आक्सीज लेना और कारबन-डाई-आक्साइड को लौटाना अत्य सहज होता है। गैसों के भौतिक गुणों के अनुसार कला द्वारा अभिसरण कर सकती हैं।

वक्ष के ऊपर का द्वार प्रथम पर्शुकायें पृष्ठवं और वक्षास्थि मिलकर बनाते हैं। इस छिद्र का अधि भाग फुफ्फुसों के शिखरों से भरा रहता है, जिसके बी में होकर शिरायें श्वासप्रणाली तथा अन्य प्रणाली व के भीतर आती हैं और धमनियां बाहर निकलती हैं

प्रत्येक श्वासकर्म में एक बार वायु फुफ्फुस भीतर जाती है और फिर बाहर निकलती है। साधार उच्छ्वास में लगभग ५०० वायु फुफ्फुस के भीत जाती है और इतनी ही प्रश्वास में बाहर निकल है। भरसक प्रयत्न करने पर १५०० तक उच्छ्वा प्रश्वास कर सकते हैं। इस तरह २५० घ० इ० वा अधिक से अधिक आ सकती है।

वायु कोष्ठों की वायु गैसों की निष्पत्ति आक्सी जन १४.५ कारबन डाई आक्साइड ५.५ नाइट्रोज ८० और प्रश्वास द्वारा जो वायु हम बाहर निकालते उसकी निष्पत्ति आक्सीजन १६.५० कारबन डा

आक्साइड ४.० नाइट्रोजन ७६.५० होता है। उच्छ्वास द्वारा जो वायु भीतर जाती है वह वायुमण्डल की साधारण वायु होती है किन्तु प्रश्वास द्वारा निकलने वाली वायु में गैसों की मात्राके अतिरिक्त और भी कई परिवर्तन होते हैं। पहला परिवर्तन गैसों की मात्रा में होता है-भीतर जाने वाली वायु में २०.९६ आक्सीजन .०४ कारबन डाई आक्साइड ७६.०० नाइट्रोजन होता है और बाहर निकलने में निष्पत्ति उपर्युक्त होता है। इसी प्रकार बाहर निकलनेवाली वायुतापमें अधिक जल कल वाष्पसे शून्य और ऐन्द्रिक पदार्थोंसे मुक्त होती है।

श्वास-कर्म का प्रयोजन

फुफ्फुस के वायुकोष्ठों में रक्त और वायु में गैसों की अदला-बदली है जिससे रक्त कोष्ट की वायु से आक्सीजन ले लेता है और कार्बन लौटा देता है, रक्त आक्सीजन को लेकर शरीर के सब अंगों में भ्रमण करता है। फुफ्फुस के वायुकोष्ठों में रक्त आक्सीजन को लेता है और कार्बन डाई आक्साइड को देता है और आक्सीजन को धातुओं को दे देता है। इसे 'टिसू-रेस्पाईरेशन' कहते हैं।

दूसरा प्रयोजन जारणक्रिया द्वारा उत्पन्न हुए बहुत से विषों को निकालना है। एक बार में २०० सी० सी० वायु फुफ्फुस से बाहर निकलती है। २४ घण्टे में एक मनुष्य साधारण अवस्था में ४०० घ० फु० वायु को अपने फुफ्फुस में ग्रहण करता है और लगभग ४ प्रतिशत आक्सीजन से मुक्त तथा इतनी ही कार्बन-डाइ-आक्साइड से युक्त करके लौटा देता है।

श्वास-कर्म का कारण

प्रयोगों द्वारा यह पता लगा है कि शुष्मना के अर्धभाग सुषुम्ना शीर्षक में (मेडूला-ओबियनगेटा) एक कोषाणु समूह श्वास क्रिया को नियन्त्रित करता है। यह श्वास केन्द्र कहलाता है और रक्तसंचालन केन्द्र के पास ही स्थित है। केन्द्र में उत्तेजनायें उत्पन्न होकर कुछ नाडियों द्वारा श्वास कर्म करने वाली पेशियों में पहुंचती है जिससे पेशियां संकोच विस्तार करना प्रारम्भ कर देती हैं। महा प्राचीरा और अन्तर्पर्शु का पेशी ही विशेष श्वास कर्म करती है। क्रोध में श्वास वेग से चलने लगता है। भय में भी श्वास वेग से चलता है। शरीर पर ठंडा जल पडने से कुछ समय के लिए श्वास रुकता है। उत्तेजनानुसार श्वास की गति में गहरे उथले होने का परिवर्तन होता रहता है। जब शरीर के भिन्न २ भागों से उत्तेजनायें होती हैं तो श्वास केन्द्र उनको श्वासक पेशियों में भेज देता है। श्वास केन्द्र के वास्तव में दो भाग हैं-एक उच्छ्वास केन्द्र, दूसरा प्रश्वास केन्द्र।

शरीर, धमनी और शिरा दो प्रकार की रक्त नाडियां वहन करती हैं। धमनी में शुद्ध रक्त और शिरा में अशुद्ध रक्त बहता है। श्वास केन्द्र इन रक्तों के कोसों के अनुपातको ठीक करता है। ज्योंही अधिक कार्बन डाई आक्साईड युक्त रक्त इस केन्द्र में पहुँचता है तुरत ही श्वास जल्दी २ आने लगता है।

श्वास कष्ट उस दशा का नाम है जब रक्त को किसी कारणसे आक्सीजन पर्याप्त मात्रामें नहीं मिलती। यह दशा श्वासमार्ग में अवरोध होने पर, गलेको दबाने से रक्त के लाल कणों के ह्रास से श्वास-कष्ट होता है।

श्वासावरोध वह दशा है जब श्वासक तथा सहायक पेशियां तीव्र गति से संकोच करने लगती हैं, किंतु शरीर की अन्य पेशियों में भी प्रबल संकोच होने लगता है जिनको आक्षेपक कहते हैं। होंठ, नख, तत्पश्चात सारा मुख नीला हो जाता है। फांसी पर लटकाने से श्वासावरोध के कारण ही मृत्यु होती है।

कृत्रिम श्वास-क्रिया—श्वासावरोध से मृत्यु होने पर कृत्रिम श्वास-क्रिया द्वारा तत्काल पुनर्जीवित करना सम्भव है। कृत्रिम श्वासन का सिद्धांत यह है कि एक मिनट में वायु को फुफ्फुसों में भेजने की क्रिया १० या

१२ बार हो इस प्रकार एक घंटे तक यह क्रिया होने से जीवन आ सकता है। रोगी को पीठ के बल लिटाकर श्वासन-कर्त्ता रोगी के सिर की ओर खड़ा हो दोनों बाहों को पकड़कर सिर की ओर जितना भी हो, खींच सकता है। तत्पश्चात् बाहुओं को फिर सिर की ओर लाता है। यह क्रिया कृत्रिम श्वास के लिए की जाती है।

मोटी परिभाषा में इस प्रकार की शुद्ध वायु की कमी के कारण मुख्य रूप से श्वास-रोग जन्म लेता है और इसी का सेप्टिक प्रभाव दमे के रूप में सामने आता है।

लक्षण

थोड़े से ही परिश्रम से श्वास का वेग से चलना, श्वास में आक्षेप होना, सूर्योदय और सूर्यास्त पर श्वास का चलना, गले का धांसना, जुकाम का बार-बार होना सूखी और गीली खांसी अधिक दिन तक रहना, प्रातः काल आधा घंटे तक पुनः-पुनः छींकों का आना, मुंह और गुंह द्वार से कफ, पूय, पस का निकलना, लिपड़ी टपकना वक्ष का गड़गड़ाना आदि-आदि श्वास रोग के प्रारम्भिक लक्षण हैं।

रोकथाम

यह जानना आवश्य है कि क्लेदक, कफ, (आमाशय) मल संजक कफ, अवलम्बक कफ (छाती) बोधक कफ (जिह्वा), तर्पक कफ (सिर) श्लेषक कफ (हड्डियों के जोड़) आदि जिस प्रकार का श्वास में प्रादुर्भाव है उस प्रकार हमें रोग क्षमता-शक्ति के बढ़ाने के लिए विटामिन्स का लेना आवश्क है। सुलभ और सस्ते विटामिन्स का प्रकृति ने हमें एकसा रूप दिया है। उदाहरण के लिए शरीर का जो अवयव विरक्त हो उसी रूपरेखा का सूखा-हरा फल कोई लिया जाय, वह तत् सम्बन्धी शक्ति देगा।

संतरे की कली दांत के मसूड़ों सी है, आमाशय की बनावट आम सरीखी है, सेब की शक्ल हृदय सी है, श्वास कोष की बनावट अंगूर के गुच्छे सी है। इसी प्रकार शरीर से लोआब निकलने पर घीक्वार, आमाशय के लिए पालक, पेट के लिए महुआ, वृष के लिए बड़ी सेब' मूत्राशय के लिए विदारी कंद, वृषण के लिए प्याज, नितम्बों के लिए कटहल, तुमड़ी, वेदना के लिए सूरन, मांस और चर्म की दुर्बलता के लिए लेना हितकारी है। इस लिए जिस प्रकार का अवयव श्वास के साथ हो उस प्रकार के फल और मापी लेना उसकी रोकथाम के लिए पर्याप्त है। साथ ही आक्सीजन ग्रहण करना अत्यन्त ही अनिवार्य है।

चिकित्सा

आयुर्वेदिक, एलोपैथिक, सभी ग्रंथों में अनेकों प्रकार की चिकित्सायें इस भयंकर रोग पर हैं। सच तो यह है कि कुल मिलाकर १००० से ऊपर औषधियां इस रोग के लिए होंगी। परन्तु कौन कहां लाभ करेगी इसका निश्चित करना रोगी की समझ के ऊपर कुछ निर्भर है। यह तो तय ही है कि श्वास-रोग किसी विशेष अवयव के साथ रहता है और कुछ ही दिनों में शरीर का स्वभाव श्वास-सा हो जाता है। आहार, विहार और उपचार इस रोग को जड़ से खोने के लिए औषधि से भी अधिक गुण कारी है। मुख्य रूप से इस रोग को तीन भागों में बांटकर चलिए--पहला भाग रोग की वह क्लीवता है जब उसे एक-एक क्षण दूभर हो जाता है। इस अवसर पर एलोपैथ सुलाना अधिक पसन्द करते हैं, इसीलिए एड्रेनिल एफेड्रिन आदि देते हैं लेकिन आयुर्वेदिक शांति पर संतोष करता है और वह आपामार्ग-श्वासकुठार, आदि देता है। प्रातः कालेयक, अगर, हुलहुल, कूठ, हल्दी, शीतशिव, सत्पुष्पा, निशोतर, रासना, पूतिकरंज, बल्ली पंचमूल, कंटक पंचमूल, एकपलादिगण, ब्रहत्यादिगण मुंश्कादिगण, वचादिगण, सुरसादिगण, आरगवधादिगण आदि

(शेष पृष्ट ६१ पर पढ़ें)

अनुभूत योग रत्नावली

अभयादि मोदक पर अनुभव

वैद्य श्री भूषणदास दे० व्यास सूरत निवासी ने अभयादिमोदक पर अनुभव गुजराती भाषा में लिखा है कि आज से ४६ वर्ष पूर्व जब मैं आयुर्वेद का विद्यार्थी था, उस समय मैंने शारंगधर संहिता के उत्तर खण्ड के चतुर्थ अध्याय में अभयादिमोदक का पाठ पढा था। इस योग में कितनी शक्ति और चमत्कार है इसका अनुभव तो मुझे चिकित्सा कार्य आरम्भ करने के कितने ही वर्ष बाद हुआ। प्रारम्भ में तो इस योग को शारंगधर में लिखे पाठ के अनुसार ही बनाया था जो इस प्रकार है—

बडी पीत हरीतकी (गुठली निकाल कर) कालीमिरच, सूंठ, वायवडिंग, आमला, पिपली, पीपलामूल, तज, तमालपत्र और नागरमोथा एक-एक भाग, दन्तीमूल २ भाग, निसोथ ८ भाग और मिश्री ६ भाग, इन सबको कूट पीस कपड छान चूरण बनाकर आवश्यकतानुसार मधु मिलाकर कूटें और एक-एक तोलाके मोदक बनालें। इसमें से प्रातःकाल एक मोदक दस्त लाने के लिए सेवन करना और ऊपर से शीतल जलपान करना उचित है। जब तक दस्त होते रहें तब तक उष्ण पान न करें और खान, पान, विहार, श्रम नियमित रखें तो विषम ज्वर, मन्दाग्नि, पांडु रोग, खांसी, भगन्दर, कुष्ट, गुल्म, अर्श, गलगंड, व्रण, उदर रोग, विदाह, प्लीहा मेह रोग, राजयक्ष्मा, नेत्र रोग, वात रोग, आध्मान, मूत्रकृच्छ्र, पथरी तथा कटि, जंघा, पिंडलियों और पेट की पीडा दूर होती है। अभयादि मोदक निरन्तर सेवन करते रहने से अकालपलित सफेद बाल काले होजाते हैं। यह एक उत्तम रसायन है ऐसा शास्त्रीय विधान है।

अनुभव

प्रथम तो मैंने शास्त्रीय योग के अनुसार ही समस्त द्रव्य लेकर यह मोदक बनाये थे और रोगियों को दिये थे किन्तु अधिक दिन पडे रहने से इन मोदकों में शराब जैसी दुर्गन्ध आने लगती थी जो अनेक रोगियों को अप्रिय थी। दूसरा अवगुण यह था कि शास्त्रीय मात्रा लेने से दस्त अधिक आते थे जिससे दुर्बल रोगियों को कष्ट होता था। इसके शास्त्रीय गुणों का अनुभव प्राप्त करने की उत्कंठा के कारण मैं मूल योग में कुछ परिवर्तन करने को कृतनिश्चय हुआ। वह परिवर्तन इस प्रकार किया—

योग के सभी द्रव्य शास्त्रीय प्रमाण में ही लेकर उनका कपडछान चूर्ण बनाया और चूरण के समभाग धोकर साफ की हुई और बीज निकाली हुई काली मुनका लेकर इमामदस्ते में खूब कूटीं और उनमें थोड़ा २ चूरण डालकर कुटाई करातारहा। जब सब चूरणमिलगया और मोदक बनाने योग्य होगया तब १-१ तोला की बजाय ४-४ माशे के मोदक बनाये। रोगियों को प्रातः, दोपहर और शाम को नाशता और भोजन के आध घण्टा पहिले १-१ मोदक खाने की व्यवस्था की। इसका परिणाम बहुत ही सुन्दर रहा। प्रत्येक प्रकृति वाले को यह व्यवस्था अनुकूल रही और चिरकाल तक पड़े रहने पर भी इनमें कोई दुर्गन्ध आदि उत्पन्न नहीं हुई। शास्त्र में लिखे गये रोगों के अतिरिक्त भी मैंने अन्य [illegible] रोगों पर भी इसका परीक्षण किया क्योंकि मुझे तो

इसके चमत्कारिक और प्रभावक गुणों का अनुभव प्राप्त करना था इसलिए हजारों रोगियों को आंख बन्द करके देता रहा और भगवान धन्वन्तरि की कृपा से बहुत पुराने जीर्ण, लगभग प्रत्यक्ष में असाध्य रोगियों पर भी मुझे सफलता मिली। ज्यों २ सफलता मिलती गई त्यों २ मेरी श्रद्धा बढ़ती गई। फिर तो मुझे अधिकाधिक मात्रा में चूरण तैयार कराकर ढाई ढाई सेर मोदक नित्य तैयार कराने पड़ते थे। अधिकांश रोगियों को यही मोदक देते रहनेसे लोग मुझे 'गोला वाला वैद्य' के उपनाम से कहने लगे।

विशेष अनुभव

एक रोगी स्टीमर में केप्टेन के हाथ के नीचे सारंग का काम करता था। यकायक उसके सिर, दाढी, मूंछ, भवों और पलकों के तथा अन्त में सारे शरीर वाल झड़ गये और वह सर्वथा निर्लोम बन गया जो देखने में भयानक लगता था। केप्टेन ने इस रोग को देखकर उसे नौकरी से अलग कर दिया। यह रोगी सूरत जिले के उमरा ग्राम का निवासी था। जब वह मेरे पास चिकित्सार्थ आया तो मैंने उसका निदान 'रक्तजन्य लोम विध्वंसकृमि' किया और यही अभयादि मोदक सेवन करने को दिए। एक मास सेवन कराने के बाद उसके आईने जैसे सिर में चितकबरी रूंवाटी आने लगी उसको एक मास बढने दिया और मोदकों का सेवन जारी रखा। उसके बाद उसके सिर के बालों का उस्तरे से मुण्डन करा दिया गया। फिर तीन मास बाद तनिक काले रंग के किन्तु तनिक मोटे बाल निकले। उनको भी एक मास बढने दिया और बाद में मुण्डन करा दिया। अभयादि मोदकों का सेवन बराबर चालू रहा। इसके पश्चात तीसरी बार जो बाल निकले वे एकदम काले और सघन थे। साथ ही स्वभाविक रूप से शरीर के जिन २ भागों पर बाल थे वहां भी उत्पन्न होगये। उसकी भूत जैसी सूरत फिर से सुन्दर मानव जैसी होगई और स्वास्थ्य भी उत्तम होगया। अब फिर वह व्यक्ति बम्बई गया और कैप्टन से मिलकर नौकरी की मांग की। कैप्टन को सन्देह हुआ कि कहीं यह नकली बाल लगाकर तो नहीं आया है इसलिए उसने उसके सिर के बालों को खूब खैंच २ कर परीक्षा की। जब केप्टेन ने देखा कि यह वास्तव में असली बाल हैं तो उसे बहुत आश्चर्य हुआ और उसने पुनः उसी पद पर उसे नौकर रख लिया। उस रोगी ने पूरे १२ मास तक इन मोदकों का सेवन किया था। उसके बाद उसी प्रकारके ६-७ निर्लोम रोगियों की मैंने इन्हीं अभयादि मोदकोंसे चिकित्सा की और सम्पूर्ण सफलता मिली हालांकि शास्त्रमें इस रोग पर इसको सेवन कराने का विधान नहीं है तथापि इसके शोधक गुणों में श्रद्धा रखकर इस नवीन अनुभव में सफलता मिली।

इसके बाद तो मैंने श्लीपद, आमवात, दीर्घ संधीवात, औपसर्गिकमेह, उपदंश और उसके उपद्रवों, नेत्र रोगों में अभिष्यंद व अधिमंथ तथा वर्त्म रोगों पर छूट से उपयोग किया और खूब सफलता मिली। सबका जुदा २ अनुभव लिखने बैठें तो इस अंक के समस्त पृष्ठ अपर्याप्त होंगे अतः वैद्यों से निवेदन है कि स्वबुद्धि से शास्त्रीय योगों का अनुभव करें और ऋषियों की बुद्धि का चमत्कार देखें।

गुहेरा की अनुभूत दवा

हमारे यहां इसको विषखपरा कहते हैं जो कि गिरगिट की शकल का परन्तु उससे कुछ बडा गोह की जाति का एक जानवर होता है। इस अतिउग्र विषैले जीव की दवा हमारे चाचा जी जानते हैं। मेरे पूछने पर उन्होंने इसके प्राप्ति की कथा को इस प्रकार वर्णन किया।

बहुत दिन हुये हमारे गांव के पास सांप पालने वाले सपेरों ने डेरा डाल दिया। जो वर्षात भर यहां रहे। उनमें एक विषैले जानवरों की चिकित्सा करने में बहुत ही निपुण था और कहता था कि मेरे पास विषखपरे की दवा शर्तिया है। वह बहुत पूछने पर तथा लोभ देकर और अत्यन्त प्रेम करने पर भी किसी प्रकार दवाइयों को नहीं बतलाता था। कहता था मुझसे दवाइयों को न पूछो चाहे जितनी लेलो मैं बतलाऊंगा नहीं। देखों यह मेरे पास गुहरे की दवा है, यह सर्प की और यह विच्छू की। उसने प्रयोग विधि भी बतला दिया। मैंने लाचार होकर वह दवाइयां ले लिया। मेरे दो साथी भी थे उनसे सब हाल बताया। उन्होंने कहा सब इसी जंगल की दवाइयां हैं जो कि खोदकर लाया करता है। जब यह जंगल जाए तब चुप चाप इसके पीछे चलें और जडी खोदते में इसको देखते रहें शायद मालूम हो जायें। बस यही तै हुआ। कई दिन के पश्चात् मौका लगाते २ जब वह सपेरा जंगल की तरफ चला तब हम तीनों आदमी छिपकर उसके पीछे चले और जडी खोदने पर उसको छिपकर देखते रहे। जब वह लौटकर कुछ दूर आ गया तब हम उस स्थान पर गये और देखा कि गुरिच की लता एक पौदे में लिपटी हुई है और इसी की जड खोदी गई है। तब हम दूसरी गुरिच की जड खोदकर अपने पास वाली तीनों दवाइयों में मिलान किया। स्वाद, रंग रूप में वह गुहेरा की दवा से मिल गई। घर आने पर हम तीनों आदमियों को इसके अनुभव की चिंता हो गई। कुछ दिन के बाद एक दिन ऐसा संयोग हुवा कि मैं अपनी चौपाल में साथियों के साथ बैठा हुआ था। हमने देखा कि ईंटों के रोडों में गुहेरा दौडकर घुस गया है। इतने में मेरा एक साथी बोला कि बडा अच्छा मौका है दवा का अनुभव कर लिया जाय। मैंने कहा कैसे। उसने कहा कि मैं इसे पकडूंगा। मैंने कहा ऐसा मत करो, क्यों जान बूझकर मरते हो शायद सपेरा ने झूठी दवा दिया हो। उसने कहा मेरे न स्त्री है न लडका है अधेड उम्र का हूं घर में कोई नहीं है जो मेरे मरने पर रोये मेरा दिल अनुभव के लिए बेचैन है। इतना कहकर वह चल दिया, हमने बहुत रोका लेकिन वह न रुका। वहां जाकर उसने रोड़े टालकर गुहरा की पूंछ पकड लिया उसने हथेली के ऊपरी हिस्से में काट लिया। यह देखकर हमारा हृदय कांप गया। हमने घोट छानकर दवा तैयार की तब तक उसको विष का नशा चढ़ आया। उसकी आवाज में गुनगुनाहट पैदा हो गई, मुंह में स्याही फिर गई और फट से जमीन में लुढ़क गया और उसकी दांती बैठ गई। यह सब देखकर हम बहुत घबराये एक लोहे की डंडी से दांत फैलाकर मुंह में दवा डाल दी। उसकी वेहोशी की हालत में दवा भरी रही और गल गल होती रही। यका यक वह घुट से निगल गया। दवा अन्दर जाते ही हाथ पैर पटकने लगा और कुछ होश आकर बैठने लगा लेकिन उसका चित्त ठीक न था। हमने दूसरी मात्रा दिया। इससे वह बहुत ठीक हो गया। परन्तु पूर्ण विष हटाने के लिए फिर तीसरी मात्रा दिया अब लगभग आध घण्टे में वह बिलकुल स्वस्थ हो गया।

प्रयोग विधि—काली मिरच के दस पन्द्रह दाने और गुरिच की जड आठ आना भर डेढ़ छटांक पानी में घोट छानकर। यह एक मात्रा है।

वैद्य दयाराम, मु० चिल्ला (बांदा)

अर्शाङ्कुर नाशक

अर्क पंचाग ५ सेर लेकर यवकुटकरके १ बड़े मटके में डालकर पानी से भरदें और ७ दिन तक पडा रहने दें और बाद में रोजाना पाखाना जाने के बाद इस पानी से गुदा को धोयाकरें। घड़े में से रो[illegible]

(शेष पृष्ट ७० पर पढ़ें)

(शेष पृष्ठ ५० का)

(क) ब्राह्मी घृत—एक सेर ताजी ब्राह्मी की पत्तियों के स्वरस के अभाव में एक सेर ब्राह्मी का क्वाथ लें एवं निम्नलिखित औषधियां बारीक पीसलें। मीठा कूट, शंखपुष्पी, घोड वच, कुलिंजन असगन्ध प्रत्येक सवा तोला।

निर्माण विधि—किसी कलईदार कडाही में उत्तम गौघृत एक पाव डालकर मन्द २ आंच पर पकावें। जल का अंश जल जाने पर उतारकर कपडे से छानलें।

व्यवहार—प्रातःकाल ३ से ६ माशे उतनी ही मात्रा में मिश्री मिलाकर लेने पर हकलाना दूर हो जाता है।

(ख) चूर्ण—सोंठ, शतावर, गुर्च का सत, अपामार्ग की जड, शंखपुष्पी, वायविडंग कूट मीठा, मीठा वच, हर्रे का वक्कल सब बराबर भाग लेकर पीसलें।

प्रयोग—६ माशे उपरोक्त चूर्ण शहद से चटावें। यह प्रयोग भी हकलापन दूर करने के लिए उत्तम है।

(ग) स्वरशुद्धिकारक—हल्दी, मीठा वच, कूट, छोटी पिप्पली, सोंठ, सफेद जीरा, कुलिंजन, अजमोद, मुलहठी, सेंधा नमक प्रत्येक समभाग लेकर कपडछान चूर्ण बना लें।

प्रयोग—उपरोक्त चूर्ण ३ माशे से ६ माशे तक घृत मिलाकर चाटने से स्वर शुद्ध होकर आवाज का स्पष्ट उच्चारण होने लगता है।

(घ) मिनमिनापन—प्रातःकाल एवं सायंकाल कल्याण अवलेह दो माशे, शीत प्रकृति हो तो घृत से दिया जाय। इससे मिनमिनाहट शीघ्र दूर होजाती है। प्रयोग शास्त्रीय है, देखकर बनालें।

(ङ) जिव्हास्तम्भ—सोंठ, पीपल, मिर्च, सोहागा, [illegible]भाग लेकर सूक्ष्म चूर्ण बनालें। आवश्यकतानुसार नींबू के स्वरस में घोंटकर जीभ पर रगडने से जिव्हा की जडता नष्ट होजाती है।

नोट—जिव्हा की नसें यदि मोटी पड गई हों तो आपरेशन द्वारा ही ठीक हो सकती हैं।

(च) कुल्ली (गरारे की औषधियां), काली मिर्च, राई, नौसादर, अकरकरा, लोंग, सोंठ प्रत्येक ६-६ माशा कूट-पीस लें। आधा सेर जल में उबालकर गर्म जल से गरगरा (कुल्ला) करने पर जिव्हा की स्तब्धता नष्ट होती है।

(छ) स्वर सुधारक वटी—कालीमिर्च, कुलंजन, अकरकरा, कूट मीठा, मुलहठी, छोटी इलायची के बीज, मीठा वच, ब्राह्मी प्रत्येक औषधियां एक एक तोला, पिपरमिंट का सत एक माशा। सबको कूट पीस कर शहद के साथ घोंटकर ४-४ रत्ती की गोलियां बनालें।

व्यवहार—एक गोली से चार गोली तक मुख में रखकर दिनरात चूसते रहें। इससे स्वर यन्त्र शुद्ध होकर आवाज स्पष्ट तथा सुरीली होती है।

पथ्यापथ्य—चपाती, मूंग, अरहर की दाल, लहसुन की छौंक तथा करैला का साग उपयोगी होता है।

(शेष पृष्ठ ६६ का)

जितना पानी निकालें उतना ही सादा पानी और डाल दिया करें। इस प्रकार १५-२० दिन के प्रयोग से ही अर्शाङ्कुर मुर्झा जाते हैं और कुछ दिन बाद झड जाते हैं। इन १५-२० दिनों में खाने की दवा का प्रयोग भी साथ ही करना आवश्यक है। दवा साधारण है। तारामीरा के बीज ३ माशा से ६ माशा तक बलाबल अनुसार लेकर जरा कूटकर प्रातःकाल शीतल जल के साथ सेवन करें। खटाइ, लालमिर्च, तेल, गुड आदि से परहेज रखें। बिना खरच का अत्यन्त सरल इलाज है। हमारा परीक्षित है। आप परीक्षाकर लाभान्वित हों।

वैद्य नुरातराम, मल्ला

हमारा अन्वेषण कार्य

संसार में मानव रोगों की निरापद चिकित्साके लिए नैसर्गिक जड़ी-बूटियों का प्रथम स्थान है क्योंकि हमारा शरीर प्राकृतिक है। वेद में भी वनौषधियों की प्रशंसा की है:—

औषधयः समवन्त सोमेन सहराज्ञा।
यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजनं पारयामसि॥
यजु० १२-९६

भावार्थ—औषधियां अपने राजा सोम (चन्द्र) के साथ बोलीं कि हे राजन! ब्राह्मण (वैद्य) जिस रोगी के लिए हमारा उपयोग करता है उस रोगीको वह रोगरूपी सागरसे पार करता है।

इस संस्था के प्रवर्तक कवि० डा० गणपतिसिंह वर्मा ने गत २७ वर्षों में जिन प्रभावजन्य अज्ञात अनुभूत योगों, द्रव्यों और जड़ी-बूटियों का ज्ञान संग्रह किया है वह चिकित्सकों और जनसाधारण से अप्रकट नहीं है। तद्विषयक उनके द्वारा लिखी गई दरजनों पुस्तकें और सैंकड़ों लेख इस बातके स्पष्ट प्रमाण हैं। इस चौथाई शताब्दी की निरन्तर खोज और योगों तथा द्रव्यों के अन्वेषण तथा परीक्षणने रोगग्रस्त मानव को रोगमुक्त करने का नया मार्ग खोल दिया है। जो जो योग अब तक के परीक्षण में सहस्रों रोगियों पर सफल सिद्ध हो चुके हैं उनको ही पेटेण्ट औषधियों का रूप दिया गया है। इनमें अनेक जानी पहचानी और अज्ञात औषधियां हैं जिनके अनुभूत गुणों का विवेचन न शास्त्र में मिलता है और न ही प्राचीन निघण्टुओं और आधुनिक मेटेरिया मेडिकाओं में। यह अनुभव का ही फल है। पर ऐसे सौभाग्य की ऐसी देन दुर्लभ होती है जिनके बारे में पहले कुछ नहीं कहा जासका। नई उपयोगी औषधियों में से अधिकांश का लम्बे तथा गहरे अनुसन्धान के बाद ही पता चला करता है और इस पर बड़ा व्यय हुआ करता है। आधुनिक युग में जिन कुछेक रसायनों को महत्वहीन समझा जाता था अनेक वर्षों के अनुसन्धान के बाद उनकी उपादेयता का अब पता चला है। अनुभूत योगों में से जो कुछ अद्भुत अचिंत्य शक्ति का परिचय मिलता है उसका पता पृथक्करण व हेतु से नहीं लगता। उसे प्रभावजन्य समझना चाहिये। प्रस्तुत लघु सूचीपत्र में कतिपय ऐसी ही अनुसन्धानित आयुर्वेदिक पेटेण्ट औषधियों का सार दिया गया है जो वास्तविक अर्थों में अनुभूत, प्रमाणित और विश्वासजन्य हैं, जिनके निर्माण में स्वच्छता, द्रव्यों की विशुद्धता, कठिनता से प्राप्त होने वाली वनस्पतियों की प्राप्ति, योग द्रव्यों की सर्वांग पूर्णता व निर्माणपद्धति पर पूरा नियन्त्रण रखा जाता है। सभी चिकित्सक व रोगी सन्तोषपूर्वक इन औषधियों पर निर्भर रह सकते हैं। यह औषधियां चिकित्सक को यश दिलाने और रोगी को रोग मुक्त करने में अपूर्व हैं। आपसे प्रार्थना है कि आयुर्वेद का गौरव बढ़ाने के लिए आप इस संस्था की औषधियों को निज प्रयोग में लाकर तथा अधिकाधिक प्रचार करके हमें सहयोग प्रदान करें।

खालिसा

यह कुछेक गंजनाशक जड़ी-बूटियों द्वारा निर्मित दवा है। सिर की चांद में या दाढ़ी, मूछ में जहां के बाल उड़कर गंज पड़ गई हो वहां इसको मलने से नये बाल ऊगआते हैं और गंज मिटजाती है। मू० ५) पो० १।)

केशिनी

यह तैल दिमागी कमजोरी, थकावट और सिर दरद को दूर करता है। दिमाग को ताजा और ठण्डा रखता है, खुजली, भूसी को दूर करके झड़ते बालों को रोकता है। कुछ दिन निरन्तर लगाते रहने से गंजापन और बालों का सफेद होना रुक जाता है। कुछ विशेष केश टॉनिक जड़ी-बूटियों के रसों को तेल में विशेष पद्धति से पचाया जाता है, जलाया नहीं जाता जिससे बूटियोंके सब तत्व तेलमें अक्षुण रहते हैं और वे पूरा प्रभाव करते हैं। मूल्य ४ औंस १।।) एक पौंड ५।)

बुधान

अधिक मानसिक परिश्रम, चिन्तन, अध्यापन या किसी अकथनीय कारण से जिनका दिमाग कमजोर होगया है, स्मरणशक्ति घट गई है, हृदय दुर्बल होगया है, सिर में हल्का २ दरद और थकावट रहती है उनके लिए 'बुधान' बहुत लाभदायक है। इसके सेवन से उपरोक्त दोष मिट जाते हैं। दिमाग पुष्ट होकर स्मरण-शक्ति तीव्र होजाती है। इससे उन्माद तक के रोगियों को लाभ हुआ है। बुद्धिजीवी लोगों के लिए वरदान स्वरूप है। मूल्य ४) डाकखरच १।)

टंकरोल

दो दिनमें इसकी ६ मात्राओंके सेवनसे जुकाम (प्रतिश्याय) ठीक होजाता है। दो खुराक खाने से ही शिर का भारीपन, छींकें आना, नाक से पानी बहना आदि दूर होजाता है। इसका प्रभाव श्लेष्मकला पर होता है। २४ मात्रा की शीशी का मूल्य १) छः मात्रा का नमूना ।=)

निद्राणी

स्वास्थ्य के लिए निद्रा उतनी ही आवश्यक है जितना कि भोजन, जल और शुद्ध वायु। भोजन के पचन और सात्म्यीकरण से शरीर की प्रत्येक सेल को अपनी स्थिति बनाये रखने की सामग्री मिलती है तो पूर्ण निद्रासे आराम मिलने के कारण घिसी हुई सेलों का पुनः निर्माण हो जाता है और खरच हुई शक्ति पुनः संचित हो जाती है। यदि युवा पुरुष को रात्रि में ६–७ घण्टे निरन्तर गहरी नींद नहीं आती या बीच बीच में टूट जाती है तो यह मस्तिष्क धमनियों की कठोरता, पाचन सम्बन्धी रोग, विबन्ध, ब्लडप्रेशर (रक्तचाप) नाडी दौर्बल्य आदि व्याधियों का लक्षण है। 'निद्राणी' इन सब अवस्थाओं में अपना निश्चित प्रभाव दिखाती है। कुछ ही मात्राओं के सेवन से रात्रिभर खूब गहरी नींद आने लगती है और प्रातः काल उठने पर देहमें स्फूर्ति और मन प्रफुल्लित होता है। इसमें कोई मादक या विषैला द्रव्य नहीं है। मू० ४) आधाकोर्स २।।) पो० १।)

नेत्राण

आंखों का दुखना, नेत्र पीड़ा, लाली, जलन, खुजली, सूजन, कीचड़ आना तथा अन्य नेत्र रोगों में परम लाभकारी है। दो बून्द नेत्रों में डालते ही ठंडक पड़ जाती है और २–४ दिन डालने से आराम हो जाता है। वैसे ही कभी २ डालते रहने से नेत्र साफ रहते हैं और कोई रोग नहीं होने पाता। मूल्य ।।)

नाग सुरमा

यह सुरमा रसायनिक प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है। यह सभी नेत्र रोगों में लाभकारी है। दृष्टिमन्दता, दूर या निकट कम दिखाई देना, तिमिर, धुन्ध, जाला, आंखों से पानी बहना आदि रोगों को नष्ट करके दृष्टि को तेज बना देता है। लगाते ही नेत्रों में ठंडक प्रतीत होती है। ६ माशा की शीशी १।।) तीन माशा १)

हनीक

इस दवा का प्रयोग आपको मोतियाबिन्दु के आपरेशन के कष्ट से बचा सकता है। प्रारम्भिक मोतिया इससे मिट जाता है किन्तु बढा हुआ मोतिया आगे बढने नहीं पाता तथा निरन्तर कई मास लगाते रहने से आराम भी हो जाता है। मूल्य ५)

पायोगन

यह पायोरिया की सफल दवा है। इस दवा को दांतों पर मलकर ५ मिनट लगा रहने दो और फिर कुल्ला कर डालो। इस प्रकार प्रातःकाल, दोपर और रात्रि को सोने से पहिले लगाने से मसूढों का गला हुआ मांस भरने लगेगा, पीप और रक्त का बहना बन्द होकर हिलते हुए दांत मजबूत हो जाते हैं। मूल्य २।।)

दन्तद्युति मंजन

यह मंजन मसूढे फूलना, दन्त पीड़ा, पानी लगना, मैल जमना, खून जाना, मुख में दुर्गन्ध आना आदि अनेकों रोगों को दूर करके दांतों को स्वच्छ चमकदार बनाता है। लगाने के बाद मुख से सुगन्धि आने लगती है। मूल्य ।।)

चवसोमला

दमा के लिए यह परीक्षित दवा है। इसका प्रभाव श्वास प्रणाली और स्वरयंत्र पर होता है। इसके सेवन से नाडी मण्डल की उत्तेजना शान्त होकर श्वास नलिकाओं का प्रसार होता है जिससे रोगी सुख का सांस लेता है और उसका कष्ट दूर हो जाता है। पूरा कोर्स समाप्त हो जाने के बाद श्वासनलिकायें पूर्ण स्वच्छ और फेफड़े पुष्ट हो जाते हैं। फिर कभी दमा का दौरा पड़ने का भय नहीं रहता। मूल्य ५)

कफ कर्श

यह नई और पुरानी हर प्रकार की खांसी में लाभदायक है। इसके सेवन के कुछ ही देर बाद धसक में आराम होने लगता है और कुछ ही दिन सेवन करने से पूरा आराम हो जाता है। मूल्य १)

दिलावरी

इस दवा का प्रभाव हृदय और फेफड़ों पर होता है जिससे हृदय की धड़कन, कमजोरी, शूल, शिथिलता, दाह, घबराहट, तृषा, आदि दूर होकर हृदय तथा मस्तिष्क ताजा और पुष्ट हो जाता है। मूल्य ५)

हृदय रोग की दवा 'हीरा भस्म' विशेष

हृदय रोगों का सर्वोपरि इलाज यह हीरा भस्म है। इसके सेवन से भयंकर हृदय रोग को भी अवश्य आराम हो जाता है। यह हृदय उत्तेजक और शूल-हारी होने से हृदय शूल (जिसमें भयंकर दाह होकर मूर्च्छा आ जाती है) तथा मिथ्या हृदयच्छूल जो हृदय स्थान के बाहिर चलता है दोनों पर अपना तत्काल प्रभाव दिखाती है। यदि धमनियों में रक्त संग्रह होता हो या अवरोध होता हो तो उसे भी दूर करती है एवं वात-नाड़ियों को बल देकर रोग को निर्मूल कर देती है। यह भस्म एक बूटी के काथ के साथ सेवन की जाती है अनुपान की बूटी सहित २० मात्रा का मूल्य ४०) पो० १।)।

आमाशयम

दिनभर कुर्सी या गद्दी पर बैठकर काम करने वालों का आमाशय (मेदा) प्रायः दुर्बल हो जाता है, कारण झुककर बैठने से आमाशय पर दबाव पड़ता है जिससे उसके क्रिया संचालन में बाधा पड़ती है और धीरे २ वह निष्क्रिय सा होता चला जाता है। फिर भोजन पचन उचित रूपसे नहीं होता और भांति २ की उदर सम्बन्धी व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं। यदि आमाशय कठोर हो जाये तो खाने की औषधधियां बहुत कम लाभ पहुँचाती हैं। 'आमाशयम' आमाशय पर मालिश करने की दवा है जो लगाते ही त्वचा में प्रविष्ठ हो जाती है। यह खाने की दवाइयों की अपेक्षा शीघ्र लाभप्रद है। इसके प्रयोग से आमाशय सबल होकर अपना काम सुचारु रूपसे करने लगता है। मूल्य एक औंस का ४) डाकखरच सवा रुपया।

अमोनिरी

यह हमारी नव अनुसन्धानित विशेष वनस्पतियों द्वारा निर्मित और दो वनस्पतियों द्वारा भावित योग है जिसे दीर्घ परीक्षण के बाद अब प्रकाश में ला रहे हैं। यह औषधि आजकल के बहुप्रचलित पेट रोगों और उनके उपसर्गों यथा-आंत की सूजन व शूल, व्रण, वायुविकार, मल की सड़न से उत्पन्न होने वाले विष दोष, गैस चढ़ना, अम्लपित्त, आंव, जीर्ण कब्ज, भूख न लगना, खून की कमी, नींद न आना, बुढ़ापा लाने वाली अम्लता, जोड़ों का दर्द व खांसी, जुकाम आदि के लिए अद्भुत गुणकारी सिद्ध हुई है। आमाशय और आन्तें बलवान होकर भूख खूब लगती है। स्वच्छ रक्त बनने से शरीर पुष्ट हो जाता है। मूल्य एक कोर्स ४) डाकखरच १।)

लीवर शर

यह दवा यकृत सम्बन्धी सभी रोगों के लिये हितकर है। लीवर सारयुक्त इस दवा के सेवन से शारीरिक मानसिक कमजोरी, यकृत दुर्बलता, श्याम और पीत पाण्डुरोग, हाथ पांव की सूजन, सांस फूलना आदि विकार मिटते हैं। मूल्य २।।)

कोलरास

हैजा की प्रत्येक दशा में इसके सेवन से लाभ होजाता है। अब तक के परीक्षण में अद्भुत लाभकारी सिद्ध हुई है। प्रति वर्ष हजारों रोगी इसके सेवन से स्वास्थ्य लाभ करते हैं। मूल्य १।) मात्र।

ग्रहणी शाल

नई संग्रहणी में इसको ७ दिन सेवन करने से ही पूरा आराम होजाता है। ३ मात्रायें सेवन करते ही इसका विशिष्ट गुण दृष्टीगोचर होने लगता है। पुरानी संग्रहणीमें २ से ३ सप्ताह सेवन करना आवश्यक है। एक सप्ताह की दवा का मूल्य ३)

स्वर्णजल

संग्रहणी रोग की यह सर्वश्रेष्ठ अव्यर्थ अमीरी दवा है। यह स्वर्ण योग है जिसमें स्वर्ण को प्रमाणु रूप में लाकर जलमें घुलनशील बनाया जाता है। १० दिन की ३० मात्रा का मूल्य १५)

सनोल

यह पुराने कब्ज का दवा है। इसे लगातार १५ दिन सेवन करने से पुरानी कब्ज मिट जाती है। प्रति दिन प्रातःकाल दस्त खुलकर साफ आता है। पेट साफ हो जाने से चित्त प्रसन्न रहता है और भूख अच्छी लगती है तथा शरीर में स्फूर्ति आती है। दवा का कोर्स पूरा होजाने के बाद फिर कभी कब्ज नहीं होगा और समय पर नियमित रूपसे दस्त साफ हुआ करेगा। मूल्य ३॥) पो० १॥।–)

डायबोडीन

इक्षुमेह, मधुमेह (डायबीटीज) प्रसिद्ध और भयंकर रोग है और इस रोग की यह दवा विश्वास-जनक चिकित्सा है। डाक्टरीमें इन्सुलीन के इन्जेक्शन काम चलाऊ इलाज है इससे रोग नहीं मिटता। जब रोग बहुत बढ़ गया हो तो इससे सहायता ली जासकती है किन्तु रोगको निर्मूल करनेके लिए 'डायबोडीन' का सेवन परमावश्यक है। यह दवा १० दिन में अपना असर दिखा देती है और २० दिन के सेवन से सुगर नार्मल के बराबर होजाती है। दो मास सेवन से रोग समूल नष्ट होजाता है। यह नवीन खोज की गई वनस्पतियोंके परीक्षण का सफल परिणाम है। मूल्य पूरा कोर्स २४) परीक्षार्थ आधा कोर्स १२) डाकखरच जुदा।

वृक्कोल

गुर्दे की चाहे जैसी घोर पीड़ा हो, इस दवा के सेवन से १५ मिनटमें ही चैन पड़ जाता है और दूसरी तथा तीसरी मात्रासे पूर्ण आराम होजाता है। मू० १॥)

बवासीर का सरल इलाज (अंकुरना)

बवासीर चाहे खूनी हो या बादी–दोनों को ही ५ दिन में पूरा आराम होजाता है। इस दवा में खाने या लेप करने का कोई झंझट नहीं। केवल थोड़ी सी देर इस दवा का धुवां मस्सों को स्पर्श कराना होता है जिससे किसी प्रकार का किंचित भी कष्ट नहीं होता। दवा का नाम अंकूरना है। मूल्य ५) डाकखरच १)

गठना

गठना–गठिया (Gout) सन्धि पीडा, सन्धि वात, रींघनवाय, लकवा, कटिपीडा, पार्श्वशूल तथा सम्पूर्ण वायु रोगोंके लिए यह अकेली और बहुपरीक्षित दवा है। खाट में पड़ा रोगी भी ३ दिवस के सेवन से चलने फिरने लग जाता है। इससे हर प्रकार के वायु रोग नष्ट हो जाते हैं। एक शीशी की कीमत ३)

मलना

यह नव आविष्कृत कैपशूल हैं। ६ कैपशूल के सेवन से मलेरिया बुखार निश्चित रूप से दूर हो जाता है। टाइफाइड और क्षय को छोड़कर बाकी सब प्रकार के ज्वरों को दूर करने की क्षमता इसमें है। कीनीन या आर्सेनिक आदि किसी विष का मिश्रण इसमें नहीं है इसलिए ऐसी औषधियोंसे उत्पन्न होनेवाले दुष्प्रभाव भी इसमें नहीं हैं। सर्वथा निर्दोष, मलेरिया और सब प्रकार के ज्वरों की अमोघ दवा ६ कैपशूल ॥) तथा ३६ कैपशूल का पैकिंग २॥)

ल्युकोआयर

इस दवा के सेवनसे नया श्वेत और रक्त प्रदर ६ दिन में ही मिट जाता है, साथ ही हडफूटन, कमर का दरद, उदासी आदि व्याधियां दूर होकर रुग्णा स्त्री स्वस्थ और पुष्ट बन जाती है। ६ दिन की दवा का मूल्य २) यदि रोग पुराना हो तो ४ शीशी सेवन करना चाहिये। एक शीशी से चार शीशी तक का पो० १)

नियन्त्रक

यह लगाने या रखने की दवा नहीं है, बल्कि

बनाने की निर्दोष दवा है। इसके सेवन करने के बाद फिर गर्भ नहीं रहता। परीक्षण में श्रेष्ठ और सफल सिद्ध हुई है। मासिक धर्म प्रतिमास नियमित होता रहेगा, शरीर पुष्ट बनेगा। स्वास्थ्य पर किसी प्रकार का कुप्रभाव नहीं पड़ता। मूल्य ५) डाकखर्च १।)

पीताम्बर (एक महान टॉनिक)

यह दवा पर्वतों पर बर्फ में पाई जाने वाली एक अत्यन्त शक्तिवर्धक बूटी के योग से बनी हैं। इसके सेवन से स्त्री-पुरुषों में किसी भी कारण से उत्पन्न हुई अशक्ति, दुर्बलता, शरीर का दुबलापन, वजन घट जाना, खून की कमी, गहरी नींद न आना, उत्साह और स्फूर्ति का अभाव आदि विकार मिटकर शरीर पुष्ट, शक्ति सम्पन्न और कान्तिमय हो जाता है, क्योंकि इसके सेवनसे खून में श्वेत और लाल अणु खूब बढते हैं। मूल्य एक मास की दवा का १०) पो० १)

नोट-निरामिष भोजी, अविवाहित और विद्यार्थी इसके लिए आवेदन न करें।

बाल रस

यह दवा विशिष्ठ वनस्पतियोंका अत्यन्त स्वादिष्ट और मीठा तरल सत्व है इसलिए बच्चे प्रसन्नतापूर्वक पी लेते हैं। इसमें चीनी नाममात्र को भी नहीं है। बालकों के ज्वर, खांसी, वमन, दूध पटकना, अपचन, हरेपीले दस्त, सूखारोग, अशक्ति, खून की कमी आदि व्याधियों को दूर करनेकी अपूर्व दवा है। एक शीशीके सेवनसे ही बच्चा निरोग और पुष्ट तथा मोटा ताजा बन जाता है। स्वस्थ बालक को सेवन कराते रहने से वह प्रायः सभी रोगों से सुरक्षित रहता है। मूल्य १)

जोइन्टान

टूटी हड्डी जोड़ने की अद्भुत दवा

मनुष्य की हड्डी चाहे जहां से टूट गई हो—इसकी एक मात्रा खिलाने से अपने आप यथास्थान बैठकर तुरन्त जुड़ जाती है और जोड़के स्थान पर वेल्ड किये की भांति एक गोल कड़ासा लग जाता है जो कुछ दिन बाद स्वयं ही मिट जाता है। यदि दो मात्रायें खिलायें तो दो और तीन मात्रा खिलाने से तीन कड़ेसे लग जाते हैं, जो कुछ समय बाद मिट जाते हैं। जैसा केस हो उसी के अनुसार मात्रायें देना चाहिये। चाहे जैसा केस हो ३ मात्रासे ठीक होजाता है। ३ मात्रा का मू० ३) छः मात्रा ५) तथा १२ मात्रा का मू० ६) है। हमारे क्लिनिक में आनेवाले ग़रीब रोगियों को यह दवा मुफ्त दीजाती है।

चन्द्रजीवन कल्प

आयुर्वेदिक चिकित्सकोंके लिए यह सुन्दर अवसर है कि वह इस कल्प से तपेदिक (क्षय) की चिकित्सा कर यश प्राप्त करें और देश की सबसे बड़ी समस्या को हल करने में योगदान दें। इस कल्प को सरलता पूर्वक रोगी के घर पर भी कराया जा सकता है। एक मास का कल्प पूरा होने पर क्षय के कीटाणुओं का नाश हो जाता है। शरीर में रस, रक्त, मांस तथा धातु की वृद्धि होकर शक्ति और स्फूर्ति का संचार होने लगता है, ज्वर, खांसी आदि उपद्रव व क्षय के समस्त लक्षण मिटकर रोगी स्वस्थता अनुभव करने लगता है। इस कोर्स को समाप्त करने के बाद 'फ्लैशटोन' नामक दवा भी एक मास सेवन करना उचित है। कोर्स का मूल्य ३०) रु० मात्र। विशेष जानकारी के लिए पत्र व्यवहार करें।

अग्निस्थाई पारद गुटी

अग्निस्थाई पारे के दिव्य गुणों को प्रायः सभी जानते हैं किन्तु यह दुर्लभ वस्तु है, वर्षों के सतत प्रयास से अब हम इसको बनाने में सफल हो चुके हैं। इस पारद को चाहे जितनी तेज़ आग पर रखो, न उड़ेगा और न वजन कम होगा। इसकी गोली को मुख में रखकर चाहे जितना शारीरिक, मानसिक परिश्रम करो थकावट बिल्कुल न होगी। २—योगाभ्यास करनेवालों को समाधिस्थ अवस्था प्राप्त होती है। ३—भजन पूजन में मन एकाग्र होता है। ४—दूधमें गोलीको उबालकर पीनेसे अत्यन्त बल और पराक्रम प्राप्त होता है। अन्य गोपनीय गुण सेवन विधिमें पढ़ें। अनेक चिकित्सकों और महात्माओं द्वारा परीक्षित मूल्य २१) डाक खर्च १।)

जी० एस० आयुर्वेदिक रीसर्च प्रॉडक्टस ३ दरियागंज, देहली ७

रत्नों के साथ तुलनेवाली अनुपम पुस्तकें

४० से अधिक आयुर्वेदीय पुस्तकों के रचयिता प्रसिद्ध लेखक व चिकित्सक राजवैद्य डा० गणपतिसिंह वर्मा द्वारा रचित व प्रकाशित—यह वही पुस्तकें हैं जिनकी वैद्य, हकीम, डाक्टर और जनसाधारण मुक्तकंठ से प्रशंसा कर रहे हैं। जिनके विषय में देश के गणमान्य लोगों की सम्मति है कि इन पुस्तकों का प्रत्येक घर में होना अत्यावश्यक है। क्योंकि इनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक स्थान में सहसा होजाने वाले रोगों का सरलतापूर्वक इलाज कर सकता है। प्रत्येक पुस्तक के कई २ संस्करण हो चुके हैं जो कि इनकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है।

अनुभूत योग चिन्तामणि

इसके लेखक ने ५ वर्ष तक लम्बी २ यात्रायें करके संन्यासियों की कठिनतम सेवा और भ्रमण के अथक परिश्रम के अतिरिक्त ५४३५ रुपये खर्च करके जो ५३३ जादुअसर अनुभूत नुस्खे प्राप्त किये थे वह निष्कपट भावसे इस पुस्तक में प्रकाशित कर दिये हैं। भारतवर्ष के सैंकडों वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों ने इन सब नुस्खों की पचासों बार परीक्षा करके शत प्रतिशत अनुभूत होने के प्रमाणपत्र दिये हैं जिससे सिद्ध होगया है कि इसमें एक भी ऐसा योग नहीं—जो अनुभूत सिद्ध न हो, सबके सब संन्यासियों के हृदय के गुप्त योग हैं। भारत के गणमान्य हकीमों व वैद्यों का निर्णय है कि जिसके पास यह पुस्तक नहीं, निःसन्देह उसकी चिकित्सा और औषधालय अधूरा है। मूल्य प्रथम भाग पांचवीं आवृत्ति ४।) द्वितीय भाग ४) डाकखरच जुदा।

१५ वर्ष के कठिन परिश्रम का फल

अनुभूत योग प्रकाश

आज से १५ वर्ष पूर्व जिस पुस्तक को प्रकाशित करने का आयोजन प्रकाशित किया गया था वह पुस्तक अब छपकर तैयार हो गई है। इस पुस्तक के योगों के विषय में केवल इतना बतला देना ही काफी होगा कि गत १५ वर्ष के सतत उद्योग से बड़े २ साधु, महात्मा, फकीरों, भीलों से लेकर राजा, रईसों तथा ख्यातिवान प्रसिद्ध विद्वान वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों के उन अनुभूत चमत्कारी योगों को इस पुस्तक के पृष्ठों पर अंकित कर दिया है—जिनको आज तक जमाने की हवा भी न लगी थी। फिर इसके लेखक डा० जी० एस० वर्मा का नाम ही बडी जमानत है कि पुस्तक कैसी है इसमें सबसे बडी वह रीसर्च आपको मिलेगी जिसे आज तक आपने सुना भी न होगा अर्थात समुद्रीय द्रव्यों यथा मुक्ता शुक्ति, प्रवाल, शंख, कपर्दिका आदि का तेल बनाना। इन तेलों की तुलना में इन द्रव्यों की भस्में बहुत तुच्छ लाभ पहुँचाती हैं। इन तेलों से अनेक कष्टसाध्य कहे जाने वाले रोग शीघ्र मिट जाते हैं। दूसरी विशेषता यह है कि इन तेलों से उडने वाले सभी द्रव्य यथा पारद, हिंगुल (शिंगरफ) आदि स्थायी होजाते हैं। इस पुस्तक में कोई ऐसा रोग नहीं छोड़ा जिस पर अनुभूत सिद्ध योग न छपा हो। मूल्य ६) डाकखर्च ॥।=)

इन्जेक्शन बनाना व लगाना सीखो

इन्जेक्शन चिकित्सा तत्काल प्रभाव दिखाने वाली होने से आज लोकप्रिय हो रही है, किन्तु वैद्यों हकीमों को इसकी जानकारी न होने से उन्हें बड़ी कठिनाइयों का सामना करना पड रहा है। इन्हीं भावों से प्रेरित होकर यह पुस्तक तैयार की गई है, जिसमें समस्त रोगों की चिकित्सा आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक और एलोपैथिक इन्जेक्शनों द्वारा ही करना बतलाया गया है। रोगशीर्षक के नीचे क्रमशः प्रत्येक रोग के तीनों प्रकार के इन्जेक्शन ऐसे ढंग से लिखे गये हैं कि जिससे चिकित्सक एक क्षण में निश्चय कर सकता है कि कौनसा इन्जेक्शन किस स्थान पर, कितनी मात्रा में, कितने अन्तर से, किस प्रकार लगाना चाहिये और साथ २ इन्जेक्शन बनाने की विधि भी लिखदी गई है। आयुर्वेदिक इन्जेक्शन जिन द्रव्यों से बनाये जाते हैं वह तमाम आपके घर में, खेतों और जंगलों में सर्वत्र मिल सकते हैं। एक-एक रोग पर कई २ इन्जे-

क्शन बनानें के योग लिखे गये हैं। इसके अतिरिक्त सीरम, वैक्सिन, पेनिसीलीन, विटामिन्स के इन्जेक्शनों का वर्णन और उनको लगाने की सरल व निरापद सचित्र विधि भी खूब समझा कर लिखदी गई है। इस पुस्तकको पढनेके बाद इन्जेक्शनों के विषयमें जानने को कुछ भी शेष न रहेगा और सब प्रकार के इन्जेक्शन तरल (लिक्विड) टेबलेट व पौडरादि रूप में बना व लगा सकेंगे। मूल्य ५) डाकखरच ॥।-)

सिद्ध रसायन

रस-रसायन की जिन कठिन क्रियाओं से वैद्य बन्धु घबराकर उनके दिव्य गुणों से वंचित रह जाते हैं, उन क्रियाओं का लम्बा अनुभव करके विद्वान लेखक ने उनका सरल तरीका इस ग्रन्थ में दर्शाया है और साथ ही महान रसायनाचार्य नागार्जुन और अन्य सिद्धों की संचिकाओं के अज्ञात योगों को उनकी गुत्थी सुलझाकर प्रकाशित किया है जिनसे पाठक न केवल काया (काया-कल्प) रंगने में ही सफल होंगे बल्कि स्थिर मति वाले माया (कीमिया) रंगने में भी सफल होंगे। इस प्रकार पाठकों को जहां आर्थिक संकट से मुक्ति मिलेगी वहां असाध्य समझकर छोड़ दिये जाने वाले रोगों के वे सिद्धहस्त चिकित्सक भी बन जावेंगे। इस पुस्तक के कुछेक योगों का दिग्दर्शन करा देने से आपको अनुमान हो जायगा कि यह कितना अपूर्व ग्रन्थ है। यथा-शुद्ध बद्ध और सिद्ध करने वाली दिव्य औषधियां, औद्भिदाम्ल व बूटियां, रस बन्धन, गन्धक को स्थाई करना, बद्ध पारद को सिद्ध बनाना, रजत रंजन (कीमिया) अभ्रक सत्व की द्रुति, द्रुति से पारद बन्धन, बंग स्तम्भन, पारद भस्म रसयोगेन ताम्रोद्धार (कीमिया) तांबा और रजत (चांदी) वेधी सिद्ध हरताल, हरिताल कल्प देह व लौह वेधी, सिद्ध हरिताल, तैल, सिद्ध कुचला कल्प, सर्वरोग हर फिटकड़ी रसायन (कल्प) पुरुषों के गुप्त रोगों पर रामबाण सिद्ध खादक, पारद गुटिका बंगवेधी, शिंगरफ मोमियां बनाना, नौसादर तैल, सिद्ध गोरखी जलमुद्रा, सिद्ध गन्धक-एक गिरनारी महात्मा का योग जिसको बनाना अति सरल है और क्षय (T. B.) संग्रहणी जैसे अनेक भयंकर रोगों का सफल इलाज है आदि। इसमें अन्य पुस्तकों की भांति जोड़-तोड़ कर एकत्र की हुई सामग्री नहीं है बल्कि लेखक के जीवन भर का अनुभव बन्द किया है। इसके पाठकों के लिए लेखक का सद्परामर्श और सहायता भी सदैव प्रस्तुत रहेगी। मूल्य ५) पो० ।।।)

संन्यासियों की चमत्कारी गुप्त बूटियां

इस पुस्तक में सैंकड़ों ऐसी ही जड़ी-बूटियों के गुप्त रहस्य प्रकट किये गये हैं, जिनकी बदौलत संन्यासियों की धाक जमी हुई है। इनमें से अधिकांश बूटियां वही हैं, जो आपको जंगल, खेत, बागीचों और पंसारियों की दुकानों पर मिल जावेंगी जिनसे आवश्यकता पड़ने पर सिर से पांव तक के समस्त रोगों का इलाज हर जगह प्रत्येक आदमी आसानी से कर धन और यश कमा सकता है। इस पुस्तक के पढ़ लेने के बाद आप के पास रोगियों का तांता बंधा रहेगा। विषय सूची मुफ्त। ४५० पृष्ठ, २ भाग मूल्य ५।।) डा० ख० ।।।)

गुप्त योग रत्नावली

इस पुस्तक में डा० नेगी के व निज के वह-वह गुप्त योग प्रकाशित किये गये हैं जिनको भारत वर्ष के कोने २ से तथा अरब, मिश्र और अफ्रीका आदि प्रदेशों के विभिन्न स्थानों में जाकर लेखक ने प्राप्त किये थे। मूल्य २।।) डा० ख० ।।=)

पेटेण्ट औषधियां व भारतवर्ष

संसार में सब से अधिक लाभदायक व्यापार पेटेण्ट औषधियों का है। अमृतधारा और सुधासिंधु के मालिकों ने १-१ पेटेण्ट दवा के नुस्खे से लाखों रुपया कमाया है। विलायती फर्में एक-एक पेटेण्ट दवा से बेहद रुपया कमा रही हैं। यदि उनकी तरह आप भी भारववर्ष, इंग्लैंड, अमरीका की प्रसिद्ध और सर्वप्रिय प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों की बिकने वाली पेटेण्ट औषधियों के नुसखे बिना किसी कष्ट के घर बैठे सीख कर साधारण पूंजी से सैंकड़ों रुपये मासिक की स्थाई आमदनी पैदा करना चाहते हैं तो आज ही 'पेटेण्ट औषधियां और भारतवर्ष' नामक पुस्तक की एक प्रति मंगाकर पढ़ें। १६७ योगवाली मूल्य ।।।≡)

यौवन के गुप्त रहस्य

लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन वापिस लाने के अनुपम उपाय-पुरुषत्व और जवानी के वह गुप्त रहस्य, जिनको जानने से अशक्ति के ऐसे रोगी जिन्हें किसी दवा से लाभ नहीं हुआ या सैंकड़ों रुपये क दवा खाकर भी निराश बैठे हैं-निःसन्देह सशक्त बन सकते हैं। मनुष्य देह का वह केन्द्र जहां से स्वास्थ्य और यौवन का रस झरकर समस्त शरीर का पोषण करता है, उस केन्द्र को शक्ति प्रदान करने के अनूठे उपाय, जिससे लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन पुनः लौट आता है। पुरुषों के अकथनीय भयंकर रोग बिना दवा सेवन किये ही किस प्रकार नष्ट हो जाते हैं। उर्द्ध्वरेता होने का वह प्रयोग जिससे पुरुष की शक्ति में कमी नहीं आती। रसग्रंथियोंसे आश्चर्यजनक दवाइयां बनाने के प्रयोग। हजारों रुपये खर्च करके डा० बोरनाफ की बताई हुई बन्दर की रसग्रन्थि लगवाने व आपरेशन का कष्ट सहन किये बिना ही सुगमता से प्रत्येक स्त्री-पुरुष वही शक्ति कैसे प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त पुरुषों के रोगों के सम्बन्ध में निदान व ऐसे २ गुप्त प्रयोग इस पुस्तक में दर्ज किये गये हैं, जिनको उपयोग करने वाला पुरुषत्व पर गर्व कर सकता है। मूल्य ३) डाकखरच ।ï=)

हिन्दी से अंग्रेजी मैट्रिक

विश्व के ज्ञान, विज्ञान और व्यापार तथा कला-कौशल को सीखने के लिए आज की विश्व-भाषा अंग्रेजी का सीखना सबके लिए जरूरी है। इसको सीखना कोई कठिन भी नहीं है। जिस प्रकार अंग्रेज मातायें अपने बालकों को अपने घरों में ही अंग्रेजी सिखा देती हैं ठीक उसी प्राकृतिक नियमानुसार यह ३२० पृष्ठोंकी पुस्तक तैयार की गई, जिसे दो घंटा प्रति दिन पढ़ने से केवल हिन्दी पढ़े-लिखे व्यक्ति को भी चार मास में भली प्रकार याद हो जाती है। इसमें ए० बी० सी० डी० से लेकर आवश्यक ग्रामर (व्याकरण) अनुवाद आदि इङ्गलिश की मैट्रिक तक का सब ज्ञान हिन्दी से अंग्रेजी और अंग्रेजीसे हिन्दीमें ऐसे सरल और सुबोध ढंग से ४८ पाठों में छपा है कि जिसे केवल अंग्रेजी में मैट्रिक की परीक्षा देनेवाले लड़के-लड़कियां निसन्देह पास हो जाते हैं। दसवां संस्करण अभी छपा है। मूल्य ३।।) डाकखरच ।।।)

७८६ वर्ष का प्राचीन रस ग्रन्थ

बसवराजियम—हजारों वर्ष पहिले दक्षिण भारत में चालुक्यवंशीय राजाओं का राज्य था। उनके प्रधान मन्त्री रुद्र साम्प्रदायी महान रसतन्त्रज्ञ बसवराज ने सं० १२२५ में इस सिद्ध साम्प्रदायी अनुपम ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें भगवान रुद्र के अनुयायी वनों में विचरने वाले रसायनाचार्य नागार्जुन, नागबोधि, नित्यनाथ, चर्पटी, कणेरी, पूज्यपाद आदि योगियों का रसज्ञान भरा पड़ा है, श्री गोविन्दपादाचार्य के कथनानुसार शरीर को अजरामर करने में पारे की बराबरी करने वाली न तो कोई जड़ी बूटी है और न ही कोई रसायन और भस्म है। पारे में यह बड़े आश्चर्य की बात है कि वह स्वयं मूर्छित होकर रोगी के रोग को दूर करता है और बंधा हुआ होकर मुक्ति देता है तथा अच्छी तरह मरा हुआ दूसरों को जीवन देता है। आज मद्रास प्रान्तीय वैद्यों की जो प्रतिष्ठा, यश और कीर्ति सर्वत्र प्रसिद्ध हो रही है वह सब इसी ग्रन्थ के योगों का प्रताप है। यह ग्रन्थ तैलंग भाषा में ताड़ पत्रों पर लिखा हुआ उपलब्ध हुआ था, जिससे अब तक तैलंग भाषा-भाषी वैद्य ही लाभ उठाते रहे, किन्तु यह जानकर आप अतीव प्रसन्न होंगे कि अब आयुर्वेद वृहस्पति श्री गोवर्धन जी शर्मा छांगाणी के अतुल परिश्रमके फलस्वरूप आज यह ७८६ वर्ष का प्राचीन तैलंग हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ हिन्दी भाषा में भी हमारे द्वारा प्रकाशित होगया है। इस ग्रंथ के विषय में कहा गया है कि सतयुग में चरक, त्रेता में रसार्णव तथा द्वापर में सिद्ध विद्याभू का महात्म्य है उसी प्रकार कलियुग में बसवराजियम् पूज्य ग्रंथ है। इसमें जो निदान, लक्षण प्रत्येक रोग के बतलाये हैं। उनको समझकर इसमें वर्णित योगों द्वारा जो चिकित्सा करेगा, भगवान रुद्र की कृपा से निःसन्देह वह सर्वत्र यश और सिद्धि प्राप्त करेगा। २५ प्रकरणों वाले सम्पूर्ण ग्रन्थ का मूल्य ८।।) डाकखरच १=)

पता—रसायन फार्मेसी ३, दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली।

सेल्फ एक्टिंग
इलेक्ट्रो मेग्नेटिक

यह बेटरी सेल पर चलने वाली बिजली के इलाज की मशीन है। इसके द्वारा गठिया, आमवात आदि सभी वातरोगों, पक्षाघात, लकवा, अर्श, मधुमेह, अनेक प्रकार की शारीरिक पीड़ाओं व शोथ आदि ३३ रोगों का इलाज किया जा सकता है। किस रोग पर इस मशीन द्वारा बिजली का किस प्रकार प्रयोग किया जाय इसके लिए पुस्तिका साथ भेजी जाती है। मूल्य २५) डाकव्यय २।।।≈)

एक्सपैंडरो

इस यन्त्र की उपयोगिता प्रायः सभी जानते हैं। नसों और मांसपेशियों की शिथिलता में जहां प्राकृतिक रूप से रक्त का परिभ्रमण सम्यकरूपेण नहीं होता वहां इसके प्रयोग से आशातीत लाभ होता है। नसों और मांसपेशियों को सशक्त बनाने के लिए इसका प्रयोग करना उत्तम उपाय है। मूल्य १५) बढ़िया १८) डाक खरच पै० २।)

वर्मा एलोपैथिक चिकित्सा

'एलोपैथिक चिकित्सा' की उपयोगिता ही इस लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण है। घर बैठे डाक्टर बना देने वाली इस पुस्तक में स्त्रियों, पुरुषों तथा बच्चोंको होने वाले हर रोग की अनुभव सिद्ध एलोपैथिक (डाक्टरी) चिकित्सा दी गई है। जिससे हर बीमारी का इलाज आसानी से किया जा सकता है। हर रोग के कारण, लक्षण, चिकित्सा—जहां पेटेण्ट मेडिसन देना ही ठीक है वहां पेटेण्ट मेडिसन, जिस हालत में जो योग देना उचित है वह, जहां इन्जेक्शन देना आवश्यक है वहां इंजेक्शन और जहां पर नवीन औषधियों का देना ठीक है वहां नवीन औषधियें अर्थात रोग को हर प्रकार से ठीक करने के उपाय दे दिये हैं और जहां सर्जिकल प्रयोग ही उचित है वहां वह भी दे दिया गया है। पथ्य आदि का भी पूरा वर्णन है। ४०० रोगों का निदान व चिकित्सा आदि सब कुछ दिया है। ५०० पृष्ट मूल्य १२) डाकखरच १≈)

पता—रसायन फार्मेसी ३, दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा स्वस्तिक प्रिंटिंग प्रेस, देहली में छपकर प्रकाशित

रसायन

अक्टूबर १९५५

वर्ष ८ वार्षिक ३)

अंक ४ इस अंक का ।=)
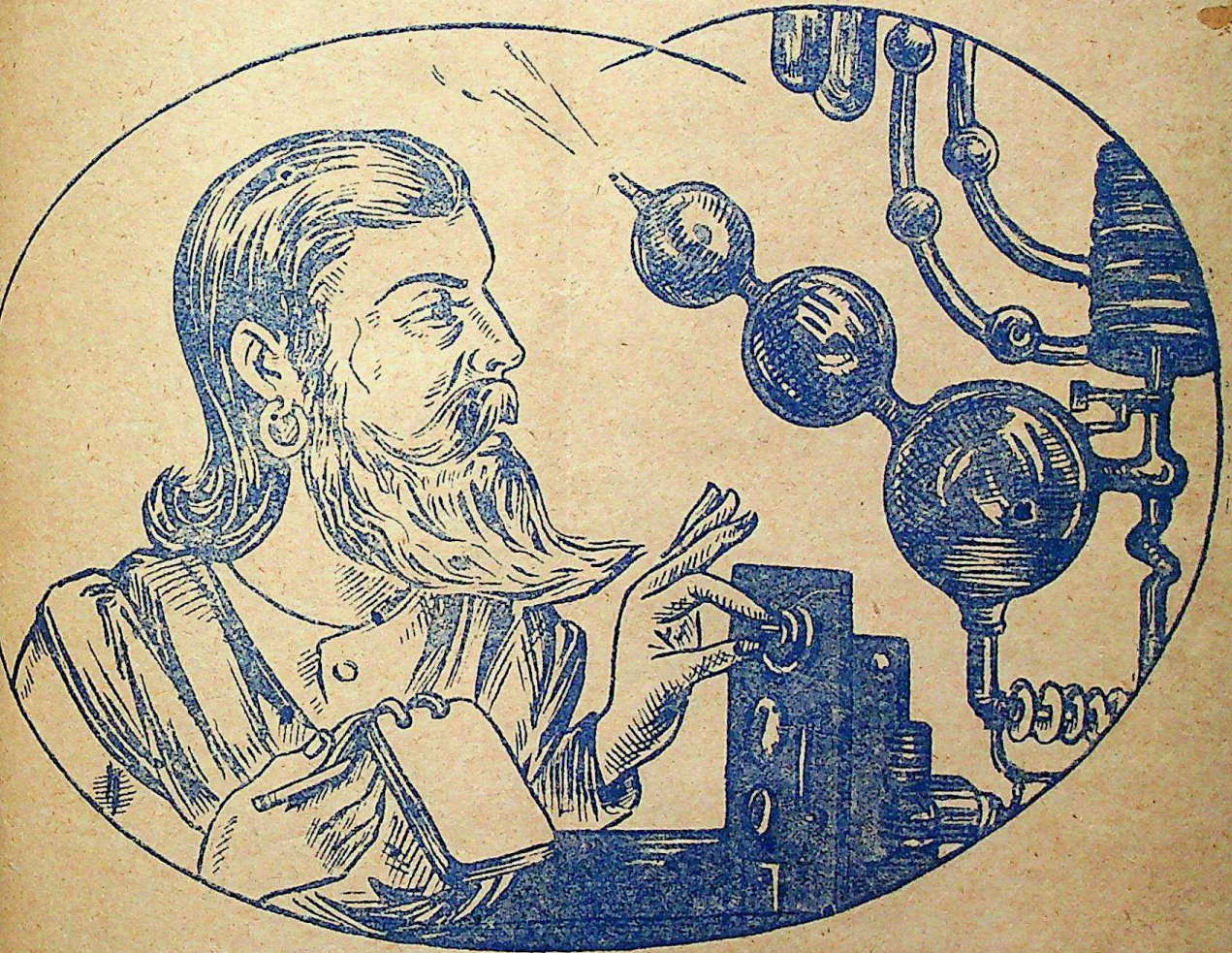
सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा० गणपति सिंह वर्मा

विषय अनुक्रमणिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
वृद्धावस्था का भय (कविता)	श्री० स्वामी पारसनाथ जी सरस्वती	७३
अनुभूत योग रत्नावली		७४
अमरूद	श्री० एम० एल० जैन	७५
वैदिक कालीन चिकित्सा प्रणाली	श्री० टी० ए० बी० दीक्षितार	७७
नीम		८०
अपस्मार 'मृगी' की चिकित्सा	श्री० विश्वनाथ उपाध्याय वैद्य	८१
मालिश की महती उपयोगिता	श्री० डा० हरिकृष्ण दास गांधी	८३
गृष्टिका (गेंठी)	श्री० वैद्यरत्न कविराज प्रतापसिंह	८८

एलोपैथिक गाइड

पुस्तक क्या गागर में सागर है। लेखक ने सारी आयु के अनुभव का निचोड़ इस पुस्तक में दे दिया है। डाक्टर जी ने एलोपैथिक (डाक्टरी) सिद्धान्त नुसार शरीर के भिन्न २ अंगों का वर्णन तथा उनका कार्य, शरीर की सूक्ष्म रचना तथा भिन्न २ तन्तुओं का वर्णन दुग्धोद्गम टीका लगवाना, बच्चों के विषय में कुछ जानने योग्य बातें, रक्तसंचार, नाड़ी परीक्षा, रक्तभार, लसीका वाहिनियां, प्रणाली विहीन ग्रंथियां, हमारा भोजन, खाद्य पदार्थों का रासायनिक संगठन, भोजन बनाने के सम्बन्ध में कुछ जानने योग्य बातें, भिन्न २ प्रकार के खाद्य पदार्थ, भोजनसे रक्त की उत्पत्ति, भोजन किस स्थान पर कितनी देर तक रहता है, पाखाना, मूत्र परीक्षा, मूत्र के स्वाभाविक तथा अस्वाभाविक अवयव, भिन्न २ आयु में मूत्र का परिमाण, विटेमिन्स, भिन्न २ खाद्य पदार्थ और उनकी विटामिन्स खाद्य तालिका, पांडु रोग और दौर्बल्य, कब्ज, मधुमेह, अतिसार, अजीर्ण, ज्वर, गठिया, सुजाक, नाड़ी दौर्बल्य, मोटापा, क्षयरोग, गर्भावस्था, वायु, टाइफाइड रोगियों के लिए भिन्न २ प्रकार के आहार, मक्खी, मच्छर, खटमल आदि का वर्णन, संक्रामक रोग और उनसे बचने के उपाय, औषधियों को शरीर में प्रवेश करने के भिन्न २ मार्ग, व्यवस्थापत्र लेखन, औषधालय के सम्बन्ध में कुछ आवश्यक बातें, इन्जेक्शन्स (सूची भेद चिकित्सा—इसमें प्रायः सभी प्रकार के इन्जेक्शन्स का वर्णन है, किन २ बीमारियों में और कौन से) वैक्सीन थैरेपी, सीरम चिकित्सा, मुख्य २ रोग और उनके पूर्ण अनुभूत नुस्खे, अन्य उपयोगी नुस्खे, इन्हेलेशन्स स्प्रे, लिक्टस, लिनिमेंट्स लोशन मिक्चर्स, आइन्टमेंटस्, पिगमेन्ट, पल्प पाऊडर्स, रोग और उनमें प्रयोग किये जाने वाले इन्जेक्शन्स और कुछ पेटेण्ट औषधियों का वर्णन, नवीन औषधियां जैसे पैनीसिलीन, सल्फोनेमाइड आदि उनके गुण दोष, प्रयोग उपचार, औषधियों का हिन्दी अंग्रेजी नाम आदि अनेकों विषयों का इस पुस्तकमें वर्णन करदिया है। इसकी उपयोगिता का इसी से पता लगता है कि दो वर्ष में इस पुस्तक के ३ संस्करण बिक चुके हैं। मू० केवल १०) पो० १=)

भस्म विज्ञान

धातु भस्मों व रस-चिकित्सा के आविष्कारक कौन थे वह कब हुए? और आयुर्वेद में रस-चिकित्सा का प्रवेश कैसे हुआ? साधु सन्तों, महात्माओं की भभूती, सिद्धों की रससिद्धियों का ज्ञान वैद्यों तक कैसे पहुँचा? इसके इतिहास का ज्ञान आयुर्वेदज्ञों को बिलकुल नहीं, वास्तव में रसचिकित्सा सिद्धों महात्माओं की देन है। इसका सही इतिहास जानना चाहते हो तो भस्म-विज्ञान का उपोद्घात पढ़िये।

इसमें ८४ सिद्धों का विवरण सहित सचित्र इतिहास दिया है। जिसको खोजने में स्वामी जी ने भारतवर्ष के बड़े २ पुस्तकालयों में जा-जाकर १४० से ऊपर हस्तलिखित ग्रन्थों में से खोजकर सारा विवरण ढूंढ निकाला है। वह ऐसा अकाट्य प्रामाणिक है कि वैद्य समाज पढ़कर स्तम्भित व चकित रह गया है। ग्रंथ की यही एक विशेषता नहीं।

सबसे बड़ी विशेषता तो इस ग्रंथ की यह है कि जितने भी सिद्धों महात्माओं द्वारा भस्में बनाने की विधियां आविष्कृत हो चुकी हैं तथा जो रस ग्रन्थ अभी तक प्रकाशित नहीं हुए उनमें जो भस्म बनाने की विधियां आई हैं वह सब अप्रकाशित होने के कारण वैद्य समाज उनके निर्माण को नहीं जानता उनको ढूंढ कर सप्रमाण इस ग्रंथ में संग्रह किया गया है। यही नहीं, इससे भी अधिक विशेषता यह है कि यूनानी, मिश्रानी चिकित्सा में जिन पत्थरों, रत्नों, धातुओं की भस्में बनती हैं उनका ज्ञान भी वैद्यों को बहुत कम है वह समस्त विधियां भी इस ग्रंथ में सप्रमाण संकलित कर दी गई हैं। इससे भिन्न अनेक धातु भस्मों की विधियां जो अब तक महात्माओं के गुरु परम्परा से चली आ रही थीं। उनमें से अनेकों विधियों को बड़े प्रयत्न से प्राप्त कर सबको स्वामीजी ने प्रकट कर दिया है। पुस्तक कैसी है? इस पर विद्वान वैद्यों की सम्मतियों से इसका अन्दाजा लगाइयेगा। भाषा टीका सहित २ भागों का मूल्य १०) डा० ख० १)

पता—रसायन फार्मेसी, ३ दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली

रसायन फार्मेसी देहली का प्रमुख सचित्र मासिक पत्र

'सिद्ध रसे करिष्यामि, निर्दारिद्र्य मयं जगत् ।'

वर्ष ८	देहली अक्तूबर १९५५	अङ्क ४

❀ वृद्धावस्था का भय ❀

[स्वामी पारसनाथ सरस्वती]

लड़का अपना बुला, पिता ने बात चलाई ।
'बाबा तेरे मरे, कोठरी—करो सफाई ॥
फेंको बन में कहीं, पुरानी टूटी खटिया ।
थाली छेदों भरी, और—वह फूटी लुटिया ॥'
कहा पिता से—पुत्र ने, वह क्यों फेंका जायगा ?
"बाबा का सामान सब, काम तुम्हारे आयगा ॥"

अनुभूत योग रत्नावली

सन्तानदाता

यह निम्नलिखित दोनों योग मेरे स्वर्गीय पिता जी के ३० वर्षीय चलते हुए शतशौ अनुभूत योग हैं। जिनको आज पहलीवार आपके समक्ष रख रहा हूँ। जनता व वैद्य समाज के लाभार्थ इसे विशेष स्थान पर प्रकाशित करने की कृपा करें। इसके चार प्रमाण मेरे पास मौजूद हैं। योग इस प्रकार है। ऋतु स्नान के बाद चौथे दिन रात्रि के ठीक १२ बजे घर की देहली पर बाहिर की ओर मुख रखाकर स्त्री को खड़ा करके चिकित्सक ॐ का उच्चारण ३ बार करें और फिर एक छोटे से छोटा माजू शीतल जल के साथ स्त्री को निगलवादें। प्रातः काल एक दाना साबत 'रूमी मस्तगी' का जल से निगलवा दें। और फिर ४० दिन पर्यंत रोजाना प्रातःकाल एक दाना रूमी मस्तगी को इसी प्रकार सेवन कराते रहें और पतिसंग भी करता रहे। अवश्य गर्भाधान होगा यह चमत्कारी योग है। माजू इस प्रकार सेवन करायें कि भेद न खुलने पाये।

नाल परिवर्तन

गर्भाधान के दूसरे मास या हद तीसरे मास बाद ४० दिन तक रोजाना प्रातःकाल एक दाना साबत शिवलिंगी का लाल रंग की गाय के दूध के साथ सेवन कराते रहें। ईश्वर कृपासे अवश्य लड़का ही पैदा होगा।

नुराताराम वैद्य मल्ला (पैप्सु)

पेट दर्द

काला नमक	१ छटांक
काली मिर्च	१ छटांक
छोटी हैड	½ छटांक
गंधक का तेजाब	१ छटांक

विधिः—प्रथम कुटने वाली दवाओं को कूटकर कांच के पात्र में थोड़ा डालकर ऊपर से फिर थोड़ा तेजाब डालें फिर दवा फिर तेजाब और लकड़ी से चलाते रहें और पात्र का मुख बंद करके रखदें कभी २ पांचवें या चौथे दिन ५ मिनट के लिये ढक्कन खोल दिया करें। बड़ों को बड़ी मटर बराबर और छोटों को आधी मटर बराबर ताजे जल से दें।

सूचना—दवा हथेली पर रखकर और जल का गिलास हाथ में लेकर दवा निगलते ही पानी पी लेवें देर न करें क्योंकि दवा तेज है।

आचार्य यशवन्त कुमार मिश्रः छुर (मेरठ)

प्रमाणित योग

श्री नुराताराम जी गौतम वैद्य मल्ला से लिखते हैं कि आपकी पुस्तक 'गुप्त योग रत्नावली' में 'श्री खण्ड अवलेह' अपस्मार रोग के लिए छपा है उसको मैं प्रमाणित करता हूँ और योग प्रकाशित कराने वाले को धन्यवाद देता हूँ। ऐसे ही योग प्रकाश में आने से आयुर्वेद की उन्नति होगी। मैंने इस योग को बनाकर अपस्मार के ३ रोगियों को सेवन कराया। भगवान धन्वन्तरि की कृपा से तीनों ही रोगी स्वस्थ हो गये।

* अमरूद *

(श्री० एम० एल जैन)

फलों में कितना आकर्षण है ? कितनी मनमोहकता है। एक अबोध बालक के सामने दो-एक सेब रख दीजिये अथवा खजूरके दाने रख दीजिये और मुकाबले में रखिये दो एक गेहूँ की रोटियां। आप अनुमान मात्रसे कह सकते हैं कि वह उधर ही भागेगा जिधर फल होंगे।

बच्चा फलों को अधिक पसन्द क्यों करता है ? कारण यह कि फल प्राकृतिक स्वस्थ आहार है और बच्चे के अन्दर रमा हुआ प्रकृति से प्रेम उसे फलों की ओर आकृष्ट करता है। किन्तु हम ज्यों-ज्यों उसे सभ्यता का पाठ पढ़ाते हैं और उसके जीवन को अधिकाधिक कृत्रिम बनाते चले जाते हैं, त्यों-त्यों वह सुफेद (Refined) चीनी से बनी मिठाइयां, बिस्कुट, आईसक्रीम अथवा चटपटी और मजेदार मिर्च-मसाले वाले आहारों की ओर अधिक दौड़ता है। इसमें सन्देह नहीं कि हमारी 'सभ्यता' ने हमें स्वास्थ्यप्रद-जीवन और आहार से बहुत दूर कर दिया है।

फलों के गुण

फलों में सब से खूबी की बात यह है कि यह शुद्ध प्राकृतिक भोजन है। सूर्य भगवान इन्हें अपनी शक्तिशाली और आरोग्यप्रद किरणों से पकाता है। स्वच्छ वायु इन्हें अपनी लोरियों से इनमें प्राण भरती है और पृथ्वी माता इन्हें अपने उत्तमोत्तम पुष्टिकारक रसों से पूरित करती है। यही कारण है कि पक्के फलों को खानेसे जो आनन्द मिलता है, वह कदाचित ही और किसी वस्तु को खाने से मिलता हो। कौनसा विटामिन है और कौनसा पुष्टिदायक और आरोग्यवर्द्धक खाद्यतत्व है, जो हमें फलोंसे प्राप्त नहीं होता। फलोंके अन्तर्गत क्षारीय (Alkaline) तत्व मनुष्य के स्वास्थ्य, दीर्घायु के लिए सचमुच रामबाण का काम करते हैं, इसलिए स्वास्थ्य, शक्ति, रोगनिवारण-क्षमता, स्फूर्ति तथा सात्विक बुद्धि और दीर्घायु चाहने वाले प्राणियों के लिए फलों से बढकर कोई उत्तम भोजन नहीं हो सकता। फलों का खुले दिल से प्रयोग कीजिये, स्वयं खाइये और अपने परिवार में सबको खिलाइये। यहां अपने पाठकों के लिए एक अत्यन्त उपयोगी और सस्ते फल का उल्लेख करते हैं—

अमरूद

यह निर्विवाद रूप से जनता का सर्वप्रिय फल है। बच्चों को इसे खाने का इतना शौक होता है कि पेड़ों पर इन्हें कच्ची अवस्था में भी लगे हुए देखकर उनसे रहा नहीं जाता और यदि उनका बस चले तो वे पकने से पहिले ही इन्हें खतम कर देते हैं। पककर इसकी सुवास दूर-दूर तक फैलती है। किसी कमरे में पांच-सात पके अमरूद के दाने रख दीजिये, तो सारा कमरा महक उठेगा। उस समय ऐसे मालूम होता है कि जैसे अमरूद स्वयं ही हमें खाने के लिए आमन्त्रित कर रहे हों। इनकी मधुर और मनोहारी गन्ध सुन्दर पीतवर्ण से आकर्षित हुए बिना, भला कौन रह सकता है। इन्हें काटकर, इन पर नमक और काली मिर्च छिड़क दीजिए और थोड़ा सा नींबू का रस निचोड़ दीजिए, तो सोने पर सुहागे का काम हो जाता है।

अमरूद का खाद्यमूल्य

अमरूद खाद्य-तत्वों से परिपूर्ण है। इसमें लोहा प्रचुर मात्रा में मिलता है। लवण पदार्थ सेव से लगभग तिगुने, प्रोटीन पांच गुणा, चर्बी दो गुणा और कार्बोदित उससे कुछ ज्यादा इसमें प्राप्त होते हैं। विटामिन 'सी' का तो यह भण्डार जान पड़ता है, सेव में जहां केवल दो मिलीग्राम विटामिन 'सी' प्राप्त होता है, वहां इसकी मात्रा इसमें पन्द्रह गुणा है संक्षेप में इस फल के खाद्य तत्व इस प्रकार हैं—

जलीय अंश ८६·१ प्रतिशत, प्रोटीन १·५ प्रतिशत, वसा ०·२ प्रतिशत, खनिज पदार्थ ०·८ प्रतिशत, रेशे ६·६ प्रतिशत, कर्बोदित १४·५ प्रतिशत, चूना ०·०१ प्रतिशत, फास्फोरस ००·४ प्रतिशत, लोहा १ प्रतिशत, बिटामिन 'ए' अल्पमात्रा, विटामिन 'सी' २६·६ प्रतिशत होता है।

आयुर्वेदिक दृष्टिकोण से अमरूद खाने में तेज, भारी और कफ को बढाने वाला होता है। एक मत में तो वह वात-पित्त का नाशक है। किन्तु कुछ आचार्य इससे वात की वृद्धि मानते हैं। कब्ज दूर करने में यह फल बहुत सहायता देता है। इसके खाने से वीर्य बढता है। इसे वैद्यक में शीतल माना गया है। नमक, कालीमिर्च और नीबू के रस के साथ खाने से अमरूद के विकार नष्ट होजाते हैं और फिर यह हानि नहीं करता।

कच्चे अमरूद की तरकारी स्वादिष्ट और सुरुचि पूर्ण होती है। तरकारी बनाने का ढंग यह है कि अमरूद को काटकर पहले सुखा दिया जाय और जब बिल्कुल सूख जाय, तो अन्य तरकारियों की भांति इसे बनाया जाय। लोग इसका रायता भी बनाकर खाते हैं, जो बहुत अच्छा लगता है।

वैदिक-कालीन चिकित्सा प्रणाली

हम सब जानते हैं, कि महात्मा गांधी प्राकृतिक चिकित्सा में अनन्य विश्वास रखते थे। प्राकृतिक चिकित्सा का मूल आधार प्रकृति की उपचार शक्ति पर भरोसा और ईश्वर की कृपा पर अखण्ड विश्वास ही है। इस प्रकार की चिकित्सा पद्धति भारत में आदि प्राचीन युग से चली आ रही है। सप्तर्षियों के जीवन और उनसे संबंधित घटनाओं का परीक्षण करने से स्पष्ट हो जावेगा कि उन्होंने इसी प्रकार की चिकित्सा पद्धति का प्रचार किया था।

'भारद्वाज' शब्द का अर्थ होता है अन्न एवं बल दाता तथा जो यह जानता हो कि अन्न और बल किस साधन से प्राप्त किये जा सकते हैं। यह तो साधारण ज्ञान की बात है कि जो भोजन हम ग्रहण करते हैं वही हमें धारण करता है और व्यक्ति शरीर हमारे भोजन पर ही निर्भर एवं प्रभावित होता है। ऋषि भारद्वाज इस बात को भली भांति जानते थे कि किस विशेष शरीर यष्टि को कौन सा भोजन उपयुक्त होगा। उन्होंने ऋतुओं के अनुसार भोजन की व्यवस्था में परिवर्तन भी सुझाया है। उनके सम्बन्ध में यह ऋचा सर्व विदित है।

उत देवा अवहित देवाउन्नयथा पुनः।
उतागश्च क्रुष देवा देवा जीवा यथा पुनः॥

"मैंने अनेक दुष्ट कर्म किये हैं हे परमेश्वर मैं आपकी कृपा का प्रार्थी हूँ। मैंने अभी तक असंख्यों पाप किये हैं। हे ईश्वर मुझे इन व्याधियों से छुटकारा दिलाओ। उपर्युक्त सूत्र के अनुसार दुष्ट कर्म वे हैं जो दैनन्दीन जीवन के आचार व्यवहार और यम नियम के सिद्धांतों के विरुद्ध हों। उनमें भोजन के सिद्धान्त भी शामिल हैं। इन सब सूत्रों से इतना तो स्पष्ट हो जाता है कि जीवात्मा परमात्मा का ही एक अंश है तथा मनुष्य को यह बात सदैव ध्यान में रखनी चाहिए कि वही व्याधियों का जन्म दाता है और चिकित्सा भी है। अतः कोई भी शारीरिक रोग इस बात की चेतावनी है कि आप ईश्वर निर्देशित मार्ग से परे हट रहे हैं और आपका कर्तव्य है कि प्रार्थना के द्वारा उसके और निकट पहुँचें।

कश्यप अपने युग के महानतम द्रष्टा माने जाते हैं। वे हर रोग का कारण भली भांति देख सकते थे तथा उनके पास हर रोग का निदान था। उनका आवाहन करने वाली ऋचा इस प्रकार है:—

द्वाविमौ वातौ वान आ सिन्धोरा परावतः
पक्षं ते अन्य आ वातु परान्यो वातुः यद्रपः

यहां वायु दो दिशाओं से बहती है एक तो सिन्धु की दिशा से और दूसरी दूर दिशाओं से। उनमें से एक तुम्हारे (रोगी के) ऊपर शक्ति प्रवाहित करे और दूसरी तुम्हारी व्याधि को अपने संग उड़ाकर ले जावे। किसी भी व्यक्ति का शरीर ही उसका क्षेत्र होता है। यहां उल्लिखित वायुओं में से एक तो प्राण-वायु है। यह शरीर के अन्दर और शरीर के द्वारा ही उत्पन्न होती है। उसका मुख्य कार्य रक्त शुद्धि और बल वर्धन होता है। प्राण वायु का अंदर लेना ही हमें स्वस्थ एवं दीर्घजीवी बनाता है। अपान वायु शरीर से बाहर निकालने वाली वायु को कहते हैं। इस प्रकार हम देखते हैं कि शरीर का रक्त संचार सांस लेने और वायु बाहर निकालने पर ही निर्भर करता है। शरीर की गर्मी भी रक्त संचार से सम्बन्धित होती है। उस

सम्बन्ध में किसी भी प्रकार की लापरवाही या उपेक्षा शरीर की गर्मी को कम कर सकती है और व्याधियों को जन्म देती है।

ऋषि गौतम का आवाहन-मंत्र इस प्रकार है—

आवात वाही भेषजं विवातवाहि यद्रप :
त्वंहि विश्व भेषजो देवान्त द्रुत ई यसे ।।

"ओ वायु, तू इधर बह । तू समस्त रोगों का विनाश करती है। मेरी भी व्याधि नष्ट कर। तू स्वयं परमेश्वर की संदेश-वाहिनी है । तुझ में ही सारी औषधियां निहित हैं। यहां यह माना गया है कि जो वायु अनेक जड़ी बूटियों पर से होती हुई बहती है उसमें भी रोग नाशक शक्ति उत्पन्न हो जाती है। हमारे यहां हिमालय की वनस्पतियां अपनी प्राणदायिनी एवं जीवन वर्धिनी जड़ी-बूटियों के लिए प्रसिद्ध हैं। इसी लिए भारतीय लोक जीवन में उससे सम्बंधित अनेक कथाएं प्रचलित हैं। यही कारण था कि हमारे ऋषि मुनि हिमालय की कन्दराओं को ही अपना निवास स्थान बनाना पसन्द करते थे । जड़ी-बूटियों पर से बहने वाली वायु के सिवा होम से उत्पन्न वायु भी स्वास्थ वर्धक मानी जाती है और हमारे पूर्वज धान और जौ को हवन के लिए बहुत पसन्द करते थे। कतिपय वृक्षों के पत्ते भी देवपूजन के लिए काम में लाये जाते हैं। बिल्व और तुलसी के पत्तों का उदाहरण दिया जा सकता है। उन पत्तों की गंध सर्दी, जुकाम, आदि को दूर करती है। उससे स्पष्ट हो जाता है कि शास्त्रीय पद्धति से किये गये हवन निश्चय ही रोगों को दूर कर सकते हैं और व्यक्ति को स्वस्थ बना सकते हैं। उसे हवन चिकित्सा कहा जाता है तथा मुनि गौतम उसके आविष्कर्ता माने जाते हैं।

मुनि आत्रेय के नाम की ऋचा इस प्रकार है:-

'आ त्वागमं शन्ता तिथिरथो अरिष्ठ ता तिथि :
पक्षं ते भंद्रमायार्ष परा यक्ष्मं सुवामि ते ।।

'मैं तुम्हारे लिए औषधियां लेकर आया हूँ जिससे तुम्हें शान्ति एवं सुरक्षा प्राप्त हो। तुम बहुत भाग्यवान हो तुम सर्वाधिक शक्तिमान हो। मैंने तुम्हारे समस्त रोगों को मार भगाया है।

यहां पर रोगग्रस्त व्यक्ति को सर्वाधिक शक्तिवान कहकर व्याधि एवं शारीरिक विकार के मूल को ही नष्ट कर दिया गया है। उस सूत्र के अनुसार मानसिक शक्ति और विश्वास के द्वारा बड़े से बड़ा रोग शीघ्र एवं प्रभावकारी ढंग से दूर किया जा सकता है। आधुनिक चिकित्सा प्रणाली भी अब धीरे २ उसी सिद्धान्त को स्वीकार करने की ओर बढ रही है। इसके अनुसार भी मानसिक एवं भावनात्मक असन्तुलन ही हमारी अनेक व्याधियों का मूल है। पूर्ण मानसिक अनुशासन के द्वारा हम बहुत सी व्याधियों से मुक्त रह सकते हैं। इसी कारण शरीर को मानस पर आधारित माना जाता है। पवित्र एवं श्रेष्ठ वस्तुओं पर निरन्तर विचार करने से व्यक्ति रोगों से दूर रह सकता है। अतः व्यक्ति का मानस जितना शक्तिशाली एवं दृढ होगा उतना ही वह रोगमुक्त रह सकता है। इस प्रकार एक रोगी जिसने कि समस्त मानसिक शक्तियों पर अधिकार पा लिया है—मात्र अपनी उपस्थिति से रोगी को आशा एवं उत्साह का नव-सन्देश प्रदान कर सकता है। मनोविज्ञान जगत में इसी को 'सजेशन' कहा जाता है। मानसिक शक्ति के साथ ही रोगी में परमात्मा की कृपा पर भी अखण्ड विश्वास होना आवश्यक है। इसीलिए रोगी को किसी पवित्र स्थान में विश्राम करने की सलाह दी जाती है। इस प्रकार व्यक्ति के अन्दर अजस्र मानसिक शक्ति होती है और अनेक असाध्य रोगों के उपचार हेतु भी इसका उपयोग किया जा सकता है। अतः मुनि आत्रेय इस विश्वास चिकित्सा अथवा मानसिक चिकित्सा के जनक कहे जा सकते हैं।

मुनि विश्वामित्र का इस ऋचा के द्वारा आवाहन किया जाता है—

त्रायन्ता देवास्त्रयतां मरूता गण:
त्रायन्तां विश्वा भूतामि यथायमखा असन् ।

हे ईश्वर, इसकी (रोगी की) रक्षा करो । उसके समस्त रोगों का हरण करो, जिससे कि वह व्याधियों से मुक्त होकर रह सके । विश्वामित्र के बारे में कहा जाता है कि वे किसी के भी प्रति दुर्भावना नहीं रखते थे और प्रत्येक को समान रूप से प्रेम करते थे । इसी लिए उन्हें विश्वामित्र कहा जाता था । उनकी चिकित्सा पद्धति प्रार्थना पर आधारित है । शुद्ध एवं स्वच्छ मस्तिष्क वाला रोगी यदि पूर्ण विश्वास के साथ प्रार्थना करे तो उसके समस्त रोगों का नाश हो सकता है । ये प्रार्थनाएं विभिन्न मंत्रों के रूप में छन्दोबद्ध कर दी गयी हैं और रोगी इन्हें दुहराते हैं । स्पष्ट है कि इस पद्धति के अनुसार रोगी का सम्पूर्ण विश्वास होना आवश्यक है ।

मुनि जमदग्नि से सम्बन्धित ऋचा इस प्रकार है—

"आप इद्वा उभेषजीरापो अभीषयातनी :
आप: सर्वस्य भेषजी तास्ते कृवन्तु भेषजम"

'जल की चिकात्स-शक्ति सर्वविदित् है । वे व्याधियों को दूर भगाते हैं और हर रोग का निदान कर सकते हैं । वे ही तुम्हारे लिए औषधि का कार्य करें ।'

जल में रोग-नाश की जो शक्ति होती है उस पर बहुत प्रकाश डाला जा चुका है । यहां तक दावा किया जाता है कि दुनियां का कोई भी रोग ऐसा नहीं है जो जल के द्वारा अच्छा न किया जा सके । अत: जल स्वयं अपने आपमें एक औषधि है । वेदों में विस्तारपूर्वक जल की इस शक्ति का वर्णन किया गया है । एस सम्पूर्ण सूक्त जो कि 'अब्सूक्त' कहा जाता है, इसी का वर्णन करता है । जल का शरीर के विभिन्न अवयवों पर उपयोग, ठंडे अथवा गरम पानी का उपयोग, रोगी के सिर पर गरम पानी का बर्तन रखना, निश्चत् मात्रा में नियमित रूप से जल ग्रहण करना आदि ऐसी बातें हैं जिनसे कि रोग का निदान हो सकता है । इस प्रकार हम जल-चिकित्सा के लिए मुनि जमदग्नि के आभारी हैं ।

मुनि वशिष्ठ जिस सूत्र से संबंधित हैं वह इस प्रकार है—

'हस्ताम्यां दशशाखाम्यां जिह्वा वाच: पुरोगवी
अनामाचित्युथथ्यां त्वा ताच्यां त्वोप स्पृशामसि"

वाणी का नेतृत्व जिह्वा करती है । अत: मैंने तुम्हें, रोगों का निरन्तर पीछा करने वाले दो हाथों से स्पर्श किया जो कि दस शाखाओं में विभक्त हैं ।'

मुनि वशिष्ठ की चिकित्सा प्रणाली को 'सम्पर्क-चिकित्सा' कहा जा सकता है । रोगी को छू देने मात्र से वह अच्छा हो सकता है । यह प्रणाली आधुनिक 'हिप्नोटिज्म' की प्रणाली से मेल खाती है जो कि यूरोप में बहुत प्रचलित है । इस ऋचा से स्पष्ट होता है कि भारतवर्ष में इस के भी प्रमाण मिले हैं कि वशिष्ठ के कई सदियों पूर्व भी यह प्रणाली बहुत पहले से ज्ञात थी । इस बात के भी प्रमाण मिले हैं कि वशिष्ठ के कई सदियों पूर्व भी यह प्रणाली प्रचलित थी किन्तु इसे वैज्ञानिक एवं सुव्यवस्थित आधार प्रदान करने का श्रेय वशिष्ठ को ही है ।

संक्षेप में ये ही चिकित्सा-प्रणालिया है जो कि वैदिक मुनियों ने अविष्कृत एवं प्रचारित की थीं ।

टी० ए० बी० दीक्षितार

चेचक की रामबाण औषधि

* नीम *

नीम की लाल रंग की पत्तियां ७, काली मिर्च ७, इनको नियम पूर्वक एक महीने तक खाने से एक साल तक चेचक निकलने का भय नहीं रहता।

नीम के बीज, बहेड़े के बीज और हल्दी इन तीनों को बराबर लेकर पानी में घिसकर छानकर पीने से शीतला निकलने का डर नहीं रहता।

३ माशे नीम की कोपलों को पन्द्रह दिन तक खाने से ६ माह तक चेचक नहीं निकलती, यदि निकल भी आवे तो आंखें खराब नहीं होती।

यदि चेचक के दाने शरीर में निकल आवें तो उस अवस्था में बड़ी सावधानी, पवित्रता, सफाई और धैर्य के साथ रोगी की सेवा करनी चाहिये। चेचक निकलने पर किसी प्रकार की औषधि नहीं देना चाहिए। क्योंकि बिना उपद्रवके चेचक निकलने पर समय आने पर अच्छी होजाती है। यदि किसी प्रकार का उपद्रव भी हो तो जहां तक बने नीम के द्वारा ही उसका उपचार करना चाहिये। रोगी के कमरे में दरवाजों पर नीम की ताजी पत्तियों का बदनबार बांधना चाहिये। यदि दाह ज्यादा मालूम हो तो बिस्तर पर कोमल पत्तियों को बिछाना चाहिये, मुरझाने पर बदलते रहना चाहिये।

चेचक के व्रण पर मक्खियां न बैठ पायें, इसका पूर्ण ध्यान रखना चाहिये। यदि ज्यादा जलन मालूम हो तो नीम की पत्तियों को पीसकर पानी में घोलकर, कपड़े से छानकर मथानी से उस पानी को मथकर उसका फेन रोगी के शरीर पर लगाने से जलन शान्त होती है।

चेचक के दानों में इतनी ज्यादा गर्मी होती है कि रोगी उसे सहन नहीं कर सकता, ऐसी अवस्था में नीम की पत्तियों को पीसकर, चेचक के दानों पर पतला पतला लेप करना चाहिये। रोगी को यदि अधिक प्यास लगती हो तो नीम की छाल को जलाकर उसके अंगारे को पानी में बुझाकर फिर पानी को छानकर पिलाने से प्यास शान्त हो जाती है। पत्तियों को पानी में उबाल कर पिलाने से भी प्यास अवश्य शांत होती है तथा चेचक के विष और ज्वर को भी शमन करता है तथा दाने भी शीघ्र सूख जाते हैं।

कभी २ किसी कारण से चेचक के दाने बहुत कम निकलते हैं, जिससे चेचक की गर्मी और विष शरीर में ही रह जाने से रोगी को त्रास ज्यादा होने लगता है, बुरी तरह से धबड़ाने, छटपटाने तथा प्रलाप भी करने लगता हैं। ऐसी अवस्था में हरी पत्तियों का रस सबेरे, दोपहर व शाम को अवस्थानुसार मात्रा के हिसाब से पिलाना चाहिये। इससे दाने बहुत जल्दी बाहर निकल आते हैं।

चेचक के व्रण सूख जाने पर उसको नीम की पत्तियों के पानी से नहाना चाहिये तथा ऊपर से नीम का तेल लगाना चाहिये।

अपस्मार 'मृगी' की चिकित्सा

(लेखक— श्री विश्वनाथ उपाध्याय वैद्य)

अपस्मार रोग की गणना अत्यन्त भयंकर रोगों की श्रेणी में की गई है। अपस्मार का वेग दोषाधिक्य से दो, चार, पांच दिन तक एक मास के अन्तर से प्रकट होता है। तथा किस २ व्यक्ति में इसका प्रतिकूल वेग भी देखा गया है। किसी २ को दूसरे-तीसरे रोज आक्रमण होता देखा गया है और किसी व्यक्ति को एक दिन में ही दो बार तक इसका आक्रमण होते देखा गया है। अपस्मार के वेग का कोई निश्चित समय निर्धारित नहीं है। यदि वेग के समय कोई समझदार व्यक्ति उपस्थित न रहा, तो गहरी चोट से अंग-भंग हो जाने की आशंका बनी रहती है। तथा अग्नि, जल के समीप वेग के आने से रोगी के प्राण नाश की आशंका उपस्थित हो जाती है।

अपस्मार के वेग के लक्षण

मृगी का दौरा आने से पहले उपरोक्त रोगग्रस्त रोगी को ऐसा महसूस होता है कि वह शीघ्रता से घने अन्धकार में घुसता जा रहा है। संज्ञा नष्ट हो जाती है और आंखें नाचने लगती हैं, मुख से झाग (फेन) निकलने लगता है। फेन का आना ही मृगी रोग का निश्चित निदान समझना चाहिये। हाथ-पैर फेंक-फेंक कर रोगी पृथ्वी पर अचेत होकर गिरकर लोटने लगता है। शरीर खिन्न, अंगों में अधिक भड़कन, आंखें तिरछी होना, भौहें नाचने लगना, सामान्य रूप से मृगी रोग में यह लक्षण दृष्टिगोचर होते हैं। लेकिन ध्यान रखें कि अपस्मार एवं मूर्छा रोग में प्रायः समानता होती है। मृगी रोग में मुंह से फेन आना ही मृगी रोग का निश्चित सिद्धान्त माना गया है। यदि रोगी के मुंहसे फेन नहीं आता तो उसे मृगी रोग नहीं माना जासकता।

चिकित्सा—मृगी रोग में प्रथम वमन विरेचन द्वारा कोष्ठ की यथेष्ट शुद्धि कर लेनी चाहिये। इसके बाद ही चिकित्सा करने में सफलता मिलती है।

प्रयोग नं० १—गु० मैनशिल एक तोला, नैपाली ताम्र भस्म, गन्धक योग से बनाई गई एक तोला, स्वर्ण सिन्दूर ६ माशा, शुद्ध कृष्ण धतूर बीज सवा तोला, शुद्ध वच्छनाग विष सवा तोला, मीठा वच एवं जटामांसी क्वाथ की एक एक भावना देकर २-२ रत्ती की गोलियां बना लीजिये।

प्रयोग

अमर बेल (आकाश बेल) की भस्म १ तोला, मीठा वच दो तोला, पुराना १२ वर्ष का गुड ३ तोला, पुराना घृत ६ माशा, इनका काढा बना लीजिए। उपरोक्त क्वाथ के साथ १-१ गोली प्रातः-सायं देने से अपस्मार, उन्माद अवश्य नष्ट हो जाता है।

अपस्मार नाशक तैल

असली नागकेशर १ छटांक, कृष्ण धतूर बीज १ छटांक, मीठा वच १ छटांक, सबको कूट लीजिए एक दो सेर गर्म जल में रात को भिगो दिया जाय। प्रातःकाल क्वाथ बना लें। चौथाई जल रहने पर उतार कर छान लीजिए। उपरोक्त क्वाथ में एक सेर अमरबेल का स्वरस तथा आध सेर सरसों का तेल मिलाकर मन्द २ आग पर तेल पकालें। तेल मात्र रहने पर उतार कर छान लीजिए।

व्यवहार

अपस्मार रोगी को सीधा लिटाकर सिर का कुछ हिस्सा नीचा रहना चाहिये। उपरोक्त तेल की ६-६ माशा दोनों नासिका में नास दीजिए। रोगी से कहिए कि जोर से तेल को नासिकाओं से खींचे। इस तरह बराबर इस तेल का रोज एक बार नास दिया जाय। फिर देखिए अपस्मार (उन्माद) रोग अवश्य नष्ट होगा।

इसी तरह आप अपने सुविधानुसार स्मृति सागर रस ब्राह्मी घी का प्रयोग कर सकते हैं। दोनों ही प्रयोग शास्त्रीय हैं।

ब्राह्मी वटी

शतपुटी अभ्रक भस्म, उत्तम केशर, चांदी की भस्म, मुक्ता भस्म, सिद्ध मकरध्वज, सुवर्णमाक्षिक भस्म, प्रत्येक ३-३ माशे, मीठा वच कुट उत्तम ब्राह्मीकी ताजी पत्तियां, शस्त पुष्पी प्रत्येक १-१ तोला सबको महीन पीसलें तथा भस्मों को मिश्रण करदें। पुनः ताजी ब्राह्मी के स्वरस में कम से कम तीन रोज घोंटिये और चने के बराबर गोलियां बनाकर छाया में शुष्क करके सुरक्षित रखलें।

प्रयोग

प्रातः-सायं १-१ गोली ताजा जल से निगल जाइये। प्रयोग काल कम से कम चालीस दिवस। यह अपस्मार उन्माद रोग पर अच्छा कार्य करती है।

मृगी रोग पर कतिपय विभिन्न चिकित्सकों के परीक्षित प्रयोग

हाथी की ताजी लीद वस्त्र में रखकर उसका रस निचोड़ लीजिए। उपरोक्त रस ६-६ माशा सुबह शाम एक माह पिलाइये फिर देखिए मृगी रोग अवश्य नष्ट होगा।

(२) एक रत्ती उत्तम हींग जलके साथ दोनों समय एक वर्षतक सेवन करने पर मृगी रोग अवश्य नष्ट होता है।

(ख) नास—एक जीवित गोजर चिमटासे पकड़ लीजिये एवं सूतसे बांधकर किसी छायादार स्थानपर बांध कर लटका दीजिये। सूख जाने पर एक मिट्टी के सकोरे में नीम की पत्तियां नीचे ऊपर रखकर उसके अन्दर सूखे हुए, गोजर को रखकर फूंक दीजिये। शीतल होने पर पीस कर सुरक्षित रख लें। अपस्मार के वेग के समय एक रत्ती औषधि कागजकी नली में रखकर नासिका में फूंक मारिये इस तरह अपस्मार के वेग के समय दो तीन बार प्रयोग कर देने पर मृगी रोग से सदैव के लिए छुटकारा मिल जाता है।

(ग) अपस्मार दमन वटी—ताजा मरा हुआ खटमल एक नग थोड़े से गुड़में मिलाकर गोली बना लें इसी तरह इक्कीस खटमलों की इक्कीस गोलियां बना लीजिये ऊपर से चांदी का वर्क चढ़ा दीजिये। एक एक गोली प्रातःकाल निगलकर ऊपर से दो घूंट ताजा जल पी लीजिये। यदि इक्कीस रोज के प्रयोग से मृगी रोग नष्ट न हो तो इक्कीस गोली पुनः उसी तरह बनाकर प्रयोग में लाइये अपस्मार अवश्य नष्ट होगा।

(घ) मदार वृक्षपर एक प्रकार के चिट्टे होते हैं। ये प्रायः वर्षा ऋतु में लिपटे हुए पाए जाते हैं। उन चिट्टों को आठ दस की संख्या में संग्रहकर लीजिये एवं एक कांच की शीशी में खुले मुंह रख दें। ऊपर से आधपाव कमियां सिन्दूर डाल दीजिये। कुछ दिनों में सिन्दूर को चिट्टे खा जायेंगे। जब एक चिट्टा बच जाय तब उसे पीसकर नास बना लीजिये। मृगी के दौरे के समय उपरोक्त नास सुंघायी जाय। इस तरह दो तीन दौरे पर नास दी जाय तो मृगी रोग अवश्य नष्ट होता है।

(ङ) मरे हुए खरगोशकी खोपड़ी में जो कीड़े पड़ गये हों, उन्हें सुखा लीजिये और पीस लीजिये। राई बराबर यह नास मृगी वाले रोगी को सुंघाइये।

(शेष पृष्ठ ८७ पर पढ़ें)

रोग और आरोग्य की स्थिति में—

मालिश की महती उपयोगिता

(लेखक—डा० हरिकृष्णदास गांधी, एम० ए०, आयुर्वेदभिषगवर)

मालिश शरीर की सम्पत्ति को सुरक्षित और आरोग्य को स्थिर रखने तथा गतारोग्य को पुनः प्राप्त करने का एक विधान है। नियमित मालिश द्वारा चिरन्तन स्वास्थ्य, दीर्घजीवन, सम्पूर्ण सौंदर्य और अनुपम मानसिक बल की उपलब्धि होती है। मालिश एक प्रकार का चेष्टाहीन व्यायाम है। कठोर अर्थात सक्रिय व्यायाम सब लोग कर नहीं सकते। इस प्रकार के व्यायाम से हृदय ज्ञानतन्तु और स्नायविक व्यवस्था पर एक प्रकार का बोझ पड़ता है। मन को इस प्रकार के व्यायाम के लिए तैयार करना पडता है। वृद्ध, निर्बल और बीमार व्यक्ति के लिए कठोर व्यायाम निरर्थक ही नहीं, अपितु हानिप्रद भी है। मालिश के व्यायाम का प्रभाव कठोर व्यायाम की अपेक्षा भिन्न होता है। ज्ञानतन्तुओं पर दबाव डाले बिना और हृदय की धडकनों को बढाये बिना शरीर में निरर्थक गरमी या प्रस्वेद उत्पन्न किये बिना मालिश शरीर के व्यायाम करने के सभी लोगों से पुरस्कृत करती है। प्रयोग परीक्षणों से सिद्ध कर दिया गया है कि मालिश से शरीर में श्वेतकण, लालकण और होमोग्लोबिन तत्व का संवर्धन होता है, रक्तशुद्धि तीव्रगत से होती है फलतः शरीर में रोगप्रतिरोधक शक्ति का संचय होता है। शरीर की रक्त-संचालन प्रक्रिया सुयोजत होने से विजातीय पदार्थों (संचलितमल) का निष्कासन सरलता से होता रहता है। विजातीय पदार्थ निष्कासन कार्य तत्पर अवयव फेफड़े, चर्म, मूत्रपिण्ड और आन्त्रिक जाल का स्वास्थ्य सुधरता है। मालिश से शरीर का अंग-प्रत्यंग, मांसपेशियां सुदृढ और शक्तिशाली बन जाती हैं। शरीर सुगठित, सुडौल और दर्शनीय बनता है, मालिश सौंदर्यवर्धक है। मालिश करने वाले का शरीर कान्तिमय, सुन्दर और आकर्षक बन जाता है। मालिश पाचन व्यवस्था के लिए अत्यन्त लाभदायक है। सभी पचन अंगों—जैसे कि आंतों, यकृत, आमाशय आदि को एक प्रकार की गति और शक्ति मिलने से उनकी कार्यक्षमता और उनके आरोग्य में अभिवृद्धि होती है। मालिश से त्वचा की सिकुडन और फटन दूर होती है और वह कोमल, चिकनी, तेजस्वी और मनोहर बनती है।

मालिश का इतिहास

भारतीय भाषा में मालिश शब्द की उत्पत्ति 'मसाज' शब्द से हुई है। 'मसाज' शब्द ग्रीक भाषा का है, जिसका अर्थ है 'दबाना'। ग्रीक लोग मालिश की कला में अत्यन्त पटु थे। रोमनों ने ग्रीक संस्कृति और समृद्धि का विशाल उत्तराधिकार हस्तगत कर लिया है। रोमन लोगों के लिये मालिश आमोद प्रमोद का साधन थी। अतिशय उड़ाऊ खाऊ मनोवृत्ति और उन्मत्त आवेश का प्रभाव मिटाने के लिये रोमन लोग मालिश कराते थे। रोमनों की वैभव वृत्ति रोमन साम्राज्य विस्तार के साथ २ समग्र योरुप में फैल गई। मालिश का विज्ञान ग्रीस से भी पहले भारत में विकसित हुआ था। मिश्र और भारत में धर्माचार्यगण व्याधिग्रस्त अंग को दबाकर या थपथपा कर स्वस्थ बना देते थे। वेदकाल से आर्य इस कला में पूर्णतया

निपुण थे। आयुर्वेद ने मालिश (तैलाभ्यंग) को चिकित्सा क्षेत्र में स्थान दिया है आयुर्वेद में लकवा, ज्ञानतन्तु के रोग इत्यादि रोगों में शास्त्रीय तैलों द्वारा मालिश क्रिया का समावेश किया गया है। मलवार में आज भी आयुर्वेदोक्त पद्धति के अनुसार संचालित मालिश गृह भारतीय मालिश पद्धतिके विकाशका दर्शन कराते हैं। गुजरात में मालिश का प्रचार बहुत कम है। मद्रास, बंगाल और उत्तर प्रदेश आदि प्रान्तों में आबालवृद्ध को मालिश का शौक है। इन प्रांतों के लोगों की त्वचा चमकीली और तेजस्वी होती है।

कहां ? कब ? और कैसे ?

अतिशय गरम या शीतल कमरे में मालिश न करनी चाहिये। अति गरम कमरे में मालिश करने से पसीना आता है। पसीने का पानी मालिश के आनन्द को मार देता है। शीतल या जहां हवा के झोके आते हों, ऐसा कमरा शरीर को बारम्बार शीतल कर रक्त-संचालन क्रियामें बाधा डालता रहता है। स्वच्छ कमरे में चटाई पर बैठकर मालिश करना चाहिये सूर्य की कोमल किरणों में मालिश करने अथवा मालिश करने के बाद सूर्य की कोमल किरणों में बैठने से स्वास्थ्य सुधरता है। माशिल का अच्छा समय सुबह या शाम का है। बहुतेरे लोग रात में मालिश करके सो जाते हैं, यह पद्धति अच्छी नहीं। भोजन के बाद तुरंत मालिश न करनी चाहिये। मालिश और भोजन के बीच कम से कम दो घन्टे का अन्तर रखना आवश्यक है। मालिश की पद्धति का ज्ञान जरूरी है। अधिकांश लोग बल पूर्वक तेल घिसने की क्रिया को मालिश समझते हैं। बाजारू लोगों से मालिश कराना सचमुच हानिप्रद है। मालिश एक व्यवस्थित विज्ञान है, विकसित चिकित्सा-पद्धति है और आरोग्य-प्राप्ति की सुन्दर कला है। शरीर विज्ञान की अज्ञानता, स्वास्थ्य नियमों की अनभिज्ञता और मालिश पद्धति की अनुभव हीन[illegible] मालिश के लिये सर्वथा अनुपयोगी है। जिस मनु[illegible] की मालिश करनी हो, उसे स्वच्छ चद्दर पर लिटा दे[illegible] चाहिये। दांये या बाये पैर की अंगुलियों से मालि[illegible] शुरू कर पैर के पंजे, पिडली घुटने और जंघा की [illegible] क्रमशः मालिश करते हुये आगे बढ़ना चाहि[illegible] संक्षेप में बाल की विरुद्ध दशा में हृदय की [illegible] मालिश के हाथ घुमाना उचित है। भूल से भी [illegible] भ्रमण की दशा में मालिश न की जाये। दोनों [illegible] की मालिश हो जाने पर कमर की मालिश की [illegible] और फिर हाथ की मालिश करनी चाहिये। हाथ[illegible] मालिश भी अंगुलियों से शुरू कर कन्धे की ओर जावे। तत्पश्चात पीठ, कोड़रज्जु, गर्दन मुख के स्त[illegible] और छाती की मालिश करनी चाहिये। सब से अ[illegible] में अधिक सावधानी और ध्यान पूर्वक पेट की मालि[illegible] करनी चाहिए। नाभि की दाहिनी ओर ४-६ अंगु[illegible] दूर छोटी और बड़ी आंत का सन्धि स्थान है। [illegible] स्थान से ऊपर जाने वाली आंत से मालिश शुरू [illegible] बांई तरफ हाथ लाकर नीचे लाया जावे अर्थात ना[illegible] के आसपास गोलाकार दाहिनी ओर से शुरू कर [illegible] की मालिश करनी चाहिए। मालिश के समय पैर [illegible] तलवों और शिर में अच्छी तरह तेल पचाया जावे।

कुछ महत्वपूर्ण प्रश्न

(१) मालिश कैसे तेल से की जावे [illegible] सामान्य नियम यह है कि शीतकाल में सरसों, ग्रीष्म ऋतु में नारियल और वर्षा ऋतु में तिलका उपयोग किया जावे। तिलके तेल की मालिश बारहों मास की जा सकती है।

(२) मालिश के पश्चात स्नान कब करना चाहिये। मालिश के एक दो घन्टे बाद काली मिट्टी या बेसन से शरीर का उबटन कर स्नान करना चाहिये।

(३) मालिश किसे न करनी चाहिये । चर्म रोग जैसे खाज-खुजली- सूजन, चट्टे आदि हो जाने पर, लम्बी बीमारी के बाद और उग्र रोगों में मालिश न करनी चाहिये । जिन रोगों में आराम की जरूरत है, उनमें मालिश करना उचित नहीं, क्योंकि यह एक प्रकार का व्यायाम है ।

(४) मालिश स्वयं करनी चाहिए या किसी से करानी चाहिए स्वयं मालिश करने से स्वेच्छानुसार और उत्तम ढंग से मालिश होने के अतिरिक्त परमोत्तम व्यायाम हाथों, कन्धों, छाती आदि अंगों को उपलब्ध होता है । निर्बल और विशेष प्रकार के रोगी को अच्छे मालिशकर्ता से मालिश करानी चाहिए । मालिशकर्ता स्वस्थ, स्वच्छ और सुदृढ़ शरीर का होना चाहिए । चर्म या अन्य किसी रोग से पीड़ित मानव से मालिश न करानी चाहिए और सावधानी रखनी चाहिए कि मालिश करते समय मालिशकर्ताका पसीना रोगी के शरीर पर न गिरे ।

(५) मालिश कसरत से पहले या पश्चात् । मालिश करने के बाद कसरत या अन्य शारीरिक श्रम करने से तेल और पसीना मिलकर चर्म रोग-खुजली, दाद आदि उत्पन्न कर देता है । शरीर में तेल का समुचित शोषण नहीं हो पाता । व्यायाम या शारीरिक श्रम से शरीर में विशेष परिमाण में तोड़ फोड़ होती है । विजातीय पदार्थों जैसेकि लोकाटिक एसिड, यूरिया और अग्निवायु—का परिमाण बढ़ जाता है । थकावट भी बढ़जाती है और कार्यक्षमता कम होजाती है । अंग प्रत्यङ्ग जड़ सूक्ष्म और चेतनाशून्य हो जाते हैं । अतः कसरत करने के पश्चात् शरीर शीतल और पसीना बन्द होजाने के बाद शरीर को अच्छी तरह से पोछकर मालिश करना लाभदायक होगा । मालिश से स्नायुजाल उत्तम सुसंगठित बन जाता है । व्यायाम से कभी २ स्नायु पर जब अघटित दबाव पडता है, तब वे टूट जाते हैं अथवा खिंच जाते हैं । मालिश इन स्नायुओं को सुयोजित कर चमकदार बना देती है ।

(६) पाउडर या विजली के यन्त्र से मालिश करना उचित नहीं । मालिश आजकल वैभवकी वस्तु बन बैठी है । विद्युत यन्त्र से की जाने वाली मालिश अप्राकृतिक है और उससे कोई लाभ नहीं । विद्युति से एक ही प्रकार की मालिश कम्प में मालिश—सम्भव बनती है । रक्तसंचालन क्रिया को सतेज बनाने के अतिरिक्त इनका अन्य कोई लाभ न होने से यह सर्वथा त्याज्य हैं मालिश का मूल उद्देश शरीर में तेल को पचाने का है । कथित सुधरे हुए लोग तेल को पसन्द न कर सुगन्धित पाउडर पसन्द करते हैं । पाउडर हस्त संचालिन की क्रिया को सरल और व्यवस्थित होने नहीं देता । अतः पाउडर या विद्युत यन्त्र से मालिश करने की अपेक्षा न करना ही अच्छा है ।

रोग और आरोग्यम

चिकित्सा क्षेत्र में मालिश का महत्व समस्त जगत में बढता जा रहा है । प्राकृतिक चिकित्सा में मालिश पद्धति का बहुत उपयोग किया जाता है और इसके द्वारा अनेक रोगों की चिकित्सा की जाती है । पुराने हठीले रोगों में जिस रोगी की जीवनीशक्ति अल्प होती है, ऐसी घटनाओं में जीर्ण, अशक्त और शारीरिक रूप से क्षीण रोगियों के रोगों की अचूक चिकित्सा विज्ञान सिद्ध मालिश ही है ।

पाचन सम्बन्धी रोग

मानव का पेट शारीरिक, मानसिक या आध्यात्मिक विकास का केन्द्रबिन्दु है । मानव ने आहार विषयक भूलों से पेट को कब्रस्थान बना दिया है । कब्जियत, मन्दाग्नि, अपच आदि रोग आजकल सर्वव्यापक हैं । मालिश आंतों की आकुंचन क्रिया को बढाती है । शिथिल और रोगग्रस्त पाचनक्रिया को

तेजवान बनाकर उदर रोगों को दूर करती है। यकृत, आमाशय और प्लीहा की पीड़ा और रोग में मालिश उपयोगी है।

ज्ञानतन्तु के रोग

दिन प्रतिदिन जीवन संघर्ष विकट बनता जा रहा है। चिन्ता, व्यग्रता, जातीय उत्तेजना, भ्रष्ट अम्ल प्रधान आहार से ज्ञानतन्तु रोगी होते जा रहे हैं। अनिद्रा, शिरदर्द, थकावट, मानसिक उत्तेजना तथा मानसिक शिथिलता में वृद्धि हो रही है। ज्ञानतन्तु के रोगी को पैर के तलुओं, मस्तक तथा कोड़रज्ज की मालिश करानी चाहिये। वह मालिश बादामके तेल की होनी चाहिये।

रक्ताभिसरण-प्रक्रिया

इस प्रक्रिया के अन्तर्गत हृदय की निर्बलता, धड़कन और अन्स रोगों में मालिश एक अच्छे सेवक का काम करती है। मालिश से हृदय को पूर्ण विश्राम मिलता है। रक्ताभिसरण की अव्यवस्था के कारण उत्पन्न रोग दूर होते हैं। रक्त का संचालन उचित रूप में होते रहने से अपोषण से पीड़ित रोगी के मालिश आशीर्वाद के समान है। मांसपेशियों को खुराक मिलती है। वजन बढता है। शरीर की अनावश्यक चरबी का प्रशमन होता है।

वात-व्याधियां

शरीर में अम्लता बढ जाने से अनेक रोग उत्पन्न होते हैं। लकवा इत्यादि को आयुर्वेद में वात व्याधियों के अन्तर्गत माना गया हैं। इस प्रकार के रोगों में आयुर्वेद-प्रणीत विषगर्भ तेल या नारायण तेल की मालिश करनी चाहिये। बाल-लकवे की घटनायें बढ़ती जा रही हैं। यदि बालक को आरम्भ से उचित रूप से मालिश की जाय तो लकवा रोग नहीं होता और यदि हो भी जाय तो लाभ होता है।

मुख-सौंदर्य

मुख की त्वचा निस्तेज, फटी हुई या दाग वाली हो, तो चाहे जैसा सुव्यवस्थित रेखा वाला मुख भी आकर्षक प्रतीत नहीं होता। हमारी गृह देवियां 'विशेषतया नागरिक जीवन में' निष्क्रिय बनती जा रही हैं, अतः शरीर में चरबी बढती जाती है। गले और हड़पची का निम्न भाग लटक पड़ता है। मालिश मुख की चरबी को बरफ की तरह गलाकर मुख को नवीन आकर्षण, चमक और ताजगी प्रदान करती है। मुख पर मुहांसे या दाने हों, तो दूध की मलाई धीमें हाथ से मुख पर मलने से जादू का असर होता है। मुख सौंदर्य के लिए मलाई की मालिश आज से ही शुरू कर दें। इसके अतिरिक्त अस्थिभंग, शारीरिक विकृति आदि में मालिश की परमोपयोगिता अनुभव सिद्ध है।

अन्य लाभ

संक्षेप में शारीरिक अवयवों की कार्यशक्ति के अभाव या स्वयं अवयवगत व्याधि में मालिश अति लाभदायक है। मालिश शरीर में चार प्रकार का काम करती है:—(१) निर्माण (२) विनाश (३) उत्तेजना और (४) आराम का काम करती है। नये तन्तु उत्पन्न कर शरीर को पोषण प्रदान करती तथा पचापच्य की क्रिया को बल देती है, शरीर के अतिरिक्त चरबी विजातीय पदार्थ, टूटे हुए और निरर्थक तन्तुओं को दूर कर शरीर के सांघातिक तत्वों को नष्ट करती है। मालिश ज्ञानतन्तुओं की उत्तेजनाजन्य शिथिलता, अनिद्रा और शारीरिक निर्बलता दूर कर स्फूर्ति और चेतना प्रदान करती है। मानसिक थकावट मिटाकर शरीर की पीड़ा कम कर शरीर के किसी विशेष अवयव में एकत्र रक्त

को वितरित कर मालिश शान्ति और विश्राम देती है। मालिश करते २ कभी २ नींद आ जाती है।

कुछ महत्वपूर्ण निर्देश

१—सामान्य और स्थानीय–इस प्रकार मालिश के दो भाग हैं। किसी विशेष अंग की या रोगग्रस्त अंग की मालिश को स्थानीय–स्थल, विशेष की मालिश कहा जाता है। समस्त शरीर की मालिश सामान्य कहलाती है। रोगग्रस्त अंग पर २२ से ३० और समग्र शरीर पर ४० से ५० मिनट तक मालिश करनी चाहिए। बहुत अधिक समय तक मालिश करना हानिकारक है।

२—मालिश बहुत जल्दी २ करने की आदत अच्छी नहीं। मालिश करते समय शरीर के सभी अंग ढीले और आराम की स्थिति होनी चाहिये। मन को भी स्वस्थ रखना चाहिये। मालिश के समय मन को सभी ओर से हटाकर उन अंगों पर केन्द्रित कर आरोग्य के विचार करना चाहिये, जिसकी मालिश की जा रही हो। तेल को शरीर में बलपूर्वक रगड़ने की अपेक्षा थोड़ा २ तेल शरीर में पचाने की आवश्यकता है।

३—सभी अंगों की समुचित और समान मालिश करनी चाहिये। एक अंग पर विशेष ध्यान देकर दूसरे की उपेक्षा करनी न चाहिये। यह नियम समग्र शरीर की मालिश के लिए है। आरोग्याकांक्षियों को चाहिये कि वे ८–१० दिन में मालिश किया करें। रोगोपचार के लिए नित्य और आवश्यक होने पर दिन में दो बार भी मालिश करनी चाहिये।

——

(शेष पृष्ठ ८२ का)

सुंघाने मात्र से अपस्मार ग्रस्त रोगी होश में आ जाता है एवं तीन चार दौरेपर सुंघाने से रोग सदा के लिए विदा हो जाता है।

(च) कीकर के वृक्षों पर एक गोल गांठ सी उत्पन्न हो जाती है, जिसमें न केवल पत्ते होते हैं, अपितु कांटों के अतिरिक्त कुछ नहीं होता वह कांटे गोल गेंदका आकार ग्रहण कर लेते हैं उनको लेकर छाया में शुष्क करके चूर्ण बना लें। दौरे के समय चिलम में रखकर तम्बाकू की तरह पीने पर मृगी रोग सर्वदा के लिए विदा हो जाता है।

(छ) केले के गाभ का स्वरस एक सेर उसमें नवसादर एक छटांक डाल दीजिये। चार छै घण्टे के बाद छानकर शीशियों में डाट लगाकर रख लें। अपस्मार ग्रस्त रोगी को नित्य प्रति पांच छै बार उपरोक्त जल नासिका में नास दिया जाय। नासिका द्वारा कीड़े निकल जायेंगे एवं मृगी रोग से छुटकारा मिल जायेगा।

अपस्मार रोग में निम्नलिखित शास्त्रीय प्रयोग भी उत्कृष्ट हैं वृहत्पंच गव्य धी (महा चैत सं घृतम बात कुलान्तक भूत भैरव रस इत्यादि)।

अपस्मार रोग में पथ्य

नास, सिरा भेद, दान, त्रासदेना, बांधना, ताड़ना, हर्ष, धूम्रपान, औषधियों का विस्मय उत्पन्न करना, धैर्य, स्नान, अभ्यंग, नेत्रांजन इत्यादिका प्रयोग करना तथा साठी चावल मूंग की दाल, गेहूँ की रोटी, पुरातन घृत, गो दुग्ध, ब्राह्मी, वच, परवल, सफेद कुम्हड़ाका साग, अनार एवं ताजे फल, सहिंजन, मुनका, आंवले की चटनी, फालसा इत्यादि पथ्य समझना चाहिये।

गृष्टिका (गेंठी)

[लेखक—श्री वैद्यरत्न क० प्रतापसिंह रसायनाचार्य, D.Sc. (A) आयुर्वेद, बृहस्पति, बनारस]

(माननीय वैद्यरत्न श्री क० डा० प्रतापसिंह जी के शुभ नाम से सारा आयुर्वेद जगत सुपरिचित है। आप सम्मेलन के भूतपूर्व प्रधान तथा विशेष आधार स्तंभों में से हैं। आपके विचार और गवेषणाएं गम्भीर विचार धारा से ओत-प्रोत होतीं हैं। मेरे बहुत आग्रह पर आपने अपना मौलिक गवेषणापूर्ण लेख भेज कर अनुगृहीत किया। आशा है आयुर्वेद जगत इस लेखपर पूर्ण गम्भीरता के साथ विचार करेगा तथा अपने अनुभवों को पत्रिका में प्रकाशनार्थ भेजने का कष्ट करेगा। मुझे आशा है कि वैद्यरत्न जी अपनी इस पत्रिका को अपने बहुमूल्य खोज पूर्ण विचारों से कृतार्थ करते रहेंगे। प्र० सम्पादक)

यह अत्यन्त खेद का विषय है कि आजकल सर्वत्र आयुर्वेद की उन्नति के लिए तो सभा सुसाइटियां करने का यत्न हो रहा है और विविध प्रकारके प्रस्ताव पास कर दिये जाते हैं पर वास्तविक आयुर्वेद के ज्ञान के लिए प्रयत्न नहीं हो रहा है।

आयुर्वेद का ज्ञान केवल पुस्तक के पठन-पाठन से नहीं हो सकता है आयुर्वेद तो प्रत्यक्ष शास्त्र है, जब तक प्रतिदिन शास्त्रीय चिकित्सा विधियों का और उनमें प्रयुक्त होने वाले द्रव्यों का प्रत्यक्ष ज्ञान नहीं होगा तब तक चिकित्साकार्य में सफलता नहीं मिलेगी।

चिकित्सा में सफलता मिलने ही से आयुर्वेद जीवित रह सकता है और अपनी अक्षुणता रख सकता है। आज के वैद्य स्वयं वनों में जाकर औषधि संग्रह नहीं करते हैं। न इस समयके जीवनमें यह संभव ही है ऐसी दशा में हमारा औषधि संग्रह का सारा भार पंसारियों के सड़े गले संग्रह पर निर्भर है। पंसारी भी बिचारे वनवासियों की सहायता से इधर उधर से समय असमय में संग्रह कर अपनी आजीविका चलाते हैं। परिणाम यह है कि हमारी चिकित्सा दिनोंदिन हीन दशा को प्राप्त हो रही है।

आयुर्वेद महामण्डल विद्यापीठ का यह कर्तव्य है कि यह सर्वप्रथम आयुर्वेदोक्त द्रव्यों का एक प्रदर्शनालय बनावे ताकि द्रव्य प्राप्तिमें सन्देह होने पर उसका वहांसे निर्णय होसके एवं द्रव्यों की प्राप्ति कहां २ से हो सकती है उसकी सूची भी सहज में मिल सके ताकि वैद्य उपयुक्त द्रव्य शास्त्रीय विधि से संग्रह किया हुआ उचित मूल्य से प्राप्त कर सकें। यह कार्य विद्यापीठ के अधिकारियों के लिए अति कठिन नहीं है। केवल एक वैद्य को रखकर सारे देश की अपनी शाखाओं से उनके प्रान्त के पंसारियों के पते मंगालें और उनके पास प्रान्तीय औषधियों की सूची भेजकर मूल्य और नमूने मंगाकर एक वृहत सूचीपत्र तैयार करलें। नमूने प्रदर्शनालय में रखलें और सूची का प्रकाशन समय समय पर महासम्मेलन पत्रिका में दिया करें जिससे सहजमें सब वैद्यों को सूचना मिल जावे और बिना व्यय के उत्तम प्रदर्शनालय का भण्डार भरता जावे जिससे

प्रान्तीय औषधियों का स्वरूप ज्ञान कर लिया जावे और संदिग्धता का निर्णय सम्मेलनों के अवसर पर कर लिया करें। यह कार्य केवल श्रमसाध्य है। आशा है इस परामर्श पर अधिकारी ध्यान देंगे।

गृष्टिका

गृष्टिका का उल्लेख सुश्रुत संहिता में कुष्ट चिकित्सा के प्रकरण में महातिक्तघृत में आया है। यह क्या द्रव्य है इसकी खोज मैं बरसों करता रहा। अनेक निघण्टुओं का परिशीलन किया पर विशेष कुछ हाथ न लगा। पूज्य यादव जी महाराज ने द्रव्य गुण विज्ञान का अत्यन्त सुन्दर संकलन किया है पर उसमें भी ढूंढने पर इस वनस्पति का परिचय नहीं मिला। इत्तिफाक से एक पर्वतीय ज्योतिषी से भेंट हो गई और उन्होंने एक लता का उल्लेख किया और उसका नाम 'गेंठी' बताया। मुझे गेंठी और गृष्टिका शब्द की साम्यता विदित होने से मैं इसकी खोज में लग गया एवं ईश्वर की कृपा से इस वनस्पति की प्राप्ति भी होगई अब मैंने इसे अपने उपवन प्रताप पार्क में लगा दिया है ताकि सब प्रकार से उसका अन्वेषण किया जावे। यह लता बहुत ही सुन्दर हरितवर्ण के पत्र की है। इसके पत्तों की आकृति नागवल्ली (नागरबेल) के पत्ते के सदृश नोकदार गोल व सलदार होती है। तना पतला रस्सी सा बहु शाख वाला होता है। इसका फैलाव बहुत होता है। एक ही बेल सारे मकान को छा देती है इसके फल गठीले भूरे रंगके होते हैं, जिस पर पतला सा छिलका चढा रहता है और बीच में अंकुर होता है। वहीं से जमीन में लगाने पर अंकुरित होती है।

इसके फल मधुर और तिक्त होते हैं। अधिकांश में मधुर ही फल पाये जाते हैं जिन्हें भूनकर पहाड़ के लोग ज्वरादि के अन्तमें पथ्य देते हैं एवं काटकर सुखा कर भी रखते हैं और आवश्यकता पर पकाकर खाते हैं। तिक्त फलों को काटकर बहते हुए पानी में रख देते हैं। ४-६ घण्टेके बाद उनमें से तिक्तता साफ होजाती है तब भोजन में प्रयोग करते हैं।

इसका गृष्टिका शब्द सार्थक मालूम होता है। कारण कि इसका गूदा सद्य प्रसवा गौ के गाढ़े दुग्ध के जैसा मधुर होता है। रंग धूसर। आशा है वैद्य महानुभाव अपना २ अनुभव पत्रिका द्वारा प्रकाशित कर वनस्पति के ज्ञान के प्रचार में सहायक होंगे।

वनस्पति तेल को रंगने के लिए रंग

देहरादून के प्रमुख सामाजिक, राष्ट्रीय जन सेवक, उत्तर प्रदेशीय वैद्य सम्मेलन के संयोजक, प्रसिद्ध वनस्पति-विज्ञानवेत्ता कविराज प० अमरनाथ जी वैद्यशास्त्री, अध्यक्ष-वनस्पति औषधालय, ने उत्तर प्रदेशीय शासितकार की घोषणा के अनुसार वनस्पति तेल को रंगने के लिए एक उत्तम रंग राज्य सरकार को भेजा है।

यह वनस्पतिजन्य रंग विशुद्ध सात्विक, स्वास्थ्य-वर्द्धक, सस्ता, सुविधा से रंगने वाला, निर्दोष, निर्विकार तथा निर्गन्ध है। इसे वनस्पति तेल में मिश्रित करने पर शुद्ध घी में मिलावट होने से रुक सकेगी।

श्री वैद्य जी ने यह भी बतलाया है कि यदि स्वास्थ्यविभाग ने इस रंग को स्वीकृत किया तो पुरुस्कार द्रव्य का प्रयोग आयुर्वेद उत्थान कार्य में होगा।

१८-वें उ० प्र० वैद्य सम्मेलन-महोत्सव, लखनऊ के

अध्यक्ष का

निर्विरोध—निर्वाचन

विज्ञप्ति सं० ८ में निर्वाचन सम्बन्धी प्रकाशित सूचना के अनुसार सम्मेलन के अध्यक्ष पद के लिए निम्नांकित चार मताभिलाषियों के नाम प्राप्त हुए थे—

श्री विश्वेश्वरदयालु वैद्यराज — बरेली
श्री धर्मदत्त शर्मा आयुर्वेदाचार्य — बरेली
श्री बाबूराम मिश्र आयुर्वेदाचार्य — हापुड़
श्री बदरीविशाल त्रिपाठी आयुर्वेदाचार्य — कानपुर

पं० विश्वेश्वरदयालु जी और पं० बदरीविशाल जी ने पहिले ही अपने नाम परावर्तित कर लिए। दि० ३१ अगस्त नाम लौटाने का अन्तिम दिन था, रात्रि को ६ बजे पं० धर्म्मदत्त जी का तार सन्देश पहुँचा कि 'मैं अध्यक्ष पद निर्वाचनसे विराम करता हूँ' ऐसी दशामें **शेष केवल पं० बाबूराम जी मिश्र का नाम** रह गया। अतः उन्हें रात को ही विशेष तार द्वारा सूचित किया कि आप निर्विरोध सम्मेलनाध्यक्ष निर्वाचित होगये। इस प्रकार संघर्षमय निर्वाचन कार्य टल गया और सुविधा, सरलता, सद्भावनासे विशेष परिश्रम और व्यर्थं द्रव्य व्यय की विकट समस्या सुलझ गई। अतएव विरामशील सज्जनों को हार्दिक साधुवाद।

सम्मेलनोत्सव

आठ वर्ष के लम्बे विषादमय समय के पश्चात उत्तर प्रदेश की ऐतिहासिक राजधानी और राजकीय चिकित्सा कार्य व्यवस्था केन्द्र लखनऊ में १८-वां वैद्य सम्मेलन (महोत्सव) सम्पन्न करने का अवसर आ गया है जो कि दिसम्बर में होगा।

मैं कार्यवाहक सम्मेलन समिति संयोजक के उत्तरदायित्व सम्बन्ध से समस्त वैद्य बन्धुओं को सादर सविनय साग्रह आमन्त्रित करता हूँ कि सोत्सह पधार कर महोत्सव को सफल और आदर्श बनावें। इस संगठनके युगमें परस्पर सद्भाव और कर्म्मशील बनकर आयुर्वेदोद्धार, प्रचार, प्रसार के लिए अविलम्ब अग्रसर होने का कर्तव्य पालन करना चाहिये।

निवेदक—
अमरनाथ वैद्य
संयोजक कार्यवाहक समिति कार्यालय,
वनस्पति भवन न्यायालय मार्ग,
देहरादून

क्या आप अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के सदस्य हैं ?

यदि नहीं तो आज ही सदस्यता शुल्क भेजकर सदस्य बन जाइये और आयुर्वेद के प्रचार, प्रसार, अभ्युत्थान एवं संरक्षणार्थ विगत ४७ वर्षों से सतत प्रयत्नशील वैद्य समाज की इस एकमात्र अखिल भारतीय प्रतिनिधि संस्था को सुदृढ एवं सम्पुष्ट बनाइये। जो वैद्य महानुभाव पहिले ही महासम्मेलन के सदस्य हैं उनका भी कर्तव्य है कि वे अधिकाधिक संख्या में महासम्मेलन के सदस्य बनाने का प्रयत्न करें।

याद रखिए आज के युग में एक मात्र यही संस्था आयुर्वेद तथा आपके हितों की रक्षा कर उसको राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के गौरवपूर्ण पथ पर आसीन करा सकती है। इसे दृढ़ता प्रदान कराना आपका परम पुनीत कर्तव्य है। सदस्यता शुल्क ५) वार्षिक अथवा ५०) आजीवन। सदस्यों की संस्था का मासिक मुखपत्र आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका निःशुल्क प्रेषित किया जाता है। नमूने की प्रति मुफ्त। सदस्यता आवेदनपत्र तथा विशेष जानकारी के लिए पत्र व्यवहार करें।

प्रधानमन्त्री—अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन
महालक्ष्मी मार्केट, चांदनी चौक, देहली

हमारा अन्वेषण कार्य

संसार में मानव रोगों की निरापद चिकित्साके लिए नैसर्गिक जड़ी-बूटियों का प्रथम स्थान है क्योंकि हमारा शरीर प्राकृतिक है। वेद में भी वनौषधियों की प्रशंसा की है:—

ओषधयः समवन्त सोमेन सहराज्ञा।
यस्मै कृणोति ब्राह्मणस्तं राजन् पारयामसि॥
यजु० १२-९६

भावार्थ—औषधियां अपने राजा सोम (चन्द्र) के साथ बोलीं कि हे राजन! ब्राह्मण (वैद्य) जिस रोगी के लिए हमारा उपयोग करता है उस रोगीको वह रोगरूपी सागरसे पार करता है।

इस संस्था के प्रवर्तक कवि० डा० गणपतिसिंह वर्मा ने गत २७ वर्षों में जिन प्रभावजन्य अज्ञात अनुभूत योगों, द्रव्यों और जड़ी-बूटियों का ज्ञान संग्रह किया है वह चिकित्सकों और जनसाधारण से अप्रकट नहीं है। तद्विषयक उनके द्वारा लिखी गई दरजनों पुस्तकें और सैंकड़ों लेख इस बातके स्पष्ट प्रमाण हैं। इस चौथाई शताब्दी की निरन्तर खोज और योगों तथा द्रव्यों के अन्वेषण तथा परीक्षणने रोगग्रस्त मानव को रोगमुक्त करने का नया मार्ग खोल दिया है। जो जो योग अब तक के परीक्षण में सहस्रों रोगियों पर सफल सिद्ध हो चुके हैं उनको ही पेटेण्ट औषधियों का रूप दिया गया है। इनमें अनेक जानी पहचानी और अज्ञात औषधियां हैं जिनके अनुभूत गुणों का विवेचन न शास्त्र में मिलता है और न ही प्राचीन निघण्टुओं और आधुनिक मेटेरिया मेडिकाओं में। यह अनुभव का ही फल है। पर ऐसे सौभाग्य की ऐसी देन दुर्लभ होती है जिनके बारे में पहले कुछ नहीं कहा जासका। नई उपयोगी औषधियों में से अधिकांश का लम्बे तथा गहरे अनुसन्धान के बाद ही पता चला करता है और इस पर बड़ा व्यय हुआ करता है। आधुनिक युग में जिन कुछेक रसायनों को महत्वहीन समझा जाता था अनेक वर्षों के अनुसन्धान के बाद उनकी उपादेयता का अब पता चला है। अनुभूत योगों में से जो कुछ अद्भुत अचिंत्य शक्ति का परिचय मिलता है उसका पता पृथक्करण व हेतु से नहीं लगता। उसे प्रभावजन्य समझना चाहिये। प्रस्तुत लघु सूचीपत्र में कतिपय ऐसी ही अनुसन्धानित आयुर्वेदिक पेटेण्ट औषधियों का सार दिया गया है जो वास्तविक अर्थों में अनुभूत, प्रमाणित और विश्वासजन्य हैं, जिनके निर्माण में स्वच्छता, द्रव्यों की विशुद्धता, कठिनता से प्राप्त होने वाली वनस्पतियों की प्राप्ति, योग द्रव्यों की सर्वांग पूर्णता व निर्माणपद्धति पर पूरा नियन्त्रण रखा जाता है। सभी चिकित्सक व रोगी सन्तोषपूर्वक इन औषधियों पर निर्भर रह सकते हैं। यह औषधियां चिकित्सक को यश दिलाने और रोगी को रोग मुक्त करने में अपूर्व हैं। आपसे प्रार्थना है कि आयुर्वेद का गौरव बढ़ाने के लिए आप इस संस्था कीं औषधियों को निज प्रयोग में लाकर तथा अधिकाधिक प्रचार करके हमें सहयोग प्रदान करें।

खालिसा

यह कुछेक गंजनाशक जड़ी-बूटियों द्वारा निर्मित दवा है। सिर की चांद में या दाढ़ी, मूछ में जहां के बाल उड़कर गंज पड़ गई हो वहां इसको मलने से नये बाल ऊगआते हैं और गंज मिटजाती है। मू० ५) पो० १।)

केशिनी

यह तैल दिमागी कमजोरी, थकावट और सिर दरद को दूर करता है। दिमाग को ताजा और ठण्डा रखता है, खुजली, भूसी को दूर करके झड़ते बालों को रोकता है। कुछ दिन निरन्तर लगाते रहने से गंजापन और बालों का सफेद होना रुक जाता है। कुछ विशेष केश टॉनिक जड़ी-बूटियों के रसों को तेल में विशेष पद्धति से पचाया जाता है, जलाया नहीं जाता जिससे बूटियोंके सब तत्व तेलमें अक्षुण रहते हैं और अपना पूरा प्रभाव करते हैं। मूल्य ४ औंस १।।) एक पौंड ५।)

बुधान

अधिक मानसिक परिश्रम, चिन्तन, अध्यापन या किसी अकथनीय कारण से जिनका दिमाग कमजोर होगया है, स्मरणशक्ति घट गई है, हृदय दुर्बल होगया है, सिर में हल्का २ दरद और थकावट रहती है उनके लिए 'बुधान' बहुत लाभदायक है। इसके सेवन से उपरोक्त दोष मिट जाते हैं। दिमाग पुष्ट होकर स्मरण-शक्ति तीव्र होजाती है। इससे उन्माद तक के रोगियों को लाभ हुआ है। बुद्धिजीवी लोगों के लिए वरदान स्वरूप है। मूल्य ४) डाकखरच १।)

टंकरोल

दो दिनमें इसकी ६ मात्राओंके सेवनसे जुकाम (प्रतिश्याय) ठीक होजाता है। दो खुराक खाने से ही शिर का भारीपन, छींकें आना, नाक से पानी बहना आदि दूर होजाता है। इसका प्रभाव श्लेष्मकला पर होता है। २४ मात्रा की शीशी का मूल्य १) छः मात्रा का नमूना ।=)

निद्राणी

स्वास्थ्य के लिए निद्रा उतनी ही आवश्यक है जितना कि भोजन, जल और शुद्ध वायु। भोजन के पचन और सात्म्यीकरण से शरीर की प्रत्येक सेल को अपनी स्थिति बनाये रखने की सामग्री मिलती है तो पूर्ण निद्रासे आराम मिलने के कारण घिसी हुई सेलों का पुनः निर्माण हो जाता है और खरच हुई शक्ति पुनः संचित हो जाती है। यदि यवा पुरुष को रात्रि में ६-७ घण्टे निरन्तर गहरी नींद नहीं आती या बीच बीच में टूट जाती है तो यह मस्तिष्क धमनियों की कठोरता, पाचन सम्बन्धी रोग, विबन्ध, ब्लडप्रेशर (रक्तचाप) नाडी दौर्बल्य आदि व्याधियों का लक्षण है। 'निद्राणी' इन सब अवस्थाओं में अपना निश्चित प्रभाव दिखाती है। कुछ ही मात्राओं के सेवन से रात्रिभर खूब गहरी नींद आने लगती है और प्रातः काल उठने पर देहमें स्फूर्ति और मन प्रफुल्लित होता है। इसमें कोई मादक या विषैला द्रव्य नहीं है। मू० ४) आधाकोर्स २।।) पो० १।)

नेत्राण

आंखों का दुखना, नेत्र पीड़ा, लाली, जलन, खुजली, सूजन, कीचड़ आना तथा अन्य नेत्र रोगों में परम लाभकारी है। दो बून्द नेत्रों में डालते ही ठंडक पड़ जाती है और २-४ दिन डालने से आराम हो जाता है। वैसे ही कभी २ डालते रहने से नेत्र साफ रहते हैं और कोई रोग नहीं होने पाता। मूल्य ।।)

नाग सुरमा

यह सुरमा रसायनिक प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है। यह सभी नेत्र रोगों में लाभकारी है। दृष्टिमन्दता, दूर या निकट कम दिखाई देना, तिमिर, धुन्ध, जाला, आंखों से पानी बहना आदि रोगों को नष्ट करने दृष्टि को तेज बना देता है। लगाते ही नेत्रों में ठंडक प्रतीत होती है। ६ माशा की शीशी १।।।) तीन माशा १)

हनीक

इस दवा का प्रयोग आपको मोतियाबिन्दु के आपरेशन के कष्ट से बचा सकता है। प्रारम्भिक मोतिया इससे मिट जाता है किन्तु बढा हुआ मोतिया आगे बढने नहीं पाता तथा निरन्तर कई मास लगाते रहने से आराम भी हो जाता है। मूल्य ५)

पायोगन

यह पायोरिया की सफल दवा है। इस दवा को दांतों पर मलकर ५ मिनट लगा रहने दो और फिर कुल्ला कर डालो। इस प्रकार प्रातःकाल, दोपर और रात्रि को सोने से पहिले लगाने से मसूढों का गला हुआ मांस भरने लगेगा, पीप और रक्त का बहना बन्द होकर हिलते हुए दांत मजबूत हो जाते हैं। मूल्य २।।)

दन्तद्युति मंजन

यह मंजन मसूढे फूलना, दन्त पीड़ा, पानी लगना, मैल जमना, खून जाना, मुख में दुर्गन्ध आना आदि अनेकों रोगों को दूर करके दांतों को स्वच्छ चमकदार बनाता है। लगाने के बाद मुख से सुगन्धि आने लगती है। मूल्य ।।)

चवसोमला

दमा के लिए यह परीक्षित दवा है। इसका प्रभाव श्वास प्रणाली और स्वरयंत्र पर होता है। इसके सेवन से नाडी मण्डल की उत्तेजना शान्त होकर श्वास नलिकाओं का प्रसार होता है जिससे रोगी सुख का सांस लेता है और उसका कष्ट दूर हो जाता है। पूरा कोर्स समाप्त हो जाने के बाद श्वासनलिकायें पूर्ण स्वच्छ और फेफड़े पुष्ट हो जाते हैं। फिर कभी दमा का दौरा पड़ने का भय नहीं रहता। मूल्य ५)

कफ कर्श

यह नई और पुरानी हर प्रकार की खांसी में लाभदायक है। इसके सेवन के कुछ ही देर बाद धसक में आराम होने लगता है और कुछ ही दिन सेवन करने से पूरा आराम हो जाता है। मूल्य १)

दिलावरी

इस दवा का प्रभाव हृदय और फेफड़ों पर होता है जिससे हृदय की धड़कन, कमजोरी, शूल, शिथिलता, दाह, घबराहट, तृषा, आदि दूर होकर हृदय तथा मस्तिष्क ताजा और पुष्ट हो जाता है। मूल्य ५)

हृदय रोग की दवा 'हीरा भस्म' विशेष

हृदय रोगों का सर्वोपरि इलाज यह हीरा भस्म है। इसके सेवन से भयंकर हृदय रोग को भी अवश्य आराम हो जाता है। यह हृदय उत्तेजक और शूल-हारि होने से हृदय शूल (जिसमें भयंकर दाह होकर मूर्च्छा आ जाती है) तथा मिथ्या हृदयच्छूल जो हृदय यन्त्र के बाहिर चलता है दोनों पर अपना तत्काल प्रभाव दिखाती है। यदि धमनियों में रक्त संग्रह होता हो या अवरोध होता हो तो उसे भी दूर करती है एवं वात-नाड़ियों को बल देकर रोग को निर्मूल कर देती है। यह भस्म एक बूटी के क्वाथ के साथ सेवन की जाती है अनुपान की बूटी सहित २० मात्रा का मूल्य ४०) पो० १)।

आमाशयम

दिनभर कुर्सी या गद्दी पर बैठकर काम करने वालों का आमाशय (मेदा) प्रायः दुर्बल हो जाता है, कारण झुककर बैठने से आमाशय पर दबाव पड़ता है जिससे उसके क्रिया संचालन में बाधा पड़ती है और धीरे २ वह निष्क्रिय सा होता चला जाता है। फिर भोजन पचन उचित रूपसे नहीं होता और भांति २ की उदर सम्बन्धी व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं। यदि आमाशय कठोर हो जाये तो खाने की औषधधियां बहुत कम लाभ पहुँचाती हैं। 'आमाशयम' आमाशय पर मालिश करने की दवा है जो लगाते ही त्वचा में प्रविष्ट हो जाती है। यह खाने की दवाइयों की अपेक्षा शीघ्र लाभप्रद है। इसके प्रयोग से आमाशय सबल होकर अपना काम सुचारु रूपसे करने लगता है। मूल्य एक औंस का ४) डाकखरच सवा रुपया।

अमोनिरी

यह हमारी नव अनुसन्धानित विशेष वनस्पतियों द्वारा निर्मित और दो वनस्पतियों द्वारा भावित योग है जिसे दीर्घ परीक्षण के बाद अब प्रकाश में ला रहे हैं। यह औषधि आजकल के बहुप्रचलित पेट रोगों और उनके उपसर्गों यथा-आंत की सूजन व शूल, व्रण, वायुविकार, मल की सड़न से उत्पन्न होने वाले विष दोष, गैस चढ़ना, अम्लपित्त, आंव, जीर्ण कब्ज, भूख न लगना, खून की कमी, नींद न आना, बुढ़ापा लाने वाली अम्लता, जोड़ों का दर्द व खांसी, जुकाम आदि के लिए अद्भुत गुणकारी सिद्ध हुई है। आमाशय और आन्तें बलवान होकर भूख खूब लगती है। स्वच्छ रक्त बनने से शरीर पुष्ट हो जाता है। मूल्य एक कोर्स ४) डाकखरच १।)

लीवर शर

यह दवा यकृत सम्बन्धी सभी रोगों के लिये हितकर है। लीवर सारयुक्त इस दवा के सेवन से शारीरिक मानसिक कमजोरी, यकृत दुर्बलता, श्याम और पीत पाण्डुरोग, हाथ पांव की सूजन, सांस फूलना आदि विकार मिटते हैं। मूल्य २॥)

कोलरास

हैजा की प्रत्येक दशा में इसके सेवन से लाभ होजाता है। अब तक के परीक्षण में अद्भुत लाभकारी सिद्ध हुई है। प्रति वर्ष हजारों रोगी इसके सेवन से स्वास्थ्य लाभ करते हैं। मूल्य १) मात्र।

ग्रहणी शाल

नई संग्रहणी में इसको ७ दिन सेवन करने से ही पूरा आराम होजाता है। ३ मात्रायें सेवन करते ही इसका विशिष्ट गुण दृष्टीगोचर होने लगता है। पुरानी संग्रहणीमें २ से ३ सप्ताह सेवन करना आवश्यक है। एक सप्ताह की दवा का मूल्य ३)

स्वर्णजल

संग्रहणी रोग की यह सर्वश्रेष्ठ अव्यर्थ अमीरी दवा है। यह स्वर्ण योग है जिसमें स्वर्ण को प्रमाणु रूप में लाकर जलमें घुलनशील बनाया जाता है। १० दिन की ३० मात्रा का मूल्य १५)

सनोल

यह पुराने कब्ज का दवा है। इसे लगातार १५ दिन सेवन करने से पुरानी कब्ज मिट जाती है। प्रति दिन प्रातःकाल दस्त खुलकर साफ आता है। पेट साफ हो जाने से चित्त प्रसन्न रहता है और भूख अच्छी लगती है तथा शरीर में स्फूर्ति आती है। दवा का कोर्स पूरा होजाने के बाद फिर कभी कब्ज नहीं होगा और समय पर नियमित रूपसे दस्त साफ हुआ करेगा। मूल्य ३॥) पो० १॥।–)

डायबोडीन

इक्षुमेह, मधुमेह (डायबीटीज) प्रसिद्ध और भयंकर रोग है और इस रोग की यह दवा विश्वास-जनक चिकित्सा है। डाक्टरीमें इन्सुलीन के इन्जेक्शन काम चलाऊ इलाज है इससे रोग नहीं मिटता। जब रोग बहुत बढ़ गया हो तो इससे सहायता ली जासकती है किन्तु रोगको निर्मूल करनेके लिए 'डायबोडीन' का सेवन परमावश्यक है। यह दवा १० दिन में अपना असर दिखा देती है और २० दिन के सेवन से सुगर नार्मल के बराबर होजाती है। दो मास सेवन से रोग समूल नष्ट होजाता है। यह नवीन खोज की गई वनस्पतियोंके परीक्षण का सफल परिणाम है। मूल्य पूरा कोर्स २४) परीक्षार्थ आधा कोर्स १२) डाकखरच जुदा।

वृक्कोल

गुर्दे की चाहे जैसी घोर पीड़ा हो, इस दवा के सेवन से १५ मिनटमें ही चैन पड़ जाता है और दूसरी तथा तीसरी मात्रासे पूर्ण आराम होजाता है। मू० १॥)

बवासीर का सरल इलाज (अंकुरना)

बवासीर चाहे खूनी हो या बादी–दोनों को ही ५ दिन में पूरा आराम होजाता है। इस दवा में खाने या लेप करने का कोई झंझट नहीं। केवल थोड़ी सी देर इस दवा का धुवां मस्सों को स्पर्श कराना होता है जिससे किसी प्रकार का किंचित भी कष्ट नहीं होता। दवा का नाम अंकूरना है। मूल्य ५) डाकखरच १।)

गठना

गठना–गठिया (Gout) सन्धि पीडा, सन्धि वात, रींघनवाय, लकवा, कटिपीडा, पार्श्वशूल तथा सम्पूर्ण वायु रोगोंके लिए यह अकेली और बहुपरीक्षित दवा है। खाट में पड़ा रोगी भी ३ दिवस के सेवन से चलने फिरने लग जाता है। इससे हर प्रकार के वायु रोग नष्ट हो जाते हैं। एक शीशी की कीमत ३)

मलना

यह नव आविष्कृत कैपशूल हैं। ६ कैपशूल के सेवन से मलेरिया बुखार निश्चित रूप से दूर हो जाता है। टाइफाइड और क्षय को छोड़कर बाकी सब प्रकार के ज्वरों को दूर करने की क्षमता इसमें है। कीनीन या आर्सेनिक आदि किसी विष का मिश्रण इसमें नहीं है इसलिए ऐसी औषधियोंसे उत्पन्न होनेवाले दुष्प्रभाव भी इसमें नहीं हैं। सर्वथा निर्दोष, मलेरिया और सभी प्रकार के ज्वरों की अमौघ दवा ६ कैपशूल ॥) तथा ३६ कैपशूल का पैकिंग २॥)

ल्युकोआयर

इस दवा के सेवनसे नया श्वेत और रक्त प्रदर ६ दिन में ही मिट जाता है, साथ ही हडफूटन, कमर का दरद, उदासी आदि व्याधियां दूर होकर रुग्णा स्त्री स्वस्थ और पुष्ट बन जाती है। ६ दिन की दवा का मूल्य २) यदि रोग पुराना हो तो ४ शीशी सेवन करना चाहिये। एक शीशी से चार शीशी तक का पो० १।)

नियन्त्रक

यह लगाने या रखने की दवा नहीं है, बल्कि

बाने की निर्दोष दवा है। इसके सेवन करने के बाद फिर गर्भ नहीं रहता। परीक्षण में श्रेष्ठ और सफल सिद्ध हुई है। मासिक धर्म प्रतिमास नियमित होता रहेगा, शरीर पुष्ट बनेगा। स्वास्थ्य पर किसी प्रकार का कुप्रभाव नहीं पड़ता। मूल्य ५) डाकखरच १।)

पीताम्बर (एक महान टॉनिक)

यह दवा पर्वतों पर बर्फ में पाई जाने वाली एक अत्यन्त शक्तिवर्धक बूटी के योग से बनी हैं। इसके सेवन से स्त्री-पुरुषों में किसी भी कारण से उत्पन्न हुई अशक्ति, दुर्बलता, शरीर का दुबलापन, वजन घट जाना, खून की कमी, गहरी नींद न आना, उत्साह और स्फूर्ति का अभाव आदि विकार मिटकर शरीर पुष्ट, शक्ति सम्पन्न और कान्तिमय हो जाता है, क्योंकि इसके सेवनसे खून में श्वेत और लाल अणु खूब बढते हैं। मूल्य एक मास की दवा का १०) पो० १)

नोट-निरामिष भोजी, अविवाहित और विद्यार्थी इसके लिए आवेदन न करें।

बाल रस

यह दवा विशिष्ठ वनस्पतियोंका अत्यन्त स्वादिष्ट और मीठा तरल सत्व है इसलिए बच्चे प्रसन्नतापूर्वक पीलेते हैं। इसमें चीनी नाममात्र को भी नहीं है। बालकों के ज्वर, खांसी, वमन, दूध पटकना, अपचन, हरेपीले दस्त, सूखारोग, अशक्ति, खून की कमी आदि व्याधियों को दूर करनेकी अपूर्व दवा है। एक शीशीके सेवनसे ही बच्चा निरोग और पुष्ट तथा मोटा ताजा बन जाता है। स्वस्थ बालक को सेवन कराते रहने से वह प्रायः सभी रोगों से सुरक्षित रहता है। मूल्य १)

जोइन्टान

टूटी हड्डी जोड़ने की अद्भुत दवा

मनुष्य की हड्डी चाहे जहां से टूट गई हो–इसकी एक मात्रा खिलाने से अपने आप यथास्थान बैठकर तुरन्त जुड़ जाती है और जोड़के स्थान पर वेल्ड किये की भांति एक गोल कड़ासा लग जाता है जो कुछ दिन बाद स्वयं ही मिट जाता है। यदि दो मात्रायें खिलायें तो दो और तीन मात्रा खिलाने से तीन कड़ेसे लग जाते हैं, जो कुछ समय बाद मिट जाते हैं। जैसा केस हो उसी के अनुसार मात्रायें देना चाहिये। चाहे जैसा केस हो ३ मात्रासे ठीक होजाता है। ३ मात्रा का मू० ३) छः मात्रा ५) तथा १२ मात्रा का मू० ६) है। हमारे क्लिनिक में आनेवाले ग़रीब रोगियों को यह दवा मुफ्त दीजाती है।

चन्द्रजीवन कल्प

आयुर्वेदिक चिकित्सकोंके लिए यह सुन्दर अवसर है कि वह इस कल्प से तपेदिक (क्षय) की चिकित्सा कर यश प्राप्त करें और देश की सबसे बड़ी समस्या को हल करने में योगदान दें। इस कल्प को सरलता पूर्वक रोगी के घर पर भी कराया जा सकता है। एक मास का कल्प पूरा होने पर क्षय के कीटाणुओं का नाश हो जाता है। शरीर में रस, रक्त, मांस तथा धातु की वृद्धि होकर शक्ति और स्फूर्ति का संचार होने लगता है, ज्वर, खांसी आदि उपद्रव व क्षय के समस्त लक्षण मिटकर रोगी स्वस्थता अनुभव करने लगता है। इस कोर्स को समाप्त करने के बाद 'फ्लैशटोन' नामक दवा भी एक मास सेवन करना उचित है। कोर्स का मूल्य ३०) रु० मात्र। विशेष जानकारी के लिए पत्र व्यवहार करें।

अग्निस्थाई पारद गुटी

अग्निस्थाई पारे के दिव्य गुणों को प्रायः सभी जानते हैं किन्तु यह दुर्लभ वस्तु है, वर्षों के सतत प्रयास से अब हम इसको बनाने में सफल हो चुके हैं। इस पारद को चाहे जितनी तेज आग पर रखो, न उड़ेगा और न वजन कम होगा। इसकी गोली को मुख में रखकर चाहे जितना शारीरिक, मानसिक परिश्रम करो थकावट बिल्कुल न होगी। २—योगाभ्यास करनेवालों को समाधिस्थ अवस्था प्राप्त होती है। ३—भजन पूजन में मन एकाग्र होता है। ४—दूधमें गोलीको उबालकर पीनेसे अत्यन्त बल और पराक्रम प्राप्त होता है। अन्य गोपनीय गुण सेवन विधिमें पढ़ें। अनेक चिकित्सकों और महात्माओं द्वारा परीक्षित मूल्य २१) डाक खरच १।)

रत्नों के साथ तुलनेवाली अनुपम पुस्तकें

४० से अधिक आयुर्वेदीय पुस्तकों के रचयिता प्रसिद्ध लेखक व चिकित्सक राजवैद्य डा० गणपतिसिंह वर्मा द्वारा रचित व प्रकाशित—यह वही पुस्तकें हैं जिनकी वैद्य, हकीम, डाक्टर और जनसाधारण मुक्तकंठ से प्रशंसा कर रहे हैं। जिनके विषय में देश के गणमान्य लोगों की सम्मति है कि इन पुस्तकों का प्रत्येक घर में होना अत्यावश्यक है। क्योंकि इनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक स्थान में सहसा होजाने वाले रोगों का सरलतापूर्वक इलाज कर सकता है। प्रत्येक पुस्तक के कई २ संस्करण हो चुके हैं जो कि इनकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है।

अनुभूत योग चिन्तामणि

इसके लेखक ने ५ वर्ष तक लम्बी २ यात्रायें करके संन्यासियों की कठिनतम सेवा और भ्रमण के अथक परिश्रम के अतिरिक्त ५४३५ रुपये खर्च करके जो ५३३ जादुअसर अनुभूत नुस्खे प्राप्त किये थे वह निष्कपट भावसे इस पुस्तक में प्रकाशित कर दिये हैं। भारतवर्ष के सैंकडों वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों ने इन सब नुस्खों की पचासों बार परीक्षा करके शत प्रतिशत अनुभूत होने के प्रमाणपत्र दिये हैं जिससे सिद्ध होगया है कि इसमें एक भी ऐसा योग नहीं–जो अनुभूत सिद्ध न हो, सबके सब संन्यासियों के हृदय के गुप्त योग हैं। भारत के गणमान्य हकीमों व वैद्यों का निर्णय है कि जिसके पास यह पुस्तक नहीं, निःसन्देह उसकी चिकित्सा और औषधालय अधूरा है। मूल्य प्रथम भाग पांचवीं आवृति ४।) द्वितीय भाग ४) डाकखरच जुदा।

१५ वर्ष के कठिन परिश्रम का फल

अनुभूत योग प्रकाश

आज से १५ वर्ष पूर्व जिस पुस्तक को प्रकाशित करने का आयोजन प्रकाशित किया गया था वह पुस्तक अब छपकर तैयार हो गई है। इस पुस्तक के योगों के विषय में केवल इतना बतला देना ही काफी होगा कि गत १५ वर्ष के सतत उद्योग से बड़े २ साधु, महात्मा, फकीरों, भीलों से लेकर राजा, रईसों तथा ख्यातिवान प्रसिद्ध विद्वान वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों के उन अनुभूत चमत्कारी योगों को इस पुस्तक के पृष्ठों पर अंकित कर दिया है—जिनको आज तक जमाने की हवा भी न लगी थी। फिर इसके लेखक डा० जी० एस० वर्मा का नाम ही बडी जमानत है कि पुस्तक कैसी है। इसमें सबसे बडी वह रीसर्च आपको मिलेगी जिसे आज तक आपने सुना भी न होगा अर्थात समुद्रीय द्रव्यों यथा मुक्ता शुक्ति, प्रवाल, शंख, कपर्दिका आदि का तेल बनाना। इन तेलों की तुलना में इन द्रव्यों की भस्में बहुत तुच्छ लाभ पहुँचाती हैं। इन तेलों से अनेक कष्टसाध्य कहे जाने वाले रोग शीघ्र मिट जाते हैं। दूसरी विशेषता यह है कि इन तेलों से उडने वाले सभी द्रव्य यथा पारद, हिंगुल (शिंगरफ) आदि स्थायी होजाते हैं। इस पुस्तक में कोई ऐसा रोग नहीं छोडा जिस पर अनुभूत सिद्ध योग न छपा हो। मूल्य ६।) डाकखर्च ॥।=)

इन्जेक्शन बनाना व लगाना सीखो

इन्जेक्शन चिकित्सा तत्काल प्रभाव दिखाने वाली होने से आज लोकप्रिय हो रही है, किन्तु वैद्यों, हकीमों को इसकी जानकारी न होने से उन्हें बडी कठिनाइयों का सामना करना पड रहा है। इन्हीं भावों से प्रेरित होकर यह पुस्तक तैयार की गई है, जिसमें समस्त रोगों की चिकित्सा आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक और एलोपैथिक इन्जेक्शनों द्वारा ही करना बतलाया गया है। रोगशीर्षक के नीचे क्रमशः प्रत्येक रोग के तीनों प्रकार के इन्जेक्शन ऐसे ढंग से लिखे गये हैं कि जिससे चिकित्सक एक क्षण में निश्चय कर सकता है कि कौनसा इन्जेक्शन किस स्थान पर, कितनी मात्रा में, कितने अन्तर से, किस प्रकार लगाना चाहिये और साथ २ इन्जेक्शन बनाने की विधि भी लिखदी गई है। आयुर्वेदिक इन्जेक्शन जिन द्रव्यों से बनाये जाते हैं वह तमाम आपके घर में, खेतों और जंगलों में सर्वत्र मिल सकते हैं। एक-एक रोग पर कई २ इन्जे-

क्शन बनाने के योग लिखे गये हैं। इसके अतिरिक्त सीरम, वैक्सिन, पेनिसीलीन, विटामिन्स के इन्जेक्शनों का वर्णन और उनको लगाने की सरल व निरापद सचित्र विधि भी खूब समझा कर लिखदी गई है। इस पुस्तकको पढनेके बाद इन्जेक्शनों के विषयमें जानने को कुछ भी शेष न रहेगा और सब प्रकार के इन्जेक्शन तरल (लिक्विड) टेबलेट व पौडरादि रूप में बना व लगा सकेंगे। मूल्य ५) डाकखरच ।।।-)

सिद्ध रसायन

रस-रसायन की जिन कठिन क्रियाओं से वैद्य बन्धु घबराकर उनके दिव्य गुणों से वंचित रह जाते हैं, उन क्रियाओं का लम्बा अनुभव करके विद्वान लेखक ने उनका सरल तरीका इस ग्रन्थ में दर्शाया है और साथ ही महान रसायनाचार्य नागार्जुन और अन्य सिद्धों की संचिकाओं के अज्ञात योगों को उनकी गुत्थी सुलझाकर प्रकाशित किया है जिनसे पाठक न केवल काया (काया-कल्प) रंगने में ही सफल होंगे बल्कि स्थिर मति वाले माया (कीमिया) रंगने में भी सफल होंगे। इस प्रकार पाठकों को जहां आर्थिक संकट से मुक्ति मिलेगी वहां असाध्य समझकर छोड़ दिये जाने वाले रोगों के वे सिद्धहस्त चिकित्सक भी बन जावेंगे। इस पुस्तक के कुछेक योगों का दिग्दर्शन करा देने से आपको अनुमान हो जायगा कि यह कितना अपूर्व ग्रन्थ है। यथा-शुद्ध बद्ध और सिद्ध करने वाली दिव्य औषधियां, औद्भिदाम्ल व बूटियां, रस बन्धन, गन्धक को स्थाई करना, बद्ध पारद को सिद्ध बनाना, रजत रंजन (कीमिया) अभ्रक सत्व की द्रुति, द्रुति से पारद बन्धन, बंग स्तम्भन, पारद भस्म रक्तयोगेन ताम्रोद्धार (कीमिया) तांबा और रजत (चांदी) वेधी सिद्ध हरताल, हरिताल कल्प देह व लौह वेधी, सिद्ध हरिताल, तैल, सिद्ध कुचला कल्प, सर्वरोग हर फिटकड़ी रसायन (कल्प) पुरुषों के गुप्त रोगों पर रामबाण सिद्ध खादक, पारद गुटिका बंगवेधी, शिंगरफ मोमियां बनाना, नौसादर तैल, सिद्ध गोरखी जलमुद्रां, सिद्ध गन्धक-एक गिरनारी महात्मा का योग जिसको बनाना अति सरल है और क्षय (T. B.) संग्रहणी जैसे अनेक भयंकर रोगों का सफल इलाज है आदि। इसमें अन्य पुस्तकों की भांति जोड़-तोड़ कर एकत्र की हुई सामग्री नहीं है बल्कि लेखक के जीवन भर का अनुभव बन्द किया है। इसके पाठकों के लिए लेखक का सद्परामर्श और सहायता भी सदैव प्रस्तुत रहेगी। मूल्य ५) पो० ।।।)

संन्यासियों की चमत्कारी गुप्त बूटियां

इस पुस्तक में सैंकड़ों ऐसी ही जड़ी-बूटियों के गुप्त रहस्य प्रकट किये गये हैं, जिनकी बदौलत संन्यासियों की धाक जमी हुई है। इनमें से अधिकांश बूटियां वही हैं, जो आपको जंगल, खेत, बागीचों और पंसारियों की दुकानों पर मिल जावेंगी जिनसे आवश्यकता पड़ने पर सिर से पांव तक के समस्त रोगों का इलाज हर जगह प्रत्येक आदमी आसानी से कर धन और यश कमा सकता है। इस पुस्तक के पढ़ लेने के बाद आप के पास रोगियों का तांता बंधा रहेगा। विषय सूची मुफ्त। ४५० पृष्ठ, २ भाग मूल्य ५।।) डा० ख० ।।।)

गुप्त योग रत्नावली

इस पुस्तक में डा० नेगी के व निज के वह-वह गुप्त योग प्रकाशित किये गये हैं जिनको भारत वर्ष के कोने २ से तथा अरब, मिश्र और अफ्रीका आदि प्रदेशों के विभिन्न स्थानों में जाकर लेखक ने प्राप्त किये थे। मूल्य २।।) डा० ख० ।।=)

पेटेण्ट औषधियां व भारतवर्ष

संसार में सब से अधिक लाभदायक व्यापार पेटेण्ट औषधियों का है। अमृतधारा और सुधासिंधु के मालिकों ने १-१ पेटेण्ट दवा के नुस्खे से लाखों रुपया कमाया है। विलायती फर्में एक-एक पेटेण्ट दवा से बेहद रुपया कमा रही हैं। यदि उनकी तरह आप भी भारतवर्ष, इंग्लैंड, अमरीका की प्रसिद्ध और सर्व-प्रिय प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों की बिकने वाली पेटेण्ट औषधियों के नुसखे बिना किसी कष्ट के घर बैठे सीख कर साधारण पूंजी से सैंकड़ों रुपये मासिक की स्थाई आमदनी पैदा करना चाहते हैं तो आज ही 'पेटेण्ट औषधियां और भारतवर्ष' नामक पुस्तक की एक प्रति मंगाकर पढ़ें। १६० पेजवाली मूल्य ।।।=)

यौवन के गुप्त रहस्य

लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन वापिस लाने के अनुपम उपाय-पुरुषत्व और जवानी के वह गुप्त रहस्य, जिनको जानने से अशक्ति के ऐसे रोगी जिन्हें किसी दवा से लाभ नहीं हुआ या सैंकड़ों रुपये क दवा खाकर भी निराश बैठे हैं-निःसन्देह सशक्त बन सकते हैं। मनुष्य देह का वह केन्द्र जहां से स्वास्थ्य और यौवन का रस झरकर समस्त शरीर का पोषण करता है, उस केन्द्र को शक्ति प्रदान करने के अनूठे उपाय, जिससे लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन पुनः लौट आता है। पुरुषों के अकथनीय भयंकर रोग बिना दवा सेवन किये ही किस प्रकार नष्ट हो जाते हैं। उर्द्ध्वरेता होने का वह प्रयोग जिससे पुरुष की शक्ति में कमी नहीं आती। रसग्रंथियोंसे आश्चर्यजनक दवाइयां बनाने के प्रयोग। हजारों रुपये खर्च करके डा० बोरनाफ की बताई हुई बन्दर की रसग्रन्थि लगवाने व आपरेशन का कष्ट सहन किये बिना ही सुगमता से प्रत्येक स्त्री-पुरुष वही शक्ति कैसे प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त पुरुषों के रोगों के सम्बन्ध में निदान व ऐसे २ गुप्त प्रयोग इस पुस्तक में दर्ज किये गये हैं, जिनको उपयोग करने वाला पुरुषत्व पर गर्व कर सकता है। मूल्य ३) डाकखरच ।।≈)

हिन्दी से अंग्रेजी मैट्रिक

विश्व के ज्ञान, विज्ञान और व्यापार तथा कला-कौशल को सीखने के लिए आज की विश्व-भाषा अंग्रेजी का सीखना सबके लिए जरूरी है। इसको सीखना कोई कठिन भी नहीं है। जिस प्रकार अंग्रेज मातायें अपने बालकों को अपने घरों में ही अंग्रेजी सिखा देती हैं ठीक उसी प्राकृतिक नियमानुसार यह ३२० पृष्ठोंकी पुस्तक तैयार की गई, जिसे दो घंटा प्रति दिन पढ़ने से केवल हिन्दी पढ़े-लिखे व्यक्ति को भी चार मास में भली प्रकार याद हो जाती है। इसमें ए० बी० सी० डी० से लेकर आवश्यक ग्रामर (व्याकरण) अनुवाद आदि इङ्गलिश की मैट्रिक तक का सब ज्ञान हिन्दी से अंग्रेजी और अंग्रेजीसे हिन्दीमें ऐसे सरल और सुबोध ढंग से ४८ पाठों में छपा है कि जिसे केवल अंग्रेजी में मैट्रिक की परीक्षा देनेवाले लड़के-लड़कियां निसन्देह पास हो जाते हैं। दसवां संस्करण अभी छपा है। मूल्य ३।।) डाकखरच ।।।)

७८६ वर्ष का प्राचीन रस ग्रन्थ

बसवराजियम—हजारों वर्ष पहिले दक्षिण भारत में चालुक्यवंशीय राजाओं का राज्य था। उनके प्रधान मन्त्री रुद्र साम्प्रदायी महान रसतन्त्रज्ञ बसवराज ने सं० १२२५ में इस सिद्ध साम्प्रदायी अनुपम ग्रंथ की रचना की थी, जिसमें भगवान रुद्र के अनुयायी वनों में विचरने वाले रसायनाचार्य नागार्जुन, नागबोधि, नित्यनाथ, चर्पटी, कणेरी, पूज्यपाद आदि योगियों का रसज्ञान भरा पड़ा है, श्री गोविन्दपादाचार्य के कथनानुसार शरीर को अजरामर करने में पारे की बराबरी करने वाली न तो कोई जड़ी बूटी है और न ही कोई रसायन और भस्म है। पारे में यह बड़े आश्चर्य की बात है कि वह स्वयं मूर्छित होकर रोगी के रोग को दूर करता है और बंधा हुआ होकर मुक्ति देता है तथा अच्छी तरह मरा हुआ दूसरों को जीवन देता है। आज मद्रास प्रान्तीय वैद्यों की जो प्रतिष्ठा, यश और कीर्ति सर्वत्र प्रसिद्ध हो रही है वह सब इसी ग्रन्थ के योगों का प्रताप है। यह ग्रन्थ तैलंग भाषा में ताड़ पत्रों पर लिखा हुआ उपलब्ध हुआ था, जिससे अब तक तैलंग भाषा-भाषी वैद्य ही लाभ उठाते रहे, किन्तु यह जानकर आप अतीव प्रसन्न होंगे कि अब आयुर्वेद बृहस्पति श्री गोवर्धन जी शर्मा छांगाणी के अतुल परिश्रमके फलस्वरूप आज यह ७८६ वर्ष का प्राचीन तैलंग हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ हिन्दी भाषा में भी हमारे द्वारा प्रकाशित होगया है। इस ग्रंथ के विषय में कहा गया है कि सतयुग में चरक, त्रेता में रसार्णव तथा द्वापर में सिद्ध विद्याभू का महात्म्य है उसी प्रकार कलियुग में बसवराजियम पूज्य ग्रंथ है। इसमें जो निदान, लक्षण प्रत्येक रोग के बतलाये हैं। उनको समझकर इसमें वर्णित योगों द्वारा जो चिकित्सा करेगा, भगवान रुद्र की कृपा से निःसन्देह वह सर्वत्र यश और सिद्धि प्राप्त करेगा। २५ प्रकरणों वाले सम्पूर्ण ग्रन्थ का मूल्य ८।।) डाकखरच १≈)

पता—रसायन फार्मेसी ३, दरियागंज, पो० बो० १९२५ देहली।

सेल्फ एक्टिंग
इलेक्ट्रो मेग्नेटिक

यह बेटरी सेल पर चलने वाली बिजली के इलाज की मशीन है। इसके द्वारा गठिया, आमवात आदि सभी वातरोगों, पक्षाघात, लकवा, अर्श, मधुमेह, अनेक प्रकार की शारीरिक पीड़ाओं व शोथ आदि ३३ रोगों का इलाज किया जा सकता है। किस रोग पर इस मशीन द्वारा बिजली का किस प्रकार प्रयोग किया जाय इसके लिए पुस्तिका साथ भेजी जाती है। मूल्य २५) डाक व्यय २।।।=)

एक्सपैंडरो

इस यन्त्र की उपयोगिता प्रायः सभी जानते हैं। नसों और मांसपेशियों की शिथिलता में जहां प्राकृतिक रूप से रक्त का परिभ्रमण सम्यकरूपेण नहीं होता वहां इसके प्रयोग से आशातीत लाभ होता है। नसों और मांसपेशियों को सशक्त बनाने के लिए इसका प्रयोग करना उत्तम उपाय है। मूल्य १५) बढ़िया १८) डाक खरच पै० २।।)

वर्मा एलोपैथिक चिकित्सा

'एलोपैथिक चिकित्सा' की उपयोगिता ही इस लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण है। घर बैठे डाक्टर बना देने वाली इस पुस्तक में स्त्रियों, पुरुषों तथा बच्चोंको होने वाले हर रोग की अनुभव सिद्ध एलोपैथिक (डाक्टरी) चिकित्सा दी गई है। जिससे हर बीमारी का इलाज आसानी से किया जा सकता है। हर रोग के कारण, लक्षण, चिकित्सा—जहां पेटेण्ट मेडिसन देना ही ठीक है वहां पेटेण्ट मेडिसन, जिस हालत में जो योग देना उचित है वह, जहां इन्जेक्शन देना आवश्यक है वहां इंजेक्शन और जहां पर नवीन औषधियों का देना ठीक है वहां नवीन औषधियें अर्थात रोग को हर प्रकार से ठीक करने के उपाय दे दिये हैं और जहां सर्जिकल प्रयोग ही उचित है वहां वह भी दे दिया गया है। पथ्य आदि का भी पूरा वर्णन है। ४०० रोगों का निदान व चिकित्सा आदि सब कुछ दिया है। ५०० पृष्ट मूल्य २) डाकखरच =)

पता—रसायन फार्मेसी ३, दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा स्वस्तिक प्रिंटिंग प्रेस, देहली में छपकर प्रकाशित

रसायन

नवम्बर १९५५

वर्ष ८ वार्षिक ३)

अंक ५ इस अंक का ।=)
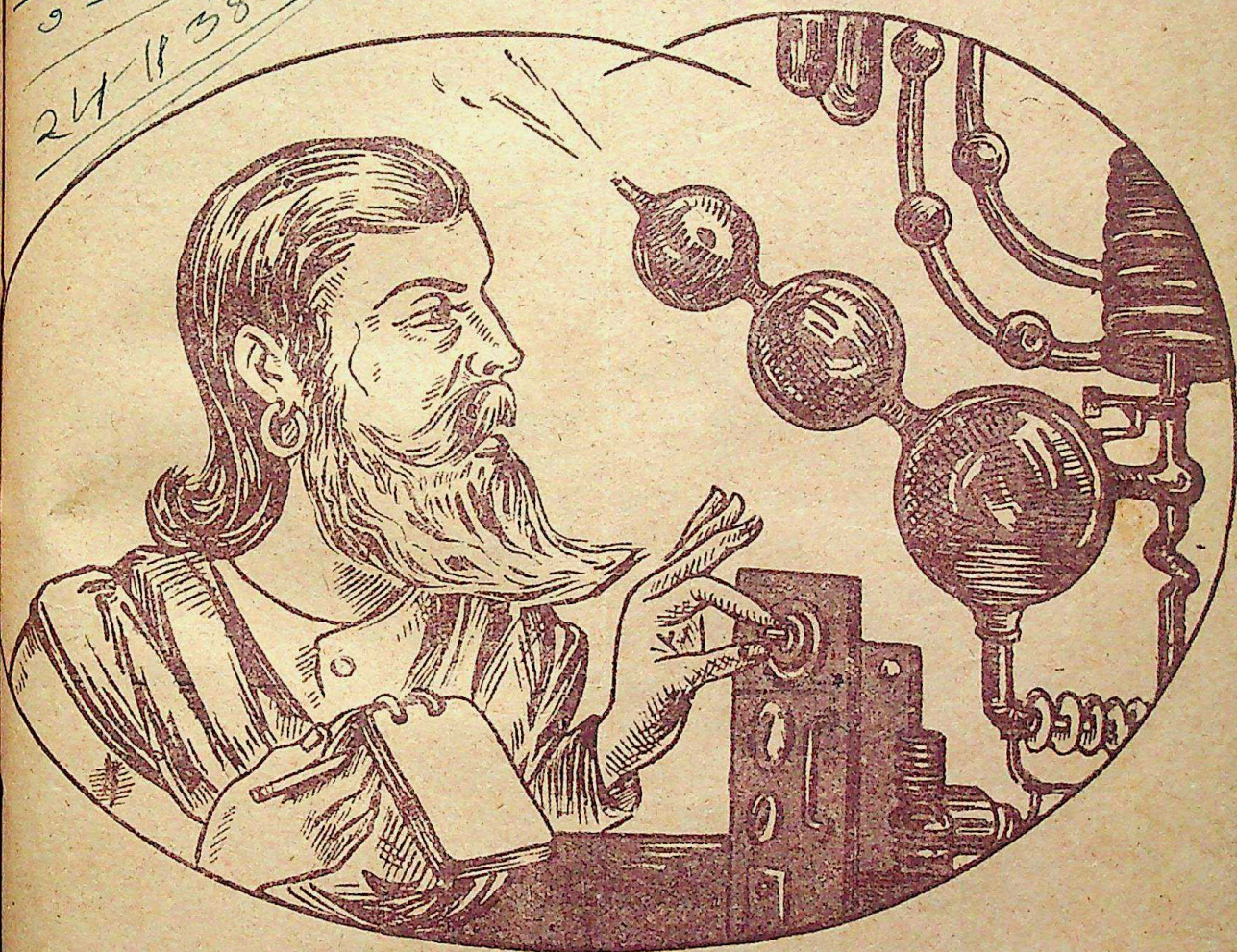
सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा० गणपति सिंह वर्मा

विषय अनुक्रमणिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
महासरस्वती	श्री अरविन्द	९३
आलोचकों को पं० शिवशर्म्मा का उत्तर		९४
वाराह कन्द (गृष्टिका-गेंठी)	श्री कविराज पं० अमरनाथ वैद्य शास्त्री	९५
आयुर्वेद चिकित्सा की महानता	श्री डा० महाबीरशरण अग्रवाल	९६
डॉ० विनयतोष भट्टाचार्य के जीवन की झांकी	श्री प्रपाचार्य	९८
ग्रन्थियां		१०२
बबूल के कुछ अनुपम प्रयोग		१०४
खर्पर के पाश्चात्य प्रयोग		१०७
उत्पत तेलों द्वारा चिकित्सा		११०

अनुभूत योग चिन्तामणि

इसके लेखक ने ५ वर्ष तक लम्बी २ यात्रायें करके संन्यासियों की कठिनतम सेवा और भ्रमण के अथक परिश्रम के अतिरिक्त ५४३५ रुपये खर्च करके जो ५३३ जादुअसर अनुभूत नुस्खे प्राप्त किये थे वह निष्कपट भाव से इस पुस्तक में प्रकाशित कर दिये हैं। भारतवर्ष के सैंकड़ों वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों ने इन सब नुस्खों की पचासों बार परीक्षा करके शत प्रतिशत अनुभूत होने के प्रमाणपत्र दिये हैं जिससे सिद्ध होगया है कि इसमें एक भी ऐसा योग नहीं–जो अनुभूत सिद्ध न हो, सबके सब संन्यासियों के हृदय के गुप्त योग हैं। भारतके गणमान्य हकीमों व वैद्योंका निर्णय है कि जिसके पास यह पुस्तक नहीं, निःसन्देह उसकी चिकित्सा और औषधालय अधूरा है। मूल्य प्रथम भाग पांचवीं आवृति ४।) द्वितीय भाग ४) डा०ख० जुदा।

हिन्दी से अंग्रेजी मैट्रिक

विश्व के ज्ञान, विज्ञान और व्यापार तथा कला-कौशल को सीखने के लिए आज की विश्व-भाषा अंग्रेजी का सीखना सबके लिए जरूरी है। इसको सीखना कोई कोई कठिन भी नहीं है। जिस प्रकार अंग्रेज मातायें अपने बालकों को अपने घरों में ही अंग्रेजी सिखा देती हैं ठीक उसी प्राकृतिक नियमानुसार यह ३२० पृष्ठों की पुस्तक तैयार की गई, जिसे दो घंटा प्रति दिन पढ़ने से केवल हिन्दी पढ़े-लिखे व्यक्ति को भी चार मास में भली प्रकार याद हो जाती है। इसमें ए० बी० सी० डी० से लेकर आवश्यक ग्रामर (व्याकरण) अनुवाद आदि इङ्गलिश की मैट्रिक तक का सब ज्ञान हिन्दी से अंग्रेजी और अंग्रेजीसे हिन्दी में ऐसे सरल और सुबोध ढंग से ४८ पाठों में छपा है कि जिसे केवल अंग्रेजी में मैट्रिक की परीक्षा देने वाले लड़के-लड़कियां निसन्देह पास हो जाते हैं। दसवां संस्करण अभी छपा है। मूल्य ३।।) डाकखरच ।।।)

संन्यासियों की चमत्कारी गुप्त बूटियां

इस पुस्तक में सैंकड़ों ऐसी ही जड़ी–बूटियों के गुप्त रहस्य प्रकट किये गये हैं, जिनकी बदौलत संन्यासियों की धाक जमी हुई है। इनमें से अधिकांश बूटियां वही हैं, जो आपको जंगल, खेत, बागीचों और पंसारियों की दुकानों पर मिल जावेंगी जिनसे आवश्यकता पड़ने पर सिर से पांव तक के समस्त रोगों का इलाज हर जगह प्रत्येक आदमी आसानी से कर धन और यश कमा सकता है। इस पुस्तक के पढ़ लेने के बाद आप के पास रोगियों का तांता बंधा रहेगा। विषय सूची मुफ्त। ४५० पृष्ठ, २ भाग मूल्य ५।।) डा० ख० ।।।)

सिद्ध रसायन

रस-रसायन की जिन कठिन क्रियाओं से वैद्य बन्धु घबराकर उनके दिव्य गुणों से वंचित रह जाते हैं, उन क्रियाओं का लम्बा अनुभव करके विद्वान लेखकने उनका सरल तरीका इस ग्रन्थ में दर्शाया है और साथ ही महान रसायनाचार्य नागार्जुन और अन्य सिद्धों की संचिकाओं के अज्ञात योगों को उनकी गुत्थी सुलझाकर प्रकाशित किया है जिनसे पाठक न केवल काया (काया-कल्प) रंगने में ही सफल होंगे बल्कि स्थिर मति वाले माया (कीमिया) रंगने में भी सफल होंगे। इस प्रकार पाठकों को जहां आर्थिक संकट से मुक्ति मिलेगी वहां असाध्य समझकर छोड़ दिये जाने वाले रोगों के भी सिद्धहस्त चिकित्सक भी बन जावेंगे। इस पुस्तक के कुछेक योगों का दिग्दर्शन करा देने से आपको अनुमान हो जायगा कि यह कितना अपूर्व ग्रन्थ है। यथा–शुद्ध बद्ध और सिद्ध करने वाली दिव्य औषधियां, औद्भिदाम्ल व बूटियां, रस बन्धन, गन्धक को स्थाई करना, बद्ध पारद को सिद्ध बनाना, रजत रंजन (कीमिया) अभ्रक सत की द्रुति, द्रुति से परद बन्धन, वंग स्तम्भन, पारद भस्म रक्तयोगेन ताम्रोद्धार (कीमिया) तांबा और रजत (चांदी) वेधी सिद्ध हरताल, हरिताल कल्प देह व लौह वेधी, सिद्ध हरिताल, तैल, सिद्ध कुचला कल्प, सर्वरोग हर फिटकड़ी रसायन (कल्प) पुरुषों के गुप्त रोगों पर रामबाण सिद्ध खादक, पारद गुटिका बंगवेधी, शिंगरफ मोमियां बनाना, नौसादर तैल, सिद्ध गोरखी जलमुद्रा, सिद्ध गन्धक–एक गिरनारी महात्मा का योग जिसको बनाना अति सरल है और क्षय (T. B.) संग्रहणी जैसे अनेक भयंकर रोगों का सफल इलाज है आदि। इसमें अन्य पुस्तकों की भांति जोड़-तोड़ कर एकत्र की हुई सामग्री नहीं है बल्कि लेखकने जीवनभर का अनुभव बन्द किया है। इसके पाठकोंके लिए लेखकका सदूपरामर्श और सहायता भी सदैव प्रस्तुत रहेगी। मू० ५) पो० ।।।)

पता—रसायन फार्मेसी, ३ दरियागंज, पो० बो० १३२५ देहली

रसायन फार्मेसी देहली का प्रमुख सचित्र मासिक पत्र
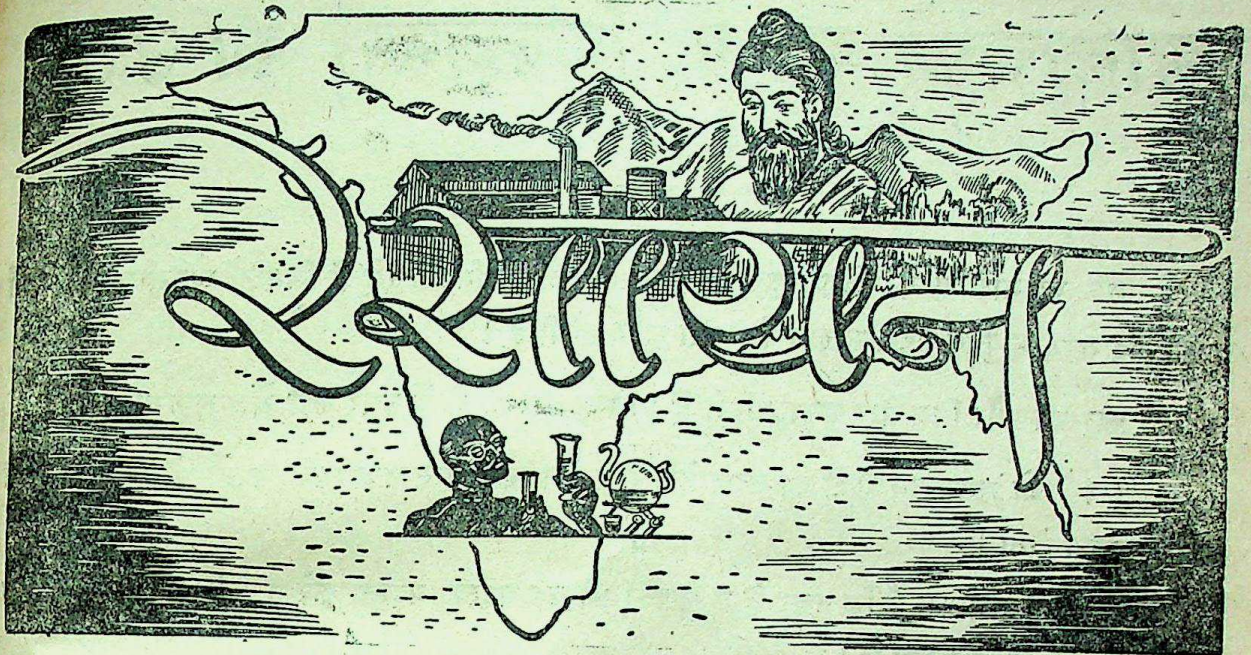
'सिद्ध रसे करिष्यामि, निर्दारिद्रय मयं जगत् ।'

वर्ष ८ | देहली नवम्बर १९५५ | अङ्क ५

❀ महासरस्वती ❀

हमारे लिए जो-जो कुछ आवश्यक हैं उसे जुटा देने देवाली वे माता हैं, संकट काल में सहायता करने वाली सुहृद हैं, धीर गम्भीर मन्त्री और मंत्र दात्री हैं, अपने भास्वर मन्द हास्य से विषाद् अवसाद और खिन्नता के बादल वे छिन्न-भिन्न कर देती हैं, नित्य प्राप्त सहायता की सदा याद दिलाती हैं, अंगुलि-निर्देश करती रहती हैं सदा उस स्थान की ओर जहां सूर्य प्रकाश नित्य वर्तमान है और इस तरह दृढता, अचंचलता और अध्यवसाय के साथ लगी रहती हैं उसी गम्भीर निरवछिन्न प्रेरणा में जो हमें परा प्रकृति की पूर्णता की ओर आगे बढाये चलती है।

—श्री अरविन्द

आलोचकों को पं. शिवशर्म्मा का उत्तर

गत कुछ मास से मेरे विरुद्ध कुछ लेख एक दो पत्रों में निकल रहे हैं जिनके अनुसार मेरे कार्यों से आयुर्वेद तथा आयुर्वेद महासम्मेलन को भारी क्षति पहुँची है।

कुछ पत्र और मित्र मेरा उत्तर मांगते हैं। निम्न कारणों से मैं उत्तर नहीं भेज सकूंगा:—

(१) जो समय इन लेखों का उत्तर देने में लगेगा वह अन्य आवश्यक कार्यों में लगाना कहीं अधिक उपयुक्त होगा।

(२) मैं समझता हूँ कि उत्तर देना लेखकों को वह महत्व प्रदान करेगा जो न तो उन्हें प्राप्त है न आगे होने की संभावना है।

(३) यदि कोई व्यक्ति श्वेतवस्त्र पहिनकर निकले और कोई उसपर कीचड़ फेंक दे तो न तो वह दूसरे पर कीचड़ फेंकता है न वहां बैठकर स्वयं कपड़े धोने लगता है। वह कपड़े धोबी को संभाल देता है। इसी प्रकार मैले लेखों द्वारा धवलयशपर फेंके गये कर्दमको दूर करने का भी सुप्रबंध है ही-न्यायालय।

(४) हमारे सदस्यबंधु दो प्रकार के हैं। एक सत्य जानना चाहते हैं दूसरे तमाशा देखना चाहते हैं। न्यायालय दोनों की इच्छापूर्ति करता है। वहां सत्य का निर्णय भी निश्चयात्मक होता है और हमारे तमाशबीन महारथियों को तमाशा भी अच्छा दीखता है।

(५) व्यक्तिगत रूप से न्यायालय की शरण जाना किसी संस्था को अदालत में घसीटने के तुल्य अपराध नहीं।

इन कारणों से मैंने वह पत्र अपने एडवोकेट को संभाल दिए हैं। वह इन लेखकों को न्यायाधीश के सामने अपने अभियोग सिद्ध करने का पूरा अवसर देंगे। साथ ही यह सुविधा भी होगी कि कार्यालय की जो सामग्री प्राप्त हो सकती है उसे प्रमाण देने के लिए मंगाया जा सकेगा और लेखक यह शिकायत नहीं कर सकेंगे कि उन्हें कार्यालय ने सुविधा नहीं दी।

इसके अतिरिक्त न्यायालय का निर्णय झगड़े को समाप्त कर देता है पत्रों में उत्तर न तो कभी समाप्त होते हैं न कोई ऐसा निर्णय ही होता है जिसे अन्तिम और निश्चयात्मक कहा जा सके।

आशा है यह पग सभी बंधुओं के लिए (जिनमें मैं लेखकों को भी गिनता हूं) संतोषजनक सिद्ध होगा।

६—११—५५ शिवशर्म्मा।

वाराहा कन्द (गृष्टिका-गेंठी)

(लेखक—कविराज पं० अमरनाथ वैद्य शास्त्री, अध्यक्ष वनस्पति औषधालय, देहरादून)

रसायन के अक्तूबरांक में कविराज प्रतापसिंह जी रसायनाचार्य का लेख 'गृष्टिका' के अनुसन्धान विषयक प्रकाशित हुआ उसमें औरोंका अनुभव जानने का भी संकेत था। अतएव मैंने लिखना उचित समझा।

श्री कविराज जी वर्षों से इसकी खोज करते रहे और किसी निघण्टु में भी विवरण न मिला। यह वास्तव में आश्चर्य की बात है। आप मेरे पुराने परिचित हैं और यह भी जानते हैं कि मेरा समस्त जीवन 'वनस्पति अनुसन्धान' में ही व्यतीत होरहा है। यदि मुझ से भी पूछ लेते तो आपका बहुमूल्य समय गृष्टिका के ढूंढभाल में न लगता। मैं तत्काल विवरण सहित मूल द्रव्य भेज देता।

गृष्टिका का पहाडी नाम गेंठी है। इसकी वल्ली विवरण भी ठीक है जैसाकि कविराज जी ने लिखा है। परन्तु इसका विशेष प्रसिद्ध व्यवहारिक नाम आपको विदित न हो सका। तदपि आपने ढूंढभाल कर इसकी बेल वाटिका में लगाली, श्रम सफल हुआ। कविराज जी वर्षों तक हृषिकेश में आयुर्वेद संस्था का संचालन करते रहे हैं, वहां तो यत्रतत्र बाडों में इसकी बेलें छाई हुई मिलती हैं। सब पर्वतीय व्यक्ति इस गेंठी को जानते पहचानते हैं।

देहरादून में तो यह विशेष रूप में प्राप्त होती है। वनस्पति भवन के सामने की बाड में फैली हुई है। जब से मैंने ग्रामीण परिश्रमी व्यक्तियों को बूटियों का परिचय कराया वे प्रतिवर्ष पचासों मन गेंठी मूल कन्द खोदकर लाते और बिक्रय कर लाभ उठा रहे हैं।

प्रसिद्ध नाम

संस्कृत—वाराहीकन्द, हिन्दी—वाराहीकन्द, गेंठी, लैटिन—डायोरकोरिया सेटिका।

अवलोकन कीजिए

१—शालिग्राम निघण्टु भूषण, शाकवर्ग, पृष्ट १४४। २—बृहन्निघण्टु रत्नाकर पृष्ट ५१७। ३—भावप्रकाश पृष्ट ३२५। ४—शालिग्राम निघण्टु भूषण में चित्र पृष्ट ३६।

गुण

भावप्रकाश निघण्टु में—

वाराही पितलाबल्या कट्वीतिक्तारसायनी।
आयुः शुक्राग्नि कृन्मेह, कफ कुष्टानिला पहा॥

राजनिघण्टु में—

वाराही तिक्त कटुका विष पित्त कवावहाय।
कुष्ट मेंह कृमिहरा वृष्याबल्या रसायनी॥

प्रायः इसके चूर्ण का उपयोग पौष्टिक, प्रमेह-नाशक है। कुष्ट, कृमिरोग के लिए अनुभव करने की आवश्यकता है। यदि कोई सज्जन इन रोगों के लिए प्रयोग करना चाहें तो हरा कन्द अथवा सूखा कन्द कटा हुआ भेजा जा सकता है। इसके पत्ते पान की आकृति के होते हैं, बेल में छोटे २ भूरे रंग के फल लगते हैं जो कि दूर से देखने में रुद्राक्ष जैसे प्रतीत होते हैं। वे फल भूमि में गिरकर अंकुरित होकर लता होजाती है। इसके मूल में दो ढाई सेर का कन्द निकलता है। परंच छोटे कन्द अधिक निकलते हैं। ऊपर शूकर जैसे बाल होते हैं, काटने पर दूधिया कुछ पीताभ गूदा निकलता है। ऊपरसे रोमश भूरा छिलका छीलकर अथवा वैसे ही छोटे २ टुकड़े कर सुखाया जाता है। इसकी उत्पति पर्वत प्रदेश में होती है। परंच हिमाच्छादित ऊंचे शिखरों में नहीं मिलता। गृष्टिका कन्द 'श्वेत और भूरालोहित' रंग २ प्रकार के मिलते हैं।

———

आयुर्वेदीय चिकित्सा की महानता

(लेखक—डा० महावीरशरण अग्रवाल १५, दरियागंज, देहली)

सहस्त्रों वर्षों के विदेशी राज के बाद भारत परतंत्रता के बंधन से मुक्त हुआ है। इस स्वतंत्रता का अनुभव उसी समय होगा जिस समय हमारी संस्कृति एवं चिकित्सा प्रणाली में पाश्चात्य प्रभाव में कमी आयेगी।

आज के इस जगत से गर्भ प्रवेश के साथ भोजन एवं दवाईयों की आवश्यकता पड़ने लगती है। ऐसी अवस्था में आयुर्वेद प्रणाली जनसाधारण के लिये श्रेष्ठ एवं कम खर्चे वाली है। एकस्थान में महर्षि सुश्रुत ने लिखा है कि जो भोजन पदार्थ है वही औषधि है।

आयुर्वेद की महान प्रणाली को सृष्टि के जन्मदाता ब्रह्माजीने जन्म दिया था। जिस समय मनुष्य अनेक रोगों के ग्रास में था, उस समय अष्टांग आयुर्वेद को पृथ्वी पर लाया गया। आज वही आयुर्वेद भारत में जीवित है लेकिन सरकारी प्रोत्साहन न मिलने के कारण इसका विकास नहीं हो पा रहा है। ऐसी अवस्था में महर्षि चरक एवं सुश्रुत के महान विचारों पर खोज करने की आवश्यकता है।

आज पृथ्वीपर पांच प्रकार की चिकित्सा प्रणाली है, जिन्हें ऐलोपैथी, होम्योपैथी, साईकोपैथी, नेचरोपैथी और हाईजीजम इन प्रणालियों के विषय पर इस प्रकार कहा जा सकता है।

हेतु विपरीत, व्याधि विपरीत, हेतुसम एवं व्याधिसम औषध, अन्न और विहारका उपयोग शरीर के लिए सुखदायक है। आज की नैचरोपैथी, साईकोपैथी एवं हाईजीजम चिकित्सा आयुर्वेद प्रणाली के काफी समीप है, अन्य दोनों का स्थान आयुर्वेद से भिन्न है।

एक स्थान पर आयुर्वेद ग्रन्थों में लिखा है:

"विनापिभेषजैर्व्याधिः पथ्यादेव निवर्तते।
न तु पथ्यविहीनानां भेषजानां शतैरपि॥"

"पथ्य द्वारा ही रोगी आरोग्य हो सकता है। पथ्यविहीन सैकड़ों औषधियों से भी रोग आराम नहीं हो सकता।"

अन्य शब्दों में कहा जा सकता है कि आयुर्वेद की चिकित्सा अन्न पर काफी आधारित है।

अन्य स्थान पर लिखा है:

प्रयोगः शमयेद् व्याधि यो नैवान्यमुदीरयेत्।
नासौ विशुद्धः शुद्धस्तु शमयेद्यो न कोपयेत्॥

जिस औषधि के प्रयोग से रोगी को शांति होती है एवं जो दूसरी किसी व्याधि को उत्पन्न नहीं करती वही शुद्ध प्रयोग है।

आयुर्वेद का मूलसिद्धांत प्रकृति के अन्न, पानी एवं सदाचार द्वारा अपने जीवन और शरीर को सुरक्षित रखना है। इसी ध्येय पर आयुर्वेद सदा से चलता आ रहा है। इन सिद्धांतों को भारत ने ही अधिक अपनाया है और आज भी इनपर चलता जा रहा है। विष्णुपुराण में एक स्थान पर लिखा है:

तत्रापि भारतं श्रेष्ठं जम्बूद्वीपे महामुने।
यतो हि कर्मभूरेषा ततोऽन्या भोगभूमयः॥

"जगत में भारत ही श्रेष्ठ है, क्योंकि यह कर्म भूमि है। भारत के सिवा सारी भूमि भोग भूमि है।

भारत वर्ष में विशेषकर आयुर्वेद चिकित्सा जनसाधारण में काफी प्रचलित है। क्योकि :

१—आयुर्वेद की औषधियां जड़ी बूटियों द्वारा बनाई जाती है। मुख्यतर इन बूटियों की प्राप्ति भारत एवं आसपास के देशों में हो जाती है।

२—औषधियां सस्ती एवं आसानी से प्राप्त की जा सकती है।

३—द्रव्यों का प्रयोग सम्पूर्ण रूपसे होता है।

४—रोगों की चिकित्सा दोषों के बन्द होने पर ज्ञात न हो तो कुपित दोष का उपशम कर देने से ही हो जाता है।

५—चिकित्सा सत्व, रज एवं तमस प्रधान प्रकृति के आधार पर होता है। पिण्ड ब्रह्माण्ड के न्याय से जो ब्रह्माण्ड व्याप्त तत्व हैं वे ही पिंड में है। इन तत्वों में कमी एवं वृद्धि से ही रोग होता है। अतः सम अवस्था में ले आना ही चिकित्सा है। एक जगह देखने को मिलता है।

कथं शरीरे धातूनां वैषम्यं न भवेदिति।
समानां चानुबन्धः स्यादित्यर्थं क्रियते क्रिया ॥

किस लिये :

रोगस्तु दोषवैषम्यं दोषसाम्यमरोगता।
धातुसाम्यक्रिया चोक्तातन्त्रस्यास्य प्रयोजन्यू ॥

६—आयुर्वेद में शरीर शुद्धि करने के लिए स्नेह, स्वेद, वमन, विरेचन, नस्य, अनुवासन, धूम्रपान आदि क्रियाओं का ज्ञान मिलता है। जिस समय मिथ्या आहार विहार, करने से शरीर में अशुद्धता आ जाती है उस समय इनमें से किसी एक साधन को कार्य में लाने से रोग का निवारण हो सकता।

७—हर प्रकार की औषधियों का ज्ञान आयुर्वेद में जिस सुन्दरता से वर्णित किया है वह अन्य प्रणालियों में कम देखने को मिलता है। वात, पित, कफ का विवेचन अकथनीय है।

आयुर्वेद तप एवं ज्ञान का भंडार है, इससे मनुष्य के शरीर ही की नहीं एवं मानसिक व्याधियों को दूर करने के जो साधन बताये है, उन्हें कार्य रूप में लाना हमारे चिकित्सकों का काम है। क्षय जैसे रोग को रोकने के लिए चारों तरफ कार्य किया जा रहा है। इसके विषय में भी आयुर्वेद का कहना है :

सत्येनाचारयोगेन रविमंडल कसेवया।
वैद्य विप्रार्चनाच्चेन रोगराजो निवर्तते ॥

"सत्यभाषण से, सदाचार से, सूर्य की पूजा से तथा वैद्य एवं ब्राह्मणों की पूजा से रोगराज से निवृत्ति हो सकती है।

डॉ. विनयतोष भट्टाचार्य के जीवन की झांकी

(लेखक—श्री प्रपाचार्य)

पुरी सर्वोदय सम्मेलन के बाद में कलकत्ता गया। वहां पर सुना कि बड़ौदावाले डा० भट्टाचार्य जी निवृत्ति पाकर अपने वतन नई हट्टी (स्यालदा स्टेशन से २५ माइल दूर) में निवास करते हैं। और अपने प्रिय वैज्ञानिक विषय का अन्वेषण कार्य बड़े चाव से आगे चला रहे हैं। इसलिए मैं मौका पाकर एक पुराने स्नेही श्री एन० सी० जाजल के साथ उनके दर्शनार्थ गया।

नई हट्टी में वे उतने सुविख्यात नहीं, जितनी उनके पिताजी की ख्याति है। उनके पिता श्री हरप्रसाद शास्त्री महामहोपाध्याय थे और उनको I. C. S. की उपाधि से सरकार ने विभूषित भी किया था। उनने एशियाटिक सोसाइटी और बंगाल शिक्षा विभाग आदि क्षेत्रों में संशोधन विवेचन आदि के सम्बन्ध में कई महत्वपूर्ण पुस्तकें लिखी थीं।

जब मैं बड़ौदा में एग्रिकल्चर इन्सपेक्टर था, तब डा० विनयतोष बाबू को १६४० से १६४६ के भीतर २-३ बार पुस्तक प्रकाशनार्थ मिला था। उस समय वे डाइरेक्टर आफ ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट थे। इसी हेतु से उनका मुझे परिचय था। वे संस्कृत के विशेष विद्वान् हैं। इसके अतिरिक्त होमियोपैथी, ज्योतिष शास्त्र आदि के भी विशेष अनुभवी है। इतना ही मैं जानता था वे सौम्य, स्निग्ध, विनयमूर्ति हैं, इसका मुझे पहले से अभी विशेष परिचय मिला है।

२६ वर्ष की आयु में वे बड़ौदा में प्रोफेसर और फिर डायरेक्टर बन चुके थे। सद्गत महाराजा सयाजी राव उनसे अति प्रसन्न और प्रभावित थे। वे विनोद में कहते थे कि आप २० वर्ष पूर्व मेरे पास आये होते, तो आपसे मैं अधिकतर लाभ प्राप्त करता।

वे कहते थे कि मैंने मेरे पिताजी की १ आज्ञा सर्वदा शिरोधार्य रखी है, वह यह है कि जो कुछ करो वह मौलिक ही करें। दूसरी आज्ञा महाराजा सयाजी राव की है, "जो कुछ करे, वह प्रेक्टिकल (व्यवहार में आने योग्य) कर दिखायें।

मैं कह सकता हूं कि डा० जी के जीवन रूपी सिक्के पर दो मोहर लगी हुई है। एक ओर मौलिक और दूसरी ओर व्यवहारिक। इसी हेतु से वे जीवन में उतने यशस्वी, मौलिक और आदर्श कार्य कर सके और कर रहे है। वे कहते हैं कि पुस्तक आदि का कार्य किया, वह किस गिनती में, सच्चा अनुभवात्मक कार्य तो अभी हो ही रहा है।

पहले के उनके जीवन के पूर्वार्ध और विद्वत्ता की ओर संक्षेप में लक्ष्य दूं। फिर अद्यतन अन्वेषण सेवा आदि का वृतान्त कहूं। पूर्वार्ध को बायोग्राफिकल एन्साइकलोपिडिया ऑफ दी वर्ल्ड १६४६ (विश्व के विभूतियों का जीवन कोष), नामक ग्रन्थ से उद्धृत करता हूँ।

डाइरेक्टर ऑफ ओरियण्टल इन्स्टीट्यूट, बड़ौदा। जन्म ६-१-६७। डियसीन, बर्द्धवान जिला। श्री हरिप्रसाद शास्त्री और हेमन्त कुमारी देवी के पुत्र। शिक्षा प्राप्ति स्कॉटिश चर्चिज कॉलेज-कलकत्ता। बी० ए० १६१७ में और एम० ए० (गोल्ड मेडलिस्ट)

१९१९ में। ढाका युनिवर्सिटी के प्रथम पी० एच० डी० १९२५ में। विवाह लावण्यमयी देवी से १९२० में। संतान २ पुत्र और ४ पुत्री।

१९२० में बंगाल सरकार के रिसर्च स्कोलर से आरम्भ किया। १९२४ में गायकवाड़ प्राच्य ग्रन्थ माला के मुख्य मन्त्री पद पर नियुक्त हुए। १९२९ तक साथ में संस्कृत अध्यापन कार्य भी करते थे। १९३१ से गुजराती और मराठी पुस्तक प्रकाशन कार्य को भी सम्हाला १९३२ में बम्बई युनिवर्सिटी के अनुस्नातक अध्यापक बने। १९४२ से पी० एच० डी० और भगवान लाल इन्द्रजी सुवर्ण चन्द्रक और पारितोषिक के परीक्षक। १९२७ से प्राच्य विद्यामंदिर के अधिष्ठाता पद से गायकवाड़ प्राच्यग्रन्थ माला में ८० मौलिक ग्रन्थ विभिन्न विषयों पर प्रकाशित किये। १९३३ में अखिल भारतीय प्राच्य परिषद के अधिवेशन के स्थानिक मन्त्री रूप से सेवा कार्य किया। १९२२ में १७ वीं बंग साहित्य परिषद के स्थानिक मन्त्री बने। १९२७ में होमियोपेथी का धर्मार्थ औषधालय स्थापित किया और देश विदेश की कई संमानित संस्थाओं के सदस्य बने। एवं बड़ौदा राज्य की ओर से राज्यरत्न पदवी और सुवर्ण चन्द्रक 'ज्ञान ज्योति' रौप्य चन्द्रक और हीरक महोत्सव चन्द्रक प्राप्त किया।

व्यासंग-फोटोग्राफी, ज्योतिष, रहस्य विद्या, होमियोपेथी, स्थापत्य और चित्रकला आदि में विशेष अनुभव प्राप्त किये। कई लेख निबंध, ग्रंथ आदि विभिन्न विषयों पर लिखकर प्रकाशित किये।

वे निवृति काल में भी प्रवृति परायण हैं। वे कभी थके हुए (Tired) प्रतीत नहीं होते। तब अधिकार निवृत्त (Retired) होने की आवश्यकता ही कहां रहती है ? वे नौजवान को लज्जित करें, उतने स्वस्थ, सबल और उद्यमी हैं। नये उत्साह और प्राण से अपने सेवा संशोधन के व्यासंग पर डटे हैं।

मैंने ३ बार उनके उपदेशामृत के पान का लाभ लिया, जी भर वार्तालाप किया और पेट भर खाया। बिना जल पान कराये वे किसी को थोड़े छोड़ने वाले हैं ? इसी हेतु से हमें अधिक बार जाने में संकोच होता था। इसी प्रकार के आतिथ्य शूर, विनयी यजमान, विशुद्ध, निर्मल प्रेमी मित्र पूज्य और मार्ग दर्शक मिलना महाभाग्य समझता हूँ।

मुझे उनसे होमियोपैथी में प्रवेशदीक्षा भी मिली। फिर भी मैं मंद भाग्य हूँ कि कम से कम ६ मास उनके अन्तवासी बनकर और उनके पास रहकर यथा शक्य लाभ नहीं ले सकता। वे मन्त्र शास्त्री और शास्त्रज्ञ हैं। उनको आयुर्वेद सिद्धान्त का ज्ञान भी अप्रतिम प्राप्त किया है। वे पूज्य नाड़ीवैद्य (नाड़ीविज्ञ) हैं। जिनको नाड़ीज्ञान नहीं है, उनको वे अनाड़ी मानते हैं। कम से कम ३ लाख से अधिक रोगियों की नाड़ी परीक्षा उन्होंने की होगी।

यद्यपि वे आयुर्वेद की चिकित्सा नहीं करते, तथापि आयुर्वेद चिकित्सकों की अपेक्षा अधिकतर ज्ञान विज्ञान संपन्न हैं। इस ज्ञान को उन्होंने होमियोपैथी में सम्मिलित किया है।

उनको होमियोपैथी का अतिविशाल ज्ञान है। इसी हेतु से महाराजा के राज कुटुम्ब, शहर के विख्यात वकील, श्रीमन्त, अधिकारी वर्ग आदि भी उनका लाभ लेते थे। एवं गरीबों की सेवा तो वे हृदय पूर्वक करते थे। वे प्रतिदिन १००० रोगियों को लाभ पहुँचाते रहते थे। "A hero in one, is a hero Throughtout." यह कार्लाइलका सूत्र उनको ठीक लागू होता है।

अनुभवी होमियोपैथ हैं, इतना ही नहीं, वे होमियोपैथी के संशोधक भी हैं। उन्होंने होमियों का साम्य योग (Similissum) के सिद्धान्त के मस्तिष्क पर आयुर्वेद के त्रिदोष के सिद्धान्त को स्थापित करके

आयुर्वेद और होमियों को संलग्न करके पूरी क्रान्ति ला दी है उनकी तर्कशक्ति, धारण शक्ति और धृति प्राचीन महर्षियों के समान हैं।

आयुर्वेद के प्राकृतस्वरूप और भद्दी मात्रा (Crude form & Nastydoses) की बला से छुटकारा दिलाया है। इस तरह आपने होमियो को त्रिदोष सिद्धान्त दिया उनमें मिश्रणों का प्रवेश कराया और आयुर्वेद की भी अद्भुत सेवा की। आगे और अन्वेषण वे कर रहे हैं।

अमरीका में उनकी मौलिक पुस्तक "होमियो में त्रिदोष" प्रकाशित हुई है। उसके गुजराती और हिन्दी अनुवाद करने का कार्य मुझे दिया है। इनमें हिन्दी अनुवाद इस धर्मार्थ औषधालय की ओर से प्रकाशित कराया जायगा।

मिस्र की रेडियो स्थेनिक नजिमी पद्धति से भी निर्णय कराते हैं। उस सिद्धान्त के अनुरूप ५०-६० बोर्ड भी बनाये हैं। उनसे प्रयोग करके लाभ भी उठाते हैं। उन्होंने ज्योतिष शास्त्र की आसान पद्धति और साधन सामग्री का मनन पूर्वक शोध किया है। उस विषय से मैं विशेष परिचित नहीं हूँ। इस हेतु से उस पर अधिक लक्ष्य नहीं दिया। किन्तु वैदिक ज्योतिष (Medical astrology) से जो लाभ मिलसकता है वह अद्भुत है, यह मैं स्वीकार करता हूँ।

प्राचीन नीतिकारोंने कहा है कि:—

यस्यास्ति सद्ग्रन्थ विमर्श भाग्यं,
किं तस्य शुष्कैः चपला विनोदैः॥
उसके स्थान पर मैं कहूंगा कि,
यस्यास्ति संशोधन साधनारुचिः॥
किं तस्य शुष्कैर्धनकीर्ति साधनैः॥

यह अन्वेषण कार्य और जनता की सेवा निष्काम भाव से करते रहते हैं। वे लोकसंग्रही हैं धनसंग्रही नहीं।

उनके सेवा-स्वाध्याय और संशोधन के यशो-मन्दिर के कलश तक तो अब आ रहा हूँ। सबसे श्रेष्ठ नूतन मौलिक और प्रत्यक्ष सेवा और शोध तो है- उनकी टेलिथिराप की चिकित्सा पद्धति।

यह पद्धति उन्होंने शास्त्र के आधार से ही निकाली है। इसमें एक बड़ा बोर्ड रखा गया है उसमें दो सो से अधिक बीमारों के फोटो रखे गये हैं। उनके समक्ष एक मिनट में ३००० चक्कर विद्युत्पंखा लगा रहता है। यह पंखा अपनी उष्णता या बेचैनी को दूर करने के लिए नहीं है। पंखा के पक्ष (Vanes) निकाल लिए हैं; उनके स्थान पर रौप्य मण्डल (Silver disc) में ७-८ छोटे हीरे लगाये हैं। दिन में १२ घण्टे इन हीरों से कोस्मिक रेज किरणों की आरती होती रहती है। इनसे जिन-जिन रोगियों को जो जो रोग हैं, उस की विविध रंगों में आकृति दृष्टि-गोचर होती रहती है छेदित कांच (Prism) से कोई कोई देख सकते हैं।

मैंने उन फोटों पर पड़े हुए सूर्य के सप्तरंगी किरणों का विश्लेषण देखा है। पंखा चलने के कुछ मिनटों में रंग पृथक् भासने लगता है या गहरापन कम हो जाता है। उतना ही नहीं, एक ही व्यक्ति और दूसरे फोटो की दूर-दूर रही हुई जिन-जिन प्रतिलिपियों पर दृष्टि डालेगा, उन सबमें यह रंग परिवर्तन प्रतीत होता है। इसे कोई नजरबंदी का खेल न कहे। यह तो पूर्ण विज्ञान है।

उदाहरणार्थ बड़ौदे के भूत पूर्व प्रो. क. श्रीघाटे जी जो १० वर्ष से हृदय रोग से अति पीड़ित रहते थे, उन्होंने अन्त में डा० भट्टाचार्य जी की शरण ली। फोटो भेजा इस कोस्मिक रेज के उपचार से एक सप्ताह में ही काफी लाभ पहुँच गया।

जूट मिल के सेठ आदमजी की लड़की क्षय रोग से आक्रान्त थी, उन्होंने डा० भट्टाचार्य जी का दरवाजा खटखटाया एक मास के भीतर इसी उपचार से ज्वर आदि निवृत्त हो गये। वे कहते हैं कि जो मारने और जिलाने वाली विश्वशक्ति-(Cosmic Energy), है, उससे सब कुछ बन सकता है। (Cosmic में Chaos) शक्ति उत्पन्न करने की एक यह सरल पद्धति है। उस पंखे के पास देश विदेश के फोटो भी रखे गये हैं। इतना ही नहीं, यह प्रयोग विदेशों में भी करा रहे हैं।

जो रोग असाध्य हैं, उनका तो प्रश्न ही नहीं उठता। किन्तु जो रोग चिरकारी (Chronic) साध्य (सुसाध्य या कष्ट साध्य) हैं, उनको दूर करने के लिए यह विना औषधोपचार, श्रेष्ठ चिकित्सा है।

राष्ट्र की आरोग्य मन्त्राणी क्षय आदि के निरोध के लिए कितनी दौड़ धूप लगा रही है ? उनको ऐसे विज्ञान सिद्ध, प्राकृतिक, दैवी सीधा सादा उपचार नहीं जचेगा। इसे अपने राष्ट्र का दुर्भाग्य समझता हूं। आज भारत के सभ्यगत, जो पाश्चात्य शिक्षा दीक्षा से विभूषित हैं, वे मोह में फंसे हैं।

दिवंगत महाराजा सयाजी राव का फोटो प्रिभ्म से देखने पर उसमें लालरंग का प्रकाश प्रतीत होता है। मृतात्मा, रुग्ण और निरोगी मनुष्यों के फोटो में महदन्तर दिखलाई पड़ता है। छोटी आयु का पुराना फोटो हो, तो भी वर्तमान कालीन विकार के अनुरूप रोगविकार भासते हैं। वृक्ष, दीवार, पशु, पक्षी, आदि को प्रिभ्म से देखते ही उनमें भावी होनहार विकार और वर्तमान स्थिति का सूक्ष्म अन्तर स्पष्ट हो जाता है। जो विना आगामी रोग विपति आदि भी रंगों से विदित हो जाते हैं।

सौ० बहन सुधादेवी (नड़ियाद) के फोटो पर सुधार प्रतीत हो रहा था। वह उसे भी विदित हुआ ही होगा।

मकानों की भी किरणों से चिकित्सा होती है। ३ दिन में ७-८ पीले बिच्छु निकल आये। इस चिकित्सा से फिर शान्ति होती है। ग्रह शान्ति वस्तु आदि विधिविधान के मूल में यही विज्ञान निहित है।

किसी भी व्यक्ति को समक्ष में रखकर प्रिभ्म से उसकी ज्योतिष के राशि, प्रभाव, रोग आदि का परिचय मिल जाता है। यह केवल उन डाक्टर को ही नहीं किन्तु जिनके चक्षु सूक्ष्म और स्थिर हो, उन सबको।

मेरे साथ मेरे यजमान प्रेसिडेन्सी पोस्टमास्टर श्री परीख भी थे। उनको तो अति स्पष्ट अन्तर सह सब कुछ तत्काल दिखलाई पड़ा और उन्होंने समझ भी लिया उनके मुखमण्डल पर चन्द्र का और मेरे पर शनि का रंग भास रहा था।

डाक्टर साहिब को तो इन सब साधन, यन्त्र चालु खर्च की कुछ भी चिन्ता नहीं थी। न वे किसी से सहायता की तनिक भी अपेक्षा रखते हैं। मैं हृदय से राष्ट्र के सहृदयी सपंत्रों को निवेदन करता हूँ कि उनके कार्य को अधिक वेग देने और उन्नत बनाने के लिए सहयोग देकर अपना फर्ज अदा करें।

वे कहते हैं कि धन लाल, काला, पीला, सफेद ४ प्रकार के हैं। मैं तो विशुद्ध ब्राह्मण संतान हूं न ? सफेद धन कहा है। मुझे दूसरे धन से क्या लाभ ? मायिक धन अधर्म का आयगा तो बुद्धिभ्रष्ट करेगा। मैं उनको अर्वाचीन ऋषि मानता हूं।

* ग्रन्थियां *

शरीर में कई प्रकार की ग्रंथियां पाई जाती हैं, उनमें जब विकार प्राप्त हो जाता है तब उससे तमाम नपुन्सकता आदि रोग पैदा हो जाते हैं, इससे उन ग्रन्थियों को कार्य के अनुकूल रखने की आवश्यकता होती है। सुश्रुत संहिता के बाजीकरण प्रकरण में श्लोक नं० ११, १५, १६, १७, १८, २३ के अनुकूल सबूत मिलता है कि नपुंसकता दूर करने के लिये अण्ड खाओ, वीर्य पीवो अथवा उनका प्रयोग करो और शारीरिक सम्पत्ति प्राप्त करो। इसीलिये आजकल ग्लैंड थैरापी Glandtherapy नामक चिकित्सा का आविष्कार किया गया है। इस चिकित्सा में जिस ग्रंथि के बिगड़ने या विकार से जो व्याधि पैदा होजाती है उसी ग्लैंड का सत्व या उससे निर्माण की हुई दवा के प्रयोग से वह व्याधि मिट जाया करती है। नपुंसकतामें ग्लैंड का विकार बहुत भारी क्षति पहुँचाता है, इसलिये साधारणतया उनके द्वारा नपुंसक चिकित्सा क्रम भी सूचित किया जाता है। प्राचीनकालमें आवश्यक ग्लैंड को सेवन किया जाता था, किन्तु आजकल उनका सार निकालकर खिलाया जाता है या हाईपोडरमिक सिरिंज के द्वारा रक्त में पहुँचाया जाता है। जैसे—

अधेड़ अवस्था के बाद प्रोस्टेट ग्रंथि अगर बढ गई हो जिससे मूत्राशयमें प्रदाह होकर मूत्र बार २ आवे साथ ही नपुन्सकता भी पैदा होजाय तो टैबलेट प्रोस्टेट कम्पौंड एक टिकिया दिनमें दो तीन बार उपयोग करना चाहिये। इसी प्रकार से ५५-५६ वर्ष की अवस्था में अंड की खराबीके कारण मस्तिष्क और शरीरकी शक्ति में कमी होकर नपुंसकता हो जावे तो कम्पौंड टैस्टीकोइड टैबलेट का उपयोग करना चाहिये। शरीर में जितने प्रकार की ग्रन्थियां हैं उन सब ग्रंथियों का आपस में सम्बन्ध है। हरएक ग्रन्थि का रस एक दूसरे में आया जाया करता है, इसी से शरीर का सब कारो-बार बराबर संचालन होता है। जब किसी एक में विकार हो जाता है तब रुग्णावस्था प्राप्त होती है।

सन् १८८६ ई० में ब्राडन सीकवार्ड नामक एक युरोपियन ने अंड का सत्व अर्थात् Testacoid शरीर में प्रवेश करके नपुंसकता को दूर किया था, जिससे युवावस्था की सी शक्ति बढ गई थी, तब से यह बात अच्छी तरह से ज्ञात हो गई कि अंड का सत्व प्रवेश होने से युवावस्था टिक जाती है।

(१) जब नपुन्सकता के साथ अन्य लक्षण भी हों जैसे, थकावट बहुत मामूली होती हो तब ऐसे मिश्रण उपयोग में लाये जाते हैं जिनमें एक्सट्रैक्ट थाईराइड १/१० ग्रेन, पीच्युईटरी १/१० ग्रेन, एक्सट्रैक्ट सुप्रोनल $\frac{1}{4}$ ग्रेन, एक्सट्रैक्ट आरकक $\frac{1}{4}$ ग्रेन, नमक १/४ ग्रेन ऐसी ही मात्रा की एक दो, तीन टिकिया दिन में दी जाती हैं।

एक्सट्रैक्ट टैस्टीकोइड नाम से मशहूर है यह नपुंसकों की चिकित्सामें काफी ख्याति प्राप्त कर चुका है। जो स्वतन्त्र या दूसरों के साथ मिलाकर व्यवहार किया जाता है। मिश्रण में निम्नांकित द्रव्य होते हैं। टैस्टीन २५ ग्रेन, प्रोस्टेटीन १५ ग्रेन मिला करके टिकियां बनाई जाया करती हैं।

एक और दवा वेरीलीजन Viriligen के नाम से मशहूर है इसमें निम्नांकित हिस्से पाये जाते हैं। एक्सट्रैक्ट इनटेरीअर पिच्युटरी anteriar pituitary मय सुप्रोनल एक्सट्रैक्ट, एक्सट्रैक्ट मस्तिष्क, एक्स-

ट्रैक्ट स्पाइनल, टैस्टीन, एक या दो टिकिया दिन में ३ बार खिलाना चाहिये।

थाईराइड मिलाकर एक या दो टिकया दिन में ३ बार खिलाना चाहिए अथवा इंजेक्शनके द्वारा व्यवहार कराना चाहिये।

(२) थाईराइड-नामक ग्रन्थि से आयोडोथाइरीन नामक दवा तैयार होती है जिसका असर रक्त संचालन यंत्र मस्तिष्क तथा मस्तिष्क की स्नायुओं और चर्म पर होता है। यह ग्लैंड दो प्रकार का होता है, जिसमें एक को थाईराइड दूसरे को पेराथाइराइड कहते हैं। थाइराइड के सत्वमें आयोडो, थायीरीन में आयोडीन और नाइट्रोजन मिश्रित रहता है। थाइराइड को मदद करने वाली पैराथाइराइड नामक ग्रन्थियां चार होती हैं। जिनको विद्वान लोग स्वतन्त्र मानते हैं, पर ऐसा नहीं है। थाइराइड को काटकर निकाल देनेसे पैराथाइराइड ग्लैंड मोटे होजाते हैं और थाइराइडका भी काम करते हैं। इन दोनों ग्रन्थियों के सत्व की मात्रा जहां तक हो सके कम मात्रा में प्रयोग करना चाहिये। इसके उपयोग से शारीरिक व्यापार बढ़ जाता है। गति व नाड़ी की चाल बढ़ कर भूख लगती है। पाचन शक्ति तेज होकर कब्ज दूर होता है, शरीर का वजन घटता है, तमाम प्रकार का विषाक्त विकार शरीर से निकलकर स्वेद के रूपसे बाहर होजाता है और कमजोरी मिटकर नपुन्सकता दूर हो जाती है। इन ग्रन्थियों के सत्व को उपयोग करते वक्त यह ध्यान रखो कि शरीर में स्थूलता है तो निश्चय ही इस ग्रन्थि से फायदा मिलेगा। इसके द्वारा बनी हुई दवाइयां तैयार मिलती हैं उनको लेकर उपयोग करना चाहिये।

पिच्युईटरी ग्रन्थि-इसका प्रभाव साधारण मांस पेशियों पर पड़ता है। इसके द्वारा पीच्युईट्रीन नामक सत्व तैयार किया जाता है। इसके साथ जब थाइराइड का रस मिल जाता है तो इसका प्रभाव बढ़कर चर्म, उष्णता, जनन अवयवों पर असर करता है। इसी प्रकार सत्व का उपयोग करने से शरीर की उष्णता बढ़ती है। रक्त संचार बढ़ जाता है। हृदय शांत हो जाता है। वृक्क उत्तेजित होकर मूत्रल असर पैदा करते हैं, जो मांस पेशियां काबू में नहीं रहती वह संकुचित हो जाती हैं। चर्म रोग मिटते हैं। शरीर की कमजोरी मिटकर पुरुषत्व प्राप्त होता है। यदि युवावस्था में शरीर कृश हो जाय और पौष्टिक आहार लेने से भी सुधार न हो तो समझ लेना चाहिये कि इस ग्रंथि के सत्वसे अवश्य लाभ होगा। इसकी मात्रा १० ग्रेन है।

(३) सुप्रोनल--इसके द्वारा एड्रीनलीन नामक दवा तैयार होती है जिसका प्रभाव इडा, पिंगला और तंतुओं पर होता है। यह ग्रन्थि शरीरमें दो हुआ करती हैं। इसके सत्व का उपयोग करनेसे रक्त संचालन कार्य ठीक होता है। जिस वक्त पर रक्तका दबाव कम हो, शरीर की उष्णता में कमी हो जाय, मस्तिष्क खाली होकर शिर दर्द हो, पेटका चर्म मोटा होजाय, कमजोरी मालूम पड़े कि शक्ति नहीं है, कोई काम करने का उत्साह न हो, जल्द थकावट पैदा हो तो इसके सत्व से अपूर्व लाभ होता है। रोगी को यह ध्यान रखना चाहिये कि जब ऐसी अवस्था प्राप्त होकर उसके साथ नपुंसकता भी हो तब इस दवा से काम होता है, जिससे सब विकारों के नष्ट होजाने पर पुरुषत्व स्वयं पैदा हो जाया करता है।

(४) पायालो रस-ग्रंथि से सीक्रीटीन नामक सत्व निकाला जाता है जिसका असर केवल आमाशय पर होता है। जब आमाशय में विकार हो तब इसका उपयोग करने से वह विकार नष्ट होकर नपुंसकता मिटती है। इसके अलावा पाचन अंग के कई हिस्से हैं जिससे हरएक के बिगड़नेसे विकार होते हैं इसलिये प्रत्येक अंग का सत्व निकाल कर तैयार किया गया है जिसको उन्ही अंगों के पुष्ट और कार्य सम्पादन में सहायता देने के लिये व्यवहार किया जाता है। जैसे प्लीहा, यकृत आदि के सत्व हैं लेकिन सीक्रोटीन सत्व प्लीहा, यकृत आमाशय तीनों को ठीक करता है। इससे पाचन शक्ति बढ़ करके आहार उत्तमता से हजम होता है। तब शक्ति बढ़कर नपुन्सकता भी मिट जाती है।

बबूल के कुछ अनुपम प्रयोग

परिचय—बबूल के वृक्ष भारत में प्रायः सर्वत्र पैदा होते हैं। ग्रामीण जनता के लिए तो यह अत्यन्त परिचित वृक्ष है। शहर के लोगों में भी जो लोग ग्राम्य अंचलों में गमनागमन करते हैं। इन्हें देख ही पाते हैं। यह लम्बा वृक्ष है और यह कंटीला होता है। इसमें कांटे बहुत होते हैं। गत महायुद्ध में इसके कांटों का प्रयोग चिट्ठियों और सरकारी कागज पत्रों को गूंथनेके लिए आलपीनों की जगह किया गया था। कांटे प्रायः जोड़े में ही रहते हैं। पत्तियों की आकृति छोटी २ और कोमल होती है। इमली की पत्तियों के अपेक्षा इनमें कोमलता अधिक रहती है। इस वृक्ष में चैत के महीने में फलियां प्रगट होती हैं। चैतमें फलियां लगकर ग्रीष्म ऋतु का उत्ताप बढ़नेके साथ पकने लगती हैं। ये फलियां लम्बी और चपटी होती हैं। एक फली में कई बीज माला की भांति लगातार गुंथे रहते हैं। बीज काले रंग के होते हैं। फूल छोटे २ गोल पीत वर्ण के होते हैं। यह अत्यन्त हलके होते हैं। फलियां लम्बाई में तीन से ६–७ इंच की होती है। बीजों से गुंथी हुई फलियां देखने में अतिशय प्रिय मालूम होती है। ग्रामीण कृषक लोग फलियों को विशेषकर गायों या बैलों को खिलाते हैं। जब तक इनके बीज कड़े नहीं हो जाते, तब तक विशेष गुणों से युक्त औषधि के काम में आते हैं। इसका व्यवहार धातुपुष्टि और प्रमेह दूर करने के लिये विशेष रूप से होता है।

सावन-भादों में इस वृक्ष में फूल प्रगट हो जाते हैं। सुनहले पीतवर्ण के फूल नयनों को अत्यन्त मुग्ध कर होते हैं। इन मनोहर पुष्पों से एक प्रकार की सुगन्ध भी निकलती है।

पत्तियां जोड़ेदार और एक ही सीक के दोनों ओर रहती हैं। एक कोमल सींक में लगभग दस बारह जोड़ों में ये रहती है। इमली की पत्तियों से विशेष रूप से मिलती जुलती, परन्तु उनसे बहुत अधिक मुलायम और हलकी होती है।

बबूल की लकड़ी का ईंधन बहुत ही उपयोगी और आराम देने वाला होता है। इस वृक्ष की लकड़ी की विशेषता यह है कि कुछ गीली रहने पर भी जलने में देर नहीं लगती। अर्थात् ईंधन के रूप में इसकी लकड़ी जलाने में कष्ट नहीं होता कुछ भीगी या गीली रहने पर भी इसमें आग पकड़ जाती है। किसान लोग हल आदि उपयोगी कृषि के सामान भी इसकी लकड़ी से तैयार करते हैं। इसकी काटेदार झाड़ियों या डालियों से खेतोंके घेरे भी तैयार किये जाते हैं। खेतोंकी सुरक्षा के लिये वे कटीली डालियां विशेष उपयोगी होती है।

बबूल के विभिन्न अंगों के गुण दोष परिचय पत्ते मलरोधक, रुचिबर्धं, कसेले, चरपरे होते हैं। इसमें वात, कास, प्रमेह तथा कफ को दूर करने के गुण विद्यमान है। इनसे अर्श रोग में भी लाभ होता है। रक्तातिसार रोग को दूर करने में भी वैद्य लोग इनका प्रयोग करते हैं।

फलियां—कसैली, रूखी, मल-वीर्य अवरोधक और कफ-पित्त नाशक होती है।

फूल—सूगन्धदायक, रक्त-पित्त नाशक, ज्वर नाशक, प्रमेह और अर्श को दूर करने में सहायक होते हैं।

कांटे—हिक्का के दोष निवारण करने में अक्सीर होते हैं।

वल्कल—बबूल वृक्ष का वल्कल कृमिनाशक और विषनाशक है। चमड़ा रंगने के काम में इसके क्वाथ का प्रयोग विशेषरूप से होता है वल्कल का क्वाथ औषधि रूपमें व्यवहृत होता है। एलोपैथ डाक्टर इसके क्वाथ को डीकाकशन आफ अकेशिया बार्क कहते।

गोंद—बबूल का गोंद भी बहुत उपयोगी होता है। यह मलरोधक, वातपित्तनाशक, रक्तपित्त प्रमेह दूर करने में हितकर, वीर्यवर्धक और पुष्टि कारक होता है, प्रमेह और उदर रोग को भी यह नष्ट करता है। संस्कृत आयुर्वेद के ग्रन्थों में बबूल के ये नाम वर्णित हैं—

बबूल, युगलाक्ष, कण्टालु, तीक्ष्णकंटक, गोशृङ्ग, शंकिवाज, दीर्घकण्टक, कफान्तकृत, दृढ़बीज, अजभक्ष, बर्बुर, किंकिरात, पीतक, पीत पुष्पक, मालाफल, बब्बूल, युग्मकण्टक, दृढ़रुहा, कण्टकी, सूक्ष्मपत्र, पीतपुष्प, कषायक। ये सभी नाम अपने अर्थ के लिये प्रसिद्ध है। अर्थात् कफ नाशक गुण रखने के कारण इसको कफान्तकृत कहते हैं। इसके फूल पीतवर्ण के होते हैं, इसकारण आचार्यों ने पीतपुष्पक नाम रखा है। इसके कांटे युग्म होते हैं इस कारण युग्म कण्टक नाम पड़ गया है। यह बहुत बलवान वृक्ष है, इस हेतु दृढ़रुह कहलाता है। इसकी पत्तियां बहुत सूक्ष्म होती हैं, इस कारण सूक्ष्मपत्र नाम पड़ा है। इसी प्रकार सभी नाम अर्थद्योतक हैं।

विभिन्न भाषाओं के नाम

संस्कृत—बबूल, अजाभक्ष, दीर्घकंटक, युगलाक्ष आदि। हिन्दी—बबूल, कीकर। बङ्गाली—बावला। मराठी—बाबूल। गुजराती—बावल। तेलगू—बर्बुरम् नल्लातुम्मा। तामिल—इरमानगंडम्। अरबी—अम्मूगिलान। अंग्रेजी—अकाशिया ट्री। लैटिन—अकाशिया अराबिका।

विभिन्न रोगों में बबूल की उपयोगित

क्षयरोग में—बब्बूलारिष्ट, बब्बूलासव—१२८ सेर जल में १२ सेर बबूल की छाल डालकर मंद आंच पर पकाइये। जब पकते पकते क्वाथ का ३२ सेर शेष रह जाये तब उतार लें। फिर इसमें १८॥ सेर गुड़ मिला दें। इसके बाद धाय के फूल १ सेर, पीपल १० तोला फिर जायफल, लवंग, कंकोल, इलायची, दालचीनी पत्रज, नागकेसर मिर्च १-१ छटांक लाकर इसमें मिलादें अन्त में बरतन को (मिट्टी के घड़े को) अच्छी तरह बन्द करदें। एक मास तक निभृत स्थान में पड़ा रहने दें। फिर इस औषधि को छानकर बोतलों में भर कर यत्न पूर्वक रखदें। इस औषधि के सेवन से क्षय, कुष्ठ, अतिसार, प्रमेह, खांसी, श्वांस रोगों का नाश होता है।

जलोदर की महौषधि—बबूल की छाल एकत्र कर तौल डालिये। उसका आठ गुना जल किसी बरतन में रखकर उसी बरतन में छाल डालकर मन्द २ आंच पर काढ़ा पकावें जब आठवां हिस्सा शेष रहे, तब उतार कर छान डालें। छान लेने के बाद आग पर पकाकर कुछ और गाढ़ा बनादें। मट्ठे के साथ इसका सेवन कराना चाहिये। केवल मट्ठा ही भोजन के काम में लायें। इस प्रयोग से जलोदर रोग अच्छा हो जाता है।

अर्शनाशक चूर्ण—बबूल की कच्ची मुलायम फलियों को जिनमें बीज पैदा न हुये हों, एकत्र कर छाया में सुखा डालिये। सूख जाने पर उन्हें खूब बारीक पीसकर यत्न पूर्वक रखलें। इस चूर्ण को अर्श नाशक चूर्ण कहते हैं।

सेवनविधि—मात्रा—६ माशे। अनुपान—ताजा जल। खूनी बादी दोनों प्रकार की बवासीर इससे अच्छी हो जाती है।

बबूल की पत्तियों और कुकुरोंधे की पत्तियों को समान भाग लेकर कुचल डालें और सेवन करें उसे ही मस्सों पर लगावें बहुत लाभ होगा।

मूत्रावरोध दूर करने के लिये—बबूल की पत्तियां १ तोला, गोखुरू १ तोला, कलमीशोरा ६ मा० जल के साथ अच्छी तरह घोंट डालें, इसे ही रोगी को पिलावें। इस उपचार से मूत्र की रुकावट खुल जाता है।

सूजाक की जलन दूर करने के लिये—सुजाक की जलन अथवा मूत्राशय की जलन और सुजाक दूर करने का उपाय यह है कि बबूबल के गोंद को जल की पिचकारी देवे, पिचकारी देने से ये सारी शिकायतें दूर हो जायेंगी।

मूत्रकृच्छता नष्ट करने के लिये—एक तोला बबूल की कोंपल के साथ १ तोला गोखुरू का रस पीने से मूत्रकृच्छता का नाश हो जाता है।

अंतड़ियों की पीड़ा दूर करने में—बबूल के गोंद का पानी पीना आमाशय और अंतड़ियों की पीड़ा को दूर करता है। इसके अतिरिक्त इस उपचार से अतिसार और रक्तातिसार भी दूर होता है।

बलवर्धक सरल प्रयोग—बबूल के गोंद का लडडू खाना बलबर्धक योग है। गोंद को घी में भूनकर शकर मिलाकर लड्डू बनालें। प्रसूता स्त्री के लिये इसका प्रयोग और भी हितकर होता है।

वीर्य स्तम्भक योग—बबूल की कच्ची फलियों को सुखाकर चूर्ण बनावें। दुगुनी मात्रा में मिश्री मिलाकर सेवन करें। दूध के साथ तीन-चार मास इसका सेवन करने से वीर्यस्तम्भन होता है।

वीर्य पुष्टिकर योग—एक गज मोटा कपडा (विशेषतः खादी) लाकर इस प्रकार फैला रखें जिसमें कोई सिकुडन न रहे। इसके बाद बबूल की कच्ची नरम फलियों से रस निकाल कर उस कपडे के ऊपर लेप करें। प्रातःकाल और सन्ध्या को प्रतिदिन ऐसा ही करते रहें। लगातार २० दिन तक ऐसा करने के बाद जब कपड़े पर दो अंगुल का मोटा लेप जम जाय तब उस कपड़े में ५-६ माशे तक वजन का कपड़ा काटकर एक सेर गाय के दूध में पकावें मिश्री मिलाकर रोगी को पिलावें। इस प्रयोग से स्तम्भन शक्ति बढती है। इस दवा से स्त्रियों का श्वेत प्रदर दूर होजाता है और योनि अत्यन्त संकुचित हो जाती है।

सूजाक का कष्ट दूर करने के लिए—बबूल की कोमल कोपल रात्रि में जल में भिगोदें। दूसरे दिन प्रातःकाल उस जल को छानकर पीजावें इस उपचार से जलन शांत हो जायगी।

सूजाक नाशक योग—बबूल की पत्तियां तीन तोला परिमाण में लेकर जल में भिगोदें। दूसरे दिन प्रातःकाल उसे छान डालें तत्पश्चात घी दो तोले की मात्रा में गरम करके उसके साथ मिलादें और रोगी को पिलादें। इसी विधि से दूसरे और तीसरे दिन भी पीना चाहिये। चौथे दिन अनुपान की शीतल ही रखें ठण्डा रहने की ही हालत में पी जावें। इस उपचार से सूजाक निर्मूल हो जायगी।

सूजाक नाशक अन्य प्रयोग—बबूल की [illegible] नरम पत्तियों को लेकर, उसके साथ शकर और काली मिर्च मिलादें, फिर इन तीनों को पीसकर छान डालें और रोगी को पिलावें। सूजाक नष्ट करने का यह [illegible] उत्तम प्रयोग है।

मधुमेह नष्ट करने के लिए—मधुमेह दूर करने के लिए बबूल का गोंद कुछ दिन नियम के साथ सेवन करने से मधुमेह में विशेष उपकार होता है।

प्रमेह नाशक योग—बबूलके पांचों अंग-पत्ते, फूल, फल, छाल और गोंद एकत्र कर (समान परिमाण में संग्रह करें) छाया में सुखालें। सूख जाने पर इन्हें बारीक पीस डालें। सबको एक में मिला रखें। इस दवा को अल्प मात्रा में प्रतिदिन नियम के साथ कुछ दिन सेवन करने से प्रमेह रोग नष्ट होजाता है।

क्रमशः

खर्पर के पाश्चात्य प्रयोग

खर्पर मलहर

खर्पर (Calamine) ३५ ग्रेन, लैनोलीन ३५ ग्रेन, आलिव आयल या साफ तिल का तेल सवा तोला, चूने का साफ नितरा हुआ पानी ढाई तोला लेवे। पहले खर्पर और लैनोलीन को साफ पत्थर के खरल में डालकर घोटे फिर थोडा २ साफ चूने का पानी डालकर घोटे। इस प्रकार सुन्दर गुलाबी साधारण ढीला मल्हम तैयार होता है। चाहें तो कुछ बून्द कार्बोलिक एसिड डालकर भी घोट दें। सब प्रकार की खुजली, चट्टे, विसर्प, पामा (एकजिमा), गरमी के चट्टे, दाद आदि नाश करने में यह मल्हम उपयोगी है। एक बारीक मलमल के कपड़े में मल्हम लगाकर घाव की जगह रखे। चर्मरोग नाश करने में यह लासानी है। एलोपैथी में इसे ओइली कैलेमाइन लिनमेंट (स्नेहयुक्त खर्पर मलहर) कहते हैं।

कैलामिना प्रिपरेटा

प्रिपेयर्ड कैलामिन अथवा लेपिस कैलामिनेरिस प्रिपरेटा) खनिज खर्पर (कार्बोनेट आफ जिंक) को मिट्टी के बन्दमूषा में रख मन्द आंचसे भस्मकर चूर्ण बनालें। इलिडट्रियेशन धौत क्रिया से धोकर बड़े २ टुकड़े उसमें से अलग करले। यह कुछ ललाई लिए हुए धूम्र वर्ण होता है। गन्धक द्राव या अन्य किसी द्राव में डालकर हिलाने से मिल जाता है। मल्हम बनाने के काम आता है। एक भाग कैलोमाइन को पांच भाग बेजोयेटेड लार्ड में अच्छी तरह मिलाकर तैयार करे। स्त्रियों के स्तनक्षत में यों ही बुरका देने से या मल्हम रूप में लगाने से लाभ होता है। अनेक प्रकार के घावों में इसका मल्हम उपयोगी होता है। बड़े घाव में इसे लगाने से मवाद को सुखाता है, घाव में अंकुर पैदा करता है और आकुंचन कर घाव भरता है। पामा एगजिमा में व्यवहार किया जाता है। इससे सिरेट आफ कैलामाइन (सिरेटम कैलामिनी) नामक मल्हम भी तैयार करते हैं। जिसे टार्नास सिरेट भी कहते हैं। कैलामाइन १५ तोला, पीलीमोम १५ तोला, आलिव आयल (अलसी या तिल का तेल) ४० तोला गरमाकर मिला लेवे। आग से जले हुए स्थान पर लगाने से बड़ा लाभ करता है। लिनिमेण्टम् कैलामिनी (लिनीमेंट आफ कैलामाइन) नामक लेप तैयार करने के लिए प्रिपेयर्ड कैलामाइन २० ग्रेन, आक्साइड आफ जिंक (खर्पर) १५ ग्रेन, चूने का पानी ४ ड्राम, आलिवआयल पौन औंस लेकर सबको मिलाकर तैयार कर भरलें। जिस प्रकार खर्पर मलहर का प्रयोग है, उसी तरह इसका प्रयोग करें। लोसियोकैलामिनी (सौल्यूशन आफ कैलामाइन) तैयार करने के लिए पिसा हुआ कैलामाइन ४० ग्रेन, खर्पर (आक्साइड आफ जिंक) २० ग्रेन, ग्लिसरीन २० मिनिम, गुलाबजल लगभग दो तोला लेवे। पहले खरल में कैलामिन और आक्साइड आफ जिंक घोटे और गुलाबजल या साधारण जल धीरे २ छोड़ता जाय। छोड़ने के बाद इसे दूसरे चौड़े मुंह की शीशीमें रख ग्लिसरीन मिला देवे। पामा (एकजिमा) और लाल धब्बे में लगाने से लाभ होता है। मुखमण्डल की झांई और युवानपिटिका में उपयोगी है।

जिंक सलफेट (श्वेत तुत्थ)

इसे व्हाइट विट्रियाल, जिंकविट्रियाल तथा जिंक सलफेट भी कहते हैं। संस्कृत में गन्धसारिक यशद, श्वेततुत्थ और हिन्दी में सफेद तूतिया कहते हैं।

अफगानिस्तान में जाक कहते हैं। ग्रैन्यूलेटेडजिंक १६ औंस, गन्धक द्रावक १२ औंस, परिस्रुतजल ४ पाइण्ट, खर्पर (कार्बोनेट आफ जिंक) सवातोला, यशद (जिंकम ग्रैन्यूलेटेड) चीनी बर्तन में रख, गन्धक द्रावक को परिश्रुत जल में मिलाकर यशदमें ढाल देवे। जब उबाल बन्द हो तब मन्द आंच में उसे गरम करे। इस द्रवमें लौह का अंश है या नहीं इसकी जांच के लिए इसमें कुछ बून्द अमोनिया और फिर साल्फ हाइड्रेट आफ अमोनियम में डाले। यदि लौह होगा तो पात्र के नीचे काले रंग का पदार्थ बैठ जायगा। लौह की वर्तमानता होने पर उस द्रव को एक गैलन बोतल में शोषक कागज द्वारा छान लेवे। उसे हिलाते हुए उसमें थोड़ा थोड़ा क्लोरिन तब तक मिलावें जब तक उस द्रव में क्लोरिन की गन्ध आजाय। फिर हिलाते हुए कार्बोनेट आफ जिंक (खर्पर) उसमें मिलावें। जब पात्र के नीचे ईषतलाल-पाटलवर्ण आने लगे तब उसे रखदें। दाना नीचे जमने पर द्रव छानकर मन्द आंच में उसे गाढा करे। जब उसमें मलाई सी पड़ने लगे तब रख दे। दाना बंधने पर शोषक कागज पर रख सुखालें। पहले वाले द्रव को फिर गरमा कर दाना निकाल ले। इस प्रक्रिया से यशद धातु जल के आक्सिजन से मिलकर आक्साइड आफ जिंक बनती है। इसके बाद गन्धक द्रावक के सहयोग से सलफेट आफ जिंक बनती है। जलस्थित हाईड्रोजन वायु ताप पाकर निकल जाता है। क्लोरिन मिलाने का उद्देश्य यह है कि यशद के साथ यदि लौह, मैंगनीज या टिन सीसा हो तो उसका भी पाराक्साइड होजाय। इसके बाद कार्बोनेट आफ जिंक के द्वारा पाराक्साइड नीचे बैठ जाता है। यह श्वेत तूतिया वर्णहीन साफ छोटे दानेदार होता है। इसकी बनावट के सम्बन्ध में डाक्टर वामन गणेश देसाई ने लिखा है कि पाषाणभस्मक (ब्लेण्ड या जिंक सलफाइड) कूटकर मन्द आंच में तपावें, इससे वायु का प्राणवायु जिंकसलफाइड के गन्ध से मिलकर सलफर टेट्रा आक्साइड बनता है। यह यशद से मिलकर जिंक सलफेट बनता है। फिर सब पानी में मिल जाते हैं। सलफेट पानी में घुल जाता है इसलिए पानी छानकर सुखा लिया जाता है। देखनेमें एकजालिक एसिड और एपसमसलफेट के दानों के समान होते हैं। इसमें भेद यह है कि सलफेट आफ जिंक का स्वाद कषाय धातु के समान और एकजालिक एसिड का स्वाद अम्ल होता है। एलोपैथी में जुलाब के लिए जो एपसमसाल्ट प्रयोग होता है वह भी इसी के समान होता है, किन्तु एपसमसाल्ट का आस्वाद तिक्त होता है। सल्फेट आफ जिंक पानी में घुल जाता है; परन्तु सुराबीज में अ नहीं होता। इसके द्रव में यदि हाइड्रो सलफ्यूरेट आफ अमोनिया और क्लोराइड आफ बेरियम डाला जाय तो सफेद होकर नीचे जम जाता है। आग की उष्णता से यह गलता है। इसके बाद जल सूखने पर सफेद मैला चूर्ण निकलता है। अधिक गर्मी पाने से इसके उपादान अलग होजाते हैं। इसमें रासायनिक उपादान आक्साइड आफ जिंक एक भाग, गन्धक द्रावक एक भाग और जल ७ भाग रहता है। क्षार अथवा क्षार कार्बोनेट तथा सीस शर्करा, एवं नाइट्रेट आफ सिलवर से मिलता नहीं है। उद्भिज संकोचक है। मात्रा आधी रत्ती से डेढ रत्ती तक बलकारक होती है। यदि इससे अधिक ५ से १५ रत्ती तक दिया जाय तो वमनकारक होता है।

इसकी क्रिया

अल्प मात्रामें संकोचक स्नायु और नाड़ियों को बलकारक, आक्षेप निवारक और अधिक मात्रा में प्रदाह कारक और विषक्रिया करने वाली है। इसके द्वारा शीघ्र और अनायास वमन हो जाता है। वमन के कारण दुर्बलता अथवा ग्लानि नहीं होती। वाह्य प्रयोग में संकोचक, उत्तेजक और दाहक है। दाहक्रिया के लिए दग्धसलफेट आफ जिंक जहां व्रत न हो वहां

निर्जल गन्धक द्रावक के साथ मिलाकर लगावे, किन्तु क्षत स्थान पर दग्ध सलफेट आफ जिंक ग्लिसरीन मिलाकर लगाते हैं। विषबाधा होने पर वमन के लिए सलफेट आफ जिंक १० रत्ती से १५ रत्ती तक गरम जल में घोलकर दिया जाय तो तुरन्त बिना कष्ट के वमन होता है। (२) कम्परोग में—इसे देने से स्नायुओं को बल मिलता है। आक्षेप निवारणके लिए भी इसका अच्छा उपयोग होता है। अल्पमात्रा से आरम्भ कर आवश्यकतानुसार ३ माशे तक भी दिन में ३ बार दे दे सकते हैं। (३) मृगी रोग में—इससे उपकार होता है। किन्तु वेलिरियेनेट आफ जिंक इससे अधिक उपकारी होता है। (४) योषापस्मार—यदि जोरदार न हो तो और दुर्बलता के कारण हिस्टीरिया हो तो लौह की अपेक्षा यह स्त्रियों के लिए अधिक अनुकूल रहता है। दिन में दो-तीन बार आधी आधी रत्ती की मात्रा से डाक्टर लोग जेनशियन के सार के साथ देते हैं। (५) काली खांसी—कुकुरखांसी (हूपिंग कफ) के विकार में रोगी की अवस्था के विचार से अन्दाज आधी रत्ती श्वेत तूतिया पौन चावल १/६ ग्रेन वेलाडोना के रस के साथ देना चाहिये। (६) स्वर भंग-रोग में इसका द्रव बनाकर देना अच्छा रहता है। (७) क्षय रोग में—जब रात में पसीना अधिक आता है तब सलफेट आफ जिंक १ ग्रेन, एक्सट्रैक्ट आफ हाइपोसायमस ४ ग्रेन मिलाकर गोली बनाकर रात को सोते समय देवे। (८) श्वास नली के पुरातन प्रदाह और शोथ में खांसी रोकने और कफ कम करने के लिए सलफेट आफ जिंक १ ग्रेन, एक्सट्रैक्ट कोनियाई ४ ग्रेन मिलाकर दिन में तीन गोली देवे। श्वासनलिका के नवीन प्रदाह में—जब श्वास नलिका कफ से भरी हो तब कफ निकालने के लिए १० रत्ती सलफेट आफ जिंक देने से वमन होकर कफ निकलता है। (९) हृत्पिण्ड के द्विकपोटीय पीडा में—यदि हृत्कम्पन भी होता हो तो कपूर और हाइपोसायसमस के साथ मिलाकर श्वेततुत्थ देवें। १०—छाती की पीड़ा और श्वासकास में उचित अनुपान के साथ श्वेततुत्थ देवे। (११) पारी के बुखार और मन्थर ज्वर में—नाडी दौर्बल्य और मन की बेचैनी दूर करने के लिए श्वेत तुत्थ का उपयोग होता है। (१२) उदराध्मान और कोष्ठबद्ध विकार में सलफेट आफ जिंक १८ ग्रेन, अफीम ३ ग्रेन लेकर गोंद के पानी से ६ गोली बनाकर दिन में ४-५ बार एक-एक गोली देवे। इसके बाद अफीमके बदले रेवन्द चीनीके सत्व (उसारा रेवन्द) के साथ देवे। (१३) उदरामय और अतीसार में इपेकाकुयाना और अफीम मिलाकर श्वेततुत्थ देवे। (१४) तालुग्रन्थि (टानसिलाइटिस)—में यदि मवाद आगया हो और ग्रन्थि में अस्त्र प्रयोग न हो सकता हो तो वमन कारक मात्रा में सलफेट आफ जिंक देवे। उससे वमन के वेग से ग्रन्थि फट जायगी और मवाद निकल जायगा। प्रथमावस्था में देने से रोग बढ़ता नहीं है। (१५) आंखों की जलन और शोथ में एक औंस परिश्रुत जल में ४ ग्रेन श्वेततुत्थ मिलाकर आंख धोवें। इसमें ग्लिसरीन भी मिला देने से अधिक लाभ होता है। (१६) पूयप्रमेह—सुजाक में १ औंस परिश्रुत जल में १ से ५ ग्रेन तक श्वेततुत्थ मिलाकर पिचकारी देवे। थोड़ा ग्लिसरीन भी मिलादे तो अधिक उपकार होता है। इसमें लोशियोसलफेटम की पिचकारी अधिक लाभदायक है। सलफेट आफ जिंक ३० ग्रेन, फिटकरी ३० ग्रेन, हीराकस २० ग्रेन, तूतिया १ ग्रेन, पानी ८ औंस मिलाकर जो द्रव तैयार होता है उसे लोशियो सलफेटम कहते हैं। श्वेत प्रदर में भी यही पिचकारी लाभदायक होती है। (१८) मुखपाक और मुखक्षत में—१० ग्रेन सलफेट आफ जिंक सवा तोले मधु में मिलाकर दिन में तीन बार लगाने से लाभ होता है।

उत्पत तेलों के द्वारा चिकित्सा

भारत सरकार की वन अनुसन्धान शाला देहरादून में ६ से ६ अक्तूबर तक एक उत्पत तैल संगोष्ठी तथा प्रदर्शनी हुई थी। भारत सरकार 'कौंसिल ऑफ साइन्टिफिक एण्ड इण्डस्ट्रियल' नामक संस्था के तत्वावधान में यह संगोष्ठी आयोजित की गई थी- भारत तथा विदेशों के भी चुने हुए लगभग सौ प्रतिनिधियों ने इस संगोष्ठी में भाग लिया। संगोष्ठी में प्रतिनिधि रूप में गये हुए श्री रामेश वेदी ने आयुर्वेद में उत्पत तेलों द्वारा चिकित्सा करने की प्रभावशाली पद्धति पर प्रकाश डाला। श्री वेदी ने बताया कि लहसुन आदि के उत्पत तेलों (एसेन्शियल ऑयल्स) से अनेक दुःसाध्य रोगों की चिकित्सा आयुर्वेदिक पद्धतिमें हजारों सालों से की जा रही है। वैज्ञानिक जगत के लिए इस दिशा में अनुसन्धान करनेके हेतु पर्याप्त चेत्र हैं। इसके अतिरिक्त आयुर्वेद की संहिताओं में बहुत सी ऐसी सुगन्धों का वर्णन आता है जो हृद्य और आल्हादकारी हैं हमारे देश में सुरभियों (एसेन्शियल ऑयल्स) पर काम करने वाले वैज्ञानिकों तथा उद्योगपतियों के अनुसन्धान करने के लिए वे सैंकडों पोदे बडे आकर्षक के विषय सिद्ध होंगे। वैज्ञानिकों द्वारा आयोजित प्रदर्शनी में आयुर्वेद के अनेक पौदे, सुगन्धें, चित्र, चार्ट, सारणियां आदि दिखाये गये थे। उत्पत तेलों पर देश विदेश में प्रकाशित साहित्य एक कक्षमें रखा गया था। आयुर्वेदीय जगत के लिए यह प्रसन्नता का समाचार है कि प्रदर्शनीके संयोजक डा० सद्गोपाल डी० एस० सी० ने इस कक्ष में इस विषय की आयुर्वेदीय पुस्तकों का संग्रह किया था। उत्पत तेल धारण करने वाले लहसुन, सौंठ, नीम, तुलसी आदि पौदों पर श्री रामेश वेदी के ग्रन्थों का प्रदर्शन एक महत्वपूर्ण बात थी जिससे आयुर्वेद का गौरव प्रकट होता था। वैज्ञानिक प्रतिनिधियों उद्योगपतियों और दर्शकों ने इसमें बहुत रुचि दिखाई।

—सम्वाददाता

कृष्णराव

गुरुकुल कांगडी, हरिद्वार

चांदी का रुपया भस्म

यदि आपको पूरा कोटा बूंदी का रुपया फूंकना है तो पहिले ३६० बुझावा मूतवलेरन (इन्द्रायन) के फल के गूदे के रस में दे और बाद पांच २ रुपये पाव भर इन्द्रायन के फल के गूदे में बन्द कर कपरोटी कर दें और सुखावें बाद १० सेर ऊपले यानी कन्डे में फूकदें इस तरह ६ वार फूंकें तो सावित रुपया सफेद फुंका हुआ मिलेगा और रुपये पर हरफ ज्यों के त्यों दिखाई देगे इसमें ४ दिन बुझावे के ६ दिन फूंकने के कुल १३ दिन लगते हैं जिसमें बहुत नामी चांदी भस्म होती है और इस भस्म से अगर भाग सीधा हो तो तांवा गला कर उसमें डालने से तांवा पीला हो जाता है। फिर दूसरा सरल उपाय देखे चांदी के तीन तीन रत्ती के टुकड़े कराकर इंच भर पत्तर करालें हो सके तो इस चांदी के पहिले उपरोक्त, रस के पांच पचास बुझावे देले और बाद हर पत्र को आंक के दूध में तर कर सुखालें और सबको इकट्ठा कर कपड़ मिट्टी में बन्द करदें सूखने के बाद गजपुट में फूंक दें स्वांग शीतल होने पर निकाललें बहुत नामी भस्म मिलेगी फिर तीसरी विधी इसकी लिखते हैं। चांदी के पत्र के नीचे ऊपर रूपा मक्खी बराबर की दें और सरावा सम्पुट में रख गज पुट में फूंकदें तो रूप रस चोखी होगा। श्रीमान जी आपके कहने माफिक सरल और कठिन बिधी लिखदी है।

एक वैद्यराज

हमारा अन्वेषण कार्य

संसार में मानव रोगों की निरापद चिकित्सा के लिए नैसर्गिक जड़ी-बूटियों का प्रथम स्थान है क्योंकि हमारा शरीर प्राकृतिक है। वेद में भी वनौषधियों की प्रशंसा की है:—

औषधयः समवन्त सोमेन सहराज्ञा।
यस्मै कृष्णाते ब्राह्मणस्तं राजनं पारयामसि॥
यजु० १२-६६

भावार्थ—औषधियां अपने राजा सोम (चन्द्र) के साथ बोलीं कि हे राजन! ब्राह्मण (वैद्य) जिस रोगी के लिए हमारा उपयोग करता है उस रोगी को वह रोगरूपी सागर से पार करता है।

इस संस्था के प्रवर्तक कवि० डा० गणपतिसिंह वर्मा ने गत २७ वर्षों में जिन प्रभावजन्य अज्ञात अनुभूत योगों, द्रव्यों और जड़ी-बूटियों का ज्ञान संग्रह किया है वह चिकित्सकों और जनसाधरण से अप्रकट नहीं है। तद्विषयक उनके द्वारा लिखी गई दरजनों पुस्तकें और सैंकड़ों लेख इस बात के पुष्ट प्रमाण हैं। इस चौथाई शताब्दी की निरन्तर खोज और योगों तथा द्रव्यों के अन्वेषण तथा परीक्षण ने रोगग्रस्त मानव को रोगमुक्त करने का नया मार्ग खोल दिया है। जो योग अब तक के परीक्षण में सहस्रों रोगियों पर सफल सिद्ध हो चुके हैं उनको ही पेटेण्ट औषधियों का रूप दिया गया है। इनमें अनेक जानी पहचानी और अज्ञात औषधियां हैं जिनके अनुभूत गुणों का विवेचन न शास्त्र में मिलता है और न ही प्राचीन निघण्टुओं और आधुनिक मेटेरिया मेडिकाओं में। यह अनुभव का ही फल है। पर ऐसे सौभाग्य की ऐसी देन दुर्लभ होती है जिनके बारे में पहले कुछ नहीं कहा जासका। नई उपयोगी औषधियों में से अधिकांश का लम्बे तथा गहरे अनुसन्धान के बाद ही पता चला करता है और इस पर बड़ा व्यय हुआ करता है। आधुनिक युग में जिन कुछेक रसयनों को महत्वहीन समझा जाता था अनेक वर्षों के अनुसन्धान के बाद उनकी उपादेयता का अब पता चला है। अनुभूत योगों में से जो कुछ अद्भुत अचिंत्य शक्ति का परिचय मिलता है उसका पता पृथक्करण व हेतु से नहीं लगता। उसे प्रभावजन्य समझना चाहिये। प्रस्तुत लघु सूचीपत्र में कतिपय ऐसी ही अनुसन्धानित आयुर्वेदिक पेटेण्ट औषधियों का सार दिया गया है जो वास्तविक अर्थों में अनुभूत, प्रमाणित और विश्वासजन्य हैं, जिनके निर्माण में स्वच्छता, द्रव्यों की विशुद्धता, कठिनता से प्राप्त होने वाली वनस्पतियों की प्राप्ति, योग द्रव्यों की सर्वांग पूर्णता व निर्माणपद्धति पर पूरा नियन्त्रण रखा जाता है। सभी चिकित्सक व रोगी सन्तोषपूर्वक इन औषधियों पर निर्भर रह सकते हैं। यह औषधियां चिकित्सक को यश दिलाने और रोगी को रोग मुक्त करने में अपूर्व हैं। आपसे प्रार्थना है कि आयुर्वेद का गौरव बढ़ाने के लिये आप इस संस्था की औषधियों को निज प्रयोग में लाकर तथा अधिकाधिक प्रचार करके हमें सहयोग प्रदान करें।

बुधान

अधिक मानसिक परिश्रम, चिन्तन, अध्यापन या किसी अकथनीय कारण से जिनका दिमाग कमजोर होगया है, स्मरणशक्ति घट गई है, हृदय दुर्बल होगया है, सिर में हल्का २ दरद और थकावट रहती है उनके लिए 'बुधान' बहुत लाभदायक है। इसके सेवन से उपरोक्त दोष मिट जाते हैं। दिमाग पुष्ट होकर स्मरणशक्ति तीव्र हो जाती है। इससे उन्माद तक के रोगियों को लाभ हुआ है। बुद्धिजीवी लोगों के लिए वरदान स्वरूप है। मूल्य ४) डाकखरच १।)

नाग सुरमा

यह सुरमा रसायनिक प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है। यह सभी नेत्र रोगों में लाभकारी है। दृष्टिमन्दता, दूर या निकट कम दिखाई देना, तिमिर, धुन्ध, जाला, आंखों से पानी बहना आदि रोगों को नष्ट करके दृष्टि

को तेज़ बना देता है। लगाते ही नेत्रों में ठंडक प्रतीत होती है। ६ माशा की शीशी १।।।) तीन माशा १)

पायोगन

यह पायोरिया की सफल दवा है। इस दवा को दांतों पर मलकर ५ मिनट लगा रहने दो और फिर कुल्ला कर डालो। इस प्रकार प्रातःकाल, दोपर और रात्रि को सोने से पहिले लगाने से मसूढ़ों का गला हुआ मांस भरने लगेगा, पीप पीप और रक्त का बहना बन्द होकर हिलते हुए दांत मजबूत हो जाते हैं। एक औंस का मूल्य २।।)

चवसोमला

दमा के लिए यह परीक्षित दवा है। इसका प्रभाव श्वास प्रणाली और स्वरयंत्र पर होता है। इसके सेवन से नाडी मण्डल की उत्तेजना शान्त होकर श्वास नलिकाओं का प्रसार होता है जिससे रोगी सुख का सांस लेता है और उसका कष्ट दूर हो जाता है। पूरा कोर्स समाप्त हो जाने के बाद श्वासनलिकायें पूर्ण स्वच्छ और फेफड़े पुष्ट हो जाते हैं। फिर कभी दमा का दौरा पड़ने का भय नहीं रहता। मूल्य ५)

आमाशयम

दिनभर कुर्सी या गद्दी पर बैठकर काम करने वालों का आमाशय (मेदा) प्रायः दुर्बल होजाता है, कारण झुककर बैठने से आमाशय पर दबाव पडता है जिससे उसके क्रिया संचालन में बाधा पडती है और धीरे २ वह निष्क्रिय सा होता चला जाता है। फिर भोजन पचन उचित रूपसे नहीं होता और भांति २ की उदर सम्बन्धी व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं। यदि आमाशय कठोर हो जाये तो खाने की औषधियां बहुत कम लाभ पहुँचाती हैं। 'आमाशयम' आमाशय पर मालिश करने की दवा है जो लगाते ही त्वचा में प्रविष्ट होजाती है। यह खाने की दवाइयों के अपेक्षा शीघ्र लाभप्रद है। इसके प्रयोग से आमाशय सबल होकर अपना काम सुचारु रूप से करने लगता है। मूल्य एक औंस का ४) डाकखरच सवा रुपया।

अमोनिरी

यह हमारी नव अनुसन्धानित विशेष वनस्पतियों द्वारा निर्मित और दो वनस्पतियों द्वारा भावित योग है जिसे दीर्घ परीक्षण के बाद अब प्रकाश में ला रहे हैं। यह औषधि आजकल के बहुप्रचलित पेट रोगों और उनके उपसर्गों यथा—आंत की सूजन व शूल, व्रण, वायुविकार, मल की सडन से उत्पन्न होने वाले विष दोष, गैस चढ़ना अम्लपित्त, आंव, जीर्ण कब्ज, भूख न लगना, खून की कमी, नींद न आना, बुढ़ापा आने वाली अम्लता, जोडों का दर्द व खांसी, जुकाम आदि के लिए अद्‌भुत गुणकारी सिद्ध हुई है। आमाशय और आंतें बलवान होकर भूख खूब लगती है। स्वच्छ रक्त बनने से शरीर पुष्ट होजाता है। मूल्य एक कोर्स ४) डाकखरच १।)

सनोल

यह पुराने कब्ज की दवा है। इसे लगातार [illegible] दिन सेवन करने से पुरानी कब्ज मिट जाती है। प्र[illegible] दिन प्रातःकाल दस्त खुलकर साफ आता है। पेट सा[फ] होजाने से चित्त प्रसन्न रहता है और भूख अच्[छी] लगती है तथा शरीर में स्फूर्ति आती है। दवा का [कोर्स] पूरा हो जाने के बाद फिर कभी कब्ज नहीं होगा [और] समय पर नियमित रूप से दस्त साफ हुआ करेगा। मूल्य ३।।) पो० १।।।—)

डायबोडीन

इक्षुमेह, मधुमेह (डायबीटीज) प्रसिद्ध और भयंकर रोग है और इस रोग की यह दवा विश्वास जनक चिकित्सा है। डाक्टरी में इन्सुलीनके इन्जेक्शन काम चलाऊ इलाज है इससे रोग नहीं मिटता। ज[ब] रोग बहुत बढ़ गया हो तो इससे सहायता ली जासकती है किन्तु रोग को निर्मूल करनेके लिए 'डायबोडीन' का सेवन परमावश्यक है। यह दवा दस दिन में अपना असर दिखा देती है और २० दिन के सेवन से सुगर नार्मल के बराबर होजाती है। दो मास सेवन से रोग समूल नष्ट होजाता है। यह नवीन खोज की गई वन-स्पतियों के परीक्षण का सफल परिणाम है। मूल्य पूरा कोर्स २४) परीक्षार्थ आधा कोर्स १२) डाकखरच जुदा।

गठना

गठना—गठिया (Gout) सन्धि पीडा, सन्धि[illegible]

वात, रींघनवाय, लकवा, कटिपीडा, पार्श्वशूल तथा सम्पूर्ण वायु रोगों के लिए यह अकेली और बहुपरीक्षित दवा है। खाट में पड़ा रोगी भी ३ दिवस के सेवन से चलने फिरने लग जाता है। इससे हर प्रकार के वायु रोग नष्ट होजाते हैं। एक शीशी की कीमत ३) पो० १।)

मलना

यह नव आविष्कृत कैपशूल हैं। ६ कैपशूल के सेवन से मलेरिया बुखार निश्चित रूप से दूर होजाता है। टाइफाइड और क्षय को छोडकर बाकी सब प्रकार के ज्वरों को दूर करने की क्षमता इसमें है। क्वीनीन या आर्सेनिक आदि किसी विष का मिश्रण इसमें नहीं है इसलिए ऐसी औषधियोंसे उत्पन्न होनेवाले दुष्प्रभाव भी इसमें नहीं हैं। सर्वथा निर्दोष, मलेरिया और सभी प्रकार के ज्वरों की अमोघ दवा ६ कैपशूल ।।।) तथा ३६ कैपशूल का पैकिंग ३।।)

ल्युकोआयर

इस दवा के सेवन से नया श्वेत और रक्तप्रदर ६ दिन में ही मिट जाता है, साथ ही हडफूटन, कमर का दरद, उदासी आदि व्याधियां दूर होकर रुग्णा स्त्री स्वस्थ और पुष्ट बन जाती है। ६ दिन की दवा का मूल्य २) यदि रोग पुराना हो तो ४ शीशी सेवन करना चाहिये। एक शीशी से चार शीशी तक का पो० १।)

नियन्त्रक

यह लगाने या रखने की दवा नहीं है, बल्कि खाने की निर्दोष दवा है। इसके सेवन करने के बाद फिर गर्भ नहीं रहता। परीक्षण में श्रेष्ठ और सफल सिद्ध हुई है। मासिक धर्म प्रतिमास नियमित होता रहेगा, शरीर पुष्ट बनेगा। स्वास्थ्य पर किसी प्रकार का कुप्रभाव नहीं पडता। मूल्य ५) डाकखरच १।)

पीताम्बर (एक महान टॉनिक)

यह दवा पर्वतों पर बर्फ में पाई जाने वाली एक अत्यन्त शक्तिवर्द्धक बूटी के योग से बनी है। इसके सेवन से स्त्री-पुरुषों में किसी भी कारण से उत्पन्न हुई अशक्ति, दुर्बलता, शरीर का दुबलापन, वजन घट जाना, खून की कमी, गहरी नींद न आना, उत्साह और स्फूर्ति का अभाव आदि विकार मिटकर शरीर पुष्ट, शक्ति सम्पन्न और कान्तिमय होजाता है, क्योंकि इसके सेवन से खून में श्वेत और लाल अणु खूब बढ़ते हैं। मूल्य एक मास की दवा का १०) पो० १।)

नोट—निरामिष भोजी, अविवाहित और विद्यार्थी इसके लिए आवेदन न करें।

बाल रस

यह दवा विशिष्ठ वनस्पतियों का अत्यन्त स्वादिष्ट और मीठा तरल सत्व है इसलिए बच्चे प्रसन्नतापूर्वक पी लेते हैं। इसमें चीनी नाममात्र को भी नहीं है। बालकों के ज्वर, खांसी, वमन, दूध पटकना, अपचन, हरेपीले दस्त, सूखा रोग, अशक्ति, खून की कमी आदि व्याधियों को दूर करने की अपूर्व दवा है। एक शीशी के सेवनसे ही बच्चा निरोग और पुष्ट तथा मोटा-ताजा बन जाता है। स्वस्थ बालक को सेवन कराते रहने से वह प्रायः सभी रोगों से सुरक्षित रहता है।

जोइन्टान

टूटी हड्डी जोड़ने की अद्भुत दवा

मनुष्य की हड्डी चाहे जहां से टूट गई हो—इसकी एक मात्रा खिलाने से अपने आप यथास्थान बैठकर तुरन्त जुडजाती है और जोडके स्थान पर वेल्ड किये की भांति एक गोल कडा सा लग जाता है जो कुछ दिन बाद स्वयं ही मिट जाता है। यदि दो मात्रायें खिलायें तो दो और तीन मात्रा खिलाने से तीन कड़ेसे लग जाते हैं, जो कुछ समय बाद मिट जाते हैं। जैसा केस हो उसी के अनुसार मात्रायें देना चाहिये। चाहे जैसा केस हो ३ मात्रा से ठीक हो जाता है। ३ मात्रा का मूल्य ३) छः मात्रा का ५) तथा १२ मात्रा का मूल्य ६) है। हमारे क्लिनिक में आने वाले गरीब रोगियों को यह दवा मुफ्त दी जाती है।

लीवर शर

यह दवा यकृत सम्बन्धी सभी रोगों के लिए हितकर है। लीवर सारयुक्त इस दवा के सेवन से शारीरिक मानसिक कमजोरी, यकृत दुर्बलता, श्याम और पीत पाण्डुरोग, हाथ पांव की सूजन, सांस फूलना आदि विकार मिटते हैं। मूल्य २।।) डा० ख० १।)

फ्लैशटोन

जब किसी रोग के कारण अथवा भय, शोक, चिन्ता, अधिक परिश्रम और अत्यन्त साहस का कार्य करने से मांस के सेलों की जीवनीय शक्ति क्षीण होकर शरीर सूखने लगता है तब ऐसी अवस्था में यह विशेष वनस्पतियों द्वारा निर्मित औषधि अत्यन्त सफल सिद्ध होती है। कृश शरीर को मोटा-ताजा मांसल बनाने व वजन बढाने तथा मस्तिष्क, हृदय और फेफड़ों की निर्बलता दूर करने की यह अनुपम औषधि है। किसी भी कारण से सूखे हुए शरीर को पुष्ट बनाती है। आने वाले रोगों को रोकती है। अन्य औषधि सेवन करते हुए भी शक्ति के लिए इसको अवश्य खाना चाहिये। सूखे हुए बच्चे, गर्भिणी स्त्री, तरुण वृद्ध सबके शरीर को मोटा-ताजा, मांसल और पुष्ट एवं सुन्दर बनाती है, चेहरे पर लालिमा आ जाती है। प्रत्येक प्रकृति वाले को प्रत्येक ऋतु में अनुकूल है। परहेज कोई नहीं। खाने में स्वादिष्ट। तपेदिक (क्षय) में जब मांस क्षीण होकर शरीर सूखता जा रहा हो और अन्य उपद्रव बढ़ रहे हों उस समय इसका सेवन नवजीन प्रदान करता है। दिमागी काम करने वालों के लिए परमोपयोगी है। मूल्य १ पौंड ६) आधा पौंड ५) डाक खर्च पैकिंग अलग।

केशिनी

यह तल दिमागी कमजोरी, थकावट और सिर दरद को दूर करता है। दिमाग को ताजा और ठण्डा रखता है, खुजली, भूसी को दूर करके झडते बालों को रोकता है। कुछ दिन निरन्तर लगाते रहने से गंजापन और बालों का सफेद होना रुक जाता है। कुछ विशेष केश टॉनिक जडी-बूटियों के रसों को तेल में विशेष पद्धति से पचाया जाता है, जलाया नहीं जाता जिससे बूटियों के सब तत्व तेलमें अक्षुण रहते हैं और अपना पूरा प्रभाव करते हैं। मूल्य ४ औंस १।।) एक पौंड ५।)

निद्राणी

स्वास्थ्य के लिए निद्रा उतनी ही आवश्यक है जितना कि भोजन, जल और शुद्ध वायु। भोजन के पचन और सात्म्यीकरण से शरीर की प्रत्येक सेल को अपनी स्थिति बनाये रखने की सामग्री मिलती है तो पूर्ण निद्रासे आराम मिलनेके कारण घिसी हुई सेलों का पुनः निर्माण हो जाता है और खरच हुई शक्ति पुनः संचित हो जाती है। यदि युवा पुरुष को रात्रि में ६-७ घण्टे निरन्तर गहरी नींद नहीं आती या बीच बीच में टूट जाती है तो यह मस्तिष्क धमनियों की कठोरता, पाचन सम्बन्धी रोग, विबन्ध, ब्लडप्रेसर (रक्तचाप) नाडी दौर्बल्य आदि व्याधियों का लक्षण है। 'निद्राणी' इन सब अवस्थाओं में अपना निश्चित प्रभाव दिखाती है। कुछ ही मात्राओं के सेवन से रात्रिभर खूब गहरी नींद आने लगती है और प्रातः काल उठने पर देह में स्फूर्ति और मन प्रफुल्लित होता है। इसमें कोई मादक या विषैला द्रव्य नहीं है। मूल्य ४) आधाकोर्स २।।) नं० १।)

अग्निस्थाई पारद गुटी

अग्निस्थाई पारे के दिव्य गुणों को प्रायः सभी जानते हैं किन्तु यह दुर्लभ वस्तु है, वर्षों के सतत प्रयास से अब हम इसको बनाने में सफल होचुके हैं। इस पारद को चाहे जितनी तेज आग पर रखो, न उड़ेगा और न वजन कम होगा। इसकी गोली को मुख में रखकर चाहे जितना शारीरिक, मानसिक परिश्रम करो थकावट बिल्कुल न होगी। २—योगाभ्यास करने वालों को समाधिस्थ अवस्था प्राप्त होती है। ३—भजन पूजन में मन एकाग्र होता है। ४—दूध में गोली उबाल कर पीने से अत्यन्त बल और पराक्रम प्राप्त होता है। अन्य गोपनीय गुण सेवनविधिमें पढ़ें। अनेक चिकित्सकों और महात्माओं द्वारा परीक्षित मूल्य २१) छोटी १०)

जी० एस० आयुर्वेदिक रीसर्च प्रॉडक्टस ३ दरियागंज, देहली ७

सेल्फ एक्टिंग

इलेक्ट्रो मेग्नेटिक

यह बेटरी सेल पर चलने वाली बिजली के इलाज की मशीन है। इसके द्वारा गठिया, आमवात आदि सभी वातरोगों, पक्षाघात, लकवा, अर्श, मधुमेह, अनेक प्रकार की शारीरिक पीड़ाओं व शोथ आदि ३३ रोगों का इलाज किया जा सकता है। किस रोग पर इस मशीन द्वारा बिजली का किस प्रकार प्रयोग किया जाय इसके लिए पुस्तिका साथ भेजी जाती है। मूल्य २५) डाक व्यय २॥।≡)

एक्सपैंडरो

इस यन्त्र की उपयोगिता प्रायः सभी जानते हैं। नसों और मांसपेशियों की शिथिलता में जहां प्राकृतिक रूप से रक्त का परिभ्रमण सम्यकरूपेण नहीं होता वहां इसके प्रयोग से आशातीत लाभ होता है। नसों और मांसपेशियों को सशक्त बनाने के लिए इसका प्रयोग करना उत्तम उपाय है। मूल्य १५) बढ़िया १८) डाक खरच पै० २॥)

वर्मा एलोपैथिक चिकित्सा

'एलोपैथिक चिकित्सा' की उपयोगिता ही इस लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण है। घर बैठे डाक्टर बना देने वाली इस पुस्तक में स्त्रियों, पुरुषों तथा बच्चोंको होने वाले हर रोग की अनुभव सिद्ध एलोपैथिक (डाक्टरी) चिकित्सा दी गई है। जिससे हर बीमारी का इलाज आसानी से किया जा सकता है। हर रोग के कारण, लक्षण, चिकित्सा—जहां पेटेण्ट मेडिसन देना ही ठीक है वहां पेटेण्ट मेडिसन, जिस हालत में जो योग देना उचित है वह, जहां इन्जेक्शन देना आवश्यक है वहां इंजेक्शन और जहां पर नवीन औषधियों का देना ठीक है वहां नवीन औषधियें अर्थात रोग को हर प्रकार से ठीक करने के उपाय दे दिये हैं और जहां सर्जिकल प्रयोग ही उचित है वहां वह भी दे दिया गया है। पथ्य आदि का भी पूरा वर्णन है। ४०० रोगों का निदान व चिकित्सा आदि सब कुछ दिया है। ५०० पृष्ट मूल्य १२) डाकखरच १≈)

पता—रसायन फार्मेसी ३, दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा स्वस्तिक प्रिंटिंग प्रेस, देहली में छपकर प्रकाशित

रसायन

दिसम्बर १९५५

वर्ष ८ वार्षिक ३)

अंक ६ इस अंक का ।=)

सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा० गणपति सिंह वर्मा

रसायन

दिसम्बर १९५५

वर्ष ८ वार्षिक ३)

अंक ६ इस अंक का ।=)

सम्पादक
साहित्य मनीषी
डा० गणपति सिंह वर्मा

रसायन फार्मेसी देहली का प्रमुख सचित्र मासिक पत्र

'सिद्ध रसे करिष्यामि, निर्दारिद्रय मयं जगत् ।'

वर्ष ८	देहली दिसम्बर १९५५	अङ्क ६

❀ उद्बोधन ❀

[श्री सरयूप्रसाद भट्ट 'मधुमय' विशारद पो० भुआविछिया (मण्डला)]

बाधाएं हैं बहुत मार्ग में बढ़ते जाना।
कर्म्मवीर यह समझ रखो पथ तुम्हें बनाना ॥
करना है निर्म्माण तुम्हीं को आगे चलकर।
पाना है वह लक्ष दूर, जो मार्ग विजय कर ॥
भाग्य बनाता है नहीं।
भाग्य बनाना है तुम्हें ॥
सबल बाहुओं से अनय।
दलते रहना है तुम्हें ॥

वानस्पतिक पारद

वनस्पतियों में सभी धातु उपधातु पाई जाती हैं इसका प्रत्यक्ष अनुभव मुझे तब हुआ जबकि मैं सन १९४३ में 'माता की बूटी' की खोज में पंचमहाल के पहाड़ों पर घूम रहा था। 'माता की बूटी' उसी प्रान्त की भाषा का नाम है। इसका शास्त्रीय नाम नहीं मालूम हो सका। यह बूटी बिनामूल की होती हैं और भारी पत्थरों के नीचे पाई जाती है। यह अमर बेल की आकृति की पाई जाती है। इसको ढूंढने का तरीका भी विचित्र है। पहाड पर बड़े २ पत्थरों को धक्का मारते रहिये। जिस पत्थर के नीचे होगी वह पत्थर चाहे २० मन वजन का हो लुढक जायगा। बहुत खोजने पर मुझे एक ही स्थान पर प्राप्त हो सकी थी। खैर! उधर ही मुझे एक मुसलमान फकीर घूमता हुआ मिला जिसे लोग पागल कहते थे। वह एक स्थान पर कहीं नहीं ठहरता था उसका कोई निश्चित स्थान भी न था। चूंकि वह जंगलों में ही घूमता फिरता था इस लिये मैंने उससे जड़ी बूटियों सम्बन्धी बात चीत करके कुछ जानने की जिज्ञासा प्रकट की। उसकी भाषा विचित्र थी वह उर्दू फारसी मिश्रित गुजराती बोलता था, जिसे मैं पूरे तौर से समझ नहीं सकता था। उसके पास कुछेक छोटी २ डिबिया थीं जिनमें छोटे २ टुकड़े धागे जैसे थे। उसने वहां अनेक वृक्षों और बूटियों का दूध एक लोहे की छोटी प्याली में निकाल निकाल कर क्रमशः आग पर रखा और उस दूध में एक २ वह धागे जैसा टुकड़ा डाल दिया। थोड़ी ही देर में वह दूध पक कर धातु के रूप में परिवर्तित हो गये, जो बंग, रजत और एक पीत धातु थी। बहुत चेष्टा करने पर भी उन धागों का रहस्य न जान सका और रात में ही वह फकीर जंगल में खो गया। अभी पं० श्री माधवप्रसाद शर्मा वैद्य ने बथुआ शाक में से पारद निकालने का अनुभव किया है, जिससे अब वे षड्गुण बलिजारित चन्द्रोदय बनाने जा रहे हैं। बथुआ शाक से पारद निकालने की उनकी विधि इस प्रकार है।

बथुआ के ताजा क्षुप मंगाकर धूल मिट्टी साफ करके उनको पत्थर की ओखली में कूट पीसकर रस निकाल कर कपड़े से छानलें। फिर बड़ी बड़ी खरल में डालकर शीतल स्थान पर छाया में घुटाई करावें। घोटते घोटते जब रस गढा होकर टिकिया बनाने योग्य हो जाय तब हिंगुल की भान्ति टिकिया बनाकर डमरु यंत्र में रखें और नीचे ४॥ घंटे अग्नि जलावें। ऊपर के पात्रपर भीगा हुआ कपड़ा रखें। फिर शीतल होने पर खोलकर देखें। ऊपर के पात्र में पारा लगा होगा इसे एकत्र करलें। यद्यपि यह मात्रा में कम प्राप्त होता है किन्तु होता है निर्मल।

बथुआ (वास्तुक) कई प्रकार का होता है इसमें से एक प्रकार का बड़ा क्षुप होता है। इसमें पारे की मात्रा अपेक्षाकृत अधिक होती है।

बथुआ से 'चीनी पोडियम' नामक एलोपैथिक दवा भी बनती है जिसको बनाने की विधि हमने 'भारतीय जडी बूटी द्वितीय भाग' में लिखी है। बथुआ शाक प्रसिद्ध ही है। इसके विभिन्न भाषाओं के नाम इस प्रकार हैं।

संस्कृत, वास्तूक—हिन्दी, बथुआ (चिल्ली) बंगला। बेतुया, बेतोशाक। गुजराती, टांको, चील। मराठी, चाकवताची भाजी, चिविल। अंग्रेजी, Goose foot लेटिन–Chenopodium Album.

विषय अनुक्रमणिका

विषय	लेखक	पृष्ठ
अनुबोधन	श्री सरयूप्रसाद भट्ट 'मधुमय' विशारद	११३
वानस्पतिक पारद		११४
नहरुवा रोग	श्री कविराज माधव प्रसाद शास्त्री	११५
बबूल के कुछ अनुपम प्रयोग		११८
क्या पाश्चात्य औषधियों का प्रयोग उचित है ?	श्री वैद्य सुदेवचन्द्र पाराशरी	१२०
हां धातुयें भी स्वास्थ्य वर्धक हैं !	श्रीमती प्रेमवती शर्मा	१२२
त्वचा को स्वस्थ रखने के उपाय	श्री विलफर्ड आर० एन्डरसन एम० डी०	१२३
सन्निपात (आंत्रिक) ज्वर	श्री वैद्य धीरेन्द्र मोहन भट्ट	१२५
भीतरी बनाम बाह्य सफाई	श्री सुरेन्द्रप्रसाद गर्ग	१२६
सूचीवेध द्वारा सफल दुग्ध प्रयोग	श्री वैद्यराज ईश्वरलाल मेहताब	१३०
क्षय रोग में आवश्यक सूचना	श्री डा० म० गं० पटवर्धन	१३२

क्या आप अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के सदस्य हैं ?

यदि नहीं तो आज ही सदस्यता शुल्क भेजकर सदस्य बन जायें और आयुर्वेद के प्रसार, प्रचार, अभ्युत्थान तथा संरक्षणार्थ विगत ४७ वर्षों से सतत प्रयत्नशील वैद्यसमाज की इस एकमात्र अखिल भारतीय प्रतिनिधि संस्था को सुदृढ़ एवं सम्पुष्ट बनाइये। जो वैद्य महानुभाव पहिले ही महासम्मेलन के सदस्य हैं उनका भी कर्तव्य है कि वे अधिकाधिक संख्या में महासम्मेलन के सदस्य बनाने का प्रयत्न करें। याद रखिए आज के युग में एकमात्र यही संस्था आपके तथा आयुर्वेद के हितों की रक्षाकर उसको राष्ट्रीय चिकित्सा पद्धति के गौरवपूर्ण पद पर आसीन करा सकती है। इसे दृढ़ता प्रदान करना आपका परम पुनीत कर्तव्य है। सदस्यता शुल्क ५) वार्षिक तथा आजीवन सदस्यता शुल्क ५०) रु०। सदस्यों को संस्था का मासिक मुखपत्र 'आयुर्वेद महासम्मेलन पत्रिका' निःशुल्क प्रेषित की जाती है। नमूने की प्रति मुफ्त। सदस्यता आवेदन पत्र तथा अन्य जानकारी के लिए पत्र-व्यवहार करें।

प्रधान मन्त्री, अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन
महालक्ष्मी मार्केट, चांदनी चौक, देहली।

निदानात्मक प्रयोग

चिकित्सा से पूर्व रोग का सत्य निदान परमावश्यक होता है। कभी २ नाडी और ऊपरी लक्षणों से वास्तविक रोग का निदान करना कठिन होजाता है तब किसी पैथालोजिस्ट के पास मल, मूत्र, रक्त, थूक आदि टेस्ट कराने के लिए रोगी को भेजना पडता है किन्तु इस पुस्तक को पढ़कर आप सभी प्रकार की परीक्षायें स्वयं ही करके सही निदान कर सकेंगे। इसमें पाश्चात्य निदान पद्धति के अन्तर्गत मान्य विविध प्रयोग विधियां जिनको अंग्रेजी पढ़े लिखे डाक्टरों के लिए हीं जानना संभव था, अब हिन्दी पढ़े वैद्य बन्धु भी जानकर प्रयोग में लाकर निदान कुशल बन सकते हैं। यह लेखक के ३० वर्ष के अनुभव का निचोड है। ५० चित्र, ३१० पृष्ठ मूल्य ५॥) डाकखरच पैकिंग ॥।≈)

एलोपैथिक निघंटु

इसमें औषधियां तैयार करने की भिन्न-भिन्न विधियां, नाप तौल (ग्रेन, ड्राम, औंस, पौंड, मिनिम, सी०सी०, किलोग्राम, स्टोन, टीकपफुल, क्वार्ट, मन, सेर, तोले इत्यादि) ब्रिटिश फार्मेकोपिया में वर्णित औषधियों के भिन्न २ रूप (एसिटा, ऐसिड्स इलिक्सर्स, ऐक्सट्रैक्ट्स, डिकोक्शन्स, लिनिमेन्टस्, स्पिरिटस् टिंचर्स, सीरप्स, टेबलेटस इत्यादि), एम्प्यूल्स, वाथ्स, चेटस, कैप्स्यूल्स, डूश, एनिमा, आइस बैग, पिग्मेन्टस इत्यादि का वर्णन, औषधियों को शरीरमें प्रविष्ट करनेके भिन्न २ तरीके, औषधियों की मात्रा निश्चित करना, परस्पर विरोधी गुण रखनेवाली औषधियां, विस्फोटक, संयोग, औषधियों की सेवन विधि, बच्चों के नुस्खे, बच्चों के लिए भिन्न २ औषधियों की मात्रा, औषधियों की घुलनशीलता, भांति २ के लोशन तैयार करना, सैंकडों पारिभाषिकशब्द, शरीरके विभिन्न अंगोंपरविभिन्न औषधियों का क्या प्रभाव पडता है, भिन्न २ प्रकार के ऐसिडस ऐक्वा, इमलशन्स, लिनीमेंटस, लिकर्स, लोशन्स मिक्चर्स पाउडर्स इत्यादि तैयार करने के तरीके तथा लगभग दो हजार एलोपैथिक पेटेण्ट तथा साधारण औषधियों का वर्णन (मात्रा, मुख्य अवयव, गुण आदि) लिखा हुआ है। यह पुस्तक वैद्यों, हकीमों तथा ग्राम चिकित्सकों के लिए अनिवार्य और आयुर्वेदिक विद्यालयोंके विद्यार्थियों तथा जनसाधारणके लिए अत्युपयोगी है। इसका पहला संस्करण केवल छः महीने में समाप्त होगया। दूसरे परिवर्द्धित संस्करण को भी समाप्त होते देर न लगेगी। मूल्य १०॥) डाकखरच १≈)

सोंठ

तीसरा परिवर्द्धित संस्करण

(लेखक—श्री० रमेश वेदी आयुर्वेदालंकार)

देश विदेश में और चिकित्सा की प्राचीन तथा अर्वाचीन पद्धतियों में सोंठ और अदरक के बारे में जो कुछ भी जाना गया है वह सब इस पुस्तक में आ गया है। आज ही मंगाइये। मूल्य १) डाकखर्च ॥)

पता—रसायन फार्मेसी, ३ दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली

नहरुवा रोग

(लेखक—कविराज माधवप्रसाद शास्त्री, प्रधान सम्पादक-जय आयुर्वेद, जोधपुर)

यह राजस्थान, मालवा और पंजाब में विशेष रूप से कृषकों को होने वाला महान कष्टदायक रोग है। वर्षा के दिनों में जहां एक ओर कृषक खेतों की ओर अभियान करते हैं, वहां दूसरी ओर इस भीषण और दुखदाई रोग से अपने स्वर्णिम स्वप्नों को समेटते भी देखे जाते हैं। वर्षा की रिमझिम बेला, दामिनी की दमक और बादलों की घनघोर गर्जन उनके शरीर में उस नारकीय यंत्रणा को और भी सजग करते हैं, जो नहरुवा रोग के कारण वसीयत के रूप में उन्हें मिली है।

यद्यपि इस रोग से मृत्यु संख्या में कोई खास अभिवृद्धि नहीं हुई, किन्तु प्रतिवर्ष कितने बालक वृद्ध अपंग बनकर अकर्मण्य जीवन यापन करते हैं इस पर कोई विचार नहीं करता। उस व्यक्ति का जीवन वास्तव में नारकीय यंत्रणा से कम नहीं जिस के हाथ पैर, पीठ और अंडकोषों में एक साथ नहरुवा का आक्रमण होता है। एक साथ ४० नहरुवे जब बेचारे कृषक पर एक ही ऋतु में हमला बोलते हैं तो उसकी यंत्रणा का अंदाज ही क्या लगाया जा सकता है।

इस बार भी राजस्थान में नहरुवा रोग का प्रपीड़न कम नहीं है। प्रत्येक ग्राम के प्रत्येक घर में इस रोग से पीड़ित लोगों के दर्शन आप आसानी से कर सकेंगे। खेद इसी बात का है कि आधुनिक विज्ञान, जो प्रकृति पर विजय पाने का दम भरता है, नहरुवा रोग पर अभी तक भी काबू नहीं पा सका है। देश की सरकार भी यक्ष्मा पर विजय पाने के लिये तो १३ करोड़ की योजना बना सकती है, किन्तु इस यंत्रणादायक महान् रोग को अपनी पंचवर्षीय योजना में कहीं भी स्थान न दे सकी है। आज अकेले राजस्थान में लग-भग पांच लाख रोगी "नहरुवा" के कारण नारकीय जिंदगी बसर कर रहे हैं। न उसके पास खाने को भरपेट अन्न है और न आवश्यकता की पूर्ति के लिए धन ही। बेचारे खाट पर पड़े साधन और समुचित चिकित्सा के अभाव के केवल ईश्वर के सहारे दिन काट रहे हैं।

रोग परिचय

इस रोग का मुख्य कारण स्नायुक या गिनी-वर्म नामक कृमि होता है। यह श्वेत वर्ण का गोल, १ से ३ फुट लम्बा, गण्डू आकार, पतला और गोल कृमि होता है। इसकी पुरुष और स्त्री भेद से दो जातियां मानी गई हैं। इनमें स्त्री जाति ही विशेष रूप से रोग का प्रसार करती है। स्त्री का शरीर गर्भ प्रणालि से भरा रहता है जिससे असंख्य अंडे होते हैं, ये अंडे पानी का सम्बन्ध प्राप्त कर जलपिस्सुओं में लीन हो जाते हैं। अंडेयुक्त वे जलपिस्सू (साइक्लोप) जब मानव शरीर में पहुँचते हैं तो रोग का कारण बन जाते हैं।

रोग प्रसार

जिस पानी में उक्त प्रकार के पिस्सू होते हैं उस पानी के उपयोग से अंडों के साथ वे मनुष्य के आमाशय में पहुँच जाते हैं। वहां आमाशयिक रस से पिस्सू तो विनष्ट हो जाते हैं, और वे कृमियों के

बच्चे स्वतन्त्र होकर आमाशय की दीवार को लांघ कर वहां पीछे परिवर्द्धित होते रहते हैं। इनमें से पुरुष कृमि पुनः स्त्री कृमि को गर्भित कर स्वयं मर जाते हैं और स्त्री कृमि जिस अंग में पानी का सम्बन्ध विशेष है उस ओर चल देती है। उस क्रिया में लगभग एक वर्ष व्यतीत हो जाता है। जब इस कृमि का मुख त्वचा के नीचे पहुँच जाता है तो इसके मुख से एक प्रकार का विष निकलता है, जिसके कारण वहां फफोला हो जाता है। कुछ घंटों के बाद ही फफोला फूट जाता है और कृमि बाहर निकलने लग जाता है।

विविध-लक्षण

कई बार ऐसा होता है कि कृमि घूमता हुआ रास्ते में ही कहीं मर जाता है और त्वचा तक नहीं पहुँच पाता। जिससे कृमि के चारों ओर तान्तव व खटकी भवन "कैल्शिफिकेशन" हो जाता है, और आजीवन कठोर गंड के समान बन जाता है। कई बार नाड़ीशूल, पेशीशूल, सन्धिपीड़ा और सन्धिशोथ आदि स्थायी विकार भी उक्त कारण से पैदा हो जाते हैं। यदि नहरुवा प्रमादवश निकलते समय कहीं टूट जाय तो असह्यवेदना के साथ ही सदैव के लिये लूला और लंगड़ा भी बना देता है। शास्त्रकारों ने स्पष्ट लिखा है।

वाहवोर्यदि प्रमादेन जंघयोस्त्रुटयति क्वचित्।
संकोचं खंजतांचैव च्छिन्नतन्तुः करोत्यसौ ॥

—योगरत्नाकर।

सामान्य लक्षण

रोग का संचय काल एक वर्ष है अतः इस में प्रायः कोई विशेष लक्षण नहीं होते। जब कृमि अपना जीवन चक्र पूर्ण कर त्वचा के समीप आता है तब जी मचलाना, वमन, प्रवाहिका, श्वास कृच्छ्र, शीतपित्त, चक्कर और ज्वर आदि सार्वदैहिक लक्षण होते हैं, और कुछ घंटों बाद जहां कृमि निकलता है वहां खुजली, जलन या पीड़ा होकर अन्त में फफोला बन जाता है। बाद में इस फफोले से गाढ़ा पानीदार श्वेत स्राव निकलता है, जिसमें कृमि के अंडे होते हैं। पैरों का सम्बन्ध पानी के साथ विशेष होने के कारण प्रायः नहरुवा पैरों में टखने के पास या पिंडलियों में निकलता है। कभी-कभी हाथ, चूतड़, पीठ व वृषण में भी निकलते देखे गये हैं। जिस अंगमें कृमि निकलता है उसमें सूजन और असह्य वेदना होती है, अतः रोगी चल फिर नहीं सकता।

सामान्य चिकित्सा

जैसे ही नहरुवा का मुख बाहर निकले, उसे बहते पानी के प्रवाह में रखना चाहिये। ऐसा अवसर न मिल सके तो लोटा या गिलास का पानी धारा से में पीडित अंग पर डालना चाहिये। ऐसा करने से नहरुवा स्वतः ही बाहर आने लग जायगा। बाहर निकले हिस्से को दियासलाई आदि किसी वस्तु पर लपेट कर उस लिपटे हुए भाग को पानी और तेल से सदैव तर रखना चाहिये। कई चिकित्सक नहरुवा के मुख के बाहर निकलते ही उसमें मरक्यूरी परक्लोराइड १-१००० का इन्जेक्शन कर देते हैं। इससे २४ घण्टे में कृमि मर जाता है। जब तक कृमि जीवित रहता है सिरा, कण्डरा धमनी व मांसपेशियों में इस्ततः लिपटा रहता है इस कारण सुगमता से निकल नहीं पाता। इन्जेक्शन से मरने के बाद सुगमता से बाहर निकाला जा सकता है।

शल्य चिकित्सा की सफलता

शल्य चिकित्सा द्वारा कुछ मिनटों में ही रोगी को व्याधि मुक्त किया जा सकता है। नहरुवा का निश्चित निदान होने के बाद स्प्रीट और शक्कर के घोल से पीडित स्थान को विसंक्रमित करके हजामत बनाने की पत्ती ब्लेड से कृमि के स्थान पर चीरा लगा

कर शनैः २ उसे बाहर निकालना चाहिये। अभ्यास करने पर यह क्रिया सुगम रहती है। नहरुवा को बाहर निकाल देने के बाद अन्य व्रणवत चिकित्सा करने से जल्दी आराम मिल जाता है।

औषधि व्यवस्था

व्यवहार से यह देखा गया है कि उचित चिकित्सा व्यवस्था द्वारा भी लोगों को नहरुवा की नारकीय यन्त्रणा से मुक्त किया जा सकता है। भावमिश्र ने हींग इसके निराकरण के लिए विशेष रूप से निर्दिष्ट की है। प्रायः ग्रामीण लोग हलवे के साथ हींग मिलाकर गरम पुल्टिस नहरुवे के स्थान पर बांधते हैं और भोजन में भी हींग का विशेष प्रयोग करते हैं। शास्त्रकारोंने इसी महत्ता को देखकर ही लिखा है—

स्नेह स्वेद प्रलेपादि कर्म कुर्याद्यथोचितम्।
रामठं शीत तोयेन पीतं स्नायुकरोगनुत्॥

सुप्रसिद्ध चिकित्सकों के अभिमत में सीप की भस्म इस रोग को समूल नष्ट करने में अद्वितीय है। नदी के साधारण सीप के टुकड़ों को नीबू के द्रव में शुद्ध कर, आक के पत्तों के रस में तीन पुट देकर भस्म बनालें। प्रतिदिन ८ से १६ रत्ती की मात्रा में इस भस्म को सेवन कराने से केवल तीन ही दिन में आश्चर्यजनक गुण लक्षित होगा। औषधि सेवनकाल में रोगी को केवल दही या छाछ का ही सेवन करना चाहिये।

धन्वन्तरि मिशन राजस्थान भी नहरुवा की चिकित्सा के सम्बन्ध में पर्याप्त खोज कर रहा है। अब तक के अन्वेषण से उन्होंने धन्वन्तरि मासिक में प्रकाशित निम्न प्रयोग सफल घोषित किये हैं—

शंखभस्म अर्कपुटी ४ रत्ती, संजीवनी वटी २ गोली, मिश्री ३ माशे, सीपभस्म ४ रत्ती, शुद्ध कपूर ३ रत्ती। यह एक मात्रा है, प्रति दिन प्रातः काल गाय के मट्ठे के साथ ३ से ७ दिन तक इस प्रयोग को सेवन करावें। इससे नहरुवा या तो अन्दर ही खत्म हो जावेगा या शीघ्र ही बाहर निकल जायगा।

छाला पड़कर स्नायु तन्तु जब मुंह बनाले तब निम्न मरहम का उपयोग करना चाहिए। कुचला भीगा हुआ २ नग, सनलाइट साबुन २॥ तोला, मयूरपुच्छ भस्म ३ माशा और कपूर १ माशा लेकर पीले आक के पत्तों के स्वरस में पहले कुचला को पीसें फिर साबुन मिलाकर घोटें। अन्त में भस्म मिलाकर मरहम तैयार कर पीड़ित स्थान पर इसे लगावे और ऊपर पीले आक के पत्ते गरम करके चिपकादें। इस की दो-तीन पट्टी ही नहरुवा के सम्पूर्ण विष को बाहर निकालने में समर्थ सिद्ध होंगी जब नहरुवा अन्दर टूट गया हो तो यह प्रयोग अच्छा लाभ करता है।

सावधानी

यह तो निश्चित है कि नहरुवा रोग दूषित जल के कारण ही उत्पन्न होता है और उसके संसर्ग से ही लोगों को तकलीफ देता है। अतः सदैव गहरे कूप वा नालों के पानी को ही व्यवहार में लाना चाहिए। तालाब और वर्षा ऋतु का जल बिना गरम किये और छाने कभी भूल कर भी प्रयोग में नहीं लाना चाहिए।

बबूल के कुछ अनुपम प्रयोग

[गतांक से आगे]

स्वप्नदोष निवारक वटी—बबूल का गोंद ५ कर्ष (१६ मासे की तौल का १ कर्ष होता है) शक्कर १० कर्ष दोनों को अच्छी तरह पीस डालिये उसमें अल्प जल मिलादें। ६-६ मा० की गोलियां तैयार करें। उन्हें सुखाकर सुरक्षित दशा में रख दें। १—१ गोली प्रातः सायं सेवन करें। इस दवा से स्वप्नदोष, प्रमेह, वीर्य का पतलापन आदि पर विशेष उपकार होता है।

प्रमेह नाशक सरल विधि—बबूल की कोमल कोंपलों को सवा तोला जल में घोट डालें। छान कर उसमें मिश्री मिला दें। रोगी को यह दवा सेवन करावें। ईश्वरकी कृपासे २१ दिनमें ही प्रमेह रोग नष्ट होजायगा।

बबूल की नरम फलियों को जिनमें बीज न पैदा हुए हों, एकत्र कर छाया में सुखावें सूख जाने पर खूब बारीक पीस डालें चूर्ण तैयार हो जाने पर समान मात्रा में मिश्री का चूर्ण मिलाकर रोगी को सेवन करावें। अधिक से अधिक १ तोला चूर्ण दूध के साथ सेवन करें। दूध के अभाव में जल से भी काम चला सकते हैं।

बबूल की बीज रहित फलियों को एकत्र कर अच्छी तरह कूट डालें। कूटकर रस निकालें इसके बाद उड़द के दाने लाकर रस में डालदें। ये दाने इस परिमाण में डालें कि दानों के ऊपर रस १२ अंगुल रहे। जब रस सूख जाय तब दानों को हाथ से अच्छी तरह मलें मलते मलते जब ऊपर के छिलके निकल जांय और छिलके निकल जाने पर जब दाने साफ हो जांय, तब उन्हें पत्थर के कूण्डे में डालकर पीस डालें। पिस जाने पर गाय के घी में भूनकर चूर्ण तैयार करें। फिर बादाम, पिस्ता आदि मिलाकर सुरक्षित रख देवें। यह दवा २ तोला से ४ तोला की मात्रा में प्रतिदिन प्रातःकाल सेवन कराने से स्वप्नदोष, वीर्य का पतलापन प्रमेह आदि रोग नष्ट हो जाते हैं।

प्रमेह विनाशक चूर्ण—धुली हुई उड़द की दाल मिट्टी के बरतन में रखदें। इसके बाद बबूल की नरम फलियों का स्वरस उन दानों पर छोड़ दें। जब सभी दाने भीग जांय तब थोड़ी देर तक बरतन पड़ा रहने दें। बाद को इन दानों को छाया में सूखने को पसार देवें। इसके बाद फिर पूर्ववत भिगो दें यही क्रम सात बार करें। अन्त में भीगी हुई दाल को खूब बारीक पीसकर रखदें। इसके बाद उसके अर्ध परिमाण में माजूफल लाकर उसमें मिलादें। इस मिलित औषध की दूनी खांड उसमें मिलादें। इस प्रकार यह एक अत्युत्तम औषधि तैयार हो जायगी। इसका नियमपूर्वक सेवन करने से अत्यन्त भयंकर प्रमेह भी नष्ट हो जाता है। प्रातःकाल और सन्ध्या को दो तोला चूर्ण दूध अथवा जल के साथ सेवन करना चाहिये। कम से कम २७ दिन सेवन करने से पूरा लाभ दिखाई पड़ेगा, स्त्रियों के श्वेत प्रदर में भी ये लाभकारी है।

उपदंश (गर्मी) के घावों को ठीक करने के लिये—गर्मी के घावों पर बबूल की पत्तियों को चूर्ण कर छिड़कते रहने से घाव अच्छे हो जाते हैं अनार की छाल का चूर्ण छिड़कने से लाभ होता है। सुपारी भी जल में घिसकर लगाना चाहिये।

नपुंसकता नाशक योग

१ सेर बबूल का गोंद लाकर छोटे २ टुकड़ों में

तोड़ डालें। इसके बाद मिट्टी के बरतन में उन टुकड़ों को डाल दें। आग की आंच पर उस बरतन को रखकर सफेद प्याज का जल उसके भीतर छिड़कते जांय। इस प्रकार भूनते-भूनते जब डेढ़ पाव जल सूख जाय, तब गोंद को उतार लें। इसके बाद बारीक पीसकर समान मात्रा में मिश्री या खांड मिलाकर रख दें। यह एक उत्तम बाजीकरण योग है। प्रातःकाल और सन्ध्या को एक तोला चूर्ण गाय के दूध के साथ सेवन करने से पुरुषत्वहीनता दूर हो जाती। पतला वीर्य गाढ़ा हो जाता है, अत्यन्त स्तम्भन होता है।

स्तम्भन की उत्तम दवा

बबूल की कच्ची फलियों को एक सेर परिमाण में एकत्र तीन सेर जल में पकाइये। जब जल सूख जाय और फलियां नरम हो जायं, तब उन्हें घोट डालें। इसके बाद ४-४ माशे की छोटी २ गोलियां तैयार करें। प्रतिदिन एक गोली दूध के साथ सेवन करने से स्तम्भन बढ़ने लगता है।

कच्ची फलियों को सुखाकर चूर्ण करें। दुगुनी मात्रा में मिश्री मिलाकर लगातार तीन चार मास सेवन करें। स्तम्भन होगा।

तरल स्तम्भक प्रयोग

बबूल की पत्तियों के रस में मोटे कपड़े को ७ बार तर करलें, कपड़े से छोटा टुकड़ा काटकर दूध में मलकर वही दूध पान करें। यह एक स्तम्भनकारी योग है।

स्त्री रोग में बबूल की उपयोगिता

गर्भाशय के लिये—बबूल की जड़ का काढ़ा तैयार कर पिलाने से गर्भाशय के रोग नष्ट होते हैं, आमाशय के रोगों में भी ये लाभकारी है।

श्वेतप्रदर की दवा—बबूल की छाल, पत्तियां, फूल गोंद समान परिमाण में लेकर चूर्ण तैयार करें ये चूर्ण २ से २॥ मा० की भात्रा में जल के साथ पीने से श्वेत प्रदर में विशेष लाभ होता है। इसके सिवा धातु की तरलता, शीघ्रपतन, स्वप्नदोष में भी ये दवा उपकार करती है।

रक्तप्रदर नाशक योग—बबूल की पत्तियों को पीसकर टिकियां तैयार करें और जितनी भी टिकियां हों उन सभी को जलपूर्ण घड़े पर सटा देवें फिर प्रातःकाल मधु अथवा मिश्री के साथ एक टिकिया सेवन करें। ये देखने में अत्यन्त सरल उपचार हैं परन्तु इससे कठिन से कठिन रक्तप्रदर नष्ट हो जाता है।

श्वेतप्रदर रोकने के लिये—बबूल की छाल को मन्द २ आंच में औटाकर काढ़ा तैयार करें। श्वेतप्रदर से पीड़ित स्त्री को यह काढ़ा पिलाने से विशेष उपकार होता है। काढ़े में फिटकरी मिलाकर पिचकारी देने से भी लाभ होता है।

अतिसार रोग में बबूल का उपयोग—बबूल की पत्तियों का चूर्ण जल के साथ पीने से अतिसार के आक्रमण की आशंका दूर हो जाती है।

मोटे बबूल की पत्तियों का रस पीने से सब प्रकार के अतिसार नष्ट हो जाते हैं।

अतिसार दूर करने के लिये—बबूल की १ तोला पत्तियों को स्वच्छ जल में घोटकर रोगी को पिलायें। इससे रक्तातिसार में विशेष लाभ होता है। सब प्रकार के अतिसार में यह औषधि लाभकारी है।

बबूल का गोंद ६ मासे लेकर खूब बारीक पीस डालें। उसे गेहूँ के आटे में मिलाकर रोटी पकावें और रोगी को खिलावें। रुक रुक कर दर्द के साथ दस्त आने पर इस उपचार से विशेष लाभ होता है।

बबूल का गोंद ६ माशे लेकर जल में पकावें जब कुछ ठंडा हो जाय तब चाय की तरह पीवें। स्वाद के लिए थोड़ी मिश्री भी मिला सकते हैं।

बबूल की एक तोला पत्तियों के साथ १ रत्ती अफीम घोटकर पिलाने से अतिसार का दर्द आराम होता है।

(होमियोपैथिक-अग्रदूत से)

क्या पाश्चात्य औषधियोंका प्रयोग उचित है?

[लेखक—वैद्य श्री सुदेवचन्द्र पाराशरी, बी० आई० एम० एस० आयुर्वेदाचार्य]

परिस्थिति विशेष में आयुर्वेदिक चिकित्सा के आधारभूत सिद्धान्तों के आधार पर यदि कहीं किसी विशेष प्रभावी भेषज का प्रयोग कर लिया जावे तो यह आयुर्वेदिक चिकित्सा है न कि एलोपथिक? महर्षि चरक ने लिखा है 'नानौषधिभूतं किंचिद्द्रव्यंजगति, तां तां युक्तिमर्थञ्चतन्तमभिप्रेत्य–' संसार में कोई भी द्रव्य ऐसा नहीं है जो औषधि न हो, युक्ति और प्रयोजन विशेष के अनुसार उसका प्रयोग अभिप्रेत है।' तथा 'कृत्स्नो हि लोको बुद्धिमतामाचार्या शत्रु श्चाबुद्धिमताम्, इतश्चाभिसमीक्ष्य बुद्धिमताऽमित्रस्यापि धन्यं यशस्यं लौकिकं पौष्टिकञ्चाभ्युपदिशतोवचः श्रोतव्यमनुविधातव्यञ्च'–'सारा संसार बुद्धिमानों का गुरु है और अबुद्धिमानों का शत्रु, यह विचार कर बुद्धिमान को चाहिये कि अमित्र का भी ऐसा उपदेश, जो धन, यश, लोककल्याण तथा पुष्टि को प्राप्त करने वाला हो, सुनना चाहिये और तदनुकूल आचरण करना चाहिये।' एवम् 'आप्तागमस्तावेद्वदः, यः कश्चिदपि वेदार्थादविपरीतः परीक्षकैः प्रणीतः, शिष्टानुमतः लोकानुग्रहप्रवृत्तः, शास्त्रवादः स चाप्तागमः। तथा च—

तदेव युक्तं भैषज्यं यदारोग्याय कल्पते।
स एव भिषजां श्रेष्ठो रोगेभ्यो यः प्रमोचयेत्॥'

अर्थात् 'आप्तशास्त्र वेद या आयुर्वेद है जो कोई भी शास्त्रवाद (Branch of Science) वेद के तात्पर्य या प्रयोजन से विरुद्ध न हो (स्वस्थ की स्वास्थ्य रक्षा, व्याधित के व्याधिनाश के लिए हो), परीक्षकों द्वारा प्रणीत, शिष्ट पुरुषों द्वारा अनुमोदित, तथा लोक की भलाई करने में समर्थ हो, उसे भी आप्तशास्त्र समझना चाहिये। वही औषधि या चिकित्सा ठीक है जिससे आरोग्य की रक्षा व प्राप्ति होती है और वही चिकित्सकों में श्रेष्ठ चिकित्सक है जो रोगी को रोगमुक्त कर सकता है।'

इस आर्ष आदेश के अनुसार ही पुराकाल में रसचिकित्सा एवं भावमिश्र द्वारा चोपचीनी आदि अनेक द्रव्यों तथा भैषज्य रत्नावली कार द्वारा मोफला आदि अनेक यूनानी भेषज कल्पों तथा फिरंगादि रोगों के निदानादि का सन्निवेश आयुर्वेदीय साहित्य में किया है। आजकल के वैद्यकुलगुरु श्री यादव जी त्रिकमजी आचार्य ने अपने द्रव्यगुण विज्ञानमें तथा अन्य आयुर्वेद के अधिकारी विद्वानों ने बहुत से उपयोगी आधुनिक भेषजों का सन्निवेश व प्रयोग आयुर्वेदीय सिद्धान्तानुसार अपने ग्रन्थों में लिखा है। अस्तुः

यक्ष्मा के रोगी के लिये व्याधिप्रत्यनीक भेषज के रूप में, ज्वर शान्ति के लिए 'माइसीन ग्रुप' की औषधियों का प्रयोग कर लेना सर्वथा शास्त्रीय है। यक्ष्मा में अनेक रोगों (उपद्रवों) का समूह होता है उनके दूर किये बिना रोगी का शोष या क्षय (Consumption) दूर नहीं किया जा सकता। ज्वर सब से प्रधान उपद्रव है उसके शान्त हुए बिना अन्य उपद्रव भी नियन्त्रण में नहीं आते, एवम् रोगी का क्षय नाश या पोषण तो हो ही नहीं सकता। यक्ष्मा का सुप्रसिद्ध–आयुर्वेदीय चिकित्सा सूत्र है—

"उपद्रवाः ज्वराद्यास्ते साध्याः स्वे स्वे चिकित्सिते।
तेषु शान्तेषु रोगेषु पश्चाच्छोषमुपाचरेत॥"

अर्थात् 'ज्वर आदि उपद्रवों की चिकित्सा अन उन की फलप्रद चिकित्सा द्वारा कर लेना चाहिए, इन

रोगों (लक्षणों) के शान्त हो जाने के बाद शेष (Consumption) की चिकित्सा या उपचार करना चाहिए।' कारण स्पष्ट है ज्वर के रहते आयुर्वेदीय दृष्टिकोण से पाचन ठीक न रहने से कोई पौष्टिक भेषज या पथ्य फलदायी न होकर, उल्टा रोगवर्धक होता है। अतः माइसीन कल्पों द्वारा ज्वर शान्त होने पर, आयुर्वेदिक सुवर्ण मुक्ता रत्नादि के प्रयोग एवं घृत, अवलेह, क्षीर, चूर्ण आदि तथा पौष्टिक पथ्य प्रयोग द्वारा तीसरे और चौथे स्टेज के भी रोगी स्वस्थ होते देखे गये हैं। जो ऐलोपैथिक पद्धति से ठीक न हो सके। प्रथम व द्वितीय अवस्था के रोगियों में माइसीन प्रयोग की आवश्यकता नहीं है।

इसी तरह फिरङ्गरोग की तीव्रावस्था में मल्ल के सूचीवेधों तथा तीव्र श्वसकज्वर में पेनिसिलिन का प्रयोग करके कष्ट उपद्रवों को शान्त करके आयुर्वेदिक भेषज व पथ्यादि व्यवस्था अतिशय सुखावह होती है।

मेरा दृढ़ मत है चिकित्साशास्त्र की मूलभित्ति-आधार भूत द्रव्यगुण शास्त्र, त्रिदोष तथा निदान-चिकित्सा के सार्वभौम आयुर्वेदीय सिद्धान्त हैं न कि कोई विशिष्ट भेषजसंग्रह अथवा भेषजकल्प। यदि आयुर्वेदोक्त-निघण्टु व चिकित्साग्रन्थोक्त-द्रव्यों व कल्पों का प्रयोग भी रोग की दशा (विकृतिविज्ञान)-निदान, दोष, दूष्य, बल, काल, व्याधि की अवस्थाएं, रोगी की दशा (प्रकृतिविज्ञान) प्रकृति सात्म्य, देश, काल, सत्व आदि पृथक् विधतत्त्वों का ध्यान रक्खे बिना, द्रव्य गुण शास्त्रोक्त रस गुण वीर्यविपाक, प्रभावादि का ध्यान रखे बिना एवम्-हेतुप्रत्यनीक, व्याधि प्र०, हेतु-व्याधि प्र० चिकित्सा सिद्धान्तों आदि की ऊहापोह के बिना किया जाता है। तो वह सर्वथा आयुर्वेदिक और अशास्त्रीय है।

चरक ने स्पष्ट लिखा है 'हमने ग्रन्थ में जो भेषज या कल्प दिये हैं वे केवल दिग्दर्शन मात्र है बुद्धिमान् चिकित्सक उनमें प्रति रोगी की अवस्था विशेष के अनुसार फेर बदल कर सकता है। कोई भी औषधि एक रोग के सब रोगियों पर काम नहीं कर सकती, औषध व पथ्य में रोग व रोगी की अवस्था विशेष के अनुसार परिवर्तन वैद्याधीन है।

हां, आधुनिक भेषज कल्पों का तथोक्त प्रयोग उन चिकित्सकों द्वारा ही होना चाहिये, जिन्होंने प्राच्य-पाश्चात्य शास्त्र का तुलनात्मक रूप से अध्ययन करके साधिकार पात्रता प्राप्त करली है। मेरा विश्वास है कि ऐसा प्रज्ञावान वैद्य तथाकथित एलोपैथों और पुरानी परिपाटी के वैद्यों की अपेक्षा अधिक सफल हो सकता है। ऐसे आधुनिक वैद्य अवश्य ही आयुर्वेद को कलंकित करने वाले हैं जो आयुर्वेद के मूल सिद्धान्तों की नासमझी और अविश्वास के कारण केवल मात्र पाश्चात्यकल्पों के चाकचिक्य और शिघ्रकारिता से प्रभावित होकर डाक्टर कहलाने में ही गौरव समझते हैं और अविवेक पूर्ण अशास्त्रीम ढंग से पाश्चात्य भेषजों का अनियन्त्रित उपयोग करते हैं।

भ्रमनिवारणार्थ, मैं पुनः लिख देना चाहता हूँ कि क्रियात्मक रूप से मैंने अपने यहां के दस मास के कार्यकाल में केवल एक रोगी को माइसीन प्रयोग की सहमति दी है सम्मति नहीं। जिसे विज्वर होने के कारण अब काफी समय से आयुर्वेदोक्त औषधि व पथ्य व्यवस्था ही चालू है सम्भवतः वह खतरे से पार हो चुका है। मुझे विश्वास है कि ऐसे करके मैंने आयुर्वेद की अवहेलना नहीं, प्रत्युत उसके निर्देशों का अक्षरशः पालन करके न केवल वैद्योचित कार्य किया है, बल्कि एक मानव की प्राणरक्षा में असहयोग न करके मानवोचित कार्य भी किया है।

मैं एलोपैथिक चिकित्सा सिद्धान्तों को उपयुक्त नहीं समझता, न भेषज प्रयोग का ही समर्थक हूँ। चरक की इस युक्ति में मुझे भरोसा है कि 'शास्त्र (चिकित्सा विज्ञान) प्रकाश करने के लिए ज्योति (दीपक) के समान है और चिकित्सक की अपनी बुद्धि उसकी आंखें हैं। इन दोनों का सामंजस्य पूर्वक उपयोग करके चिकित्सा करनेवाला वैद्य कभी अपराध नहीं करता।'

'शास्त्रं ज्योतिः प्रकाशार्थं दर्शनं बुद्धिरात्मनः।
ताभ्यां भिषक् सुयुक्ताभ्यां चिकित्सान्नापराध्यति ॥'

हां धातुएं भी स्वास्थ्य वर्धक हैं !

(लेखक—श्रीमती प्रेमवती शर्मा)

क्या आपने आज अपने आहार में सभी धातुएं खाई हैं ?

इस प्रश्न का महत्व उतना ही है जितना कि इस प्रश्न का-"क्या आपने अपने भोजन में आज सभी विटामिन खाये हैं ?"

जौन्स होपकिन्स विश्वविद्यालय के मैकोलस प्रैट इन्सटीट्यूट के निर्देशक डा० विलियम डी० मैकिलरौय ने हाल में बर्मिङ्घम, अलाबामा, में "अमेरिकन कैमिकल सोसाइटी" द्वारा आयोजित एक गोष्ठी में "आहार में धातुओं का स्थान" प्रश्न पर यह घोषणा की कि पशुओं तथा पौधों के आहार में कुछ खास धातुओं का थोड़ी मात्रा में होना आवश्यक है। इनके बिना ये पशु और पौधे पनप और फलफूल नहीं सकते। जिन रासायनिक तत्वों का थोड़ी मात्रा में आहार में होना अनिवार्य है, वे लोहा, तांबा, मैग्नीज कोबाल्ट, आयोडीन, बोरोन तथा मोलिबडिनम हैं। वैसे तो यह बात पहले से ज्ञात थी, पर अब इस विषय में विस्तृत अध्ययन किया जा रहा है।

शरीर में होने वाली रासायनिक क्रिया में धातुओं को योग

थोड़ी मात्रा में ली गई धातुओं की मनुष्यों और पशुओं के शरीरों तथा पौधों में होने वाली रासायनिक क्रियाओं को नियन्त्रित करने में महत्वपूर्ण भूमिका रहती है। कुछ धातु तत्व सूक्ष्म कोषों में पाई जाने वाली प्रोटीनों के साथ मिलकर रस बनाते हैं। इन्हीं रसों से जीवन क्रियाओं को शक्ति प्राप्त होती है।

पौधे और धातुएं

उपजाऊ मिट्टी में फसलें पैदा करने की दशा में, पौधों के लिये आवश्यक धातुएं स्वतः उपलब्ध हो जाती हैं। अमेरिका तथा अन्य देशों के बहुत से किसान उस समय रासायनिक खादोंके साथ धातुतत्वों को मिलाते हैं, जब वे यह देखते हैं कि जिस भूमि में वे कृषि करते हैं उसमें खनिजोंकी कमी होगई है।

डा० मैकिलरोय ने बताया कि मोलिबडिनम धातु नाइट्रोजन को एमीनो एसिडों तथा प्रोटीनों में बदलने में पौधों की किस प्रकार सहायता करती है।

विटामिन और धातुएं

उन्होंने बताया कि हाल में किये गये अनुसन्धानों से पता चला है कि पौधों में जो मोलिबडिनम धातु मोजूद होती है, वह एक विशिष्ट प्रोटीन के साथ मिलने पर विटामिन बी-२ के मिश्रण एलैक्ट्रोनों को उस नाइट्रेट तक पहुँचाती है, जिसको पौधा मिट्टी से प्राप्त करता है। यह प्रक्रिया नौसादर की उत्पत्ति के लिये आवश्यक है। नौसादर से एमिनो एसिड तथा प्रोटीनें तैयार होती है।

लोहा और मैंग्नीज

"लोहा भी विटामिन बी-२ मिश्रण से इलैक्ट्रोन ग्रहण करता है, किन्तु वह इन इलैक्ट्रोनों को नाइट्रोजन की बजाय आक्सीजन प्रदान करता है।

इस प्रकार के अनेक अनुसन्धानों से यह बात निश्चित प्रतीत होती है कि मैलिबडिनम, लोहे तथा तांबे से पशुओं एवं पोधों को शक्ति प्राप्त होती है। विटामिनों के शक्ति पैदा करने के कार्य में धातुएं महत्वपूर्ण योग देती हैं।

ऐसी ही एक अन्य धातु मैगनिज है। यह भी इसी प्रकार का कार्य करती है। इसकी सहायता से पशु एवं पौधे फास्फोरस को अपने उपयोग में लाते हैं। श्री मैकिलरौय का कथन है कि मैग्नेजियम भी इसी प्रकार कार्य करती है।

डा० मैकिलरौय ने बताया कि पुरुषों, पशुओं एवं पौधों को स्वस्थ रखने के लिये इन सभी धातुओं का विशेष महत्व है। यह आशा की जा सकती है कि इस क्षेत्र में जो अनुसन्धान किये जायेंगे, उनसे अनेक धातुओं के कार्य के सम्बन्धमें नई तथा महत्वपूर्ण बातें मालूम हो सकेंगी।

त्वचा को स्वस्थ रखने के उपाय

(लेखक—बिलफर्ड आर० एन्डरसन, एम० डी०)

हमारे सारे शरीर में त्वचा ही सर्वप्रधान तथा विस्तृत अवयव है। केवल आंखों और मुंह के भीतर अतिरिक्त, त्वचा ही केवल शरीर का वह भाग है जिसे कि हम यथार्थ रूप में देख सकते हैं। उसकी सुचारु रूप से देख-भाल करना हमारे लिये अत्यन्त आवश्यक है क्योंकि त्वचा से ही हमें बाहरी स्पर्शों के बोध की अनुभूति होती है। इसी प्रकार त्वचा के द्वारा ही हमें पीड़ा का भी अनुभव होता है। मानव-शरीर में बहुत सारे अंग हैं, किन्तु हमारी त्वचा की अपेक्षा बहुत कम ही महत्वपूर्ण हैं। सचमुच त्वचा ही हमारे लिये एक सावधानी तथा विशेष ध्यान की पात्र है।

हमारी त्वचा हानिकारक कीटाणुओं के विरुद्ध एक महान बांध है। यह हमारी पहली सुरक्षा की सेना है जो कि हमें बाहरी आक्रमणों से बचाती है। यदि एक बार भी ये कृमि हमारे शरीर के भीतर घुस जांय तो ये निश्चय ही हमें अकथनीय हानि पहुँचा सकते हैं। किन्तु त्वचा स्वयं ही बहुत से हानिकारक कृमियों (Bacteria) को नष्ट करने की क्षमता रखती है। यदि इन कृमियों को सूखी, स्वस्थ त्वचा पर रख दिया जाय तो वे कुछ ही मिनटों में मर जायेंगे और अंतर्धान भी हो जायेंगे। किन्तु यदि त्वचा दुर्बल-दशा में हो, अस्वस्थ हो, तो वह कृमियों को नष्ट करने की अद्भुत शक्ति को खो बैठती है और शीघ्र ही विकृत तथा रोगयुक्त हो जाती है।

त्वचा को स्वस्थ रखने के लिए उसे अब और तब स्नान के रूप में स्वच्छ रखना अनिवार्य है। मुलायम साबुन का प्रयोग करना चाहिये। भूल से भी अपनी त्वचा पर किसी प्रकार का तेज घोल नहीं डालना चाहिए, नहीं तो यह त्वचा के रोगों की रोकने की शक्ति में बाधा पहुंचाता है। इसी प्रकार तेज लेपों (Ointments) का प्रयोग करना भी उचित नहीं है। संतुलित तथा उचित प्रकार का भोजन भी त्वचा को स्वस्थ रखने के लिये अत्यन्त आवश्यक है। दुर्बल भोजन ही बहुधा चर्म रोगों का मुख्य कारण हो जाता है। अपनी त्वचा को स्वस्थ रखने के लिये स्वच्छता तथा सुसंतुलित भोजन अत्यन्त आवश्यक और महत्वपूर्ण है।

मुंहासों का क्या करें ?

कोई यह जानना चाहेगा कि मुंह पर हुई फुन्सियों तथा मुंहासों से छुटकारा कैसे पाया जाय ? ये मुंहासे नौजवानों के लिए एक कठिन समस्या है। इनके होने से सारे मुख पर दाग पड़ जाते हैं, चकते बैठ जाते हैं और फोड़ने के उपरान्त पुराने चिह्नों से सारा चेहरा भद्दा तथा कुरूप हो जाता है और कितनी ही कोशिश करने पर भी ठीक नहीं हो पाता। इस प्रकार के रोग को ऐक्ने (Acne) कहते हैं। यह एक विशेष कृमि के कारण होता है। जिसे ऐक्ने बैसिलस (Acne Bacillus) कहते हैं, जो कि त्वचा की तैल-ग्रंथियों पर आक्रमण करता है। इस के अतिरिक्त, प्रवेश द्वार पाकर अन्य प्रकार के कृमि भी इनके अन्दर घुस सकते हैं। इन से अधिक तेलमय त्वचा वाले लोग ही अधिक प्रभावित होते हैं। ऐसे नवयुवकों को बार-बार कब्ज, अजीर्ण रोग और थकावट की शिकायत होती रहती है।

ऐक्ने का उपचार

(१) आहार में सुधार—चर्बीयुक्त, तैलयुक्त तथा भूने हुये अन्न को मत खाइये। पेस्ट्री, मिठाई तथा माड़ीदार भोजन से दूर रहिये। नमक, गोल मिर्च, गरम मसाले, सुअर के ताजे तथा सूखे मांस को त्याग दीजिये। अपने आहार में साबुत दालों का अधिक प्रयोग कीजिये और सब प्रकार के फल तथा हरी सब्जियों को शामिल कीजिये।

(२) पेय पदार्थ–चाय, कॉफी, कोको और नशा पैदा करने वाले पेयों का प्रयोग बिलकुल मत कीजिये।

(३) पर्याप्त निंद्रा—रात को कम से कम नौ घण्टे निश्चिन्त होकर सोइये।

(४) आंतों की स्वच्छता—आंतों को साफ रखने के लिये ताजे फलों का अधिक मात्रा में सेवन कीजिये।

(५) अपने हाथों को मुंह से दूर रखिये—मुंहासों तथा फुन्सियों से छेड़छाड़ कदापि न कीजिये, नहीं तो ऐसा करने से फुन्सियों का रूप व्रणों में बदल जाता है।

(६) थाइराइड हारमोन की गोलियों का प्रयोग, एक ग्रेन थाइराइड हारमोन की गोलियों को प्रतिदिन लेने से विकृत त्वचा को प्राकृतिक अवस्था में आने में मदद मिलती है। इनका प्रयोग कीजिए।

(७) ऐक्सरे थेरपी (Xray Therapy)—मुंह पर गम्भीर व्रण होने से ऐक्सरे थेरपी का प्रयोग किया जा सकता है। इससे गंभीर व्रणों के कारण उत्पन्न निशानों को भी रोका जा सकता है। इसका प्रयोग केवल एक कुशल तथा ऊंचे दर्जे का डॉक्टर ही कर सकता है। किसी और को अपनी त्वचा पर ऐक्सरे (Xray) का प्रयोग कदापि न करने दीजिये।

सफेद दागों का क्या करें ?

यह सफेद दाग त्वचा के किसी भी भाग पर उत्पन्न होजाते हैं। इनकी आकृति अधिकतर अण्डाकार होती है। इस रोग को विटिलिगो (Vitligo) या ल्युकोडर्मा (Lucoderma) कहा जाता है। यह हर प्रकार की जातियों पर पाया जाता है। किन्तु काली त्वचा वाले लोगों पर स्पष्ट रूप से दिखाई देता है। दुर्भाग्य से हम नहीं जानते हैं कि यह रोग किस कारण उत्पन्न होजाता है। कभी २ तो यह अपने ही आप ठीक होजाता है और कभी २ शरीर के बड़े २ हिस्सों पर अधिकार जमा लेता है। कतिपय डाक्टर इसे हारमोन की कमी के कारण समझते हैं। किन्तु हमें असली कारण मालूम नहीं है।

ल्युकोडर्मा का उपचार

१—अपने दिमाग को शांति तथा आराम से रखिए। क्योंकि ल्युकोडर्मा हमारे सामान्य स्वास्थ्य के लिए हानिकारक नहीं है।

२—दागों के ऊपर किसी प्रकार का उबटन (Ointment) लगाइए जिससे वे ढक जायं।

३—दागों को सूरज की रोशनी से बचाइए, क्योंकि यह आसपास की त्वचा को काला बना देती है और सफेद दागों पर कोई प्रभाव नहीं करती।

४—मरक्यूरिक क्लोराइड १ भाग, अलकोहल २५ भाग, पानी ७४ भाग मिलाकर एक लोशन बनाइए और उसे सफेद दागों के चारों तरफ के काले भाग पर दो या तीन बार रोज लगाइए। इससे इन दागों पर बड़ा असर पड़ेगा और उनके मिटने में देर न लगेगी।

यहां कुछ नियम दिए जाते हैं जिनके पालन से त्वचा के अधिकांश रोगों से मुक्ति मिल सकती है।

१–तेज साबुन और अन्य प्रकार के तेज घोलों का प्रयोग मत कीजिए।

शेष पृष्ठ १२८ पर पढ़ें

सन्निपात (आंत्रिक) ज्वर (Typhoid Fever)

[लेखक--वैद्य श्री धीरेन्द्र मोहन भट्ट शास्त्री जी० ए० एम० एस० बतौली, सरगुजा (म० प्र०)]

ज्वर शब्द से सिर्फ ताप वृद्धि मात्र का बोध होता है। जो ज्वर जन्म और मरण का कारण होता है एवं सम मात्रा में रह कर शरीर का उपकार करता है। और वही ज्वर मिथ्याहार विहार के करने से आपाद मस्तक तक भीषण रूप में बढ़कर मृत्यु का कारण होता है। ज्वर होने के पूर्व उष्मा की वृद्धि होती है। जिससे रस दूषित होकर स्वेद मल मूत्रादि का ह्रास कर देता है। एवं प्यास अधिक लगती है। तथा नाड़ी की गति तीव्र हो जाती है। ज्वर-यति शरीराणीति ज्वरः ज्वरयति संतापयति इति चक्रपाणिः नान्ये व्याधयस्तथाविधा दारुणाः सोपद्रवादुश्चिकित्स्याश्च यथायमिति । ससर्वरोगाधिपतिः नानातिर्यग्योनिषु वहुविधै शब्दै रभिधीयते । सर्वे प्राणभृतश्च सज्वरा एवं जायन्ते सज्वरा एव म्रियन्ते इत्यादि ।

ज्वरः प्रधानो रोगाणां त्वचि संताप लक्षणः ।
देहेन्द्रियमनस्तापी निजश्चागन्तुकश्च सः ।।

माधवाचार्य ने ज्वर की निरुक्ति इस प्रकार की है—

स्वेदावरोधः संतापः सर्वांग ग्रहणं तथा ।
युगपद्यत्ररोगे च स ज्वरो व्यपदिश्यते ।।

अर्थात् सभी प्रकार के ज्वरों में संताप वृद्धि प्राकृत पित्त का कर्म है। जो अग्नि रूप पित्त शरीर के धातुओं को जला कर उष्मा रूपी संताप को उत्पन्न करता है। यथा—

दर्शनं पक्तिरुष्माच क्षुत्तृष्णादेहमार्दवम् ।
प्रभा प्रसादोमेधाश्च पित्तकर्माविकारजम् ।।

६७.४ से ६८ फा० तक स्वाभाविक संताप माना गया है। इससे अधिक हो जाने पर प्राणी ज्वरी कहलाता है। चरक ने निम्न रूप में स्पष्ट किया है।

नास्ति पित्तकृते उष्मा-न चोष्मादृते ज्वरे"
और भी देहेन्द्रियमनस्तापी त्वचि संताप लक्षणः ।

आयुर्वेद के संहिता ग्रन्थ में वर्णित सन्निपात ज्वरों में आंत्रिक ज्वर का लक्षण कुछ कुछ मिलता जुलता है। लेकिन आन्त्रिक ज्वर या अंत्रज्वर करके कहीं संज्ञा नहीं मिलती है। जो ग्रन्थ ५०० वर्ष के इधर बने हैं उनमें ज्वर करके एक ज्वर लिखा गया है जिसका लक्षण प्रायः आंत्रिक ज्वर से मिलता है। आंत्रिक ज्वर संज्ञा महामहोपाध्याय जी ने दी है। जो एनेट्रिक का दूसरा शब्द है। इससे ज्ञात होता है कि प्राचीन समय में यह ज्वर भारतवर्ष में नहीं होता था। इतिहास के देखने से पता चलता है कि भारत में सब से पहले १५० वर्ष पूर्व पश्चिमी पंजाब में इस रोग का आक्रमण हुआ और धीरे धीरे सम्पूर्ण देश में फैलता गया। यद्यति यह सम्पूर्ण ऋतुओं में पाया जाता है। फिर भी ग्रीष्म वर्षा और शरद में अधिकतर होता है।

देहेन्द्रिय मनस्ताप लक्षण युक्त ज्वरको आंत्रिक ज्वर कहते हैं। जिसे प्राचीन आचार्यों के द्वारा वर्णित सन्निपात की विशेष अवस्था का द्योतक कहते हैं। महर्षि चरक ने १३ प्रकार तथा भालुकी ने दो-दो दोषों की अधिकता से सन्निपात को बताया है। कई विद्वानों के मत से वर्तमान संतत ज्वर को भी आंत्रिक ज्वर करके मानता दी है। क्योंकि आचार्यों ने दो तरह से संतत ज्वर को बताया है। यथाः—

संतत् ज्वरस्य सप्तमे दिवसे, सप्ताहं वा दशाहं

वा द्वादशाहमथापिवा । संतत्या योऽविसर्गी स्यात् सन्ततः स निगद्यते । अपरंच सुख साध्यः प्रकीर्तितः । चरक-प्रायशः सन्निपातेन दृष्टः पञ्चविधो ज्वरः सन्निपाते तु यो भूयात् सदोषः परिकीर्तितः ।

संतत ज्वर में वातादि दोष दूषित होकर धातुओं के साथ मल मूत्रादि को भी दूषित करता है । तथा सशुध्या वाप्यशुध्यावा मता शुद्ध्यति सर्वशः इत्यादि वाक्यों से दोष को शुद्ध होने में २५ दिन एवं इससे भी अधिक समय लगता है ।

सन्निपात ज्वर का लक्षण—

क्षणे दाहः क्षणे शीतमस्थिसंधिशिरोरूजा ।
सास्रावे कलुषे रक्ते निर्भुग्ने चापि लोचने ॥
सस्वनौ सरुजौ कर्णौ कण्ठः शूकै रिवावृतः ।
तन्द्रामोहः प्रलापश्च कासः श्वासोऽरुचि र्भ्रमः ॥
परिदग्धा-खर स्पर्शा जिह्वा स्रस्तङ्गता परम् ।
ष्ठीवनं रक्तपित्तस्य कफोनोन्मिश्रितस्य च ॥
शिरसो लोठनं तृष्णा निद्रानाशो हृदि व्यथा ।
स्वेदमूत्रपुरीषाणां चिरादर्शनमल्पशः ॥
कृशत्वं नातिगात्राणां प्रततं कठकूजनम ।
कोठानां श्यावरक्तानां मण्डलानांच दर्शनम ॥
मूकत्वं श्रोतसां पाको गुरुत्वमुदरस्य च ।
चिरात् पाकश्च दोषाणां सन्निपातज्वराकृतिः ॥

असाध्य लक्षणः—दोषे विवद्धे नष्टेऽग्नौ सर्व-सम्पूर्ण लक्षणः ।
सन्निपात ज्वरोऽसाध्यः कृच्छ्रसाध्यस्ततोऽन्यथा ॥
उपद्रवः—सन्निपात ज्वरस्यान्ते कर्णमूलःसु, दारुणः ।
शोथःसंजायते तेन कश्चिदेव प्रमुच्यते ॥

(माधव निदान)

सुश्रुत ने सन्निपात ज्वर का लक्षण निम्न रूप से किया है:—

निद्रानाशो भ्रमः श्वासस्तन्द्रा सुप्तांगाऽरुचिः ।
तृष्णा मोहोमदः स्तम्भोदाहः शीतं हृदिव्यथा ॥
पक्तिश्चिरेणदोषाणामुन्मादः श्यावदंतताः ॥ रसनापरुषा कृष्णा सन्धिमूर्द्धास्थिज रूजः । निर्भुग्ने कलुषे नेत्रे कर्णौ शब्द रुजान्वितौ । प्रलापः स्रोतसांपाकः कूजनं चेतनाच्युतिः ॥ स्वेदमूत्रपुरीषाणामल्पशः सुचिरात्स्रुतिः । सर्वजे सर्वलिंगानि विशेषं चाथ मे शृणु ॥

विशेषलक्षणः—नात्युष्णशीतोऽल्पसंज्ञो भ्रांतप्रेक्षी हतस्वरः । खरजिह्वाः शुष्ककण्ठः स्वेदविण्मूत्रवर्जितः ॥ सास्रनिर्भुऽमे हृदयो भक्तद्वेषीहतप्रभः । श्वासोन्नपतितः शेते फलायोपद्रवायुतः ॥ सन्निपात ज्वरंकृच्छ्रमसाध्यमपरे विदुः । निन्द्रोपेतमभिन्यासं क्षीण मेनं हतौजसम् ॥ संन्यासगात्रं संन्यासेविद्यात्सवाकेज्वरे । ओजो विस्रंसतेतस्य पितानिल समुच्छ्रयात् ॥ सगात्नस्तंभ शीताभ्यां शयने स्यादचेतनः । अपि जाग्रत्स्वपं जंतुस्तंद्रालुश्च प्रलापवान् ॥ संश्लिष्टरीमा स्रस्तांगोमन्द संताप वेदनः ओजो निरोधनं तस्य जानीयात्कुशलोभिषक् ॥ (सु० उ० अ० ३६)

कफकी अधिकता से अभिन्यासात्मक सन्निपात और वात पित्त की अधिकता से एवं श्लेष्म के भाग (साम्यधातु) ओज को नष्ट करते हैं । उसे हतौजस सन्निपात कहते हैं ।

अग्नि सोमात्मक संसार होने के कारण सन्निपात ज्वर के मुख्यतया दो ही भेद किये गये हैं ।

अर्थात् सन्निपात ज्वर तीनों दोषों (वात, पित्त कफ) के दूषित सम्मिलित से होता है । और जिनमें जिस दोष की प्रधानता होती है उसमें उन्हीं दोषों के लक्षण दृष्टिगोचर प्रतीत होते हैं । अतः उसी की उष्णता समझनी चाहिये । इसलिए भगवान् धन्वंतरि, वाग्भट्ट एवं माधवाचार्य ने अलग अलग उल्लेख नहीं किया है । परन्तु महर्षि चरक ने तेरह प्रकार का उल्लेख किया है । जो निम्न है ।

वातोल्वण, पित्तोल्वण, श्लेष्मोल्वण, वातश्लेष्मोल्वण, श्लेष्मपित्तोल्वण, द्विदोषोल्वण, वाताधिक-

मध्यपित्तहीन श्लेष्मा, वात मध्य पित्ताधिक हीन कफ, वातहीन पित्त वृद्ध कफ मध्य वाताधिक हीन पित्त मध्य कफ, वात मध्य पित्तहीन कफादिक एवं हीन मध्यपित्त कफादिक। इस तरह तेरह का वर्णन आया है।

लेख विस्तार भय के कारण उपरोक्त १३ का लक्षण पृथक पृथक न देकर आंत्रिक ज्वर के आधुनिक कारणों पर ध्यान आकृष्ट करना आवश्यक है। जो नीचे दिये जा रहे हैं।

इस रोग का कारण एक प्रकार का जीवाणु है जो प्रायः अधिक रास्ता चलने से, अधिक उपवास करने से तथा दुर्गन्ध के समीप रहनेवालों में शरीर से रोगक्षमता शक्ति घट जाने से जीवाणु उनके शरीर पर आक्रमण करके रोग का शिकार बनता है। इस जीवाणु के आंतों तक पहुँचने का मुख्य कारण दूषित अन्त्र ही बताया जाता है। यह रोगी के आंत्रिक व्रण मूत्राशय, पित्ताशय, प्लीहा एवं रक्तादि में विद्यमान रहता है। जिससे रोगी के मल मूत्र तथा यदा कदा स्वेद में उपस्थित रहता है। आन्त्रिक ज्वर से मुक्त होने के बाद भी कई दिनों तक रोगी के मल, मूत्रादि में यह जीवाणु देखा गया है। निम्न प्रकार से जीवाणु आहार द्रव्यों में जाकर रोग का कारण बनता है।

(१) रोगी के मल मूत्रादि से स्पर्श करनेके बाद हाथ को साफ किये बिना भोजन आदि करने से। (२) मक्खी द्वारा (३) रोगी के वस्त्र द्वारा। (४) दूषित मल नदियों द्वारा जाकर सम्पूर्ण जल को दूषित कर देता है। (मल का शुष्क कण भी सम्भवतः खाद्य पदार्थों तक पहुँच सकता है)।

भेदः--जीवाणुओंके भेद होने के कारण इसके भी निम्न भेद किये गये हैं--

(१) आन्त्रिक ज्वर (Typhoidfever)
( ) लघ्वान्तरिक ज्वर (Paratyphoidfever)
(३) " " " (क)
(४) " " " (ख)
(५) " " " (ग)

सम्प्राप्ति

यह निर्विवाद सिद्ध है कि इनके जीवाणु प्रायः मुख द्वारा आंतों में जाकर उनको अपना केन्द्र बनाते हैं। उसके बाद समीपस्थ लसीका ग्रंथियों को शोथमय कर देते हैं। यह शोथ धीरे धीरे बढ़कर दूसरे सप्ताह में कपा (अलसक) का रूप धारण करता है और कण के बढ़ने से समीपस्थ रक्तवाहिनी के फट जाने से रक्तश्राव होने लगता है। इस समय यदि आमदोष उपस्थित रहे तो दोष बढ़कर लक्षण भी तीव्र होजाते हैं। जीवाणु वृद्धि करके रक्त तक पहुँचता है। जिसकी मृत्यु से एक प्रकार का विष पैदा होता है। जिसका बाह्यरूप ज्वर होता है।

पूर्वरूप

शिरःशूल, अरुचि, मलविबन्धता, मन्द ज्वर, आलस्यता, धुंधलापन इत्यादि लक्षण एक सप्ताह तक बने रहते हैं।

लक्षण

(प्रथम सप्ताह)–ज्वर सहित पूर्व रूप प्रायः ८ बजे दिन में स्पष्ट होजाता है। एवं प्रतिदिन ज्वर का ताप सीढी के समान बढता जाता है। इस सप्ताह तक संध्या समय प्रायः शारीरिक तापमान १०२ फा० तक रहता है और सुबह १०० फा० तक रहता है। शिरशूल, अंगदर्द, अनुत्साह, ज्वराधिक्य नाड़ी की गति मन्द, जिव्हा मलिन, जिव्हांकुरता, कोष्ठबद्धता या अतिसार, पीडा, प्लीहावृद्धि, यकृति वृद्धि आदि लक्षण के अतिरिक्त गात्र (विशेषतः उदर और जंघा) में रक्तवर्ण का गोलाकार चिन्ह देखा जाता है जो गौरांग पुरुषों में अधिक साफ मालूम होता है। सबसे विचित्र तो यह है कि अतिसार रहने पर भी आध्मान बना रहता है।

द्वितीय सप्ताह

इस सप्ताह तक ज्वर अपने सीमा (१०४ और

१०५ फा०) तक पहुँच कर स्थिर रहता है। प्रातः-कालीन समय तापमान १०२ फा० से कम नहीं होता। पूर्व सप्ताह का लक्षण मौजूद रहता है। तन्द्रा, प्रलाप, प्रमूढावस्था, दुर्बलता, कास, उरुशोष आध्मान आदि लक्षण विशेष रूप से पाये जाते हैं। स्पर्श परीक्षा से जिव्हा खर स्पर्श मालूम होती है और वह किनारे से लाल अंकुर युक्त रहती है। शारीरिक तापमान ८ बजे दिन से बढकर ८-१० बजे रात्रि तक अपनी सीमा तक पहुँचकर पुनः प्रातः घटने लगता है। इसके विष के कारण रक्तचाप कम होने से हृदय में शिथिलता अनुभव होती है। रक्तश्राव होनेका भय भी रहता है। विष एवं दोष तीव्रता के कारण मृत्यु भी होते देखी गई है।

तृतीय सप्ताह

यदि दोष का पाचन हो चुका है तब इस सप्ताह में क्रमशः तापमान घटने लगता है। ज्वर के साथ २ उपद्रव सब भी घटने लगते हैं। बाईस दिन में रोगी प्रायः विगतज्वर होजाता है। शाम में तापक्रम कुछ बढता है। जो २८-वें दिन तक ठीक हो जाता है। यह देखा जाता है कि इस समय विज्वर होने पर भी मिथ्या आहार विहारादि से पुनः दोष बढकर क्रमशः आरोह-क्रम से ज्वर बढता है और ४२-वें दिन मनुष्य विज्वर होता है। किसी २ में ६५ दिन भी लग जाते हैं। अतः पथ्यादि व्यवस्था में काफी सावधानी रखना चाहिये।

योग रत्नाकर आदि ग्रन्थों में मंथर ज्वर के लक्षण आये हैं जो लघ्वान्तरिक ज्वर से मिलते जुलते हैं। आधुनिकों के मतानुसार दोनों में निम्न भेद बताया गया है।

विभेदक लक्षण—

मंथर ज्वर

१-यह भारत, मिश्र आदि देशों में अधिक होता है।

२-प्रायः पंद्रह वर्षकी आयु तक विशेष होता है।

३-एक बार होने के बाद पुनः हो सकता है।

४-आंख मीचे तन्द्रावस्था में रोगी प्रायः पड़ा रहता है।

५-प्रायः मल बंधता रहता है और ज्वर के अन्त में मल मलीन संयुक्त निकलता है।

६-गर्दन पर छोटे २ दाने निकल आते हैं जो इसके आराम होने का प्रायः चिन्ह है।

७-यकृत वृद्धि।

आंत्रिक ज्वर

१-यह यूरोप में अधिक होता है।

२-प्रायः पन्द्रह वर्ष से पच्चीस वर्ष की आयु में विशेष होता है।

३-एक बार होने के बाद शरीर में प्रति विष उत्पन्न होता है जिससे आंत्रिक ज्वर पुनः नहीं होता।

क्रमशः

शेष पृष्ठ १२४ का

२-त्वचा के ऊपर फैली हुई खुजली से छुटकारा पाने के लिए माड़ी (Starch) से स्नान कीजिए। गरम पानी के एक बड़े टब में आधा पौंड साधारण मांडी को मिलाइए और रोगी को टब के अन्दर एक या दो बार ३० से ४५ मिनट तक बैठने दीजिए।

३-साधारण भोजन कीजिए। विटामिन 'ए' की गोलियों का सेवन कीजिए।

४-निश्चिन्त रहिये। चित्त पर किसी प्रकार का तनाव न पड़ने दीजिए। इससे त्वचा विकार में वृद्धि होती है।

५-खूब आराम कीजिए। एक दिन में कम से कम नौ घण्टे तक सोइये।

६-अपने साथ, परिवार के साथ तथा दुनिया के साथ शान्ति से रहने का प्रयत्न कीजिए। स्वच्छ मनोवृत्ति ही त्वचा सम्बन्धी पुराने रोगों तथा अन्य प्रकार के रोगों पर विजय प्राप्त करने का कमाल दिखा सकती है।

('स्वास्थ्य और जीवन' से)

भीतरी बनाम बाह्य सफाई

(लेखक—श्री सुरेन्द्र प्रसाद गर्ग)

प्रकृति ने शरीर का ढांचा ही इस प्रकार का बनाया है कि उसके भीतर किसी प्रकार का मल, विजातीय द्रव्य अथवा खराबी नहीं रहने पाती। प्रकृति के भीतर सफाई के मुख्य चार साधन हैं। जब किसी कारणसे प्रकृति के ये नित्यद्वार भीतरी गंदगी को बाहर निकालने में असमर्थ रहते हैं तो प्रकृति तीव्र रोग के रूप में भीतरी सफाई करती है। इस दृष्टि से ज्वर, हैजा, निमोनिया आदि हमारे शत्रु नहीं, अपितु मित्र होते हैं। और हमें उनका स्वागत करना चाहिए। जो लोग इस सिद्धान्त को नहीं समझते और तीव्र रोग हो जाने पर उससे डरते हैं तथा उसे दवाओं द्वारा दबाने की चेष्टा करते हैं। उन्हें स्वास्थ्य सम्बन्धी बड़ी हानि उठानी पड़ती है।

हम लोगों की धारणा है कि रोग बाहर से आता है। पर यह धारणा बड़ी भ्रामक है। वस्तुतः रोग का कारण शरीर के अन्दर ही विजातीय द्रव्य के रूप में विद्यमान रहता है। इस विजातीय द्रव्य को उत्पन्न न होने देना और हो जाने पर उसे स्वाभाविक उपायों द्वारा बाहर निकाल देना स्वास्थ्य रक्षा तथा दीर्घायु का सर्वोपरि साधन है। बाहरी सफाई का स्वास्थ्य से नाममात्र का सम्बन्ध है। पर खेद है वर्तमान समय में भीतरी सफाई की ओर ध्यान न दिया जाकर बाहरी सफाई की ओर ध्यान न दिया जाकर बाहरी सफाई की ओर ही सारा ध्यान शक्ति व धन लगाये जाते हैं। इसका परिणाम यह हो रहा है कि दिनों दिन अनेक प्रकार के भयंकर रोग उत्पन्न हो रहे हैं।

इन्जेक्शनों, दवाओं आदि से आरोग्यता प्राप्त नहीं होती। ये तो शरीरके भीतर पहुँचकर कोमल अंग प्रत्यंगों को नष्ट तथा दूषित करते हैं। इनके सेवन से अकाल मृत्युयें तथा अल्पायु होती है। सो वर्ष जीनेवाला आदमी थोड़े दिनों में ही जीवन लीला समाप्त करदेता है। किसी अनुभवी ने ठीक कहा है कि प्रचलित दवाएं तथा इन्जेक्शन मनुष्य का चोला (देह) बदलने में बड़ी सहायता करते हैं। अतएव सच्चा स्वास्थ्य एवं दीर्घायु चाहने वाले को दवाओं और इन्जेक्शनों से अवश्य बचना चाहिये। शरीर में सच्ची रोग मुक्ति लाने के लिये हमें दवाओं से बच कर स्वास्थ्यप्रद आहार सात्विक स्वाभाविक फल, शाक पात, शुद्ध जल आदि का सेवन करना चाहिये। पत्तीदार शाक पात के कच्चे रस में शरीर को नीरोग रखने की अद्भुत शक्ति विद्यमान है। अतएव प्रतिदिन इनका रस लेना चाहिये। प्राकृतिक चिकित्सकों का अनुभव है कि हरे घास के रस में भी ये ही गुण हैं।

सफेद दानेदार चीनी, मैदा, मशीन का चावल या आटा चाय कहवा नशीले द्रव्यों आदि से शरीर की भीतरी शक्ति का ह्रास होता है। अतएव यथाशक्य इनसे बचना उत्तम है।

भोजन सुधार से और दवाओं का सेवन न करने से भीतरी शक्ति खूब बढ़ जाती है। इसके अलावा शुद्ध वायु में रहना, धूप तापना और किसी वस्त्र से रगड़ रगड़ कर स्नान करना भी स्वास्थ्य के लिये लाभकारी हैं। पर यह ध्यान रखना चाहिए कि बाहरी सफाई की अपेक्षा भीतरी सफाई आवश्यक है। जो लोग केवल बाहरी सफाई पर ही ध्यान देते हैं और

शेष पृष्ठ १३३ पर पढ़ें

सूचीवेध द्वारा सफल दुग्ध प्रयोग

(लेखक—वैद्यराज श्री ईश्वरलाल मेहताब आयुर्वेद शास्त्री)

वेद ही सब विज्ञानों का भण्डार है

संसार में जितनी कलाओं का अस्तित्व पाया जाता है, इतना ही नहीं, समय २ पर जिन २ कलाओं एवं विज्ञानों का आविष्कार हुआ, व हो रहा है और होगा उन सबका सूक्ष्म बीज वेदों में है। उक्त कलाओं या विज्ञानोंमें से ही हमारा एक आयुर्वेदिक विज्ञान है।

यह अष्टांग आयुर्वेद कई शाखाओं में विभक्त है। इन्हीं शाखाओं में एक शाखा तत्काल फल देने वाली सूचीवेध चिकित्सा है। पाश्चात्य जगत इसी को इन्जेक्शन चिकित्सा कहता है। पेटमें जिन औषधियों को पहुँचाया जाता है, पहले उनका परिपाक होता है, उसके बाद कहीं उनका रस बनकर हमारे जीवन धातु रक्तमें परिणत होता है और तब उसका फल होता है। इसमें विलम्ब होता है। रोगी की अवस्था तब तक ठहरने की नहीं हुई तो वह पेट में औषधि का प्रयोग करने पर भी जीवित नहीं रह सकता। इसलिए सूचीवेध चिकित्सा का इस संसार में अवतार हुआ है। इसलिए कि उसके द्वारा तुरन्त औषधि रक्त में पहुँचाई जाकर रोगी को जीवनदान दे सके। हमारे महर्षियों ने रोगी को सद्यः जीवनदान देने के लिए उपर्युक्त मूर्छितावस्था में ही इसका विधान किया है, किन्तु आजकलके सुधारक रोगी की प्रत्येक अवस्था में इससे लाभ उठा रहे हैं।

इन डाक्टर बन्धुओं की इस चमत्कारिणी सूचीवेध चिकित्सा को देखकर हमारे कई भोले भाई आश्चर्यचकित होते हुए समझते हैं कि यह नवीन आविष्कार इनका किया हुआ है किन्तु बात ऐसी नहीं है। इस संसार में जितनी वैद्यक पैथियां आजकल प्रचलित हैं उन सबका मूल हमारे आयुर्वेद में ही है। ठीक उसी प्रकार यह सूचीवेध (इन्जेक्शन) चिकित्सा भी आयुर्वेद से ही ली गई है।

दुःख का विषय है कि हम अपने महर्षियों की चमत्कारिणी चिकित्साओं को भूल बैठे हैं और दूसरे विदेशियों ने अपना लिया। हम उन अपनाने वालों को बहुत २ धन्यवाद देते हैं कि उन्होंने केवल अपनाया ही नहीं, अपितु समयानुकूल सुलभसूची यन्त्रादि तैयार करके हमारे सामने एक नवीन रूप उपस्थित किया है।

वस्तुतः यह विज्ञान हमारा ही है अतः हमारा कर्तव्य है कि जगत की भलाईके लिए हम इसे अपनाने में किसी प्रकार की हिचकिचाहट या विलम्ब न करें।

मैं आयुर्वेद के चिकित्सकों से नम्रतापूर्वक प्रार्थना करता हूँ कि वे कृपाकर मेरे नीचे लिखे विशुद्ध आयुर्वेदीय दुग्ध सूचीवेध का प्रयोग कर आयुर्वेद के गौरव को पुनः प्रतिष्ठित करें।

दुग्ध के इन्जेक्शन की महत्ता

दुग्ध का सूचीवेध (इन्जेक्शन) आयुर्वेद शास्त्रों में प्राचीनकाल से ही चला आ रहा है और शास्त्रकारों ने दुग्ध की अत्यन्त उपयोगिता को स्वीकार किया है। दुग्ध को ऊपर से तैयार कर तैलादिकों के साथ सिद्ध करके मालिश करने से लेकर केवल दुग्ध पथ्य पर ही ४० दिनों तक रोगियों को रखकर 'काया कल्प' करने की विधि हमारे आचार्यों ने निकाली थी।

एक जर्मन डाक्टर ने जल चिकित्सा की भांति दुग्ध चिकित्सा का भी आविष्कार किया है। आयुर्वेद चिकित्सा में भी दुग्ध अत्यन्त लाभप्रद सिद्ध हो चुका

है। कई प्रकार के रोगों में यह विशेष फलप्रद पाया गया है। इसकी विशेष उपयोगिता उस स्थान पर है जहां कि शरीर में कहीं मवाद उत्पन्न होने का भय हो दुग्ध के इन्जेक्शन के पश्चात शरीर में एक प्रकार का ऐसा पदार्थ उत्पन्न होजाता है जिससे मवाद उत्पन्न करने वाले जीवाणुओं का नाश होजाता है और वे अपना कार्य कार्य करने में अक्षम हो जाते हैं।

नेत्रों की सर्जरी करने से पूर्व इसके इन्जेक्शन देने से फोतों में मवाद पडने का बहुत ही कम भय रहता है।

प्रसूति के दुग्ध की कमी

प्रायः दुग्ध पिलाने वाली माताओं में दुग्ध की कमी देखी जाती है जिससे बच्चे को भूखा रहकर कष्ट उठाना पडता है। जिन माताओं को दुग्ध की कमी हो स्त्री के स्तन का दुग्ध एक सी० सी० लेकर इन्जेक्शन कर देने से उसके स्तनों में दुग्ध उतरने लग जाता है। यदि फल सन्तोषजनक न हो तो ३-४ दिन के पश्चात पुनः एक इन्जेक्शन और दे देना चाहिये। ऐसा करने से माता को काफी दूध उतरने लगेगा।

श्वेत प्रदर

इस रोग पर भी इसकी क्रिया बड़ी अच्छी साबित हुई है। मैंने जीर्ण प्रदर रोग से पीडित अनेकों स्त्रियों पर इसका प्रयोग करते हुए लाभ पहुँचाया है। ३-४ वर्ष से पीडित तथा और थोड़े समय से पीडित स्त्रियों को तो शीघ्र ही इसका इन्जेक्शन लाभ पहुँचाता है।

इन्जेक्शनके लिए दूध

इन्जेक्शन देने के लिए गाय, बकरी या स्त्री का दूध लेना चाहिये। जिसका दूध लिया जाय उसके स्वास्थ्य पर विशेष दृष्टि रखनी चाहिये। जिसका दूध लिया जाय उसका स्वास्थ्य उत्तम होना अनिवार्य है। भूलकर भी बीमार गाय, बकरी या स्त्री का दूध नहीं लेना चाहिये वरना लाभ के बदले हानि हो जायगी।

मात्रा

इसकी मात्रा २ सी० सी० से १० सी० सी० तक की है। प्रारम्भ में २ सी० सी० से शुरू करना चाहिये फिर धीरे २ मात्रा बढाना चाहिये। मात्रा रोगी का बलाबल देखकर ही बढाई जा सकती है। निर्बल रोगी को २ सी० सी० मात्रा ही पर्याप्त है।

स्थान

इसका इंजेक्शन मांस में गहरे स्थान पर दिया जाता है। इसके लिए चूतड उपयुक्त स्थान है।

प्रस्तुत विधि

दूध को सूचीबेध करने से पहले 'स्टेरीलाइज' शुद्ध कर लेना चाहिये। एक साफ शुद्ध टेस्ट ट्यूब (कांच नलिका) में दुग्ध को उचित मात्रा में लेकर उसे किसी जल भरे लोटे में ऊपर रखकर खौलावें। लगभग आधा घन्टे में दुग्ध इन्जेक्शन के योग्य तैयार हो जायगा। दूध को इतना ही गर्म करना चाहिये कि उस पर मलाई न बैठ जाय। मलाई बैठ जाने पर दूध इन्जेक्शन के योग्य नहीं रहता।

यह सूचीबेध के दुग्ध का क्रम वास्तव में चमत्कारिक है। इसकी हमने स्वयं अनेकों सुजाक वाले रोगियों और प्रायः सभी प्रकार की प्रदर वाली स्त्रियों पर प्रयोग करके परीक्षा की है और हमें ६५ प्रतिशत सफलता इसमें प्राप्त हुई है। घुटनों के व जोड़ों के दर्द वगैरह में भी उत्तम लाभ करता है। पाठक अवश्य परीक्षा कर फलाफल अवश्य प्रकाशित करें।

क्षय रोग में आवश्यक सूचना

(लेखक—डा० म० गं० पटवर्धन, नागपुर)

जब किसी व्यक्ति को हल्का २ ज्वर रहने लगता है, खांसी आने लगती है, उसके शरीर का वजन कम होने लग जाता है और खुराक भी कम होजाती है तो उस व्यक्ति को अपनी छाती का एक्स-रे फोटो खिंचवाना चाहिये और अपने थूक की परीक्षा भी करवानी चाहिए, ताकि यह ज्ञात हो सके उसके थूक में क्षय रोगके जन्तु या क्षय के जीवाणु हैं या नहीं। जितनी शीघ्रतासे उक्त बातों की डाक्टरी जांच करवा ली जाय उतनी शीघ्रता से ही रोगमुक्ति सम्भव होजाती है और पूर्ण नीरोग या रोग से पूर्ण रूपेण मुक्तिके अनेकों अवसर भी उपलब्ध हो जाते हैं।

आजकल नवीन २ औषधियों की खोज की गई है और रोग की पहचान करने के तरीकों में भी यथेष्ट प्रगति हुई है तथा क्षयरोग के लक्षण व उसके विभिन्न प्रकारों एवं उसकी विविध अवस्थाओं सम्बन्धी ज्ञान में वृद्धि भी हुई है। फलस्वरूप यह रोग अब पहले की भांति घातक नहीं रह गया है। फिर भी क्षय रोग के प्रसार या फैलाव की रोकने के लिए तो अभी बहुत कुछ किया जाना है। साथ ही क्षय रोग के गरीब रोगियों की चिकित्सा सुविधायें प्रदान करने की दिशा में भी काफी काम होना बाकी है।

अब हमें यह विचार करना है कि जब कोई व्यक्ति क्षय रोग के पंजे में फंस जाय तो उसे क्या करना चाहिये? (१) क्षय रोगी के लिए विश्राम की अत्यधिक आवश्यकता है। अकसर यह देखा जाता है कि जो क्षय रोगी पूर्ण विश्राम करता है उसको ज्वर काफी हल्का ही रहा करता है। जबकि मेहनत करने वाले रोगी को ज्वर काफी तेज रहा करता है।

(२) पौष्टिक भोजन—क्षय रोगी के लिए पौष्टिक भोजन भी आवश्यक होता है। क्योंकि ऐसे भोजन से रोगी का स्वास्थ्य सामान्य बना रहता है। जिसको पौष्टिक भोजन मिलता हो वह इस रोग की प्रतिकारात्मक शक्ति से भी अन्य लोगों की अपेक्षा, जिन्हें पौष्टिक भोजन नहीं मिल पाता, अधिक समर्थ होता है। 'काड लिवर' का सेवन भी क्षयरोगी के लिए लाभदायक होता है। साथ ही दूध और दही भी क्षयरोगी को सेवन कराना चाहिये। यद्यपि क्षयरोगीके लिए पौष्टिक भोजन या आहार आवश्यक है तथापि इस बात का पूरा २ ध्यान रखा जाना चाहिये कि कहीं रोगी आवश्यकता से अधिक भोजन न करले—क्योंकि अति आहार से उसकी पाचन शक्ति में बिगाड पैदा होजाता है। साथ ही अति आहार से रोगी का स्वास्थ्य भी खराब होजाता है और उसमें रोग का प्रतिकार करने की शक्ति भी कम हो जाती है।

(३) शुद्ध वायु और धूप सेवन—क्षय रोगी को शुद्ध वायु और धूप सेवन भी करना चाहिये, जो अत्यावश्यक है। यथा सम्भव ऐसे रोगी को खुली हवा में रहना चाहिये, जहां से शुद्ध वायु का सेवन सुलभ हो। कुछ लोगों का विश्वास है कि क्षय रोगी को भेड या बकरी के पास रखा जाय तो उसका रोग नियन्त्रित हो सकता है। पर वस्तुतः इस विश्वास के पीछे यह बात छिपी है कि क्षयरोगी को अधिकाधिक खुले स्थान पर रहना चाहिये। किन्तु ऐसा भी देखा जाता है कि लोग भेड या बकरी को रोगी के कमरे में बांध दिया करते हैं। फल स्वरूप अर्थ का अनर्थ हो ही जाता है क्योंकि रोगी के कमरे में यह भेड या बकरी गंदगी फैला देती है और कमरे के समूचे वातावरण को ही दूषित कर डालती है। परिणामस्वरूप फल सर्वथा विपरीत ही होता है।

इस प्रकार विश्राम, पौष्टिक भोजन और खुली हवा की भी चिकित्सा के साथ २ क्षय रोगी को परमावश्यकता है।

लोगों में एक और भ्रांत धारणा यह भी है कि बूढों और शिशुओं को क्षयरोग नहीं हुआ करता। पर बच्चों और बूढों दोनों को ही यह रोग होता है। वस्तु स्थिति तो यह है कि बच्चों को औसतन क्षय रोग अधिक होता है और क्षय रोगियों में बच्चे रोगियों का प्रतिशत ही सर्वाधिक हुआ करता है।

पं० शिव शर्मा के वक्तव्य का उत्तर

पाठकों ने गत मास के रसायन में 'आलोचकों को पं० शिव शर्मा का उत्तर' पढा था। उसके प्रत्युत्तर में श्री स्वामी हरिशरणानन्दजी ने प्रकाशनार्थ आयुर्वेद विज्ञान दिसम्बर अंक का एक कटिंग भेजा है जो नीचे प्रकाशित है। (सम्पादक)

अ० भा० आ० महामण्डल के अधिपति बनकर इस २५ वर्ष में उन्होंने जो सभा विधान की जो मिट्टी पलीद की उसका उल्लेख आयुर्वेद विज्ञान के नवम्बर अंक में पाठक विस्तृत रूपसे पढ चुके हैं। उसे पढ़कर पं० जी ने जो वक्तव्य आयुर्वेद पत्रों द्वारा प्रकाशित कराया है उसके कुछ अंश निम्न हैं।

"मेरे विरुद्ध कुछ लेख एक दो पत्रों में निकल रहे हैं"

व्यक्तिगत आपके विरुद्ध कुछ नहीं लिखा गया, प्रत्युत उनके कृत्यों के कारनामे ही संकलित किये गये हैं जो आयुर्वेद सम्मेलन पत्रिका में प्रकाशित हुए हैं। २४ वर्ष से वह पत्रिका उनके नीति की पोषक रही है, उनके विचारों को प्रकट करती चली आ रही है, मुख्यतः उनके व्यक्तिगत प्रचार का साधन रही है। उसी के सर्वांशतः प्रमाण उद्घृत किये गये हैं। यदि उनके उल्लिखित कृत्यों से आयुर्वेद महामण्डल को क्षति पहुँची है तो उस क्षति को पहुँचाने वालों में आप अग्रणीय व्यक्ति हैं। इसे डंके की चोट वैद्य समाज में और न्यायालयमें सदा सर्वदा सिद्ध करने के लिये तैयार हूं।

आप कहते हैं "मै इन आक्षेपों का उत्तर देना समय को बर्बाद करना समझता हूँ।" विधि विधान के विरुद्ध आचारण करने वाले सर्व सम्पन्न व्यक्ति के पास उत्तर नहीं होते तो पं० शर्मा जी क्या देंगे। यही न कि यह तो ऐसा होता ही आया है" वैद्य समाज में यह प्रथा या परम्परा है, इत्यादि।"

पुनः वह कहते हैं "उत्तर देना लेखक के महत्व को बढ़ाना है" आपके घटाने व बढ़ाने से लेखक के महत्व न घट सकते हैं न बढ़ सकते हैं, उसके महत्व को बढ़ाने वाली उसकी अपनी योग्यता ही हो सकती है। दूसरे न्यायालय तो ऐसा स्थान है जहां बड़ों बड़ों की योग्यता और महत्ता का पर्दा फाश हो जाता है। जब द्वार खटखटाओगे तो पर्दा उठ ही जायगा।

आप कहते हैं "व्यक्तिगत रूप से न्यायालय की शरण जाना किसी संस्था को अदालत में घसीटने के तुल्य अपराध नहीं है।" ख्याति अर्जन के लिये जब उसे आगे करते समय अपराध नहीं समझा गया तो अब उसे न्याय के कटघरे में खड़ा करना भला कभी अपराध हो सकता है? हरिशरणानन्द

शेष पृष्ठ १२६ का

तथोक्त वैज्ञानिकता के भ्रम में पड़ कर शरीर के भीतर दूषित-विष-दवा आदि पहुंचाते रहते हैं, वे भयंकर हानि उठाते हैं। यहां जीवाणुओं के सम्बन्ध में भी दो शब्द कह देना उचित है। जीवाणु रोग के कारण नहीं, परिणाम होते हैं। उनके पीछे लट्ठ लेकर मारने का प्रयत्न करना ठीक नहीं।

प्रकृति उन्हें हमारे भले के लिये अर्थात् सफाई के लिये उत्पन्न करती हैं। यदि कूड़े-कचरे को साफ कर दिया जावे या उसमें वृद्धि न की जावे तो ये जीवाणु स्वतः चल देते हैं। उन्हें मारनेसे दूषित द्रव्य में वृद्धि होकर उसका रूप बदल जाता है और एक रोग के लक्षण दबकर दूसरे लक्षणों वाला रोग उत्पन्न हो जाता है। हम इस बात को नहीं समझते और चिकित्सक के रोग को मिटा देने का श्रेय दे देते हैं और नहीं जानते कि बाद में उत्पन्न हुआ दूसरा रोग पूर्व में दवाओं द्वारा दबाये गये अर्थात दूर किये गये रोग का ही परिणाम है।

अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन

का

४१ वां वार्षिक अधिवेशन

समस्त भारतीय वैद्य समाज को साधारणतया तथा अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन के सदस्य महानुभावों को विशेषतया जानकर हर्ष होगा कि अखिल भारतीय आयुर्वेद महासम्मेलन तथा तदन्तर्गत निखिल भारतवर्षीय आयुर्वेद विद्यापीठ का ४१ वां वार्षिक अधिवेशन दिनांक २६, ३० तथा ३१ दिसम्बर १६५५ को आन्ध्र राज्य की राजधानी करनूल, में सम्पन्न हो रहा है। अधिवेशन के सभापतियों के निर्वाचन का प्रथम दौर समाप्त होचुका है और महासम्मेलन की २३ प्रादेशिक शाखाओं में से १७ प्रादेशिक शाखाओं द्वारा सभापति पदों के लिए प्रास्तावित ५-५ नामों में से निम्न महानुभावों ने बहुमत प्राप्त किया है:—

महासम्मेलनः—	(१) श्री डा० वाई पार्थनारायण पंडित, बंगलौर	१४ मत
	(२) वैद्यरत्न श्री पं० शिवशर्मा, बम्बई	१३ मत
	(३) वैद्यरत्न श्री कु० प्रतापसिंह जी बनारस	४ मत
	(४) वैद्यराज श्री यादवजी त्रिकमजी आचार्य, बम्बई	३ मत
	(५) श्री डा० ए. लक्ष्मीपति, मद्रास	३ मत
विद्यापीठः—	(१) वैद्यराज श्री भिकाजी विनायक डेग्वेकर, जबलपुर	११ मत
	(२) वैद्यराज श्री वी. बी. नटराज शास्त्री, त्रिचनापल्ली	५ मत
	(३) वैद्यराज श्री गुलराज शर्मा, मिश्र, नागपुर	५ मत
	(४) वैद्यराज श्री जगन्नाथ प्रसाद शुक्ल, प्रयाग	२ मत
	(५) कविराज श्री उपेन्द्रनाथ दास, देहली	२ मत

निर्वाचन के द्वितीय तथा अन्तिम दौर के लिए आवश्यक तैयारियां की जा रही हैं। मतदाताओं की की सूची प्रकाशित हो चुकी है जो सदस्य महानुभाव मंगाना चाहें १) अग्रिम भेजकर महासम्मेलन कार्यालय से प्राप्त कर सकते हैं।

सदस्यों को यह जानकर भी हर्ष होगा कि गतवर्ष रेलवे बोर्ड द्वारा प्रदत्त रेलवे कंसेशन की अस्थायी सुविधा को अब सर्वदा के लिए स्थायी बना दिया गया है। अतः गतवर्ष की भांति इस वर्ष भी कंसेशन की सुविधा सदस्यों को प्राप्त होगी। कंसेशन प्राप्त करने के लिए आवश्यक प्रमाणपत्र दिसम्बर १६५५ के प्रथम सप्ताह में ही सदस्यों की सेवा में भेज दिये जायेंगे ताकि वे समय पर अपने कंसेशन का प्रबन्ध कर सकें।

अधिवेशन का सामान्य कार्यक्रम महासम्मेलन पत्रिका के नवम्बर मासीय अंक में प्रकाशित किया जा चुका है। अधिवेशन उस्मानिया कालेज भवन, करनूल, आन्ध्र में सम्पन्न होगा।

अ० भा० आ० महासम्मेलन विद्यापीठ,
महालक्ष्मी मार्केट, चांदनी चौक,
देहली—६

वामनराव दी० वैद्य
प्रधानमन्त्री
अ० भा० आ० महासम्मेलन-विद्यापीठ

हमारा अन्वेषण कार्य

संसार में मानव रोगों की निरापद चिकित्साके लिए नैसर्गिक जड़ी बूटियों का प्रथम स्थान है क्योंकि हमारा शरीर प्राकृतिक है। वेद में भी वनौषधियों की प्रशंसा की है:--

औषधयः समवन्त सोमेन सहराज्ञा।
यस्मै कृष्णाते ब्राह्मणस्तं राजनं पारयामसि ॥
यजु० १२-९६

भावार्थ--औषधियां अपने राजा सोम (चन्द्र) के साथ बोलीं कि हे राजन्! ब्राह्मण (वैद्य) जिस रोगीके लिए हमारा उपयोग करता है उस रोगी को वह रोगरूपी सागर से पार करता है।

इस संस्था के प्रवर्तक कवि० डा० गणपतिसिंह वर्मा ने गत २७ वर्षों में जिन प्रभावजन्य अज्ञात अनुभूत योगों, द्रव्यों और जड़ी बूटियों का ज्ञान संग्रह किया है वह चिकित्सकों और जनसाधारण से अप्रगट नहीं है। तद्विषयक उनके द्वारा लिखी गई दरजनों पुस्तकें और सैंकड़ों लेख इस बात के स्पष्ट प्रमाण हैं। इस चौथाई शताब्दी की निरन्तर खोज और योगों तथा द्रव्यों के अन्वेषण तथा परीक्षण ने रोगग्रस्त मानव को रोगमुक्त करने का नया मार्ग खोल दिया है। जो जो योग अब तक के परीक्षण में सहस्रों रोगियों पर सफल सिद्ध हो चुके हैं उनको ही पेटेण्ट औषधियों का रूप दिया गया है। इनमें अनेक जानी पहचानी और अज्ञात औषधियां हैं जिनके अनुभूत गुणों का विवेचन न शास्त्र में मिलता है और न ही प्राचीन निघण्टुओं और आधुनिक मेटेरिया मेडिकाओं में। यह अनुभव का ही फल है। पर ऐसे सौभाग्य की देन दुर्लभ होती है जिनके बारे में पहले कुछ नहीं कहा जा सका। नई उपयोगी औषधियों में से अधिकांश का लम्बे तथा गहरे अनुसन्धान के बाद ही पता चला करता है और इस पर बडा व्यय हुआ करता है। आधुनिक युग में जिन कुछेक रसायनों को महत्वहीन समझा जाता था अनेक वर्षों के अनुसन्धान के बाद उनकी उपादेयता का अब पता चला है। अनुभूत योगों में से जो कुछ अद्भुत अचिंत्य शक्ति का परिचय मिलता है उसका पता पृथक्करण व हेतु से नहीं लगता। उसे प्रभावजन्य समझना चाहिये। प्रस्तुत लघु सूची पत्र में कतिपय ऐसी ही अनुसन्धानित आयुर्वेदिक पेटेण्ट औषधियों का सार दिया गया है जो वास्तविक अर्थों में अनुभूत, प्रमाणित और विश्वासजन्य हैं, जिनके निर्माण में स्वच्छता, द्रव्यों की विशुद्धता, कठिनता से प्राप्त होने वाली वनस्पतियों की प्राप्ति, योग द्रव्यों की सर्वांग पूर्णता व निर्माणपद्धति पर पूरा नियन्त्रण रखा जाता है। सभी चिकित्सक व रोगी सन्तोषपूर्वक इन औषधियों पर निर्भर रह सकते हैं। यह औषधियां चिकित्सक को यश दिलाने और रोगी को रोग मुक्त करनेमें अपूर्व हैं। आपसे प्रार्थना है कि आयुर्वेद का गौरव बढ़ाने के लिए आप इस संस्था की औषधियों को निज प्रयोग में लाकर तथा अधिकाधिक प्रचार करके हमें सहयोग प्रदान करें।

खालिसा

यहां कुछेक गंजनाशक जडी-बूटियों द्वारा निर्मित दवा है। सिर की चांद में या दाढ़ी, मूछमें जहांके बाल उड कर गंज पड गई हो वहां इसको मलने से नये बाल ऊग आते हैं और गंज मिट जाती है। मू० ५) पो० १।)

केशिनी

यह तैल दिमागी कमजोरी, थकावट और सिर दरद को दूर करता है। दिमाग को ताजा और ठण्डा रखता है, खुजली, भूसी को दूर करके झडते बालों को रोकता है। कुछ दिन निरन्तर लगाते रहने से गंजापन और बालों का सफेद होना रुक जाता है। कुछ विशेष केश टॉनिक जडी-बूटियों के रसों को तेल में विशेष पद्धति से पचाया जाता है, जलाया नहीं जाता जिससे बूटियोंके सब तत्व तेल में अक्षुण रहते हैं और अपना पूरा प्रभाव करते हैं। मूल्य ४ औंस १।।) एक पोंड ५।)

बुधान

अधिक मानसिक परिश्रम, चिन्तन, अध्यापन या किसी अकथनीय कारण से जिनका दिमाग कमजोर होगया है, स्मरणशक्ति घट गई है, हृदय दुर्बल होगया है, सिर में हल्का २ दरद और थकावट रहती है उनके लिए 'बुधान' बहुत लाभदायक है। इसके सेवन से उपरोक्त दोष मिट जाते हैं। दिमाग पुष्ट होकर स्मरण-शक्ति तीव्र होजाती है। इससे उन्माद तक के रोगियों को लाभ हुआ है। बुद्धिजीवी लोगों के लिए वरदान स्वरूप है। मूल्य ४) डाकखरच १)

टंकरोल

दो दिन में इसकी ६ मात्राओं के सेवन से जुकाम (प्रतिश्याम) ठीक हो जाता है। दो खुराक खाने से ही शिर का भारीपन, छींकें आना, नाक से पानी बहना आदि दूर होजाता है। इसका प्रभाव श्लेष्मकला पर होता है। २४ मात्रा की शीशी का मूल्य १) छः मात्रा का नमूना ।≈)

निद्राणी

स्वास्थ्य के लिए निद्रा उतनी ही आवश्यक है जितना कि भोजन, जल और शुद्ध वायु। भोजन के पचन और सात्म्यीकरण से शरीर की प्रत्येक सेल को अपनी स्थिती बनाये रखने की सामग्री मिलती है तो पूर्ण निद्रा से आराम मिलने के कारण घिसी हुई सेलों का पुनः निर्माण हो जाता है और खरच हुई शक्ति पुनः संचित हो जाती है। यदि युवा पुरुष को रात्रि में ६–७ घण्टे निरन्तर गहरी नींद नहीं आती या बीच २ में टूट जाती है तो यह मस्तिष्क धमनियों की कठोरता, पाचन सम्बन्धी रोग, विवन्ध, ब्लडप्रेशर (रक्तचाप) नाड़ी दौर्बल्य आदि व्याधियों का लक्षण है। 'निद्राणी' इन सब अवस्थत्रों में अपना निश्चित प्रभाव दिखाती है। कुछ ही मात्राओं के सेवन से रात्रि भर खूब गहरी नींद आने लगती है और प्रातःकाल उठने पर देह में स्फूर्ति और मन प्रफुल्लित होता है। इसमें कोई मादक या विषैला द्रव्य नहीं है। मूल्य ४) आधाकोर्स २॥) डाकखरच १)

नेत्राण

आंखों का दुखना, नेत्र पीड़ा, लाली, जलन, खुजली, सूजन, कीचड़ आना तथा अन्य नेत्र रोगों में परम लाभकारी है। दो बून्द नेत्रों में डालते ही ठंडक पड़ जाती है और २–४ दिन डालनेसे आराम होजाता है। वैसे ही कभी २ डालते रहने से नेत्र साफ रहते हैं और कोई रोग नहीं होने पाता। मूल्य ॥)

नाग सुरमा

यह सुरमा रसायनिक प्रक्रिया द्वारा बनाया जाता है। यह सभी नेत्र रोगों में लाभकारी है। दृष्टिमन्दता, दूर या निकट कम दिखाई देना, तिमिर, धुन्ध, जाला, आंखों से पानी बहना आदि रोगों को नष्ट करके दृष्टि को तेज बना देता है। लगाते ही नेत्रों में ठंडक प्रतीत होती है। ६ माशा की शीशी १॥) तीन माशा १)

हनीक

इस दवा का प्रयोग आपको मोतियाबिन्दु के आपरेशन के कष्ट से बचा सकता है। प्रारम्भिक मोतिया इससे मिट ही जाता है किन्तु बढा हुआ मोतिया आगे बढने नहीं पाता तथा निरन्तर कई मास लगाते रहने से आराम भी हो जाता है। मूल्य ५)

पायोगन

यह पायोरिया की सफल दवा है। इस दवा को दांतों पर मलकर ५ मिनट लगा रहने दो और फिर कुल्ला कर डालो। इस प्रकार कुछ दिन लगाने से मसूढों का गला हुआ मांस भरने लगेगा, पीप और रक्त का बहना बन्द होकर हिलते हुए दांत मजबूत हो जाते हैं। मूल्य २॥)

दन्तद्युति मंजन

यह मंजन मसूढे फूलना, दन्त पीडा, पानी लगना, मैल जमना, खून जाना, मुख में दुर्गन्ध आना आदि अनेकों रोगों को दूर करके दांतों को स्वच्छ चमकदार बनाता है। लगाने के बाद मुख में सुगन्धि आने लगती है। मूल्य ॥)

चवसोमला

दमा के लिए यह परीक्षित दवा है। इसका प्रभाव श्वास प्रणाली और स्वरयन्त्र पर होता है। इसके सेवन से नाडीमण्डल की उत्तेजना शान्त होकर श्वास नलिकाओं का प्रसार होता है जिससे रोगी सुख का सांस लेता है और उसका कष्ट दूर होजाता है। पूरा कोर्स समाप्त हो जाने के बाद श्वासनलिकायें पूर्ण स्वच्छ और फेफड़े पुष्ट हो जाते हैं। फिर कभी दमा का दौरा पडने का भय नहीं रहता। मूल्य ५)

कफ कर्ष

यह नई और पुरानी हर प्रकार की खांसी में लाभदायक है। इसके सेवन के कुछ ही देर बाद धसक में आराम होने लगता है और कुछ ही दिन सेवन करने से पूरा आराम हो जाता है। मूल्य १)

दिलावरी

इस दवा का प्रभाव हृदय और फेफड़ों पर होता है जिससे हृदय की धड़कन, कमजोरी, शूल, शिथिलता, दाह, घबराहट, तृषा, आदि दूर होकर हृदय तथा मस्तिष्क ताजा और पुष्ट हो जाता है। मूल्य ५)

हृदय रोग की दवा 'हीरा भस्म' विशेष

हृदय रोगों का सर्वोपरि इलाज यह हीरा भस्म है। इसके सेवन से भयंकर हृदय रोग को भी अवश्य आराम हो जाता है। यह हृदय उत्तेजक और शूल-हारि होने से हृदय शूल (जिसमें भयंकर दाह होकर मूर्च्छा आ जाती है) तथा मिथ्या हृदयच्छूल जो हृदय यन्त्र के बाहिर चलता है दोनों पर अपना तत्काल प्रभाव दिखाती है। यदि धमनियों में रक्त संग्रह होता हो या अवरोध होता हो तो उसे भी दूर करती है एवं वात-नाड़ियों को बल देकर रोग को निर्मूलकर देती है। यह भस्म एक बूटी के क्वाथ के साथ सेवन की जाती है अनुपान की बूटी सहित २० मात्रा का मूल्य ५०) पो० १।)

आमाशयम

दिनभर कुर्सी या गद्दी पर बैठकर काम करने वालों का आमाशय (मेदा) प्रायः दुर्बल हो जाता है, कारण झुककर बैठने से आमाशय पर दबाव पड़ता है जिससे उसके क्रिया संचालन में वाधा पड़ती है और धीरे २ वह निष्क्रिय सा होता चला जाता है। फिर भोजन पचन उचित रूप से नहीं होता और भांति २ की उदर सम्बन्धी व्याधियां उत्पन्न हो जाती हैं। यदि आमाशय कठोर हो जाये तो खाने की औषधियां बहुत कम लाभ पहुँचाती हैं। 'आमाशयम' आमाशय पर मालिश करने की दवा है जो लगाते ही त्वचा में प्रविष्ट हो जाती है। यह खाने की दवाइयों की अपेक्षा शीघ्र लाभप्रद है। इसके प्रयोग से आमशय सबल होकर अपना काम सुचारु रूप से करने लगता है। मूल्य एक औंस का ४) डाकखरच सवा रुपया।

अमोनिरी

यह हमारी नव अनुसन्धानित विशेष वनस्पतियों द्वारा निर्मित और दो वनस्पतियों द्वारा भावित योग है जिसे दीर्घ परीक्षण के बाद अब प्रकाश में ला रहे हैं। यह औषधि आजकल के बहुप्रचलित पेट रोगों और उनके उपसर्गों यथा-आंत की सूजन व शूल, व्रण, वायुविकार, मल की सड़न से उत्पन्न होने वाले विष दोष, गैस चढ़ना, अम्लपित्त, आंव, जीर्ण कब्ज, भूख न लगना, खून की कमी, नींद न आना, बुढ़ापा लाने वाली अम्लता, जोड़ों का दर्द व खांसी, जुकाम आदि के लिए अद्भुत गुणकारी सिद्ध हुई है। आमाशय और आन्तें बलवान होकर भूख खूब लगती है। स्वच्छ रक्त बनने से शरीर पुष्ट हो जाता है। मूल्य एक कोर्स ४) डाकखरच १।)

लीवर शर

यह दवा यकृत सम्बन्धी सभी रोगों के लिये हितकर है। लीवरसारयुक्त इस दवा के सेवन से शारीरिक मानसिक कमजोरी, यकृत दुर्बलता, श्याम और पीत पाण्डुरोग, हाथ पांव की सूजन, सांस फूलना आदि विकार मिटते हैं। मूल्य २।।)

कोलरास

हैजा की प्रत्येक दशा में इसके सेवन से लाभ हो जाता है। अब तक के परीक्षण में अद्भुत लाभ-कारी सिद्ध हुई है। प्रति वर्ष हजारों रोगी इसके सेवन से स्वास्थ्य लाभ करते हैं। मूल्य १।) मात्र।

ग्रहणी शाल

नई संग्रहणी में इसको ७ दिन सेवन करने से ही पूरा आराम हो जाता है। ३ मात्रायें सेवन करते ही इसका विशिष्ठ गुण दृष्टीगोचर होने लगता है। पुरानी संग्रहणी में २ से ३ सप्ताह सेवन करना आवश्यक है। एक सप्ताह की दवा का मूल्य ३)

स्वर्णजल

संग्रहणी रोग की यह सर्वश्रेष्ठ अव्यर्थ अमीरी दवा है। यह स्वर्ण योग है जिसमें स्वर्ण को प्रमाणु रूप में लाकर जल में घुलनशील बनाया जाता है। १० दिन की ३० मात्रा का मूल्य १५)

सनोल

यह पुराने कब्ज की दवा है। इसे लगातार १५ दिन सेवन करने से पुरानी कब्ज मिट जाती है। प्रति दिन प्रातःकाल दस्त खुलकर साफ आता है। पेट साफ हो जाने से चित्त प्रसन्न रहता है और भूख अच्छी लगती है तथा शरीर में स्फूर्ति आती है। दवा का कोर्स पूरा हो जाने के बाद फिर कभी कब्ज नहीं होगा और समय पर नियमित रूप से दस्त साफ हुआ करेगा। मूल्य ३॥) पो० १॥-)

डायबोडीन

इक्षमेह, मधुमेह (डायबीटीज) प्रसिद्ध और भयंकर रोग है और इस रोग की यह दवा विश्वास-जनक चिकित्सा है। डाक्टरीमें इन्सुलीन के इन्जेक्शन काम चलाऊ इलाज है इससे रोग नहीं मिटता। जब रोग बहुत बढ़ गया हो तो इससे सहायता ली जासकती है किन्तु रोगको निर्मूल करनेके लिए 'डायबोडीन' का सेवन परमावश्यक है। यह दवा १० दिन में अपना असर दिखा देती है और २० दिन के सेवन से सुगर नार्मल के बराबर होजाती है। दो मास सेवन से रोग समूल नष्ट हो जाता है। यह नवीन खोज की गई वनस्पतियोंके परीक्षण का सफल परिणाम है। मूल्य पूरा कोर्स २४) परीक्षार्थ आधा कोर्स १२) डाकखरच जुदा।

वृक्कोल

गुर्दे की चाहे जैसी घोर पीड़ा हो, इस दवा के सेवन से १५ मिनटमें ही चैन पड़ जाता है और दूसरी तथा तीसरी मात्रासे पूर्ण आराम होजाता है। मू० १॥)

बवासीर का सफल इलाज (अंकुरना)

बवासीर चाहे खूनी हो या बादी—दोनों को ही ५ दिन में पूरा आराम होजाता है। इस दवा में खाने या लेप करने का कोई झंझट नहीं। केवल थोड़ी सी देर इस दवा का धुवां मस्सों को स्पर्श कराना होता है जिससे किसी प्रकार का किंचित भी कष्ट नहीं होता। दवा का नाम अंकूरना है। मूल्य ५) डाकखरच १।)

गठना

गठना—गठिया (Gout) सन्धि पीडा, सन्धि वात, रींघनवाय, लकवा, कटिपीडा, पार्श्वशूल तथा सम्पूर्ण वायु रोगोंके लिए यह अकेली और बहुपरीक्षित दवा है। खाट में पड़ा रोगी भी ३ दिवस के सेवनसे चलने फिरने लग जाता है। इससे हर प्रकार के वायु रोग नष्ट हो जाते हैं। एक शीशी की कीमत ३)

मलना

यह नव आविष्कृत कैपशूल हैं। ६ कैपशूल के सेवन से मलेरिया बुखार निश्चित रूप से दूर हो जाता है। टाइफाइड और क्षय को छोड़कर बाकी सब प्रकार के ज्वरों को दूर करने की क्षमता इसमें है। क्रीनीन या आर्सेनिक आदि किसी विष का मिश्रण इसमें नहीं है इसलिए ऐसी औषधियोंसे उत्पन्न होनेवाले दुष्प्रभाव भी इसमें नहीं हैं। सर्वथा निर्दोष, मलेरिया और सभी प्रकार के ज्वरों की अमोघ दवा ६ कैपशूल ॥।) तथा ३६ कैपशूल का पैकिंग ३॥)

ल्युकोआयर

इस दवा के सेवनसे नया श्वेत और रक्त प्रदर ६ दिन में ही मिट जाता है साथ ही हडफूटन, कमर का दरद, उदासी आदि व्याधियां दूर होकर रुग्णा स्त्री स्वस्थ और पुष्ट बन जाती है। ६ दिन की दवा का मूल्य २) यदि रोग पुराना हो तो ४ शीशी सेवन करना चाहिये। एक शीशी से चार शीशी तक का पो० १।)

नियन्त्रक

यह लगाने या रखने की दवा नहीं है, बल्कि

ाने की निर्दोष दवा है। इसके सेवन करने के बाद फिर गर्भ नहीं रहता। परीक्षण में श्रेष्ठ और सफल सिद्ध हुई है। मासिक धर्म प्रतिमास नियमित होता होगा, शरीर पुष्ट बनेगा। स्वास्थ्य पर किसी प्रकार का कुप्रभाव नहीं पड़ता। मूल्य ५) डाकखरच १।)

पीताम्बर (एक महान टॉनिक)

यह दवा पर्वतों पर बर्फ में पाई जाने वाली एक अत्यन्त शक्तिवर्द्धक बूटी के योग से बनी है। इसके सेवन से स्त्री पुरुषों में किसी भी कारण से उत्पन्न हुई अशक्ति, दुर्बलता, शरीर का दुबलापन, वजन घट जाना, खून की कमी, गहरी नींद न आना, उत्साह और स्फूर्ति का अभाव आदि विकार मिटकर शरीर पुष्ट, शक्ति सम्पन्न और कान्तिमय होजाता है, क्योंकि इसके सेवन से खून में श्वेत और लाल अणु खूब बढते हैं। मूल्य एक मास की दवा का १०) पो० १।)

नोट—निरामिष भोजी, अविवाहित और विद्यार्थी इसके लिए आवेदन न करें।

बाल रस

यह दवा विशिष्ठ वनस्पतियों का अत्यन्त स्वादिष्ट और मीठा तरल सत्व है इसलिए बच्चे प्रसन्नतापूर्वक पी लेते हैं। इसमें चीनी नाममात्र को भी नहीं है। बालकों के ज्वर, खांसी, वमन, दूध पटकना, अपचन, हरे पीले दस्त, सूखा रोग, अशक्ति, खून की कमी आदि व्याधियों को दूर करनेकी अपूर्व दवा है। एक शीशी के सेवन से ही बच्चा निरोग और पुष्ट तथा मोटा-ताजा बन जाता है। स्वस्थ बालक को सेवन कराते रहने से वह प्रायः सभी रोगों से सुरक्षित रहता है।

जोइन्टान

टूटी हड्डी जोड़ने की अद्भुत दवा

मनुष्य की हड्डी चाहे जहां से टूट गई हो—इसकी एक मात्रा खिलाने से अपने आप यथास्थान बैठकर तुरन्त जुड जाती है और जोड के स्थान पर वेल्ड किये की भांति एक गोल कडा सा लग जाता है जो कुछ दिन बाद स्वयं ही मिट जाता है। यदि दो मात्रायें खिलायें तो दो और तीन मात्रा खिलाने से तीन कड़े से लग जाते हैं, जो कुछ समय बाद मिट जाते हैं। जैसा केस हो उसी के अनुसार मात्रायें देना चाहिये। चाहे जैसा केस हो ३ मात्रा से ठीक होजाता है। तीन मात्रा का मूल्य ३) छः मात्रा का ५) तथा १२ मात्रा का मूल्य ६) है। हमारे क्लिनिक में आने वाले गरीब रोगियों को यह दवा मुफ्त दी जाती है।

चन्द्रजीवन कल्प

आयुर्वेदिक चिकित्सकों के लिए यह सुन्दर अवसर है कि वह इस कल्प से तपेदिक (क्षय) की चिकित्सा कर यश प्राप्त करें और देश की सबसे बड़ी समस्या को हल करने में योगदान दें। इस कल्प को सरलता पूर्वक रोगी के घर पर भी कराया जा सकता है। एक मास का कल्प पूरा होने पर क्षय के कीटाणुओं का नाश हो जाता है। शरीर में रस, रक्त, मांस तथा धातु की वृद्धि होकर शक्ति और स्फूर्ति का संचार होने लगता है, ज्वर, खांसी आदि उपद्रव व क्षय के समस्त लक्षण मिटकर रोगी स्वस्थता अनुभव करने लगता है। इस कोर्स को समाप्त करने के बाद 'फ्लैशटोन' नामक दवा भी एक मास सेवन करना उचित है। कोर्स का मूल्य ३०) रु० मात्र। विशेष जानकारी के लिए पत्र व्यवहार करें।

अग्निस्थाई पारद गुटी

अग्निस्थाई पारे के दिव्य गुणों को प्रायः सभी जानते हैं किन्तु यह दुर्लभ वस्तु है, वर्षों के सतत प्रयास से अब हम इसको बनाने में सफल होचुके हैं। इस पारद को चाहे जितनी तेज आग पर रखो, न उड़ेगा और न वजन कम होगा। इसकी गोली को मुख में रखकर चाहे जितना शारीरिक, मानसिक परिश्रम करो थकावट बिल्कुल न होगी। २-योगाभ्यास करने वालों को समाधिस्थ अवस्था प्राप्त होती है। ३-भजन पूजनमें मन एकाग्र होता है। ४-दूधमें गोली उबालकर पीनेसे अत्यन्त बल और पराक्रम प्राप्त होता है। अन्य गोपनीय गुण सेवन विधि में पढें। अनेक चिकित्सकों और महात्माओं द्वारा परीक्षित मूल्य २१) छोटी १०)

जी० एस० आयुर्वेदिक रीसर्च प्रॉडक्टस ३ दरियागंज, देहली ७

रत्नों के साथ तुलनेवाली अनुपम पुस्तकें

४० से अधिक आयुर्वेदीय पुस्तकों के रचयिता प्रसिद्ध लेखक व चिकित्सक राजवैद्य डा० गणपतिसिंह वर्मा द्वारा रचित व प्रकाशित—यह वही पुस्तकें हैं जिनकी वैद्य, हकीम, डाक्टर और जनसाधारण मुक्तकंठ से प्रशंसा कर रहे हैं। जिनके विषय में देश के गणमान्य लोगों की सम्मति है कि इन पुस्तकों का प्रत्येक घर में होना अत्यावश्यक है। क्योंकि इनके द्वारा प्रत्येक व्यक्ति प्रत्येक स्थान में सहसा होजाने वाले रोगों का सरलतापूर्वक इलाज कर सकता है। प्रत्येक पुस्तक के कई २ संस्करण हो चुके हैं जो कि इनकी लोकप्रियता का सबसे बड़ा प्रमाण है।

अनुभूत योग चिन्तामणि

इसके लेखक ने ५ वर्ष तक लम्बी २ यात्रायें करके संन्यासियों की कठिनतम सेवा और भ्रमण के अथक परिश्रम के अतिरिक्त ५४३५ रुपये खर्च करके जो ५३३ जादु असर अनुभूत नुस्खे प्राप्त किये थे वह निष्कपट भाव से इस पुस्तक में प्रकाशित कर दिये हैं। भारतवर्ष के सैंकडों वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों ने इन सब नुस्खों की पचासों बार परीक्षा करके शत प्रतिशत अनुभूत होने के प्रमाणपत्र दिये हैं जिससे सिद्ध होगया है कि इसमें एक भी ऐसा योग नहीं--जो अनुभूत सिद्ध न हो, सबके सब संन्यासियों के हृदय के गुप्त योग हैं। भारत के गणमान्य हकीमों व वैद्यों का निर्णय है कि जिसके पास यह पुस्तक नहीं, निःसन्देह उसकी चिकित्सा और औषधालय अधूरा है। मूल्य प्रथम भाग पांचवीं आवृत्ति ४।) द्वितीय भाग ४) डा० ख० जुदा।

१५ वर्ष के कठिन परिश्रम का फल

अनुभूत योग प्रकाश

आज से १५ वर्ष पूर्व जिस पुस्तक को प्रकाशित करने का आयोजन प्रकाशित किया गया था वह पुस्तक अब छपकर तैयार होगई है। इस पुस्तक के योगों के विषय में केवल इतना बतला देना ही काफी होगा कि गत १५ वर्ष के सतत उद्योग से बड़े २ साधु, महात्मा, फकीरों, भीलों से लेकर राजा, रईसों तथा ख्यातिवान प्रसिद्ध विद्वान वैद्यों, हकीमों और डाक्टरों के उन अनुभूत चमत्कारी योगों को इस पुस्तक के पृष्ठों पर अंकित कर दिया है-जिनको आज तक जमाने की हवा भी न लगी थी। फिर इसके लेखक डा० जी० एस० वर्मा का नाम ही बड़ी जमानत है कि पुस्तक कैसी है। इसमें सबसे बड़ी वह रीसर्च आपको मिलेगी जिसे आज तक आपने सुना भी न होगा अर्थात समुद्रीय द्रव्यों यथा मुक्ता शुक्ति, प्रवाल, शंख, कपर्दिका आदि का तेल बनाना। इन तेलों की तुलना में इन द्रव्यों की भस्में बहुत तुच्छ लाभ पहुंचाती हैं। इन तेलों से अनेक कष्टसाध्य कहे जाने वाले रोग शीघ्र मिट जाते हैं। दूसरी विशेषता यह है कि इन तेलों से उड़ने वाले सभी द्रव्य यथा पारद, हिंगुल (शिंगरफ) आदि स्थाई होजाते हैं। इस पुस्तक में कोई ऐसा रोग नहीं छोडा जिस पर अनुभूत सिद्ध योग न छपा हो। मूल्य ६।) डाकखर्च ॥।=)

इन्जेक्शन बनाना व लगाना सीखो

इन्जेक्शन चिकित्सा तत्काल प्रभाव दिखाने वाली होने से आज लोकप्रिय हो रही है, किन्तु वैद्यों, हकीमों को इसकी जानकारी न होने से उन्हें बडी कठिनाइयों का सामना करना पड रहा है। इन्हीं भावों से प्रेरित होकर यह पुस्तक तैयार की गई है, जिसमें समस्त रोगों की चिकित्सा आयुर्वेदिक, होम्योपैथिक और एलोपैथिक इन्जेक्शनों द्वारा ही करना बतलाया गया है। रोगशीर्षक के नीचे क्रमशः प्रत्येक रोग के तीनों प्रकार के इंजेक्शन ऐसे ढंग से लिखे गये हैं कि जिससे चिकित्सक एक क्षण में निश्चय कर सकता है कि कौनसा इन्जेक्शन किस स्थान पर, कितनी मात्रा में, कितने अन्तर से, किस प्रकार लगाना चाहिये और साथ २ इन्जेक्शन बनाने की विधि भी लिखदी गई है। आयुर्वेदिक इन्जेक्शन जिन द्रव्यों से बनाये जाते हैं वह तमाम आपके घर में, खेतों और जंगलों में सर्वत्र मिल सकते हैं। एक-एक रोग पर कई २ इन्जेक्शन बनाने के योग लिखे गये हैं। इसके अतिरिक्त

सीरम, वैक्सिन, पेनिसीलीन, विटामिन्स के इंजेक्शनों क वर्णन और उनको लगाने की सरल व निरापद सचित्र विधि भी खूब समझा कर लिखदी गई है। इस पुस्तक को पढ़ने के बाद इन्जेक्शनोंके विषय में जानने को कुछ भी शेष न रहेगा और सब प्रकारके इन्जेक्शन तरल (लिकिड) टेबलेट व पौडरादि रूप में बना व लगा सकेंगे। मूल्य ५) डाकखरच ।॥-)

सिद्ध रसायन

रस-रसायन की जिन कठिन क्रियाओं से वैद्य बन्धु घबराकर उनके दिव्य गुणों से वंचित रह जाते हैं, उन क्रियाओं का लम्बा अनुभव करके विद्वान लेखकने उनका सरल तरीका इस ग्रन्थ में दर्शाया है और साथ ही महान रसायनाचार्य नागार्जुन और अन्य सिद्धोंकी संचिकाओं के अज्ञात योगों को उनकी गुत्थी सुलझाकर प्रकाशित किया है जिनसे पाठक न केवल काया (काया-कल्प) रंगने में ही सफल होंगे बल्कि स्थिर मति वाले माया (कीमिया) रंगने में भी सफल होंगे। इस प्रकार पाठकों को जहां आर्थिक संकट से मुक्ति मिलेगी वहां असाध्य समझकर छोड़ दिये जाने वाले रोगों के वे सिद्धहस्त चिकित्सक भी बन जावेंगे। इस पुस्तकके कुछेक योगों का दिग्दर्शन करा देने से आपको अनुमान हो जायगा कि यह कितना अपूर्व ग्रन्थ है। यथा-शुद्ध बद्ध और सिद्ध करने वाली दिव्य औषधियां, औद्भिदाम्ल व बूटियां, रस बन्धन, गन्धक को स्थाई करना, बद्ध पारद को सिद्ध बनाना, रजत रंजन (कीमिया) अभ्रक सत्व की द्रुति, द्रुति से पारद बन्धन, बंग स्तम्भन, पारद भस्म रक्तयोगेन ताम्रोद्धार (कीमिया) तांबा और रजत (चांदी) वेधी सिद्ध हरताल, हरिताल कल्प देह व लौह वेधी, सिद्ध हरिताल, तैल, सिद्ध कुचला कल्प, सर्वरोग हर फिटकड़ी रसायन (कल्प) पुरुषों के गुप्त रोगों पर रामबाण सिद्ध खादक, पारद गुटिका बंगवेधी, सिंगरफ सोमियां बनाना, नौसादर तैल, सिद्ध गोरखी जलमुद्रा, सिद्ध गन्धक-एक गिरनारी महात्मा का योग जिसको बनाना अति सरल है और क्षय (T. B.) संग्रहणी जैसे अनेक भयंकर रोगों का सफल इलाज है आदि। इसमें अन्य पुस्तकों की भांति जोड़-तोड़ कर एकत्र की हुई सामग्री नहीं है बल्कि लेखक ने जीवन भर का अनुभव बन्द किया है। इसके पाठकों के लिए लेखक का सद्‌परामर्श और सहायता भी सदैव प्रस्तुत रहेगी। मूल्य ५) डाकखरच ।॥)

संन्यासियों की चमत्कारी गुप्त बूटियां

इन पुस्तक में सैंकड़ों ऐसी ही जड़ी-बूटियों के गुप्त रहस्य प्रकट किये गये हैं, जिनकी बदौलत संन्यासियों की धाक जमी हुई है। इनमें से अधिकांश बूटियां वही हैं, जो आपको जंगल, खेत, बागीचों और पंसारियों की दुकानों पर मिल जावेंगी जिनसे आवश्यकता पड़ने पर सिर से पांव तक के समस्त रोगों का इलाज हर जगह प्रत्येक आदमी आसानी से कर धन और यश कमा सकता है। इस पुस्तक के पढ़ लेने के बाद आप के पास रोगियों का तांता बंधा रहेगा। विषय सूची मुफ्त।४५० पृष्ठ, २ भाग मू० ५।) पो० ।॥)

गुप्त योग रत्नावली

इस पुस्तक में डा० नेगी के व निज के वह-वह गुप्त योग प्रकाशित किये गये हैं जिनको भारतवर्ष के कोने २ से तथा अरब, मिश्र और अफ्रीका आदि प्रदेशों के विभिन्न स्थानों में जाकर लेखक ने प्राप्त किये थे। मूल्य २।) डा० ख० ।।≈)

पेटेण्ट औषधियां व भारतवर्ष

संसार में सब से अधिक लाभदायक व्यापार पेटेण्ट औषधियों का है। अमृतधारा और सुधासिंधु के मालिकों ने १-१ पेटेण्ट दवा के नुस्खे से लाखों रुपया कमाया है। विलायती फर्मे एक-एक पेटेण्ट दवा से बेहद रुपया कमा रही हैं। यदि उनकी तरह आप भी भारतवर्ष, इंग्लैंड, अमरीका की प्रसिद्ध और सर्वप्रिय प्रतिवर्ष करोड़ों रुपयों की बिकने वाली पेटेण्ट औषधियों के नुसखे बिना किसी कष्ट के घर बैठे सीख कर साधारण पूंजी से सैंकड़ों रुपये मासिक की स्थाई आमदनी पैदा करना चाहते हैं तो आज ही 'पेटेण्ट औषधियां और भारतवर्ष' नामक पुस्तक की एक प्रति मंगाकर पढ़ें। १६७ योगवाली मूल्य ।॥≡)

यौवन के गुप्त रहस्य

लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन वापिस

लाने के शर्तिया उपाय-पुरुषत्व और जवानी के वह गुप्त रहस्य, जिनको जानने से नपुन्सकता के ऐसे रोगी जिन्हें किसी दवा से लाभ नहीं हुआ या सैंकड़ों रुपये की दवा खाकर भी निराश बैठे हैं-निःसन्देह मर्द बन सकते हैं। मनुष्य देह का वह केन्द्र जहां से स्वास्थ्य और यौवन का रस झरकर समस्त शरीर का पोषण करता है, उस केन्द्र को शक्ति प्रदान करने के अनूठे उपाय, जिससे लुटी हुई जवानी और बीता हुआ यौवन पुनः लौट आता है। पुरुषों के अकथनीय भयंकर रोग बिना दवा सेवन किये ही किस प्रकार नष्ट होजाते हैं। उर्द्ध्वरेता होने का वह प्रयोग जिससे पुरुष शक्ति में कमी नहीं आती। रसग्रन्थियोंसे आश्चर्यजनक दवाइयां बनाने के प्रयोग। हजारों रुपया खर्च करके डा॰ बोरनाफ की बताई हुई बन्दर की रसग्रन्थि लगवाने व आपरेशन का कष्ट सहन किये बिना ही सुगमता से प्रत्येक स्त्री पुरुष वही शक्ति कैसे प्राप्त कर सकते हैं। इसके अतिरिक्त पुरुषों के रोगों के सम्बन्ध में निदान व ऐसे २ गुप्त प्रयोग इस पुस्तक में दर्ज किये गये हैं, जिनको उपयोग करने वाला पुरुषत्व पर गर्व कर सकता है। मूल्य ३) डाक खरच ।।≈)

हिन्दी से अंग्रेजी मैट्रिक

विश्व के ज्ञान, विज्ञान और व्यापार तथा कला-कौशल को सीखने के लिए आज की विश्व-भाषा अंग्रेजी का सीखना सबके लिए जरूरी है। इसको सीखना कोई कठिन भी नहीं है। जिस प्रकार अंग्रेज मातायें अपने बालकों को अपने घरों में ही अंग्रेजी सिखा देती हैं ठीक उसी प्राकृतिक नियमानुसार यह ३२० पृष्ठों की पुस्तक तैयार की गई, जिसे दो घंटा प्रति दिन पढ़ने से केवल हिन्दी पढ़े लिखे व्यक्ति को भी चार मास में भली प्रकार याद हो जाती है। इसमें ए० बी० सी० डी० से लेकर आवश्यक ग्रामर (व्याकरण) अनुवाद आदि इङ्गलिश की मैट्रिक तक का सब ज्ञान हिन्दी से अंग्रेजी और अंग्रेजी से हिन्दीमें ऐसे सरल और सुबोध ढंग से ४८ पाठों में छपा है कि जिससे केवल अंग्रेजी में मैट्रिक की परीक्षा देने वाले लड़के-लड़कियां निसन्देह पास हो जाते हैं। दसवां संस्करण अभी छपा है। मूल्य ३।।) डाकखरच ।।।)

७८६ वर्ष का प्राचीन रस ग्रन्थ

बसवराजियम—हजारों वर्ष पहिले दक्षिण भारत में चालुक्यवंशीय राजाओं का राज्य था। उनके प्रधान मन्त्री रुद्र सम्प्रदायी महान रसतन्त्रज्ञ बसवराज ने सं० १२२५ में इस सिद्ध साम्प्रदायी अनुपम ग्रन्थ की रचना की थी, जिसमें भगवान रुद्र के अनुयायी बनों में विचरने वाले रसायनाचार्य नागार्जुन, नागबोधि, नित्यनाथ, चर्पटी, कणेरी, पूज्यपाद आदि योगियों का रसज्ञान भरा पडा है, श्री गोविन्दपादाचार्य के कथनानुसार शरीर को अजरामर करने में पारे की बराबरी करने वाली न तो कोई जडी बूटी है और न ही कोई रसायन और भस्म है। पारे में यह बडे आश्चर्य की बात है कि वह स्वयं मूर्छित होकर रोगी के रोग को दूर करता है और बंधा हुआ होकर मुक्ति देता है तथा अच्छी तरह मरा हुआ दूसरों को जीवन देता है। आज मद्रास प्रान्तीय वैद्यों की जो प्रतिष्ठा, यश और कीर्ति सर्वत्र प्रसिद्ध हो रही है वह सब इसी ग्रन्थ के योगों का प्रताप है। यह ग्रन्थ तैलंग भाषा में ताड पत्रों पर लिखा हुआ उपलब्ध हुआ था, जिससे अब तक तैलंग भाषा-भाषी वैद्य ही लाभ उठाते रहे, किन्तु यह जानकर आप अतीव प्रसन्न होंगे कि अब आयुर्वेद बृहस्पति श्री गोवर्धन जी शर्मा छांगाणी के अतुल परिश्रम के फलस्वरूप आज यह ७८६ वर्ष का प्राचीन तैलंग हस्तलिखित दुर्लभ ग्रंथ हिन्दी भाषा में भी हमारे द्वारा प्रकाशित होगया है। इस ग्रन्थ के विषय में कहा गया है कि सतयुग में चरक, त्रेता में रसार्णव तथा द्वापर में सिद्ध विद्याभू का महात्म्य है उसी प्रकार कलियुग में बसवराजियम पूज्य ग्रन्थ है। इसमें जो निदान, लक्षण प्रत्येक रोग के बतलाये हैं। उनको समझकर इसमें वर्णित योगों द्वारा जो चिकित्सा करेगा, भगवान रुद्र की कृपा से निःसन्देह वह सर्वत्र यश और सिद्धि प्राप्त करेगा। २५ प्रकरणों वाले सम्पूर्ण ग्रन्थ का मूल्य ८।।) डाकखरच १≈)

पता—रसायन फार्मेसी, ३ दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली

सेल्फ एक्टिंग
इलेक्ट्रो मैग्नेटिक

यह बेटरी सेल पर चलने वाली बिजली के इलाज की मशीन है। इसके द्वारा गठिया, आमवात आदि सभी वातरोगों, पक्षाघात, लकवा, अर्श, मधुमेह, अनेक प्रकार की शारीरिक पीड़ाओं व शोथ आदि ३३ रोगों का इलाज किया जा सकता है। किस रोग पर इस मशीन द्वारा बिजली का किस प्रकार प्रयोग किया जाय इसके लिए पुस्तिका साथ भेजी जाती है। मूल्य २५) डाक व्यय २॥≈)

इस यन्त्र की उपयोगिता प्रायः सभी जानते हैं। नसों और मांसपेशियों की शिथिलता में जहां प्राकृतिक रूप से रक्त का परिभ्रमण सम्यकरूपेण नहीं होता वहां इसके प्रयोग से आशातीत लाभ होता है। नसों और मांसपेशियों को सशक्त बनाने के लिए इसका प्रयोग करना उत्तम उपाय है। मूल्य १५) बढ़िया १८) डाक खरच पै० २॥)

वर्मा एलोपैथिक चिकित्सा

'एलोपैथिक चिकित्सा' की उपयोगिता ही इस लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण है। घर बैठे डाक्टर बना देने वाली इस पुस्तक में स्त्रियों, पुरुषों तथा बच्चोंको होने वाले हर रोग की अनुभव सिद्ध एलोपैथिक (डाक्टरी) चिकित्सा दी गई है। जिससे हर बीमारी का इलाज आसानी से किया जा सकता है। हर रोग के कारण, लक्षण, चिकित्सा—जहां पेटेण्ट मेडिसन देना ही ठीक है वहां पेटेण्ट मेडिसन, जिस हालत में जो योग देना उचित है वह. जहां इन्जेक्शन देना आवश्यक है वहां इंजेक्शन और जहां पर नवीन औषधियों का देना ठीक है वहां नवीन औषधियें अर्थात रोग को हर प्रकार से ठीक करने के उपाय दे दिये हैं और जहां सर्जिकल प्रयोग ही उचित है वहां वह भी दे दिया गया है। पथ्य आदि का भी पूरा वर्णन है। ४०० रोगों का निदान व चिकित्सा आदि सब कुछ दिया है। ५०० पृष्ट मूल्य १२) डाकखरच १≈)

पता—रसायन फार्मेसी ३, दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा स्वस्तिक प्रिंटिंग प्रेस, देहली में छपकर प्रकाशित

सेल्फ एक्टिंग
इलेक्ट्रो मेग्नेटिक

यह बेटरी सेल पर चलने वाली बिजली के इलाज की मशीन है। इसके द्वारा गठिया, आमवात आदि सभी वातरोगों, पक्षाघात, लकवा, अर्श, मधुमेह, अनेक प्रकार की शारीरिक पीड़ाओं व शोथ आदि ३३ रोगों का इलाज किया जा सकता है। किस रोग पर इस मशीन द्वारा बिजली का किस प्रकार प्रयोग किया जाय इसके लिए पुस्तिका साथ भेजी जाती है। मूल्य २५) डाक व्यय २॥।≈)

एक्सपैंडरो

इस यन्त्र की उपयोगिता प्रायः सभी जानते हैं। नसों और मांसपेशियों की शिथिलता में जहां प्राकृतिक रूप से रक्त का परिभ्रमण सम्यकरूपेण नहीं होता वहां इसके प्रयोग से आशातीत लाभ होता है। नसों और मांसपेशियों को सशक्त बनाने के लिए इसका प्रयोग करना उत्तम उपाय है। मूल्य १५) बढ़िया १८) डाक खरच पै० २।)

वर्मा एलोपैथिक चिकित्सा

'एलोपैथिक चिकित्सा' की उपयोगिता ही इस लोकप्रियता का सबसे बड़ा कारण है। घर बैठे डाक्टर बना देने वाली इस पुस्तक में स्त्रियों, पुरुषों तथा बच्चोंको होने वाले हर रोग की अनुभव सिद्ध एलोपैथिक (डाक्टरी) चिकित्सा दी गई है। जिससे हर बीमारी का इलाज आसानी से किया जा सकता है। हर रोग के कारण, लक्षण, चिकित्सा—जहां पेटेण्ट मेडिसन देना ही ठीक है वहां पेटेण्ट मेडिसन, जिस हालत में जो योग देना उचित है वह, जहां इन्जेक्शन देना आवश्यक है वहां इंजेक्शन और जहां पर नवीन औषधियों का देना ठीक है वहां नवीन औषधियें अर्थात रोग को हर प्रकार से ठीक करने के उपाय दे दिये हैं और जहां सर्जिकल प्रयोग ही उचित है वहां वह भी दे दिया गया है। पथ्य आदि का भी पूरा वर्णन है। ४०० रोगों का निदान व चिकित्सा आदि सब कुछ दिया है। ५०० पृष्ट मूल्य १२) डाकखरच १≈)

पता—रसायन फार्मेसी ३, दरियागंज, पो० बो० ११२५ देहली

डा० जी० एस० वर्मा मुद्रक व प्रकाशक द्वारा स्वस्तिक प्रिंटिंग प्रेस, देहली में छपकर प्रकाशित